राजस्थान एवं एम. डी. एस. विश्वविद्यालयों के बी. ए. द्वितीय वर्ष (प्रथम प्रश्न-पत्र) हेतु एक अद्वितीय पाठ्य-पुस्तक

सामाजिक अन्वेषण की सर्वेक्षण पद्धतियां

[SURVEY METHODS IN SOCIAL INVESTIGATION]

प्रो. एम. एल. गुप्ता
प्राचार्य एव स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभागाध्यक्ष

एवं

डॉ. डी. डी. शर्मा
प्राचार्य
राजकीय महाविद्यालय, [illegible]

2000

साहित्य भवन पब्लिकेशन्स · आगरा

all
about the book

I S B N-81-7288-134-7

Price Rs 62 50

First Edition 1991
Fourth Edition 2000

Published by
SAHITYA BHAWAN PUBLICATIONS
Hospital Road, Agra-282 003
Tel 351665, 353400, 360899
Fax 0562-351568

Printed at
Bhawan Printers
Agra

© Authors

Printing and Publishing rights with the Publisher No part of this publication may be reproduced, in any form or by any means, without permission in writing of copyright owner

Note Due care and diligence has been taken while editing and printing the book, neither the author nor the publisher of the book hold any responsibility for any mistakes that may have inadvertently crept in.

भूमिका

- सर्वप्रथम उन विद्यार्थियों एवं विज्ञ प्राध्यापकों के प्रति आभार व्यक्त करना हम अपना पुनीत दायित्व समझते हैं जिन्होने प्रथम तीन संस्करणों की उपयोगिता एवं उपादेयता को मान्यता प्रदान की। इस चतुर्थ संस्करण को पूर्णतः परिशोधित एवं परिवर्तित रूप में प्रस्तुत करते हुए हमें हर्ष का अनुभव हो रहा है। छात्रों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए विषय से सम्बन्धित नवीनतम सामग्री को पुस्तक में सम्मिलित करने का पूर्ण प्रयास किया गया है। भाषा, शैली तथा विषय की उदाहरणों सहित स्पष्ट अभिव्यक्ति पुस्तक की प्रमुख विशेषताएं है।

- वास्तव में पुस्तक की लोकप्रियता का श्रेय उन सहृदय पाठकों एव सहकर्मियों को ही है जिन्होंने इसे आशा के अनुरूप पाया। हमें पूर्ण विश्वास है कि पूर्ववत् ही आप इस संस्करण को भी अपनायेंगे। सभी विज्ञ-जनों से अपने रचनात्मक सुझाव भेजने का नम्र निवेदन है। हम यहां पुस्तक के प्रकाशक श्री के. एल. बंसल के प्रति विशेष रूप से आभार व्यक्त करना चाहेगे जिन्होंने बहुत ही कम समय मे सुन्दर ढंग से पुस्तक को प्रकाशित किया है।

एम. एल. गुप्ता

(एम. एल. गुप्ता)

(डी. डी. शर्मा)

विषय-सूची

अध्याय | पृष्ठ-संख्या

1. **सामाजिक अनुसन्धान : अर्थ एवं प्रकृति** 1
(Social Research : Meaning and Nature)
[प्रस्तावना, अनुसन्धान का अर्थ, सामाजिक अनुसन्धान का अर्थ, लक्षण एव प्रकृति, सामाजिक अनुसन्धान के उद्देश्य, सामाजिक अनुसन्धान की महत्ता (उपयोगिता), सामाजिक अनुसन्धान की समस्याएं।]

2. **सामाजिक अनुसन्धान के प्रकार** 15
(Types of Social Research)
[प्रस्तावना, अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध, वर्णनात्मक शोध, परीक्षणात्मक शोध, विशुद्ध शोध, व्यावहारिक शोध, क्रियात्मक शोध, मूल्याकनात्मक शोध।]

3. **सामाजिक अनुसन्धान की प्रक्रिया** 28
(Process of Social Research)
[प्रस्तावना, समस्या का चुनाव, सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन, इकाइयो का निर्धारण, प्राक्कल्पना का निर्माण, अध्ययन-क्षेत्र का निर्धारण, सूचनादाताओ का चुनाव, सूचना के स्रोतों व अध्ययन के उपकरणों एव प्रविधियो का निर्धारण, पूर्व-परीक्षण एव पूर्वगामी अध्ययन, तथ्यो का अवलोकन व सकलन, तथ्यो का सम्पादन, सकेतन, वर्गीकरण एवं सारणीयन, तथ्यो का विश्लेषण व विवेचन, सामान्यीकरण एव नियमो का प्रतिपादन।]

4. **सामाजिक सर्वेक्षण : अर्थ एवं प्रकृति** 36
(Social Survey : Meaning and Nature)
[प्रस्तावना, सामाजिक सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषा, सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति एव विशेषताएं, सामजिक सर्वेक्षण का क्षेत्र एवं विषय-वस्तु, सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्य, सामाजिक अनुसन्धान एवं सामाजिक सर्वेक्षण, सामाजिक सर्वेक्षण विधि की उपयोगिता (महत्व) एवं गुण, सर्वेक्षण विधि की सीमाए।]

5. **सामाजिक सर्वेक्षण के प्रकार, आयोजन एवं प्रमुख चरण** 50
(Types, Planning and Major Steps of Social Survey)
[प्रस्तावना, सर्वेक्षण—विभिन्न प्रकार, सर्वेक्षण का आयोजन एव प्रमुख चरण—समस्या का चुनाव, उद्देश्यों का निर्धारण, अध्ययन-क्षेत्र का निर्धारण, प्रारम्भिक तैयारिया, निदर्शन का चुनाव, बजट व समय-सूची का निर्माण, अध्ययन-पद्धति का चुनाव एवं अध्ययन उपकरणो का निर्माण, कार्यकर्ताओ का चुनाव एवं प्रशिक्षण, सर्वेक्षण का सगठन, पूर्व-परीक्षण एवं पूर्वगामी सर्वेक्षण, समुदाय को तैयार करना, तथ्यो का सकलन,

सम्पादन, वर्गीकरण एव सारणीयन, तथ्यों का विश्लेषण एव सामान्यीकरण, प्रतिवेदन का निर्माण एवं प्रकाशन।]

6. **वैज्ञानिक पद्धति** 61
(Scientific Method)
[प्रस्तावना, विज्ञान का अर्थ, विज्ञान के प्रमुख तत्व (विशेषताए), वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ एवं विशेषताए, वैज्ञानिक पद्धति के चरण, सामाजिक अनुसन्धान में वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग।]

7. **तथ्यों (सामग्री) के प्रकार एवं स्रोत** 72
(Types and Sources of Data)
[प्रस्तावना, तथ्य (सामग्री) का अर्थ एव प्रकार, प्राथमिक तथ्य एवं द्वैतीयक तथ्य, तथ्यो (सामग्री) के स्रोत, प्राथमिक स्रोत—प्रकार, गुण एवं दोष, द्वैतीयक स्रोत—प्रकार, गुण एव सीमाएं।]

8. **प्राक्कल्पना (उपकल्पना)** 89
(Hypothesis)
[प्रस्तावना, प्राक्कल्पना का अर्थ एवं विशेषताए, प्राक्कल्पना के प्रकार, प्राक्कल्पना के स्रोत, प्राक्कल्पना का महत्व एव सीमाएं, प्राक्कल्पना निर्माण मे प्रमुख कठिनाइयां।]

9. **अवलोकन विधि** 102
(Observation Method)
[प्रस्तावना, अवलोकन का अर्थ, परिभाषा एव विशेषताए, अवलोकन के प्रकार : अनियन्त्रित अवलोकन—सहभागी अवलोकन, अर्द्ध-सहभागी अवलोकन, अनियन्त्रित अवलोकन के गुण एव दोष, नियन्त्रित अवलोकन—नियन्त्रित एवं अनियन्त्रित अवलोकन मे अन्तर, सामूहिक अवलोकन, अवलोकन की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता, अवलोकन-विधि की उपयोगिता एव सीमाएं।]

10. **साक्षात्कार विधि** 123
(Interview Method)
[प्रस्तावना, साक्षात्कार का अर्थ, विशेषताए एवं उद्देश्य, साक्षात्कार के प्रकार, साक्षात्कार की प्रक्रिया एवं तकनीक, एक अच्छे साक्षात्कारकर्ता के गुण, साक्षात्कार विधि के गुण एवं दोष।]

11. **अनुसूची** 143
(Schedule)
[प्रस्तावना, अनुसूची का अर्थ, परिभाषा, विशेषताए एव उद्देश्य, अनुसूची के प्रकार, अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया, एक उत्तम अनुसूची की रचना करते समय ध्यान मे रखने योग्य बाते, अनुसूची तथा प्रश्नावली की तुलना, अनुसूची के गुण (लाभ) एवं दोष (सीमाए), अनुसूची का नमूना।]

12. **प्रश्नावली** 160
(Questionnaire)
[प्रस्तावना, प्रश्नावली का अर्थ, परिभाषा, विशेषताए एवं उद्देश्य, प्रश्नावली के प्रकार, अच्छी प्रश्नावली की विशेषताए, प्रश्नावली की रचना, प्रश्नावली की पूर्व जाच (पूर्व परीक्षण), प्रश्नावली की विश्वसनीयता एव प्रामाणिकता, प्रश्नावली विधि के गुण (महत्व) एवं दोष (सीमाए)।]

13. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति (एकल अध्ययन पद्धति)..... 181
(Case Study Method)
[प्रस्तावना, वैयक्तिक अध्ययन पद्धति—अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताए, वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की आधारभूत मान्यताए, वैयक्तिक अध्ययनों के प्रकार, वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के यन्त्र एवं प्रविधियां, वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के गुण (महत्व) एवं दोष (सीमाए), वैयक्तिक अध्ययन विधि तथा साख्यिकी एवं सर्वेक्षण विधियां।]

14. निदर्शन पद्धति (प्रतिचयन विधि) 195
(Sampling Method)
[प्रस्तावना, गणना पद्धति, निदर्शन एक प्रतिनिधित्वपूर्ण (श्रेष्ठ) निदर्शन (विधि), निदर्शन प्रणाली के गुण संभावित निदर्शन (दैव निदर्शन), असंभावित निदर्शन, कुछ अन्य प्रकार के निदर्शन, निदर्शन की सीमाएं, निदर्शन की विश्वसनीयता की परख।]

15 सारणीयन 221
(Tabulation)

16. तथ्यों का प्रदर्शन : द्विविमा एवं बहुविमा चित्र 229
(Presentation of Data : Bivariate and Multivariate Diagrams)
[प्रस्तावना, चित्रमय प्रदर्शन के उद्देश्य तथा उपयोगिता, चित्रमय प्रदर्शन की सीमाए, चित्र-रचना के नियम, चित्रो के प्रकार, एकविमा, द्विविमा, त्रिविमा चित्र, चित्रलेख तथा मानचित्र।]

17. सांख्यिकीय माध्य : समान्तर माध्य, भूयिष्ठक (बहुलक) तथा मध्यका..... 250
(Statistical Averages ; Mean, Mode and Median)
[प्रस्तावना, माध्य—अर्थ, उपयोगिता एवं उद्देश्य, एक आदर्श माध्य के आवश्यक तत्व, माध्यों की सीमाएं, माध्यो के प्रकार; बहुलक या भूयिष्ठक : अर्थ, विशेषताएं, भूयिष्ठक का निर्धारण एवं उदाहरण, भूयिष्ठक के गुण एवं दोष; मध्यका—अर्थ, विशेषताएं, निर्धारण एवं उदाहरण, मध्यका के गुण एवं दोष; समान्तर माध्य : अर्थ, विशेषताएं, निर्धारण एव उदाहरण, समान्तर माध्य के गुण एवं दोष, बहुलक, मध्यका एवं समान्तर माध्य की तुलनात्मक उपयोगिता।]

1

सामाजिक अनुसन्धान : अर्थ एवं प्रकृति

[SOCIAL RESEARCH : MEANING AND NATURE]

मनुष्य एक चिन्तनशील प्राणी है, वह सोचता-विचारता है, अपने चारों ओर के रहस्यमयी संसार को देखने और समझने का प्रयत्न करता है। वह विभिन्न प्रकार की घटनाओं के पीछे छिपे कारणों को ढूंढ़ निकालने की कोशिश करता है। उसने सूर्य, चांद, तारे, आकाश, पृथ्वी, दिन-रात, ऋतुओ, आंधी, तूफान, वर्षा, नदी-पर्वत, आदि को जानने का प्रयास किया। वह प्रारम्भ में इन सबको ईश्वर की सृष्टि मानकर उसे ही इन सभी का कारण मानने लगा। धीरे-धीरे प्रकृति के सम्बन्ध में उसका ज्ञान बढ़ता गया। वह प्रश्नों का उत्तर ढूंढता चला गया कि रात और दिन क्यों होते हैं, मौसम क्यों बदलता है, वर्षा क्यों होती है, आदि आदि। जैसे-जैसे प्रकृति के सम्बन्ध में उसके ज्ञान में वृद्धि होती गयी, वैसे-वैसे प्रकृति पर उसका नियन्त्रण बढता गया। मनुष्य अपनी जिज्ञासु प्रकृति के कारण ही बहुत कुछ जान पाया है, अनेक आविष्कार कर सका है, भौगोलिक दूरी को कम कर सका है। मनुष्य की चांद पर पहुंच प्रकृति पर उसके बढते हुए नियन्त्रण का ही परिणाम है।

स्पष्ट है कि मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है। वह अज्ञात तथ्यों का पता लगाने की दिशा में निरन्तर आगे बढ़ता रहा है। पहले उसने प्राकृतिक घटनाओ को और फिर सामाजिक घटनाओं को समझने का प्रयास किया। सामाजिक घटनाएं भी अपने आप में काफी जटिल हैं। एक ही घटना के पीछे अनेक कारण हो सकते है और उन सभी कारणो को खोज निकालना कोई सरल काम नहीं है। फिर भी मानव ने अपने ज्ञान की प्यास को सदैव बुझाने का प्रयास किया है, सामाजिक जीवन की जटिलताओं को समझने की लगातार कोशिश की है। उसने मानव व्यवहार के प्रेरको को जानने की दिशा में निरन्तर प्रयत्न किया है। उसने यह पता लगाने में दिलचस्पी ली है कि कौन-से नियम हैं जो मनुष्य की प्रेरणाओं व मनोवृत्तियों के आधार है। उसने अपने सामाजिक पर्यावरण को जानने की दिशा में काफी कुछ खोज की है। वह क्यों और कैसे, आदि प्रश्नों का उत्तर ढूंढने के प्रयास में लगा रहा है। वह आदिम, सरल व जटिल सामाजिक संरचनाओं को समझने हेतु सदैव प्रयत्न करता रहा है। उसने यह जानने की कोशिश की है कि एक समाज और दूसरे समाज के रीति-रिवाजों, विश्वासों, मान्यताओ, परम्पराओं, संस्थाओं व् संस्कृतियों में अन्तर क्यों पाये जाते हैं ? किसी समाज में अपराध, बाल-अपराध व श्वेतवसन अपराध अन्य समाजों की तुलना में कम या अधिक क्यो होते हैं, अलग-अलग समाजों में विवाह एवं परिवार के भिन्न-भिन्न रूप देखने को क्यो मिलते है ? धर्म किस प्रकार आर्थिक विकास में योग देता है या बाधा पहुंचाता है।

किन समाजों में प्राथमिक और किन में द्वैतीयक समूहो की प्रधानता पायी जाती है और क्यों पायी जाती है तथा इनका सामाजिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है ? संघर्ष क्यों होते हैं, उनके पीछे मूलभूत कारण क्या है ? पारिवारिक और सामुदायिक विघटन के लिए कौनसे कारक उत्तरदायी हैं ?

इसी प्रकार के अनेक प्रश्नों का उत्तर देने का मनुष्य ने अपनी खोजमूलक प्रवृत्ति के आधार पर सदैव प्रयत्न किया है, कार्य-कारण सम्बन्धों को जानने की कोशिश की है। कहने का तत्पर्य यह है कि मनुष्य ने प्राकृतिक दशाओं तथा सामाजिक जटिलताओं को स्पष्ट करने का सदैव प्रयास किया है। साथ ही उसने प्राप्त ज्ञान की सत्यता का पता लगाने की कोशिश भी की है। उसने विभिन्न घटनाओं के सम्बन्ध में वैज्ञानिक विधि को काम में लेते हुए कार्य-कारण सम्बन्ध ढूढने का प्रयत्न किया है, नये सिद्धान्तो का निर्माण किया है, पुराने सिद्धान्तों की सत्यता की जांच नवीन परिप्रेक्ष्य मे की है। यही शोध या अनुसन्धान है। **जब सामाजिक क्षेत्र में प्रश्नों के उत्तर खोजने का क्रम-बद्ध एवं व्यवस्थित प्रयास किया जाता है तो उसे ही सामाजिक अनुसन्धान, शोध, गवेषणा, अन्वेषण या खोज नाम दिया जाता है।**

अनुसन्धान (शोध) का अर्थ
(MEANING OF RESEARCH)

मनुष्य ने प्रारम्भ में काल्पनिक या दार्शनिक आधार पर घटनाओं का विश्लेषण किया। उसने ईश्वर या अलौकिक शक्ति को सभी प्रकार की घटनाओं का स्रोत (कारण) माना। पूर्व मे उसके ज्ञान का आधार अन्तःप्रज्ञा, परम्परा, वैयक्तिक अनुभव तथा 'प्रयत्न एवं भूल' (Trial and Error) की विधियां रही है। इस प्रकार से प्राप्त ज्ञान में विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता का अभाव था। आज व्यक्ति इस स्थिति से आगे बढ़ गया है और अब वह उसी घटना पर विश्वास करने लगा है जिसे वह नेत्रों से देख सके, स्पर्श द्वारा अनुभव कर सके या कानो द्वारा सुन सके अर्थात् अब वह तार्किक ढंग से घटनाओं को समझने और वास्तविकता का पता लगाने लगा है। इस प्रकार अब वह व्यवस्थित ढंग से ज्ञान को संचित करता है। यही अनुसन्धान का प्रारम्भ है।

अनुसन्धान (शोध) का तात्पर्य 'बार-बार खोजने' से है। इसमें दो भौतिक तत्वों की प्रधानता पायी जाती है। प्रथम, अवलोकन द्वारा घटना को उद्देश्यपूर्ण ढंग से देखना अथवा
द्वितीय, उन तथ्यों के अर्थ को जानकर
तत्वों को ध्यान में रखकर जो ज्ञान
माना जाता है। इस प्रकार के ज्ञान
न के नाम से पुकारते हैं। व्यक्ति ने
धीरे-धीरे विश्वसनीय एवं प्रामाणिक ज्ञान प्राप्ति हेतु शोध की ऐसी विधि को खोज निकाला जिसे वैज्ञानिक विधि (Scientific Method) कहते है। इस विधि में तथ्यों का संकलन भी निश्चित प्रविधियो द्वारा किया जाता है। इसमें अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, वैयक्तिक अध्ययन पद्धति, समाजमिति, आदि का सहारा लिया जाता है।

वेबस्टर शब्दकोश के अनुसार, "तथ्यो एव सिद्धान्तों या किसी भी घटना को ज्ञात करने हेतु सावधानीपूर्वक एवं विवेचनात्मक खोज या निष्ठापूर्वक किये गये अन्वेषण को अनुसन्धान (शोध) कहते हैं।" अन्य शब्दो में हम कह सकते हैं कि जब नवीन ज्ञान की प्राप्ति

तथा विद्यमान ज्ञान में संशोधन, परिवर्द्धन या परिमार्जन के उद्देश्य से कोई व्यवस्थित प्रयत्न किये जाते हैं तो उन्हें ही अनुसन्धान या शोध के नाम से जाना जाता है।

दी न्यू सेन्चुरी डिक्शनरी के अनुसार, "किसी वस्तु या व्यक्ति के सम्बन्ध में सावधानीपूर्वक खोज करना एवं तथ्यों या सिद्धान्तों का पता लगाने के लिए विषय-सामग्री की लगातार सावधानीपूर्वक जांच-पड़ताल करना ही अनुसन्धान है।" **स्पष्ट है कि अनुसन्धान घटनाओं के बारे में ज्ञान प्राप्त करने और उन घटनाओं के मूल तक पहुंचने एवं कार्य-कारण सम्बन्धों का पता लगाने का एक व्यवस्थित वैज्ञानिक तरीका है।** अनुसन्धान मे व्यक्ति अपनी जिज्ञासा के अनुरूप गहन अध्ययन करता है। उसकी जिज्ञासा का आधार चाहे प्राकृतिक दशाएं हों अथवा सामाजिक जटिलताएं, इनसे सम्बन्धित ज्ञान का स्पष्टीकरण करना तथा प्राप्त ज्ञान का सत्यापन करना, नये सिद्धान्तों का निर्माण करना एवं पुराने सिद्धान्तों की सत्यता का परीक्षण करना ही अनुसन्धान (शोध) है।

सामाजिक अनुसन्धान (शोध) का अर्थ
(MEANING OF SOCIAL RESEARCH)

जब कोई भी अनुसन्धान सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं अथवा सामाजिक जटिलताओं से सम्बन्धित होता है, तब उसे सामाजिक अनुसन्धान कहते हैं। इसमें इन सबके सम्बन्ध मे यथार्थ ज्ञान प्राप्त किया जाता है। इस हेतु आनुभविक या अनुभवसिद्ध तथ्यों (Empirical Facts) का पता लगाया जाता है, निरीक्षण, परीक्षण, वर्गीकरण तथा सत्यापन के आधार पर सामाजिक घटनाओ के कारणों को ढूंढ निकाला जाता है। साथ ही मानव व्यवहार से सम्बन्धित सामान्य नियमों का पता लगाया जाता है। सामाजिक अनुसन्धान में वैज्ञानिक विधि को काम में लेते हुए अवलोकन (Observation) तथा सत्यापन (Verification) का विशेषतः सहारा लिया जाता है।

सामाजिक अनुसन्धान में सर्वप्रथम किसी व्यवहार, समस्या या घटना से सम्बन्धित मूलभूत तथ्यों का अवलोकन किया जाता है ताकि उसकी सामान्य प्रकृति को भली-भांति समझा जा सके। तत्पश्चात् उन सामाजिक नियमों का पता लगाया जाता है जो एक विशेष घटना, व्यवहार या समस्या के पीछे छिपे कारणों को प्रकट कर सकें। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि **सामाजिक अनुसन्धान में सामाजिक यथार्थताओं (Social Realities) की वैज्ञानिक विधि द्वारा खोज पर विशेष बल दिया जाता है।**

सामाजिक अनुसन्धान का अर्थ स्पष्ट करते हुए **श्रीमती पी. वी. यंग** ने लिखा है, "सामाजिक अनुसन्धान को ऐसे वैज्ञानिक प्रयत्न के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है जिसका उद्देश्य तार्किक एवं क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नवीन तथ्यों की खोज अथवा पुराने तथ्यों की परीक्षा और सत्यापन; उनके क्रमों, पारस्परिक सम्बन्धों, कार्य-कारण की व्याख्या एवं उन्हें संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना है।"[1]

सी. ए. मोजर के अनुसार, "सामाजिक प्रघटनाओ एवं समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए की गई व्यवस्थित खोज ही सामाजिक अनुसन्धान है।"[2]

जी. एम. फिशर के अनुसार, "सामाजिक अनुसन्धान सामाजिक परिस्थिति में सुनिश्चित कार्य-प्रणालियो का प्रयोग है जिसका उद्देश्य किसी समस्या को हल करना या किसी प्राक्कल्पना

1 Pauline V. Young, *Scientific Social Survey and Research*, p. 44
2 .C. A. Moser, *Survey Methods in Social Investigation*,. p. 3.

(उपकल्पना) का परीक्षण करना या एक नवीन प्रघटना की खोज या प्रघटनाओ के बीच नवीन सम्बन्धों का पता लगाना है।"[1]

ई. एस. बोगार्डस ने लिखा है, "साहचर्य में अर्थात् एक साथ रहने वाले लोगों के जीवन में क्रियाशील अन्तर्निहित प्रक्रियाओं की खोज ही सामाजिक अनुसन्धान है।"[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि **सामाजिक अनुसन्धान खोज की ऐसी विधि है जिसमें सामाजिक परिस्थिति के सन्दर्भ में किसी घटना, व्यवहार, सामाजिक जीवन अथवा समस्या के सम्बन्ध में वैज्ञानिक विधि का प्रयोग करते हुए सामाजिक यथार्थता को समझने का प्रयत्न किया जाता है।** इसमें निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण द्वारा सामाजिक घटनाओ के कारणों का पता लगाया और वस्तु-स्थिति की तार्किक ढंग से विवेचना की जाती है।

सामाजिक अनुसन्धान की विशेषताएं एवं प्रकृति
(CHARACTERISTICS AND NATURE OF SOCIAL RESEARCH)

सामाजिक अनुसन्धान की विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर इसके निम्नलिखित लक्षण या विशेषताएं स्वयं ही स्पष्ट है जो इसकी प्रकृति पर प्रकाश डालते हैं :

(1) सामाजिक अनुसन्धान का सम्बन्ध वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग द्वारा सामाजिक प्रघटनाओं के सूक्ष्म रूप से अध्ययन से है।

(2) सामाजिक अनुसन्धान अपने को विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों, प्रविधियों एवं पद्धतियो के प्रयोग तक ही सीमित नहीं रखता बल्कि नवीन प्रविधियों के विकास पर भी जोर देता है।

(3) सामाजिक अनुसन्धान में विभिन्न सामाजिक घटनाओं तथा समस्याओ का वैज्ञानिक या व्यवस्थित अध्ययन ही नहीं किया जाता बल्कि नवीन ज्ञान का सृजन भी किया जाता है।

(4) सामाजिक अनुसन्धान विभिन्न सामाजिक तथ्यों या घटनाओ के बीच पाए जाने वाले कार्य-कारण सम्बन्धों को खोज निकालता है। इसका कारण यह है कि सामाजिक घटनाएं एक-दूसरे से स्वतन्त्र नहीं होकर एक-दूसरे से सम्बन्धित होती हैं। उदाहरण के रूप में, गन्दी बस्तियों और बाल-अपराध के बीच परस्पर कार्य-कारण का सम्बन्ध हो सकता है।

(5) सामाजिक अनुसन्धान में जहां नए तथ्यों की खोज की जाती है, वहीं पुराने तथ्यों या पूर्व-स्थापित सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा एवं सत्यापन का कार्य भी सम्पन्न किया जाता है।

(6) सामाजिक अनुसन्धान एक ऐसी विधि है जिसमें प्राक्कल्पना की उपयुक्तता की जांच अथवा परीक्षण किया जाता है।

(7) मूलतः सामाजिक अनुसन्धान अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों को सिद्धान्तों के रूप में प्रयुक्त करने का एक वैज्ञानिक तरीका है अर्थात् इसके अन्तर्गत नए सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है।

(8) सामाजिक अनुसन्धान जहां विशुद्ध ज्ञान की खोज पर जोर देता है, वहां साथ ही इसका प्रयोग व्यावहारिक समस्याओं को हल करने के लिए भी किया जा सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों ही प्रकार की समस्याओं के हल के लिए सामाजिक अनुसन्धान किया जा सकता है।

1 G. M Fisher, *Fairchild's Dictionary of Sociology*, p 291
E. S Bogardus, *Sociology*, p. 543

उपर्युक्त विशेषताओं या लक्षणों से स्पष्ट है कि **सामाजिक शोध या अनुसन्धान की प्रकृति वैज्ञानिक है।** सामाजिक अनुसन्धान में सामाजिक जीवन को समझने का प्रयत्न किया जाता है। ज्ञान-प्राप्ति इसका मुख्य लक्ष्य है। ज्ञान की प्राप्ति, ज्ञान की वृद्धि एवं ज्ञान की पुनः परीक्षा का कार्य यह निरन्तर करता रहता है। इस ज्ञान का प्रयोग व्यावहारिक समस्याओं को हल करने, समाज-सुधार, सामाजिक नियोजन, सामाजिक विकास तथा मानव-कल्याण और मानवीय जीवन को अधिक प्रगतिशील बनाने के लिए किया जा सकता है। सामाजिक अनुसन्धान के अन्तर्गत जिस ज्ञान का संचय किया जाता है, वह समाज-सुधारकों, नियोजकों एवं प्रशासको के लिए उपयोगी हो सकता है, लेकिन मूलतः सामाजिक अनुसन्धान की प्रकृति समस्या का निदान ढूंढ़ निकालने की नहीं है। वह तो सामाजिक समस्या की व्यापकता को ज्ञात करता है, उसके पीछे छिपे कारणों को ढूंढ़ निकालता है, नियमों का पता लगाता है।

सामाजिक अनुसन्धान की प्रकृति वैज्ञानिक है। उसमें **निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण हेतु व्यवस्थित विधि को अपनाया जाता है जिसे वैज्ञानिक पद्धति** (Scientific Method) **कहते हैं।** यहां ज्ञान-प्राप्ति हेतु वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसमें वस्तुनिष्ठता, सत्यापनशीलता, तटस्थता, व्यवस्थितता तथा भविष्योक्ति पर जोर दिया जाता है।

सामाजिक अनुसन्धान की प्रकृति की एक विशेषता यह है कि **यह सामाजिक तथ्यों या घटनाओं के बीच पाए जाने वाले सम्बन्धों को ढूंढ़ निकालने पर जोर देता है।** सामाजिक जीवन में सर्वत्र अन्तःसम्बद्धता तथा अन्तःनिर्भरता पाई जाती है। सामाजिक जीवन के सभी पक्ष एक-दूसरे के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं। सामाजिक जीवन को उत्तमता के साथ समझने हेतु इन सम्बन्धों का पता लगा लेना अत्यन्त आवश्यक है। यह कार्य सामाजिक अनुसन्धान के द्वारा किया जाता है।

सामाजिक अनुसन्धान की प्रकृति की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसकी सहायता से **सामाजिक जीवन एवं घटनाओं पर नियन्त्रण पाने का प्रयास किया जाता है।** अनुसन्धानकर्ता अपने अनुसन्धान कार्य में प्रयोगात्मक पद्धति का प्रयोग करने हेतु कुछ सामाजिक घटनाओं को नियन्त्रित करके उन्हीं के समान अन्य सामाजिक घटनाओं पर विभिन्न कारकों के प्रभावों को देखता है। इससे सामाजिक जीवन व घटनाओं के सम्बन्ध में उसके ज्ञान में वृद्धि होती जाती है, उन पर उसका नियन्त्रण बढ़ता जाता है, उसकी भविष्योक्ति (Predictability) की क्षमता बढती जाती है। इससे मानव जीवन को अधिकाधिक सुखी बनाने में सहायता मिलती है।

सामाजिक अनुसन्धान की एक अन्य विशेषता यह है कि **इसमें केवल मानव से सम्बन्धित सामाजिक घटनाओं का ही अध्ययन किया जाता है।** प्राकृतिक, भौतिक या अन्य प्राणियों के सामूहिक जीवन से सम्बन्धित अध्ययन सामाजिक अनुसन्धान के अन्तर्गत नहीं किए जाते। सामाजिक अनुसन्धान में मनुष्यों की सामाजिक क्रियाओ एवं उनसे उत्पन्न सामाजिक सम्बन्धों के ताने-बाने का अर्थात् 'सामाजिक संरचना' का अध्ययन किया जाता है। सामाजिक अनुसन्धान की विधियों का प्रयोग वर्तमान में केवल समाजशास्त्रीय अध्ययनों मे ही नहीं, बल्कि अन्य सभी सामाजिक विज्ञानों में भी किया जाता है।

सामाजिक अनुसन्धान की एक विशेषता यह है कि **इसका अध्ययन-क्षेत्र काफी व्यापक है।** सामाजिक अनुसन्धान के अध्ययन-क्षेत्र में सम्पूर्ण सामाजिक जीवन और उससे सम्बद्ध

सामाजिक प्रक्रियाएं आ जाती है। सामाजिक अनुसन्धान के लिए सामाजिक जीवन से सम्बन्धित किसी भी घटना को चुना जा सकता है। सामाजिक अनुसन्धान अपने क्षेत्र को केवल नवीन अध्ययन-विषय तक ही सीमित नही रखता है, उसमे ऐसे विषयों को भी अध्ययन के लिए चुना जा सकता है जिनके सम्बन्ध मे पहले शोध-कार्य हो चुका हो। इसका कारण यह है कि सामाजिक अनुसन्धान का लक्ष्य नवीन तथ्यों की खोज के साथ-साथ पुराने तथ्यों की पुनः परीक्षा भी है। सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में यह और भी आवश्यक है। आज अनेक कारणों से सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों में तेजी से परिवर्तन आ रहे हैं। अतः पुराने नियमों, सिद्धान्तो एवं ज्ञान की पुनः परीक्षा नितान्त आवश्यक है। आज शोध कार्यों ने सामाजिक जीवन से सम्बन्धित अनेक भ्रान्त धारणाओ को दूर करने में काफी योग दिया है। वर्तमान में वैज्ञानिक खोजों के आधार पर यह स्पष्ट हो चुका है कि कोई भी प्रजाति अन्य प्रजातियों की तुलना मे शारीरिक एवं मानसिक रूप से हीन नही है।

सामाजिक समस्याएं भी सामाजिक अनुसन्धान के अध्ययन-क्षेत्र मे आती हैं क्योंकि ये सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग हैं। कोई भी समाज इनसे पूर्णतः मुक्त नही होता। जब तक इन सामाजिक समस्याओं की प्रकृति को नही समझ लिया जाता, कार्य-कारण सम्बन्धों को ज्ञात नही कर लिया जाता तब तक सामाजिक जीवन के सम्बन्ध मे हमारा ज्ञान अपूर्ण ही रहेगा।

सामाजिक अनुसन्धान के उद्देश्य
(OBJECTIVES OF SOCIAL RESEARCH)

अनुसन्धान मे वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग द्वारा कुछ प्रश्नों के उत्तर ढूंढने का प्रयत्न किया जाता है। इसमें विशेषतः क्या, क्यो, कैसे, कब, आदि प्रश्नों के उत्तरों को खोजा जाता है। उदाहरण के रूप में, प्रश्न उठता है कि वर्षा क्यों होती है, ऋतुएं क्यों बदलती है, हवा क्यों चलती है, अपराधी व बाल-अपराधी अधिकांशतः गन्दी बस्तियों मे ही क्यों पनपते है, सामाजिक तनाव क्यों पाए जाते है, युद्ध क्यों होते हैं, कुछ लोग आत्महत्या क्यो करते है, शोषण से छुटकारा कैसे प्राप्त किया जा सकता है? इसी प्रकार के सैकड़ो-हजारो प्रश्नो का उत्तर प्राकृतिक और सामाजिक विज्ञानों के अन्तर्गत देने का प्रयत्न अनुसन्धान के माध्यम से किया जाता है। स्पष्ट है कि अनुसन्धान का प्रमुख उद्देश्य नवीन ज्ञान व सिद्धान्तो की खोज तथा पुराने सिद्धान्तों या तथ्यों का पुनः परीक्षण है। यह अनुसन्धान का सैद्धान्तिक उद्देश्य है। इसका एक व्यावहारिक या उपयोगितावादी उद्देश्य भी होता है। यहां हम सामाजिक अनुसन्धान के इन दोनों ही उद्देश्यों पर प्रकाश डालेगे।

I. **सैद्धान्तिक उद्देश्य** (Theoretical Objective)—सामाजिक अनुसन्धान के इस उद्देश्य के सम्बन्ध में श्रीमती पी. वी. यंग ने लिखा है, "सामाजिक अनुसन्धान का मूलभूत उद्देश्य चाहे वह तत्कालीन हो या दीर्घकालीन, सामाजिक जीवन को समझना और ऐसा करके उस पर अधिक नियन्त्रण प्राप्त करना है।" मूलतः सामाजिक अनुसन्धान का उद्देश्य ज्ञान की उत्तरोत्तर वृद्धि है। सैद्धान्तिक उद्देश्य को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर स्पष्ट कर सकते है :

(1) सामाजिक अनुसन्धान का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं, सामाजिक व्यवहार, तथ्यो एवं सामाजिक समस्याओ के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करना है। इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त कर हम मानव समाज की संरचना को समझ सकेंगे।

(2) सामाजिक अनुसन्धान का एक अन्य उद्देश्य विभिन्न तथ्यों या सामाजिक घटनाओं के बीच पाए जाने वाले प्रकार्यात्मक सम्बन्धों का पता लगाना है। सामाजिक संरचना की सभी निर्मायक इकाइयों के बीच एक प्रकार्यात्मक सम्बन्ध पाया जाता है जो सामाजिक जीवन की निरन्तरता, गतिशीलता एवं व्यवस्था के लिए उत्तरदायी है। जब तक इन प्रकार्यात्मक सम्बन्धों को नही समझ लिया जाता तब तक किसी भी सामाजिक घटना की वास्तविक प्रकृति को नहीं समझा जा सकता। यदि हम अपराध का एक सामाजिक घटना के रूप में अध्ययन करना चाहें तो हमें अनुसन्धान के माध्यम से यह ज्ञात करना होगा कि अपराध व निर्धनता, अपराध व बेकारी, अपराध व गन्दी बस्तियों, अपराध व औद्योगीकरण व विभिन्न सामाजिक संस्थाओ के बीच क्या सम्बन्ध पाया जाता है। ऐसा करके ही हम कार्य-कारण सम्बन्धो का पता लगा सकेंगे और सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य में अपराध को एक सामाजिक घटना के रूप में समझ सकेंगे।

(3) सामाजिक अनुसन्धान का एक उद्देश्य उन नियमों को खोज निकालना है जो सामाजिक घटनाओं व सामाजिक जीवन को नियमित एवं निर्देशित करते हैं। कोई भी मानवीय या सामाजिक घटना स्वतः ही या आकस्मिक रूप से घटित नहीं होती बल्कि उसके पीछे निश्चित नियम पाये जाते हैं। इन नियमों को ढूंढ़ निकालना सामाजिक अनुसन्धान का एक प्रमुख सैद्धान्तिक उद्देश्य है। इन नियमो का पता लगाकर हम सामाजिक जीवन को अधिक उत्तमता के साथ समझ सकेंगे।

(4) सामाजिक अनुसन्धान का एक अन्य उद्देश्य नवीन अवधारणाओं को विकसित करना, नवीन सिद्धान्तों का निर्माण करना तथा पुराने सिद्धान्तों का पुनः परीक्षण करना है। कई बार परिस्थितियों के बदल जाने या अनुसन्धान की प्रविधियों एवं उपकरणों में सुधार हो जाने से पुराने तथ्यों या ज्ञान की पुनःपरीक्षा आवश्यक हो जाती है ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या बदली हुई परिस्थितियों में इनको संशोधित करना आवश्यक है या इनमें किसी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। ऐसा करके हम अनेक रूढ़िगत एवं भ्रान्त धारणाओं से भी छुटकारा प्राप्त कर सकते हैं।

इस ज्ञान-प्राप्ति द्वारा मानव-समाज की संरचना को उत्तमता से समझा जा सकेगा, उसे बनाए रखने वाली संस्थाओ और समूहो की महत्ता को जाना जा सकेगा तथा सामूहिक जीवन के आधारो एवं सामाजिक नियन्त्रण के साधनों की क्रियाशीलता को समझा जा सकेगा।

II. व्यावहारिक या उपयोगितावादी उद्देश्य (Utilitarian Objective)—सामाजिक अनुसन्धान न केवल ज्ञान-प्राप्ति के लिए ही बल्कि सामाजिक जीवन को अधिक उत्तम बनाने के लिए भी किया जाता है। वर्तमान में वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति ने जहां मानव की सुख-सुविधाओं को बढ़ाने में योग दिया है, वहां साथ ही सरल समाजो को जटिल समाजों में बदल भी दिया है। परिणामस्वरूप आज के औद्योगिक जटिल समाजों में अनेक व्याधिकीय समस्याएं उत्पन्न हुई है, जैसे अपराध, बाल-अपराध, आत्महत्या, बेकारी, निर्धनता, वेश्यावृत्ति, मद्यपान, आतंकवाद, युद्ध, आदि। सामाजिक अनुसन्धान का उद्देश्य न केवल इन समस्याओं को सही परिप्रेक्ष्य मे समझना बल्कि इनके समाधान हेतु योजनाओं का पता लगाना भी है। आज यह सिद्ध हो चुका है कि व्याधिकीय समस्याओ के लिए स्वयं समाज या सामाजिक परिस्थितियां उत्तरदायी है, अतः इनको बदलना आवश्यक है। आज यह भी प्रमाणित हो चुका है कि व्याधिकीय समस्याओं के समाधान के लिए बिखरे हुए उपाय (प्रयास) कारगर

सिद्ध नही होंगे। जेल, गुप्तचर व्यवस्था, पुलिस, अदालत एवं दण्ड-व्यवस्था के बावजूद अपराध होते है। इसके लिए सामाजिक संगठन एवं सामाजिक क्रियाओं को वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में समझना होगा। सामाजिक अनुसन्धान के व्यावहारिक या उपयोगितावादी उद्देश्य इस प्रकार हैं :

(1) सामाजिक अनुसन्धान का उद्देश्य व्यावहारिक समस्याओं को हल करने में सहायता प्रदान करना है। सामाजिक जीवन में जटिलता के बढ़ने के साथ-साथ सामाजिक या व्याधिकीय समस्याओ मे भी वृद्धि हुई है। सामाजिक अनुसन्धान इन समस्याओं के सम्बन्ध मे वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान कर, कार्य-कारण सम्बन्धों की व्याख्या कर इन्हें हल करने मे योग देता है। यदि आज किसी समस्या को हम अपने रूढिगत विचारों से अलग हटकर वैज्ञानिक प्रविधियों को काम मे लेते हुए समझने का प्रयत्न करें तो उसका समाधान ढूंढ निकालना भी आसान रहेगा।

(2) सामाजिक अनुसन्धान का एक उद्देश्य प्रशासन को सुचारु रूप से चलाने में मदद करना है। प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में मानवीय सम्बन्धों की प्रधानता पाई जाती है। इन सम्बन्धों को समझे बिना प्रशासन को आसानी से नहीं चलाया जा सकता। सामाजिक अनुसन्धान इस कार्य मे योग देता है। सामाजिक अनुसन्धान के द्वारा प्रशासन की समयोपयोगी विधियों का विकास किया जा सकता है। साथ ही प्रशासन के मार्ग में आने वाली बाधाओ का भी पता लगाया जा सकता है। भारत मे पुलिस तथा नौकरशाही से सम्बन्धित सामाजिक अनुसन्धान प्रशासन को अधिक कारगर बनाने की दिशा मे एक प्रयास ही है। औद्योगिक क्षेत्र में होने वाले अनुसन्धानो की भी प्रशासनिक दृष्टि से कम महत्ता नहीं है।

(3) सामाजिक अनुसन्धान सामाजिक योजनाओं को सफलतापूर्वक लागू करने में सहायक सिद्ध हो सकते है। योजनाओं की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उन्हें बनाने में कितनी सावधानी बरती गई है तथा उन्हे जिन लोगों के लिए बनाया गया है, उनका सक्रिय सहयोग प्राप्त करने के लिए उनके मनोभावों, इच्छाओं, आकांक्षाओं को कहां तक इनमे सम्मिलित किया गया है। जब तक लोग किसी विकास योजना को अपनी योजना नहीं समझेंगे, तब तक उनका अपेक्षित मात्रा मे सहयोग प्राप्त नही किया जा सकता। इस जानकारी के लिए हमे सामाजिक अनुसन्धान का ही सहारा लेना पडेगा।

(4) सामाजिक अनुसन्धान का एक उद्देश्य सामाजिक घटनाओं पर अधिक नियन्त्रण प्राप्त करना है। इसी नियन्त्रण द्वारा हम मानव-जीवन को अधिक सुखकर बना सकते है। आज सामाजिक घटनाओ के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान सीमित है और इसी कारण हम उन्हें नियन्त्रित नहीं कर पाये है। परिणामस्वरूप हम व्याधिकीय या सामाजिक समस्याओ, जैसे छात्रो मे अनुशासनहीनता, अपराध, सामाजिक तनाव, युद्ध, आदि से सफलतापूर्वक छुटकारा प्राप्त नही कर सके है। अतः इस क्षेत्र मे सामाजिक अनुसन्धान की विशेष उपयोगिता है।

(5) सामाजिक अनुसन्धान सफल विकल्पों (Alternatives) की खोज में सहायता प्रदान करता है। किसी भी कार्य को करने या समस्या को हल करने के अनेक तरीके या विकल्प हो सकते है। कुछ विकल्प अधिक श्रम-साध्य, अधिक समय लेने वाले और अधिक खर्चीले हो सकते है। इसके अलावा कुछ विकल्पो की सफलता भी संदिग्ध हो सकती है। अतः सामाजिक अनुसन्धान का उद्देश्य कार्य के ऐसे तरीके या सामाजिक समस्याओ को हल करने के ऐसे वैकल्पिक साधन ढूंढ निकालना है जो अधिक कुशल सिद्ध हों, जिनमें श्रम, समय एवं धन भी कम लगे।

सामाजिक अनुसन्धान के व्यावहारिक उद्देश्य से हमें यह नहीं समझ लेना चाहिए कि वैज्ञानिक या अनुसन्धानकर्ता जिस ज्ञान की प्राप्ति करता है, उसका प्रयोग वह स्वयं मानवीय समस्याओं को हल करने के लिए करता है। वह तो सामाजिक जीवन और उससे सम्बन्धित समस्याओं को समझने में योग देता है, समस्याओं के कारणों को ढूंढ निकालता है, उन्हें हल करने हेतु उपयोगी तरीके मात्र बताता है। समस्याओं के समाधान का वास्तविक कार्य तो राष्ट्र-नेताओं, समाज-सुधारकों, प्रशासकों, आदि के द्वारा ही किया जाता है। श्रीमती पी वी. यंग ने सामाजिक अनुसन्धान के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए ठीक ही लिखा है कि सामाजिक अनुसन्धान, सामाजिक जीवन के बारे में खोज, विश्लेषण एवं अमूर्तिकरण करने की एक वैज्ञानिक पद्धति है। आगे आपने बताया है कि सामाजिक अनुसन्धान द्वारा अपरिभाषित सामाजिक घटनाओं की व्याख्या, भ्रामक या सन्देहपूर्ण घटनाओं का स्पष्टीकरण एवं सामाजिक जीवन सम्बन्धी भ्रान्त धारणाओं को दूर किया जाता है।

स्पष्ट है कि सामाजिक अनुसन्धान में सामाजिक जीवन को उत्तमता के साथ समझने और व्याधिकीय समस्याओं का सही परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण करने पर जोर दिया जाता है। यहां हमें इस बात को भी ध्यान में रखना है कि सामाजिक अनुसन्धानकर्ता अपने को मूल्य निर्णयों (Value Judgements) से मुक्त रखता है, मूल्य तटस्थता की नीति का पालन करता है। वह यह नहीं बताता कि क्या होना चाहिए या क्या नहीं होना चाहिए, वह तो क्या, कैसे, कब, आदि प्रश्नों का अनुसन्धान के आधार पर उत्तर देता है।

सामाजिक अनुसन्धान की महत्ता (उपयोगिता)
[IMPORTANCE (UTILITY) OF SOCIAL RESEARCH]

पिछड़े हुए देशों, अर्द्ध-विकसित देशों या विकासशील देशों में सामाजिक नियोजन (Social Planning) का इस दृष्टि से महत्व पाया जाता है कि उन्हें विकास के पथ पर आगे बढना है, अपने यहां सुख-समृद्धि लानी है। इसके लिए उन्हें अपने समाज की सामाजिक सरचना को भली-भांति समझना होगा, सामाजिक समस्याओं को जानना होगा, लोगों की इच्छाओं, आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी होगी। यह

[redacted]

लिए सामाजिक अनुसन्धान का सहारा लेना अत्यन्त आवश्यक है। यहां हम सामाजिक अनुसन्धान की उपयोगिता या महत्व को अग्र बिन्दुओं के अन्तर्गत व्यक्त कर सकते हैं :

(1) अज्ञानता को दूर करने में सहायक (Helpful in removing Ignorance)— अज्ञानता अनेक समस्याओ की जननी है। आज अनेक अन्धविश्वासों, भ्रान्त धारणाओं, क्षुद्र स्वार्थों, संकुचित आस्थाओं, सामाजिक क्रियाओ की सही जानकारी के अभाव एवं अशिक्षा के कारण भारत अनेक समस्याओं से ग्रसित है। आज यहां भाषावाद, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, प्रान्तीयता, आदि राष्ट्रीय एकीकरण के मार्ग में बहुत बड़ी बाधाएं हैं। इनसे तभी छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है जब सामाजिक अनुसन्धान के द्वारा अज्ञानता को दूर किया जाय।

(2) **नवीन ज्ञान की प्राप्ति में सहायक** (Helpful in Acquiring New Knowledge)—मानव-सभ्यता का विकास ज्ञान की प्राप्ति पर ही बहुत कुछ आधारित है। यदि यह कहा जाय कि सभ्यता का विकास एवं मानव की सुख-सुविधाओं में वृद्धि का प्रमुख कारण नवीन ज्ञान की प्राप्ति ही रहा है तो इसमें किसी प्रकार की कोई अतिशयोक्ति नहीं है। हेरिंग ने ठीक ही लिखा है, "अनुसन्धान का प्रत्यक्ष प्रकार्य ज्ञान के मौजूदा भण्डार में नवीन ज्ञान को जोड़ना है।"[1] नवीन ज्ञान से जहां मानव की जिज्ञासा एवं ज्ञान-पिपासा शान्त होती है, उसे आत्मसन्तोष मिलता है, वहां साथ ही प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने में सहायता भी मिलती है। नवीन ज्ञान रूढ़िवाद एवं अन्ध-विश्वासों से छुटकारा दिलाने में भी योग देता है।

(3) **सामाजिक समस्याओं को हल करने में सहायक** (Helpful in Solving Social Problems)—देश में व्याप्त विभिन्न व्याधिकीय एवं सामाजिक समस्याओ से हम भली-भांति परिचित है। आज बेकारी, निर्धनता, मादक-द्रव्य-व्यसन, अपराध, बाल-अपराध, भ्रष्टाचार, अनुशासनहीनता, जातिवाद, दहेज-समस्या, आदि के दुष्परिणामों को कौन नहीं जानता। इन समस्याओं ने देश को विकास के पथ पर आगे बढने में बाधा उत्पन्न की है। इन समस्याओं को सही परिप्रेक्ष्य में समझने हेतु आवश्यक जानकारी सामाजिक अनुसन्धान की सहायता से ही प्राप्त होती है।

(4) **कल्याण कार्यों में सहायक** (Helpful in Welfare Activities)—भारत एक कल्याणकारी राज्य है। यहां पिछड़े वर्गों, जनजातीय लोगों, अनुसूचित जातियों, सीमान्त किसानों, श्रमिकों, बन्धुआ मजदूरों, आदि की अनेक समस्याएं है। इन्हें आर्थिक दृष्टि से रोजगार के समुचित अवसर उपलब्ध कराना है, इनकी अज्ञानता को दूर करना है, इन्हें समाज की मुख्य धारा में समाहित करना है। यह सब कुछ उसी समय सम्भव है जब इन सबके सम्बन्ध में वैज्ञानिक आधार पर आवश्यक जानकारी प्राप्त की जाये। इसके लिए सामाजिक अनुसन्धान का ही सहारा लेना होगा।

(5) **सामाजिक नियन्त्रण में सहायक** (Helpful in Social Control)—आज अनेक कारणों से सामाजिक परिवर्तन की गति तेज हुई है। द्रुतगामी परिवर्तनों के कारण सामाजिक व्यवस्था मे असन्तुलन की स्थिति उत्पन्न हुई है। परिणामस्वरूप वैयक्तिक, पारिवारिक एवं सामाजिक विघटन बढ़ा है। सामाजिक अनुसन्धान के द्वारा ही मानवीय सम्बन्धो को व्यवस्थित बनाने वाली प्रक्रियाओं का पता लगाया जा सकता और असन्तुलन व विघटन की स्थिति से छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है। ऐसा करके ही सामाजिक नियन्त्रण के लिए दृढ़ आधार प्रदान किया जा सकता है।

(6) **प्रशासन एवं समाज-सुधार मे उपयोगिता** (Utility in Administration and Social Reforms)—प्रशासनिक सेवाओं में उच्च पदो पर आसीन अधिकारियों के लिए सामाजिक अनुसन्धान द्वारा प्राप्त ज्ञान की विशेष उपयोगिता है। वे अपनी भूमिका को विभिन्न परिस्थितियों मे उसी समय उत्तमता के साथ निभा सकते हैं जब उन्हें इस बारे में सही-सही जानकारी हो। यह जानकारी सामाजिक अनुसन्धान ही प्रदान करता है। समाज-सुधारक अपने सीमित ज्ञान के आधार पर विभिन्न समस्याओं की वास्तविक प्रकृति को ठीक से नहीं समझ पाते। ऐसी स्थिति में वे इनका सफलतापूर्वक समाधान नही कर पाते। वे समाज-सुधारक के

1 "The obvious function of research is to add new knowledge to the existing store"
—P. Hearring, *Research for Public Policy*, p. 15.

रूप में अपनी भूमिका प्रभावशाली ढंग से उसी समय निभा सकते हैं जब उन्हें सामाजिक अनुसन्धान द्वारा आवश्यक सामग्री या ज्ञान प्रदान किया जाय।

(7) **भविष्यवाणी करने में सहायक** (Helpful in Prediction)—सामाजिकअनुसन्धान द्वारा प्राप्त ज्ञान की इस रूप में विशेष उपयोगिता है कि इसके आधार पर वर्तमान को समझकर भविष्य के बारे में अनुमान लगाया जा सकता है, भविष्य की सामाजिक घटनाओं के बारे में बताया जा सकता है। जब अनुसन्धान द्वारा भविष्य में उत्पन्न होने वाली दशाओं का पता लगा लिया जाता है, तो उनके साथ सफलतापूर्वक समायोजन और सामाजिक जीवन में सन्तुलन स्थापित किया जा सकता है।

(8) **सामाजिक विज्ञानों के विकास में योग** (Helpful in the Development of Social Sciences)—सामाजिक अनुसन्धान की सहायता से सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में अधिक वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त होती है और परिणामस्वरूप समाजशास्त्र की ज्ञान-राशि में वृद्धि होती है। साथ ही सामाजिक अनुसन्धान के द्वारा अध्ययन की नवीन प्रविधियों एवं उपकरणों का विकास भी किया जाता है। इन दोनों ही स्थितियों में एक विज्ञान के रूप में समाजशास्त्र के विकास में योग मिलता है क्योंकि इससे सामाजिक घटनाओं पर नियन्त्रण बढता जाता है। इसके अलावा सामाजिक अनुसन्धान द्वारा प्राप्त निष्कर्ष अन्य सामाजिक विज्ञानों के विकास में भी योग देते हैं। इसका कारण यह है कि सभी सामाजिक विज्ञान एक-दूसरे के पूरक हैं तथा मूलतः सभी के द्वारा मानवीय सम्बन्धों, व्यवहारों तथा सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। एक सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में किये गये अनुसन्धानों के निष्कर्षों से अन्ततः अन्य सामाजिक विज्ञान भी लाभान्वित होते ही है।

(9) **सैद्धान्तिक महत्व** (Theoretical Importance)—सामाजिक अनुसन्धान वास्तव में समाज-विज्ञानों का आधार है। आज विभिन्न विज्ञानों के लिए अधिकाधिक प्रामाणिक सामग्री सामाजिक अनुसन्धान के द्वारा ही प्राप्त होती है। अनुसन्धान द्वारा प्राप्त ज्ञान समाज एवं सामाजिक जीवन के सम्बन्ध में हमारी जानकारी में उत्तरोत्तर वृद्धि ही करता है। फलस्वरूप सामाजिक क्रियाओं को समझने में सहायता मिलती है। साथ ही इससे नवीन ज्ञान की सम्भावनाएं बढ़ती जाती है। जैसे-जैसे ज्ञान मे वृद्धि होती है, उसके साथ ही साथ अनेक अन्धविश्वासों तथा रूढिगत विचारों से छुटकारा प्राप्त हो जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सामाजिक अनुसन्धान सैद्धान्तिक ज्ञान में वृद्धि करने के साथ-साथ मानवीय समस्याओं के हल खोजने मे भी अत्यन्त सहायक है।

सामाजिक अनुसन्धान की समस्याएं
(PROBLEMS OF SOCIAL RESEARCH)

प्रत्येक सामाजिक विज्ञान की अनुसन्धान सम्बन्धी अपनी-अपनी कुछ विशिष्ट समस्याएं होती हैं और यह बात समाजशास्त्रीय अनुसन्धान के लिए भी सही है। इन समस्याओं के कारण समाजशास्त्र की वैज्ञानिक प्रकृति के सम्बन्ध में आपत्ति उठाई जाती है। ये समस्याएं इस प्रकार है :

(1) **अवधारणाओ में स्पष्टता का अभाव** (Lack of Clarity in Concepts)—प्रत्येक विज्ञान की अपनी कुछ विशिष्ट अवधारणाएं होती है जिनका उस विषय के सभी विद्वान समान अर्थ मे प्रयोग करते हैं। ये अवधारणाएं सामाजिक अनुसन्धान को आगे बढ़ाने में योग देती हैं। समाजशास्त्र में जिन अवधारणाओं का प्रयोग किया जाता है, उनके अर्थ के सम्बन्ध में विद्वानो मे मतैक्यता का अभाव है। यदि किसी अवधारणा का सभी वैज्ञानिकों द्वारा

समान अर्थ में प्रयोग नहीं किया जायेगा तो उससे सामाजिक अनुसन्धान के मार्ग में बाधा ही आयेगी। ऐसी स्थिति में अनुसन्धान के परिणामस्वरूप जो निष्कर्ष निकाले जायेगे, उनमें वैज्ञानिकता का अभाव होगा। अभी सामाजिक विज्ञान प्राकृतिक विज्ञानों के समान सर्वमान्य शब्दावली या अवधारणाओं का विकास नहीं कर पाये हैं।

(2) **सामाजिक घटनाओं की जटिल प्रकृति** (Complex Nature of Social Phenomena)—जटिल प्रकृति के कारण सामाजिक घटनाओ का एक ओर आसानी से अध्ययन नही किया जा सकता और दूसरी ओर ऐसे अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों को प्रामाणिक नही कहा जा सकता। इसका कारण यह है कि किसी एक सामाजिक घटना के लिए अनेक कारक या चल (Variables) उत्तरदायी होते है जिनको अलग-अलग करके सामाजिक घटना के घटित होने में प्रत्येक के प्रभाव को नहीं आंका जा सकता। ऐसी स्थिति में सामाजिक अनुसन्धान के मार्ग मे एक बहुत बड़ी बाधा उपस्थित हो जाती है।

(3) **वस्तुनिष्ठता (वैषयिकता) प्राप्त करने में कठिनाई** (Difficulty in Achieving Objectivity)—सामाजिक अनुसन्धान में वैषयिकता का विशेष महत्व है। इसके अभाव में सामाजिक अनुसन्धान के आधार पर प्राप्त किसी भी निष्कर्ष को वैज्ञानिक निष्कर्ष नहीं कहा जा सकता। यहां अनुसन्धानकर्ता उस समाज, सामाजिक जीवन या सामाजिक घटना से सम्बन्धित होता है जिसका कि साधारणतः वह अभिन्न अंग होता है। वह अपने आपको अध्ययन विषय से पूर्णतः अलग नहीं कर पाता है। उसके स्वय के विचार एवं भावनाएं अध्ययन में बाधा पहुंचाते है। प्राकृतिक विज्ञानों में वैषयिकता आसानी से प्राप्त की जा सकती है जबकि सामाजिक विज्ञानों में इसका अभाव पाया जाता है, अतः आवश्यकता ऐसी प्रविधियो एवं उपकरणों के विकास की है जिनकी सहायता से सामाजिक जीवन व घटनाओं का अध्ययन वैयक्तिक पक्षपात से दूर रहकर वैषयिकता के साथ किया जा सके।

(4) **सुनिश्चित माप की समस्या** (Problem of exact Measurement)—सामाजिक अनुसन्धान मे सामाजिक सम्बन्धो, व्यवहारों एवं मानवीय प्रकृति का प्रमुखतः अध्ययन किया जाता है। इन सबको मापना सम्भव नहीं है क्योंकि ये गुणात्मक हैं न कि परिमाणात्मक। सामाजिक सम्बन्ध या मानवीय प्रकृति या व्यवहार को मापना-तोलना सम्भव नहीं है। इसका कारण यह है कि सामाजिक घटनाओ को मापने का कोई सार्वभौमिक पैमाना विकसित नही हुआ है। ऐसी स्थिति मे सामाजिक अनुसन्धानकर्ता के सम्मुख कठिनाई उपस्थित हो जाती है। वर्तमान मे सामाजिक घटनाओं को मापने के लिए यद्यपि कुछ पैमानों का विकास अवश्य हुआ है परन्तु वे सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत नही है। इसके अलावा उनका प्रयोग सीमित क्षेत्र में ही किया जा सकता है।

(5) **प्रयोगात्मक अनुसन्धान का अभाव** (Lack of Experimental Research)—अभी सामाजिक विज्ञानो मे प्रयोगात्मक विधियों का प्रयोग नहीं के बराबर पाया जाता है। इसका कारण यह है कि इन विधियो के प्रयोग के लिए सामाजिक विज्ञानों में अभी समुचित दशाओ का अभाव पाया जाता है। अतः कार्य-कारण सम्बन्धों की खोज में कठिनाई आती है।

(6) **प्रमाणीकरण (सत्यापन) की समस्या** (Problem of Verification)—सामाजिक अनुसन्धानो के आधार पर प्राप्त किये गये निष्कर्षो की विश्वसनीयता का पता लगाना वैज्ञानिक दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु यह कार्य सामाजिक विज्ञानो में बहुत कठिन है क्योंकि यहां जिन सामाजिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है, उनकी पुनरावृत्ति कराना सम्भव

नहीं है। अतः निष्कर्षो की विश्वसनीयता का परीक्षण सामाजिक अनुसन्धान की एक प्रमुख समस्या है।

प्रश्न

1. सामाजिक अनुसन्धान के अर्थ एवं उद्देश्य का स्पष्ट विवेचन कीजिए। सामाजिक अनुसन्धान एवं सामाजिक सर्वेक्षण में अन्तर कीजिए। **(अजमेर, 1993)**
2. सामाजिक अनुसन्धान की परिभाषा दीजिए और इसकी प्रकृति (विशेषताओं) की विवेचना कीजिए। **(अजमेर, 1990)**
3. सामाजिक अनुसन्धान की परिभाषा दीजिए। सामाजिक अनुसन्धान की प्रकृति एव क्षेत्र को समझाइए।
4. सामाजिक अनुसंधान क्या है ? सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्यों एवं सीमाओं का विश्लेषण कीजिए। **(अजमेर, 1998)**
5. (अ) सामाजिक अनुसन्धान को परिभाषित कीजिए।
   (ब) सामाजिक सर्वेक्षण एवं सामाजिक अनुसन्धान में अन्तर कीजिए।
   (अजमेर, 1995; राजस्थान, 1996, 97)
6. सामाजिक अनुसंधान के अर्थ एवं उद्देश्यो को समझाइये। **(अजमेर, 2000)**
7. सामाजिक अनुसन्धान क्या है ? सामाजिक अनुसन्धान और सामाजिक सर्वेक्षणा में अन्तर स्पष्ट कीजिये। ***(राजस्थान, 2000)***

लघु उत्तरीय प्रश्न

निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(1) सामाजिक अनुसन्धान को परिभाषित कीजिए?
(2) सामाजिक अनुसन्धान के उद्देश्य क्या है?
(3) सामाजिक अनुसन्धान की प्रकृति क्या है?
(4) सामाजिक अनुसन्धान की कोई चार उपयोगिताएं बताइए?
(5) सामाजिक अनुसन्धान की समस्याएं क्या हैं?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित वाक्यो में से सत्य और असत्य वाक्य छाटिए :
   (i) सामाजिक घटनाओं के बारे मे वैज्ञानिक आधार पर नवीन ज्ञान प्राप्त करना ही अनुसन्धान है।
   (ii) अरब सागर में पेट्रोल की खोज सामाजिक अनुसन्धान है।
   (iii) सामाजिक अनुसन्धान में दार्शनिक आधार पर घटनाओं का परीक्षण किया जाता है।
   (iv) सामाजिक अनुसन्धान के लिए प्राक्कल्पना (Hypothesis) की आवश्यकता होती है।
   (v) सामाजिक अनुसन्धान में सदैव ही घटनाओ का कार्य-कारण के सम्बन्ध में अध्ययन नहीं किया जाता।
   (vi) सामाजिक अनुसन्धान का उद्देश्य नए सिद्धान्तों का निर्माण व पुराने का पुनः परीक्षण करना है।
   (vii) सामाजिक अनुसन्धान शुद्ध वैज्ञानिक अध्ययन है अतः इसका व्यावहारिक उपयोग से कोई लेना-देना नहीं है।
   (viii) सामाजिक अनुसन्धान के आधार पर भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं है।

2 निम्नांकित वाक्यो मे रिक्त स्थानों की पूर्ति कोष्ठक मे दिए गए शब्दों में से कीजिए :

(i) सामाजिक अनुसन्धान मे..... तथ्यो की खोज की जाती है। (प्राचीन/नूतन)

(ii) सामाजिक अनुसन्धान मे...का सहारा लिया जाता है। (उपकल्पना/दर्शन)

(iii) सामाजिक अनुसन्धान सामाजिक घटनाओ के बारे में भविष्यवाणी करने मे.....करता है। (सहायता/सहायता नहीं)

(iv) सामाजिक घटनाए.....होती हैं। (सरल/जटिल)

(v) सामाजिक सम्बन्धों का सुनिश्चित माप (exact measurement) .....है। (सम्भव/असम्भव)

3. निम्नाकित पुस्तकों के लेखको के नाम बताइए :

1 साइन्टिफिक सोशियल सर्वे एण्ड रिसर्च
2 सर्वे मैथड्स इन सोशियल इन्वेस्टीगेशन
3 रिसर्च मेथड्स इन सोशियल रिलेशन्स
4 मैथड्स ऑफ सोशियल रिसर्च
5 दि डिजायन ऑफ सोशियल रिसर्च
6 सोशियल सर्वेज एण्ड सोशियल एक्शन
7. दि टूल्स ऑफ सोशियल साइन्स
8. सोशियल रिसर्च
9 एन इन्ट्रोडक्शन टू लॉजिक एण्ड साइन्टिफिक मैथड्

[उत्तर—1 सत्य वाक्य—i, iv, vi शेष सभी असत्य, 2 (i) नवीन, (ii) उपकल्पना, (iii) सहायता, (iv) जटिल, (v) असम्भव, 3 (1) पी. वी यग (2) सी. ए. मोजर (3) सेल्टिज, जहोडा एवं अन्य (4) गुडे एवं हाट (5) आर. एल. एकॉफ (6) मार्क अब्राहम (7) जॉन मेज (8) लुण्डबर्ग (9) कोहेन एवं नागेल]

2

सामाजिक अनुसन्धान के प्रकार

[TYPES OF SOCIAL RESEARCH]

सामाजिक शोध-अध्ययनों में कई आधारो पर भिन्नता पायी जाती है। कुछ शोध-कार्य किसी जिज्ञासा को शान्त करने के लिए, तो कुछ केवल ज्ञान-प्राप्ति के लिए किये जाते हैं, कुछ का लक्ष्य प्राक्कल्पनाओं का निर्माण तथा कुछ का किसी प्राक्कल्पना की सत्यता की जांच करना होता है। किसी शोध का लक्ष्य किसी घटना का यथार्थ चित्रण करना, किसी का सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु विकल्पों का पता लगाना तथा कुछ का सामाजिक नियोजन एवं नियोजित परिवर्तन की प्रभावकता का पता लगाना और समाज-कल्याण व विकास कार्यक्रमों के सफल संचालन में योग देना है। इन विभिन्न लक्ष्यो या प्रयोजनों के आधार पर सामाजिक शोध या अनुसन्धान के निम्नलिखित प्रकार हो सकते हैं :

I. अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध
(EXPLORATORY OR FORMULATIVE RESEARCH)

जब शोधकर्ता किसी सामाजिक घटना के पीछे छिपे कारणों को ढूंढ़ निकालना चाहता है ताकि किसी समस्या के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष के सम्बन्ध में पर्याप्त ज्ञान प्राप्त हो सके, तब अध्ययन के लिए जिस शोध का सहारा लिया जाता है, उसे अन्वेषणात्मक या निरूपणात्मक शोध कहते हैं। इस प्रकार की शोध का उद्देश्य किसी समस्या के सम्बन्ध में प्राथमिक जानकारी प्राप्त करके प्राक्कल्पना (Hypothesis) का निर्माण और अध्ययन की रूपरेखा तैयार करना है। **हंसराज** नामक विद्वान ने बताया है, "अन्वेषणात्मक शोध किसी भी विशेष अध्ययन के लिए प्राक्कल्पना का निर्माण करने तथा उससे सम्बन्धित अनुभव प्राप्त करने के लिए अनिवार्य है।"[1] इस प्रकार के शोध द्वारा विषय अथवा समस्या का कार्य-कारण सम्बन्ध ज्ञात हो जाता है। परिणामस्वरूप घटनाओं में व्याप्त नियमितता एवं शृंखलाबद्धता को स्पष्टतः समझा जा सकता है। इस प्रकार के शोध के माध्यम से शोध-विषय की उपयुक्तता का पता भी लगाया जाता है। उदाहरण के रूप में, यदि हम यह जानना चाहते हैं कि किशोरों एवं युवकों में विचलित व्यवहार या अपराधी व्यवहार के लिए कौन-कौन से कारण उत्तरदायी हैं तो इसके लिए हमें अन्वेषणात्मक शोध का सहारा ही लेना पड़ेगा।

इस प्रकार की **शोध की सफलता के लिए कुछ अनिवार्य** दशाओं का होना आवश्यक है। अन्य शब्दों मे ऐसे शोध के लिए अग्रलिखित अनिवार्यताओं पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए :

1 Hans Raj, *Theory and Practice in Social Research*, p. 69.

(i) **सम्बद्ध साहित्य का अध्ययन** (Review of Pertinent Literature)—विषय से सम्बन्धित प्रकाशित एवं अप्रकाशित साहित्य का अध्ययन प्रथम अनिवार्यता है। इसके अभाव मे हम विषय को सही रूप में नही समझ सकेंगे और न ही ठीक से प्राक्कल्पना का निर्माण कर पायेंगे। अतः आवश्यक है कि सर्वप्रथम विषय से सम्बन्धित उपलब्ध साहित्य का गहनता के साथ अध्ययन किया जाय। इससे श्रम, समय तथा व्यय में बचत होगी।

(ii) **अनुभव सर्वेक्षण** (Experience Survey)—यहां विषय से सम्बन्धित अनुभव रखने वाले लोगों का पता लगाना, अध्ययन हेतु उनका चुनाव करना, उनसे सम्पर्क स्थापित करना और उनके अनुभवों से लाभ उठाना इस प्रकार के शोध में आवश्यक है। कभी-कभी शिक्षा के अभाव, साधनों की सीमितता एवं कुछ अन्य कारणों से कुछ अनुभव प्राप्त व्यक्ति अपने अनुभवों को लिखित में मूर्त रूप नहीं दे पाते। ऐसे व्यक्तियों को खोज निकालना और उनके अनुभवों से विषय के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना शोधकर्ता के लिए नितान्त आवश्यक है। यह जानकारी उसके लिए पथ-प्रदर्शक के रूप में कार्य करेगी।

(iii) **सही सूचनादाताओं का चुनाव** (Selection of Proper Respondents)—शोध की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि ऐसे सूचनादाताओं का चयन किया जाय जिनसे विषय के सम्बन्ध में ऐसी महत्वपूर्ण जानकारी मिल सके जो अध्ययन हेतु वास्तविक अन्तर्दृष्टि प्रदान कर सके। सूचनादाताओं का चुनाव प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों ही विधियों के द्वारा किया जाना चाहिए। उदाहरण के रूप मे, यदि ग्राम पंचायतों का अध्ययन करना है तो प्रत्यक्ष विधि के अन्तर्गत सरपंचों, पंचों तथा ग्राम पंचायतों से सम्बन्धित अधिकारियों व कर्मचारियों में से कुछ का चयन किया जाना चाहिए। अप्रत्यक्ष विधि के अन्तर्गत उन लोगों का चयन किया जाना चाहिए जो प्रत्यक्ष रूप से ग्राम पंचायत से सम्बन्धित तो नहीं हैं, परन्तु जिनके पास इससे सम्बन्धित महत्वपूर्ण जानकारी है। ऐसे व्यक्तियों में स्कूल अध्यापकों, अन्य सरकारी कर्मचारियों तथा गांव के कुछ सम्मानित एवं समझदार नागरिकों को लिया जा सकता है। इससे विषय के विभिन्न पक्षों को समझने में मदद मिलेगी।

(iv) **उपयुक्त प्रश्न पूछना** (Proper Questioning)—शोधकार्य की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि सूचना प्राप्ति हेतु प्रश्न बहुत सावधानीपूर्वक बनाये जायें। साथ ही किसी उपयुक्त विधि द्वारा प्रश्न पूछे जायें ताकि विषय से सम्बन्धित सही जानकारी मिल सके। इसके अभाव में महत्वपूर्ण सूचनाएं उपलब्ध नही हो सकेंगी।

(v) **अन्तर्दृष्टि-प्रेरक घटनाओं का विश्लेषण** (Analysis of insight stimulating cases)—विषय के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध मे शोधकर्ता का ज्ञान सामान्यतः सीमित होता है। इसी कमी को दूर करने हेतु आवश्यक है कि सभी पहलुओं का गहनता के साथ अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाये, सभी पक्षों को उजागर करने वाली घटनाओं का सूक्ष्म अवलोकन एवं अध्ययन किया जाये। ऐसा करने से विषय के सम्बन्ध में एक ऐसी अन्तर्दृष्टि प्राप्त होगी जो शोध-कार्य की सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

अन्वेषणात्मक शोध के प्रमुख कार्य (Main Functions of Exploratory Research)—अन्वेषणात्मक शोध के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं :

(i) पूर्व निर्धारित प्राक्कल्पनाओं का तात्कालिक दशाओं के सन्दर्भ मे परीक्षण करना।

(ii) महत्वपूर्ण सामाजिक समस्याओं की ओर शोधकर्ता के ध्यान को आकर्षित करना।

(iii) अनुसन्धान हेतु नवीन प्राक्कल्पनाओं को विकसित करना।

(iv) अन्तर्दृष्टि-प्रेरक घटनाओं का विश्लेषण करना एवं अध्ययन के नवीन क्षेत्रो को विकसित करना।

(v) विभिन्न शोध-पद्धतियों के प्रयोग की उपयुक्तता की सम्भावना का पता लगाना।

(vi) शोध-कार्य को एक विश्वसनीय रूप में प्रारम्भ करने हेतु आधार-शिला तैयार करना।

(vii) विज्ञान की सीमाओ का विस्तार कर उसके क्षेत्र को विकसित करना।

(viii) अध्ययन हेतु महत्वपूर्ण विषयो पर ध्यान केन्द्रित करने हेतु शोधकर्ता को प्रेरित करना।

(ix) शोध-कार्य से सम्बन्धित अनिश्चितता की स्थिति को दूर कर उसे निश्चित स्वरूप प्रदान करना।

अन्वेषणात्मक शोध के उपर्युक्त कार्यो से स्पष्ट है कि यह उन आधारो को प्रदान करता है जो सफल शोध-कार्य के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इसी बात को स्पष्ट करने हेतु सेलटिज एवं उनके साथियों ने बताया है :"अन्वेषणात्मक शोध (अनुसन्धान) उस अनुभव को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है जो कि अधिक निश्चित शोध हेतु उचित प्राक्कल्पना (Hypothesis) के निर्माण में सहायक होगा।"[1]

II. वर्णनात्मक शोध (Descriptive Research)

वर्णनात्मक शोध एक ऐसी शोध है जिसका उद्देश्य विषय या समस्या के सम्बन्ध मे यथार्थ या वास्तविक तथ्यों को एकत्रित कर उनके आधार पर एक विवरण प्रस्तुत करना है। सामाजिक जीवन से सम्बन्धित कई पक्ष ऐसे होते है जिनके सम्बन्ध में भूतकाल में कोई गहन अध्ययन नहीं किये गये। ऐसी दशा में यह आवश्यक हो जाता है कि सामाजिक जीवन से सम्बद्ध विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जाय, वास्तविक तथ्य या सूचनाएं एकत्रित की जाये और उन्हें जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया जाय। यहां मुख्य जोर इस बात पर दिया जाता है कि विषय से सम्बन्धित एकत्रित किये गये तथ्य वास्तविक एवं विश्वसनीय हों अन्यथा जो वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत किया जायेगा, वह वैज्ञानिक होने के बजाय दार्शनिक ही होगा। यदि हमें किसी जाति, समूह या समुदाय के सामाजिक जीवन के सम्बन्ध में कोई जानकारी प्राप्त नहीं है तो हमारे लिए आवश्यक है कि किसी वैज्ञानिक प्रविधि को काम मे लेते हुए वास्तविक तथ्य एकत्रित किये जायें। तथ्यो को प्राप्त करने हेतु अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, प्रश्नावली अथवा किसी अन्य प्रविधि का प्रयोग किया जा सकता है। इन प्रविधियो के प्रयोग का उद्देश्य यही है कि यथार्थ सूचनाएं एकत्रित की जायें। ऐसे शोध में घटनाओं को यथार्थ रूप में चित्रित करने पर विशेष बल दिया जाता है।

वर्णनात्मक शोध की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :

(i) इस प्रकार की शोध (अनुसन्धान) में विषय या समस्या के विभिन्न पक्षों पर सविस्तार प्रकाश डाला जाता है। (ii) यदि किसी विषय से सम्बन्धित कोई अध्ययन पूर्व में नही किया गया हो तो उसके अध्ययन के लिए वर्णनात्मक शोध को ज्यादा उपयुक्त समझा जाता है। (iii) इस प्रकार के अध्ययन में सामान्यतः किसी प्राक्कल्पना का निर्माण नहीं किया जाता। (iv) वर्णनात्मक शोध के विभिन्न चरण वैज्ञानिक विधि के चरणों के समान ही होते हैं। इसमें विषय का सावधानीपूर्वक चुनाव, उचित प्रविधियों का प्रयोग, निदर्शन-प्रणाली द्वारा

1 Selltiz Jahoda, Deutsch, Cook, *Research Methods in Social Relations*, p. 33.

उत्तरदाताओं का चयन, वास्तविक तथ्यो का संकलन तथा पक्षपात-रहित होकर परिणामों का विश्लेषण करना, आदि बातें आती है। (v) वर्णनात्मक अनुसन्धान मे शोधकर्ता की भूमिका एक समाज-सुधारक या भविष्यवक्ता के रूप में नहीं होकर एक वैज्ञानिक अर्थात् निष्पक्ष अवलोकन-कर्ता के रूप मे होती है।

वर्णनात्मक शोध में निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है :

(i) शोध विषय या समस्या का चुनाव सावधानीपूर्वक इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि उससे सम्बद्ध सभी आवश्यक एवं निर्भर-योग्य तथ्य एकत्रित किये जा सकें। (ii) शोध-कार्य को वैज्ञानिक आधार प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि तथ्यो के संकलन के लिए प्रविधियों का चुनाव पूर्ण सावधानी के साथ किया जाय। (iii) वर्णनात्मक शोध में वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण बनाये रखने की अत्यन्त आवश्यकता है। इसका कारण यह है कि पक्षपात, मिथ्या झुकाव एवं पूर्वधारणा, आदि के अध्ययन में प्रवेश कर जाने की काफी सम्भावना रहती है। अपने अध्ययन-विवरण को वस्तुनिष्ठता की कीमत पर रोचक बनाने के लोभ से शोधकर्ता को अपने आपको बचाना चाहिए। (iv) वर्णनात्मक शोध-कार्य काफी विस्तृत होता है, अतः उसे समय-बद्ध एवं व्यय मे मितव्ययितापूर्ण होना आवश्यक है। ऐसे अध्ययन में समय एवं धन की काफी आवश्यकता पड़ती है। अतः इस बात की सावधानी रखी जानी चाहिए कि अनावश्यक मदों पर श्रम, समय एवं धन को नष्ट नहीं किया जाय।

वर्णनात्मक शोध-कार्य के सफलतापूर्वक संचालन के लिए निम्नलिखित चरणों से गुजरना आवश्यक होता है :

(i) शोध के उद्देश्यों का प्रतिपादन (Formulating the Objectives of the Study)—सर्वप्रथम शोध के उद्देश्यों को निर्धारित किया जाता है, तत्पश्चात् उद्देश्यों को स्पष्टतः परिभाषित किया जाता है। यहां शोध से सम्बद्ध मौलिक प्रश्नों को स्पष्ट किया जाता है। ऐसा करने से अनावश्यक तथ्यों के संकलन एवं धन व श्रम की बर्बादी को रोका जा सकता है।

(ii) **तथ्य-संकलन की प्रविधियों का चुनाव** (Selection of the Techniques of Data Collection)—तथ्य-संकलन की विभिन्न प्रविधियो में से विषय या समस्या की प्रकृति के अनुरूप उपयुक्त प्रविधि का चुनाव शोध-कार्य को सफलतापूर्वक आगे बढ़ाने की दृष्टि से नितान्त आवश्यक है। इसके अभाव में विषय से सम्बद्ध प्रामाणिक तथ्यों एवं आंकड़ों को एकत्रित नही किया जा सकता।

(iii) **निदर्शन का चुनाव** (Selection of Samples)—समूह या समग्र की प्रत्येक इकाई का समय एवं साधनों की सीमितता के कारण अध्ययन किया जाना सम्भव नहीं होता। अतः सम्पूर्ण जनसंख्या में से निदर्शन की किसी उपयुक्त विधि की सहायता से कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का चुनाव कर लिया जाता है। इन इकाइयो का अध्ययन कर जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं, वे सम्पूर्ण जनसंख्या पर लागू होते है तथा साथ ही काफी विश्वसनीय भी होते है।

(iv) **आंकड़ों का संकलन एवं उनकी जांच** (Collection and Scrutiny of Data)—अध्ययन की इकाइयों का किसी निदर्शन-पद्धति द्वारा चुनाव कर लेने के पश्चात् वैज्ञानिक प्रविधियो अर्थात् अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची अथवा प्रश्नावली का सहारा लेते हुए आवश्यक तथ्य एकत्रित किये जाते है। साथ ही उचित रीति से इन तथ्यो की जांच भी की जाती है ताकि अध्ययन में अनावश्यक बातें सम्मिलित नही हो सकें।

(v) **तथ्यों का विश्लेषण** (Analysis of Data)—इसका तात्पर्य यह है कि जिन तथ्यों को संकलित किया गया है, उनका समानता एवं भिन्नता के आधार पर अलग-अलग समूहों में वर्गीकरण किया जाता है, उनका सारणीयन किया जाता है। साथ ही तथ्यों की सांख्यिकीय विवेचना भी की जाती है। इस कार्य हेतु वस्तुनिष्ठ एव प्रशिक्षित अध्ययनकर्ता का होना परम आवश्यक है।

(vi) **प्रतिवेदन (रिपोर्ट) का प्रस्तुतीकरण** (Reporting)—यहां अध्ययन विषय के सम्बन्ध में तथ्य-युक्त विवरण एवं सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते है। यहां इस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए कि लोग उसका भिन्न-भिन्न अर्थ नही लगा सकें।

उपर्युक्त चरणों से गुजर कर ही वर्णनात्मक शोध-कार्य अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल होता है।

III. परीक्षणात्मक शोध (प्रयोगात्मक शोध)
(EXPERIMENTAL RESEARCH)

इसे प्रयोगात्मक शोध या व्याख्यात्मक शोध के नाम से पुकारते हैं। **चेपिन** ने लिखा है, "समाजशास्त्रीय शोध में परीक्षणात्मक प्ररचना की अवधारणा नियन्त्रण की दशाओं के अन्तर्गत अवलोकन द्वारा मानवीय सम्बन्धों के अध्ययन की ओर संकेत करती है।"[1] स्पष्ट है कि जिस प्रकार भौतिक विज्ञानों में विषय को नियन्त्रित अवस्थाओं में रखकर उसका अध्ययन किया जाता है, उसी प्रकार नियन्त्रित अवस्थाओं में अवलोकन-परीक्षण के द्वारा सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करने को ही परीक्षणात्मक शोध कहते है। इस प्रकार के शोध में सामाजिक घटनाओं के कुछ पक्षों या चरों (Variables) को नियन्त्रित कर लिया जाता है और शेष चरों पर नवीन परिस्थितियों के प्रभाव का पता लगाया जाता है। इस प्रकार के शोध द्वारा यह ज्ञात किया जा सकता है कि किसी समूह, समुदाय, सामाजिक तथ्य, सामाजिक घटना, आदि पर किसी नवीन परिस्थिति का कैसा और कितना प्रभाव पड़ा है। यहां नियन्त्रित दशा में प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के शोध का अर्थ स्पष्ट करते हुए **चेपिन** ने बताया है, "प्रयोग नियन्त्रित दशाओं में किया जाने वाला अवलोकन मात्र है। जब केवल अवलोकन किसी समस्या को प्रभावित करने वाले कारकों का पता लगाने में असफल रहता है, तब वैज्ञानिक के लिए प्रयोग (Experiment) का सहारा लेना आवश्यक हो जाता है।"[2] इसी बात को **श्री विमल शाह** ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है, "प्रयोग शब्द शोध के उस भाग की ओर निर्देश करता है जिसमें कुछ चरों को नियन्त्रित कर लिया जाता है जबकि अन्य में परिवर्तन लाया जाता और उनके प्रभावों को नियन्त्रित चरों पर देखा जाता है।"[3] स्पष्ट है कि प्रयोगात्मक या परीक्षणात्मक शोध का सामाजिक विज्ञानों में वही महत्व है जो भौतिक विज्ञानो मे प्रयोगशाला-पद्धति का है।

परीक्षणात्मक शोध तीन प्रकार के होते है : प्रथम, पश्चात् परीक्षण; द्वितीय, पूर्व-पश्चात् परीक्षण; तथा, तृतीय, कार्यान्तर (ऐतिहासिक)—तथ्य परीक्षण।

(1) **पश्चात् परीक्षण** (After-only Experiment)—इसमें सर्वप्रथम समान विशेषताओ एव प्रकृति वाले दो समूहो को चुन लिया जाता है। इनमें से एक समूह नियन्त्रित समूह (Controlled Group) और दूसरा समूह परीक्षणात्मक समूह (Experimental Group)

1 Chapin, *Experimental designs in Sociological Research*, p 28
2 *Ibid*, p 28
3 Vimal Shah, *Research Design and Strategies*, pp 3-4

के नाम से जाना जाता है। नियन्त्रित समूह में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन लाने का प्रयत्न नहीं किया जाता है, उसे किसी चर, कारक या नवीन परिस्थिति द्वारा बदलने का प्रयास नहीं किया जाता। परीक्षणात्मक समूह मे किसी नवीन परिस्थिति समूह पर इसका प्रभाव नहीं पड़ने दिया जाता। कुछ समय पश्चात् परीक्षणात्मक-समूह पर नवीन कारक या परिस्थिति के प्रभाव को मापा जाता है। यदि नियन्त्रित और परीक्षणात्मक दोनों ही समूहों में समान परिवर्तन आते है तो इसका तात्पर्य यह हुआ कि नवीन कारक या परिस्थिति का परीक्षणात्मक-समूह पर कोई प्रभाव नही पडा। यदि नियन्त्रित-समूह की तुलना में परीक्षणात्मक-सामूह मे परिवर्तन अधिक होते हैं तो इसका अर्थ यह हुआ कि नवीन परिस्थिति या कारक का प्रभाव पड़ा है। यहां उदाहरण के रूप मे दो समान समूह या गांवों को लिया जा सकता है जिनमें बाल-विवाह का काफी प्रचलन है। इनमें से एक समूह में जिसे परीक्षणात्मक समूह मान लिया गया है, बाल-विवाह के विरुद्ध काफी प्रचार-प्रसार किया जाता है। कुछ समय के बाद इस समूह की तुलना नियन्त्रित समूह से की जाती है जिसमें ऐसा कोई प्रचार-प्रसार नहीं किया गया। यदि बाल-विवाह के प्रचलन की दृष्टि से इन दोनो में अन्तर देखने को मिले और परीक्षणात्मक-समूह मे बाल-विवाहों की मात्रा काफी कम हो जाये, तो इसे नवीन कारक अर्थात् बाल-विवाह विरोधी प्रचार प्रसार का प्रभाव माना जायेगा।

(2) **पूर्व-पश्चात् परीक्षण** (Before-after Experiment)—इस विधि के अन्तर्गत दो समूहो का चुनाव नही करके केवल एक ही समूह का चुनाव किया जाता है। यहां इस समूह का अध्ययन दो विभिन्न अवधियों में किया जाता है और पूर्व (Before) तथा पश्चात् (After) के अन्तर को ज्ञात किया जाता है। पूर्व और पश्चात् किये गये अध्ययन के आधार पर यह मापा जाता है कि पूर्व की अवस्था और बाद की अवस्था मे क्या अन्तर आया। यह अन्तर ही नवीन परिस्थिति या कारक का प्रभाव (परिणाम) है। उदाहरण के रूप में, अध्ययन के लिए एक गांव को चुन लिया जाता है जहा परिवार-कल्याण कार्यक्रम (Family Welfare Programme) के प्रभावों को मापा जाना है। एक अनुसूची की सहायता से यह पता लगा लिया जाता है कि गांव वालों ने इस कार्यक्रम को कहा तक स्वीकार किया है। यह पूर्व (Before) की स्थिति है जिसे अध्ययन की दृष्टि से हम प्रथम स्तर कह सकते है। फिर इस गांव में रेडियो, दूरदर्शन, ग्राम-सेवक, स्कूल-अध्यापक, डाक्टर, नर्स, आदि की सहायता से लोगो को परिवार कल्याण कार्यक्रम की अच्छाइयो से भली-भांति परिचित कराया जाता है। इस काल को उपचार-काल या द्वितीय स्तर के नाम से जाना जा सकता है। एक निर्धारित अवधि के पश्चात् इस गाव का पूर्व मे निर्मित अनुसूची की सहायता से पुनः अध्ययन किया जाता है। यह पश्चात् (After) की स्थिति है जिसे तृतीय स्तर माना जा सकता है। अब पूर्व की स्थिति और पश्चात् की स्थिति में अन्तर ज्ञात हो जायेगा। पूर्व की बजाय अब यदि गांव वाले परिवार-कल्याण कार्यक्रम को अधिक मात्रा मे अपनाते है, स्वयं आगे आकर इस कार्यक्रम का लाभ उठाते है तो इसे उपचार-काल (द्वितीय स्तर) में किये गये प्रयत्न का परिणाम माना जायेगा।

(3) **कार्यान्तर (ऐतिहासिक)—तथ्य परीक्षण** (Ex-post-facts Experiment)—अतीत से सम्बन्धित तथ्यों या किसी ऐतिहासिक घटना का अध्ययन करने के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाता है। अतीत की घटनाओं को दोहराया नही जा सकता, उनकी पुनरावृत्ति शोध-कर्ता के लिए सम्भव नही है। उन्हें न तो नियन्त्रित किया जा सकता और न ही उनमें कोई परिवर्तन लाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में इस शोध-विधि को काम में लेते हुए प्राचीन

अभिलेखों के भिन्न-भिन्न पक्षों का तुलनात्मक अध्ययन करके महत्वपूर्ण निष्कर्षों तक पहुंचा जा सकता है, उपयोगी परिणाम निकाले जा सकते हैं। अभिलेखों की तुलना से महत्वपूर्ण परिणामों को मापना सम्भव हो पाता है। इस विधि द्वारा अध्ययन हेतु सामान्यतः दो ऐसे समूहों का चुनाव किया जाता है जिनमें से एक समूह में जिसका कि उसे अध्ययन करना है, कोई ऐतिहासिक घटना घटित हो चुकी होती है एवं दूसरा ऐसा समूह जिसमें वैसी कोई घटना घटित नही हुई है। इन दोनों समूहों की पुरानी परिस्थितियों के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है कि एक समूह विशेष में उस घटना के घटित होने के क्या कारण हैं, कौनसी परिस्थितियों ने उस घटना के घटित होने में योग दिया है। इस विधि के द्वारा ऐतिहासिक घटना-चक्रों का पता लगाकर वर्तमान अवस्थाओं या घटनाओं के कारणो की खोज की जाती है।

इस विधि द्वारा अध्ययन का एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत करना भी यहां उचित होगा। मान लिया कि हमें अनुसूचित जनजातियों पर विभिन्न कल्याण-कार्यक्रमों के प्रभाव का अध्ययन करना है। इसके लिए हमें ऐतिहासिक तथ्यों को चुनना पड़ेगा। यह पता लगाना पड़ेगा कि इन कल्याण-कार्यक्रमों की जानकारी किन-किन लोगों को है या इन कार्यक्रमों का लाभ किन्हें मिला है। फिर यह पता लगाना होगा कि जो लोग इन कार्यक्रमों से लाभान्वित हुए है, उनकी आयु क्या है, उनका शैक्षणिक स्तर क्या है, वे किस-किस जनजाति के सदस्य है, उनकी आजीविका का स्रोत क्या है, वे किस क्षेत्र के रहने वाले हैं। ऐसे अध्ययन का लाभ यह होगा कि तुलना के आधार पर यह पता लगाया जा सकेगा कि कल्याण-कार्यक्रमों का लाभ उठाने में कौनसी जनजातियां और विशेषतः किन क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियां आगे है। जिन जनजातीय लोगों ने इन योजनाओं का लाभ उठाया है, वे शिक्षित है या अशिक्षित तथा वे प्रमुखतः किस आयु-समूह में आते है। साथ ही यह भी ज्ञात हो सकेगा कि कार्यक्रम का लाभ उठाने वाले लोगों में प्रमुख कौन है, क्या वे कृषक हैं, कृषि श्रमिक हैं, दस्तकारी का काम करने वाले हैं या वन-सम्पदा को एकत्रित कर अपनी आजीविका चलाने वाले है या कारखानो में काम करने वाले मजदूर हैं। कुछ समय के पश्चात् इन्ही कारकों को ध्यान में रखते हुए उन्हीं लोगों का पुनः अध्ययन किया जायेगा और तत्पश्चात् तुलना के आधार पर महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकेंगे।

IV. विशुद्ध शोध (Pure Research)

विशुद्ध अनुसन्धान (शोध) व्यावहारिक उपयोगिता को दृष्टि में रखकर नही किया जाता। किसी समस्या के कारणों को ढूंढ़ निकालना और उसका हल प्रस्तुत करना भी विशुद्ध शोध के अन्तर्गत नहीं आता है। विशुद्ध शोध तो **'ज्ञान के लिए ज्ञान'** (Knowledge for Knowledge sake) के लक्ष्य को लेकर आगे बढ़ती है। जब किसी घटना की खोज ज्ञान-प्राप्ति हेतु की जाय और वह भी वैज्ञानिक तटस्थता या वस्तुनिष्ठता बनाये रखकर तो उसे विशुद्ध, मौलिक या आधारभूत शोध कहते हैं। इस प्रकार के शोध-कार्य में नीति-निर्माण या उपयोगिता का दृष्टिकोण सम्मिलित नहीं होता है। विशुद्ध शोध का लक्ष्य किसी समस्या को हल करना या किन्ही आवश्यकताओं की पूर्ति करना नहीं है बल्कि ज्ञान की प्राप्ति, मौजूदा ज्ञान-भण्डार में वृद्धि और पुराने ज्ञान का शुद्धिकरण है। सत्य की खोज, रहस्यों को जानने की इच्छा, सामाजिक घटनाओं को समझने की लालसा ही शोध-कर्ता के प्रमुख लक्ष्य होते हैं, इसी दृष्टि से वह निरन्तर प्रयत्नशील रहता है। ज्ञान की प्राप्ति तथा मौजूदा ज्ञान के परिमार्जन एवं परिवर्द्धन के लिए वैज्ञानिक प्रविधियों को काम में लेते हुए जो शोध-कार्य किया जाता है,

उसे ही विशुद्ध या मौलिक शोध कहते हैं। इस प्रकार के शोध-कार्य द्वारा सामाजिक जीवन के सम्बन्ध में मौलिक सिद्धान्तों एवं नियमों की खोज की जाती है।

विशुद्ध सामाजिक शोध का उद्देश्य सामाजिक घटनाओं में कार्य-कारण सम्बन्धों का पता लगाना होता है। साथ ही इस प्रकार के शोध-कार्य द्वारा घटनाओं में निहित या घटनाओं को संचालित करने वाले नियमों का पता लगाया जाता है। प्रत्येक घटना चाहे वह प्राकृतिक हो या सामाजिक, कुछ निश्चित नियमों के अनुसार ही घटित होती है। इन नियमों को खोज निकालना विशुद्ध शोध का प्रमुख लक्ष्य है। प्राकृतिक घटनाओं को संचालित करने वाले अनेक नियमो का पता प्राकृतिक वैज्ञानिकों द्वारा विशुद्ध शोध के माध्यम से ही लगाया जाता है। समाजशास्त्र भी सामाजिक घटनाओं के पीछे छिपे नियमों को खोज निकालने की दिशा में प्रयत्नशील है। इन नियमों की खोज के लिए विशुद्ध शोध का सहारा लेना आवश्यक है।

सामाजिक जीवन एवं घटनाओ के सम्बन्ध में मौलिक सिद्धान्तों एवं नियमों की खोज विशुद्ध शोध का एक प्रमुख कार्य है। इस प्रकार की शोध द्वारा न केवल नवीन ज्ञान की प्राप्ति एवं ज्ञान भण्डार मे वृद्धि ही की जाती है बल्कि पुराने ज्ञान का पुनः परीक्षण द्वारा शुद्धिकरण भी किया जाता है। विशुद्ध शोध के द्वारा यह पता लगाया जाता है कि परिस्थितियों के बदल जाने से पुराने सिद्धान्त एवं नियम वर्तमान में ठीक है या नहीं, हो सकता है कि वे सही उतरें। यह भी सम्भव है कि वर्तमान में बदली हुई परिस्थितियों में उनमें संशोधन करना पड़े। अतः नवीन सिद्धान्तों एवं नियमों का प्रतिपादन तथा पुरानों का सत्यापन विशुद्ध शोध का एक मुख्य लक्ष्य है।

विशुद्ध शोध सम्बन्धित विज्ञानों की प्रगति एवं विकास में काफी योग देता है। इस प्रकार के शोध-कार्यों से सम्बन्धित विज्ञान के लिए अवधारणाओं एवं शब्दावली का विकास होता है। विशुद्ध शोध के अन्तर्गत शोध-विधियों की उपयुक्तता की जांच भी आ जाती है।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि विशुद्ध शोध के निम्नलिखित पांच उद्देश्य है : प्रथम, ज्ञान-प्राप्ति; द्वितीय, नियमों की खोज; तृतीय, सामाजिक संरचना की निर्मायक इकाइयों के प्रकार्यात्मक सम्बन्धों की जानकारी; चतुर्थ, नवीन अवधारणाओं का प्रतिपादन; पंचम, शोध-विधियों की उपयुक्तता की जांच।

विशुद्ध शोध के सम्बन्ध में कुछ लोगों का कहना है कि 'ज्ञान के लिए ज्ञान' की पिपासा आज के इस भौतिकवादी युग में निरर्थक है। लेकिन यह बात सही नहीं है। आज भी ऐसे अनेक वैज्ञानिक है जो सत्य की खोज में निरन्तर लगे हुए है, उनमें अपने शोध-कार्य के प्रति लगन है, अपूर्व उत्साह है। यहां हमें इस बात को ध्यान में रखना है कि नवीन ज्ञान की प्राप्ति एवं घटनाओ के पीछे छिपे नियमों की खोज अन्ततः मानव कल्याण में सहायक ही होती है। विशुद्ध शोध द्वारा प्राप्त ज्ञान का प्रयोग व्यावहारिक शोध के अन्तर्गत किया जा सकता और किया जाता है।

V. व्यावहारिक शोध (Applied Research)

फ्रेर्स्टिगर तथा काज ने बताया है कि जब उपयोगितावादी दृष्टिकोण को लेकर उद्योग या प्रशासन के लिए तथ्यों का संकलन किया जाता है एवं नीति-निर्माताओं को जिसकी आवश्यकता होती है तो इसे व्यावहारिक शोध के नाम से जाना जाता है। **होर्टन तथा हण्ट** ने बताया है कि जब किसी ऐसे ज्ञान की खोज के लिए वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method) का प्रयोग किया जाता है जिसकी व्यावहारिक समस्याओं को हल करने में उपयोगिता है, तो इसे व्यावहारिक शोध कहा जाता है। ज्ञान के व्यावहारिक पक्ष पर जोर

देते हुए **श्रीमती पी. वी. यंग** ने लिखा है, "ज्ञान की खोज का लोगों की आवश्यकताओ एवं कल्याण के साथ एक निश्चित सम्बन्ध पाया जाता है। वैज्ञानिक यह मानकर चलता है कि समस्त ज्ञान मूलतः उपयोगी है, चाहे उसका उपयोग निष्कर्ष निकालने में या किसी क्रिया अथवा व्यवहार को कार्यान्वित करने में, एक सिद्धान्त के निर्माण में या एक कला को व्यवहार में लाने में किया जाय। सिद्धान्त तथा व्यवहार अक्सर आगे चलकर एक-दूसरे में मिल जाते है।"[1] श्रीमती यंग के इस कथन से व्यावहारिक शोध की महत्ता स्पष्ट हो जाती है।

व्यावहारिक शोध का सम्बन्ध सामाजिक जीवन के व्यावहारिक पक्ष से है। इसका प्रयोग केवल सामाजिक समस्याओं को यथार्थ रूप में समझने के लिए ही नही किया जाता बल्कि सामाजिक नियोजन, समाज-कल्याण, स्वास्थ्य-रक्षा, समाज-सुधार, धर्म, शिक्षा, सामाजिक अधिनियम, मनोरंजन, आदि के सम्बन्ध में यथार्थ जानकारी प्राप्त करने के लिए भी किया जाता है। वर्तमान में तो उद्योग, व्यापार, प्रशासन, साम्प्रदायिक, प्रजातीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय तनाव तथा अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की समस्या, आदि क्षेत्रों में व्यावहारिक शोध को उपयोगी माना जाता है। व्यावहारिक शोध में इन सबके सम्बन्ध में अध्ययन किया जाता है और तथ्यों की कारण सहित विवेचना की जाती है। इससे ज्ञान में वृद्धि होती है, सामाजिक समस्याओं एवं व्याधिकीय व्यवहार को समझने मे मदद मिलती है। लेकिन यहां हमें यह ध्यान मे रखना है कि व्यावहारिक-शोध के अन्तर्गत समाज-सुधार, नीति-निर्धारण, सामाजिक नियोजन, सामाजिक समस्याओं का समाधान, आदि नही आते है। ये सब तो समाज-सुधारकों, नेताओं, प्रशासकों, अधिकारियों, आदि के क्षेत्र में आते है। व्यावहारिक शोध-कर्ता तो सामाजिक समस्याओं, व्याधिकीय परिस्थितियों तथा सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों का यथार्थ चित्रण कर तर्कयुक्त ज्ञान के रूप में इनके कार्य में योग देता है।

व्यावहारिक शोध में भी उन्ही प्रविधियों एवं उपकरणों का प्रयोग किया जाता है जिनका प्रयोग विशुद्ध शोध में किया जाता है। अतः व्यावहारिक शोध द्वारा प्राप्त ज्ञान व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं को हल करने मे और सामाजिक घटनाओं को नियन्त्रित करने में काफी योग देता है। शोध-कर्ता अपने अध्ययन के निष्कर्षो या परिणामों के रूप में कुछ ऐसे सुझाव प्रस्तुत करता है जो समस्याओं के समाधान मे काफी सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

व्यावहारिक शोध की उपयोगिता एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए **स्टाउफर** ने लिखा है कि यदि समाज-विज्ञानों को अपना महत्व बढ़ाना है तो उन्हें अपने व्यावहारिक पक्ष को सफल बनाना होगा। **स्टाउफर** ने अन्यत्र लिखा है कि व्यावहारिक शोध सामाजिक विज्ञानों को तीन रूपों में महत्वपूर्ण योग देता है : (i) कौन-से सामाजिक तथ्य किस प्रकार समाज के लिए उपयोगी हैं—इस बारे में विश्वसनीय प्रमाणों को प्रस्तुत करके, (ii) ऐसी प्रविधियों (Techniques) का उपयोग एवं विकास करके जोकि विशुद्ध शोध के लिए भी उपयोगी प्रमाणित हों, तथा (iii) ऐसे तथ्यों व विचारों को प्रस्तुत करके जो सामान्यीकरण (Generalization) की प्रक्रिया को आगे बढ़ायें।

विशुद्ध एवं व्यावहारिक शोध दोनों ही समाज के लिए उपयोगी हैं। विशुद्ध शोध में सामाजिक जीवन के सैद्धान्तिक पक्ष का तो व्यावहारिक शोध में व्यावहारिक पक्ष का अध्ययन किया जाता है। शोध

1 P. V. Young, *Scientific Social Surveys and Research*, p. 4.

सम्बन्ध में ज्ञान संकलित करता है। सिद्धान्त एवं नियम विभिन्न समस्याओं को समझने और उनके हल खोजने में मदद करते हैं जबकि उन सिद्धान्तों व नियमों की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता का पता व्यावहारिक शोध द्वारा प्राप्त ज्ञान के आधार पर ही होता है।

व्यावहारिक शोध का विशुद्ध शोध को काफी महत्वपूर्ण योगदान है। व्यावहारिक शोध के अन्तर्गत प्राप्त किये गये नवीन तथ्य मौजूदा ज्ञान के सशोधन एवं परिवर्द्धन में योग देते हैं। साथ ही सिद्धान्तो के परीक्षण के लिए ये अवसर प्रदान करते है। व्यावहारिक शोध प्रत्येक विषय से सम्बन्धित अवधारणाओ का वास्तविक परिस्थितियों के सन्दर्भ में अध्ययन कर स्पष्ट करता है कि वे अवधारणाएं कहां तक उपयुक्त है। साथ ही व्यावहारिक शोध के अन्तर्गत जिन शोध-विधियो का विकास किया गया है, उनका विशुद्ध शोध-कार्य हेतु भी उपयोग किया जा सकता है।

विशुद्ध शोध का व्यावहारिक शोध को दिया जाने वाला योगदान भी किसी भी रूप में कम महत्वपूर्ण नही है। विशुद्ध शोध के आधार पर प्रतिपादित सिद्धान्त अनेक व्यावहारिक समस्याओं को हल करने में योग देते है। इससे समस्याओं की गहराई तक पहुंचने एवं उनके वास्तविक कारणो का पता लगाने मे सहायता मिलती है। साथ ही विशुद्ध शोध किसी समस्या के हल के वैकल्पिक तरीके ढूंढ़ निकालने में भी योग देता है। आज सरकारी एवं गैर-सरकारी सस्थाओ में विशुद्ध शोध के महत्व को स्वीकारा गया है और इसी के परिणामस्वरूप वहां शोध-विभाग देखने को मिलते है।

अन्त मे हम यही कह सकते है कि विशुद्ध एवं व्यावहारिक दोनो ही प्रकार के शोध एक-दूसरे के पूरक है, एक-दूसरे के विकास मे सहायक है। दोनों में निरन्तर अन्तःक्रिया होती रहनी चाहिए।

VI. क्रियात्मक शोध (Action Research)

क्रियात्मक शोध को व्यावहारिक शोध का ही एक प्रकार माना जा सकता है क्योंकि इसका सम्बन्ध भी शोध द्वारा प्राप्त ज्ञान के व्यावहारिक उपयोग से है। करीब 30 वर्ष पूर्व क्रियात्मक शोध का प्रारम्भ अमेरिका में हुआ। प्रो. कोलियर, लेविन तथा स्टेफन एम. कोरी ने क्रियात्मक शोध नामक अवधारणा को मूर्त रूप देने का प्रयास किया। इन लोगों की मान्यता है किक्रियात्मक शोध के माध्यम से सामाजिक सम्बन्धों को ज्यादा अच्छा बनाया जा सकता है।

क्रियात्मक शोध के अर्थ को स्पष्ट करने की दृष्टि से **गुडे** एवं **हाट** ने लिखा है, "क्रियात्मक शोध उस कार्यक्रम का एक भाग है जिसका कि लक्ष्य मौजूदा दशाओं को परिवर्तित करना होता है, चाहे वह गन्दी-बस्ती की दशाएं हो या प्रजातीय तनाव तथा पूर्वाग्रह (Racial Tension and Prejudice) हो, या किसी संगठन की प्रभावशीलता हो।"[1]

मैकग्रेथ एव उनके सहयोगियों ने बताया है कि क्रियात्मक शोध एक संगठित व खोजपूर्ण क्रिया है जिसका लक्ष्य व्यक्तियों या समूह से सम्बन्धित परिवर्तन एवं सुधार लाने हेतु उनका अध्ययन करना और साथ ही मौलिक परिवर्तन लाना है।

स्टेफन एम. कोरी ने क्रियात्मक शोध का अर्थ स्पष्ट करते हुए बताया है कि यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यावहारिक कार्यकर्ता अपनी समस्या का इस दृष्टि से वैज्ञानिक तरीके से अध्ययन करते है ताकि वे आवश्यकतानुसार अपने निर्णयो एवं क्रियाओं को दिशा दे सकें, उनमे परिवर्तन व सुधार कर सकें, उनका मूल्यांकन कर सकें।"

1 Goode and Hatt, *Methods of Social Research*, p 362.

विद्वानों के उपर्युक्त कथनों से स्पष्ट है कि क्रियात्मक शोध में किसी सामाजिक समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है तथा शोध के निष्कर्षों का उपयोग किन्हीं सामाजिक अवस्थाओं में परिवर्तन लाने की योजना के एक भाग के रूप में किया जाता है। जब शोध अध्ययन के निष्कर्षों को किसी तात्कालिक या भविष्य की किसी योजना के अन्तर्गत मूर्त रूप देना हो तो उसे क्रियात्मक शोध नाम दिया जाता है। यदि शिक्षा-प्रणाली मे आमूल-चूल परिवर्तन लाने की दृष्टि से कोई शोध-कार्य हाथ में लिया जाय और उसके आधार पर प्राप्त निष्कर्षों को लागू करने पर जोर दिया जाय तो उसे क्रियात्मक

[illegible] दी-बस्तियों की सफाई,

[illegible] धार करने या उसे हल करने हेतु साधन खोज निकालने के लिए क्रियात्मक शोध का सहारा लिया जाता है। इसमें तथ्यों को एकत्रित कर किसी समस्या के निवारण हेतु प्रयत्न किया जाता है। **क्रियात्मक शोध का लक्ष्य** परिवर्तन को नियोजित करना, व्याधिकीय या विघटनात्मक परिस्थितियों को नियन्त्रित करना तथा सुधार व कल्याण-कार्य को आगे बढ़ाना है। इसी हेतु, प्रामाणिक तथ्य एकत्रित किये और समाधान खोज निकाले जाते है। बन्धुआ मजदूरों, भूमिहीन कृषकों, कृषि-श्रमिकों तथा समाज के अन्य दुर्बल वर्गो की समस्याओं को हल करने तथा उन्हें चहुंमुखी विकास की दिशा में आगे बढ़ाने हेतु किसी कल्याण कार्यक्रम को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए क्रियात्मक शोध का ही सहारा लिया जाता है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि क्रियात्मक शोध समस्याओं से सम्बन्धित है। इसमें समस्याओं के अध्ययन के लिए वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के शोध की प्रकृति उपचारात्मक या निदानात्मक होती है। क्रियात्मक शोध के तीन प्रमुख प्रकार हैं : प्रथम निदानात्मक क्रियात्मक शोध; द्वितीय, सहकारी क्रियात्मक शोध; तथा तृतीय, प्रयोगात्मक क्रियात्मक शोध। क्रियात्मक शोध में वैज्ञानिक विधि में प्रयुक्त होने वाले सभी चरणों का प्रयोग किया जाता है। इन चरणो का उल्लेख **'सामाजिक अनुसन्धान की प्रक्रिया'** नामक अगले अध्याय में किया गया है।

सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि क्रियात्मक शोध में तात्कालिक उपयोग पर ध्यान दिया जाता है, न कि सिद्धान्त के विकास पर। इस प्रकार के शोध में वैज्ञानिक दृष्टिकोण सर्वत्र बनाये रखते हुए तात्कालिक समस्याओं के निराकरण, सामाजिक परिवर्तन को दिशा देने तथा सामाजिक नियोजन एवं समाज-कल्याण से सम्बन्धित कार्यक्रमों के क्रियान्वयन पर जोर दिया जाता है।

VII मूल्यांकनात्मक शोध (Evaluative Research)

आज अधिकांश देश नियोजित परिवर्तन की दिशा मे आगे बढ़ रहे हैं। वे कल्याणकारी राज्य के रूप में अपनी भूमिका निभा रहे हैं। जो देश अपने लोगो की खुशहाली के लिए विकास कार्यक्रमों पर अरबों-खरबों रुपया खर्च करता है, वह यह भी ज्ञात करना चाहता है कि आखिर उन कार्यक्रमों का उन लोगों पर क्या प्रभाव पड़ रहा है जिनके लिए वे बनाये गये हैं। आज गरीबी-उन्मूलन, स्वास्थ्य, आवास, परिवार नियोजन, अपराध, बाल-अपराध, समन्वित ग्रामीण विकास, आदि के क्षेत्र में अनेक शोध-कार्य इस उद्देश्य से चलाये जा रहे हैं कि इन कार्यक्रमों की प्रभावशीलता का पता लगाया जा सके, यह ज्ञात किया जा सके कि लक्ष्यों एवं परिणामों में कहां तक साम्यता है, कहां तक इच्छित लक्ष्यों के अनुरूप आगे

बढा जा सका है। इस प्रकार के शोध-कार्यो द्वारा किसी कार्यक्रम, किसी विकास योजना की सफलता-असफलता का मूल्यांकन किया जाता है। उदाहरण के रूप में, डा. एस. सी. दुबे ने शमीरपेट नामक गांव के अपने अध्ययन के आधार पर बताया है कि वहां सामुदायिक विकास कार्यक्रम इच्छित मात्रा में जन-सहयोग प्राप्त नहीं कर सका है। कार्यक्रम में मानवीय कारको की उपेक्षा की गयी है और इसी के फलस्वरूप ग्रामीण लोगों ने उनके विकास हेतु प्रारम्भ की गई उत्तम से उत्तम योजनाओ को भी अस्वीकार कर दिया है। यह मूल्यांकनात्मक शोध का एक उदाहरण है। सन् 1960 से इस प्रकार के शोध की ओर भारत का झुकाव बढा है। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों की सफलता का पता लगाने हेतु, भारत सरकार ने एक स्थायी 'कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन' (Programme Evaluation Organization) की स्थापना भी की।

मूल्यांकनात्मक शोध के सम्बन्ध मे **विलियमसन, कार्प एवं डालफिन**[1] ने बताया है कि यह शोध वास्तविक जगत् में सम्पादित की गयी ऐसी खोज है जिसके माध्यम से यह मूल्यांकन किया जाता है कि व्यक्तियों के किसी समूह विशेष के जीवन में सुधार लाने के उद्देश्य से जो कार्यक्रम बनाया गया, वह अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में कहां तक सफल रहा है। इसके द्वारा कार्यक्रम की प्रभावकता को आंका जाता है। जहां उद्देश्यों तथा उपलब्धियों में अन्तर कम से कम हो, वहां उस कार्यक्रम को उतना ही सफल माना जाता है। इस प्रकार का मूल्याकन इस उद्देश्य से किया जाता है ताकि नियोजित परिवर्तन के विभिन्न कार्यक्रमों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन किये जा सकें, उन्हें अधिक कारगर एवं सफल बनाया जा सके। इस प्रकार के शोध के द्वारा यह पता लगाया जाता है कि सामाजिक नियोजन एवं परिवर्तन के उद्देश्य से प्रेरित कार्यक्रम इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति मे सफल क्यो नहीं हो रहा है और उसे सफल बनाने हेतु क्या कदम उठाये जाने चाहिए। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि सामाजिक नियोजन एवं परिवर्तन के लक्ष्य से प्रेरित क्रियात्मक कार्यक्रमों की सफलता-असफलता को ज्ञात करने एवं उनकी प्रभावकता का पता लगाने हेतु जो खोज की जाती है, उसी को मूल्यांकनात्मक शोध कहते है। इस प्रकार की शोध व्यावहारिक शोध का ही एक प्रकार है। इन शोधो की व्यावहारिक उपयोगिता काफी है। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि मूल्यांकनात्मक शोध का विशुद्ध शोध की दृष्टि से कोई महत्व नहीं है। इस प्रकार की शोध में उन सभी अध्ययन विधियो का प्रयोग किया जाता है जिन्हें विशुद्ध शोध में काम में लिया जाता है। इसमे किसी भी कार्यक्रम की प्रभावकता का पता लगाने के लिए लोगों के विश्वासों, विचारों, दृष्टिकोणों, भावनाओ, आदि को जानने-समझने के लिए समाजमितीय पैमानों को काम में लिया जाता है।

स्वतन्त्र भारत मे अनेक सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थाएं मूल्यांकनात्मक शोध-कार्य में लगी हुई हैं। व्यक्तिगत स्तर पर भी शोध-कर्ता इस प्रकार के शोध-कार्य में अपने आपको लगाये हुए है। जनगणना विभाग, स्वास्थ्य विभाग, शिक्षा विभाग, सर्वेक्षण एवं सांख्यिकीय विभाग विभिन्न कार्यक्रमों की सफलता का आंकलन करने हेतु समय-समय पर मूल्यांकनात्मक शोध का सहारा लेते हैं। इस प्रकार के शोध-कार्य में इस बात की सावधानी बरतना आवश्यक है कि अध्ययन पूर्णतः वैज्ञानिक होने के बजाय कही व्यक्तिपरक न हो जाये। किसी भी कार्यक्रम के प्रभाव का सही मूल्यांकन किया जाना चाहिए, किसी भी रूप में न तो कम और न ही ज्यादा, अन्यथा परिणाम निराशाजनक ही होंगे।

1 Williamson, Karp and Dalphin, *The Research Craft*, p. 382.

प्रश्न

1. सामाजिक अनुसन्धान की परिभाषा दीजिए। इसके प्रकारों एवं महत्व की विवेचना कीजिए।
2. सामाजिक अनुसन्धान से आपका क्या अभिप्राय है ? सामाजिक अनुसन्धान के प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिए। (राजस्थान, 1999; अजमेर, 1996, 99)
3. संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए : (अ) व्यावहारिक अनुसन्धान (राजस्थान, 1997)
   (ब) क्रियात्मक अनुसन्धान (स) विशुद्ध अनुसन्धान

लघु उत्तरीय प्रश्न

निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(1) अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध, (2) वर्णनात्मक शोध, (3) परीक्षणात्मक शोध, (4) विशुद्ध शोध, (5) व्यावहारिक शोध, (6) क्रियात्मक शोध, (7) मूल्यांकनात्मक शोध (8) विशुद्ध एवं व्यावहारिक अनुसन्धान को समझाइए (अजमेर, 2000)।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित वाक्यो के उत्तर हां अथवा नही मे दीजिए :
   (i) जब किसी शोध का उद्देश्य प्राक्कल्पना का निर्माण करना व अध्ययन की रूपरेखा तैयार करना होता है तो उसे निरूपणात्मक शोध कहते हैं।
   (ii) जब किसी घटना के बारे में वास्तविक तथ्यों का संकलन कर विवरण प्रस्तुत किया जाता है तो उसे क्रियात्मक शोध कहते हैं।
   (iii) जब नियन्त्रित दशाओं के अन्तर्गत अवलोकन द्वारा मानवीय सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है तो उसे परीक्षणात्मक शोध कहते हैं।
   (iv) 'ज्ञान के लिए ज्ञान' इस उद्देश्य से किए गए शोध को व्यावहारिक शोध कहते हैं।
   (v) उपयोगितावादी दृष्टिकोण को लेकर विशुद्ध शोध किया जाता है।
   (vi) गन्दी बस्ती की समस्या के समाधान हेतु किया गया शोध क्रियात्मक शोध है।
   (vii) परिवार नियोजन कार्यक्रम के प्रभाव को ज्ञात करने के लिए किया जाने वाला शोध मूल्यांकनात्मक शोध है।
   (viii) एक ही समूह में परिवर्तन आने से पहले व परिवर्तन के बाद किया जाने वाला अध्ययन पश्चात् परीक्षण कहलाता है।
2. निम्नांकित वाक्यों में से रिक्त स्थानों की पूर्ति कोष्ठक में दिए गए शब्दों में से सही शब्द का चयन करके कीजिए :
   (i) अनुभव प्राप्त करने के लिए किया जाने वाला अनुसन्धान ..... अनुसन्धान कहलाता है। (अन्वेषणात्मक/वर्णनात्मक)
   (ii) नियन्त्रित परिस्थितियों मे मानवीय सम्बन्धों का अध्ययन ..... अनुसन्धान कहलाता है। (परीक्षणात्मक/व्यावहारिक)
   (iii) ऐतिहासिक घटनाओं का अध्ययन ..... कहलाता है। (मूल्यांकनात्मक/कार्यान्तर तथ्य परीक्षण)
   (iv) परिवर्तन एवं सुधार लाने के लिए किया जाने वाला अनुसन्धान ..... कहलाता है। (क्रियात्मक/निरूपणात्मक)
   (v) किसी गांव मे समन्वित विकास कार्यक्रम की सफलता को ज्ञात करने के लिए किया जाने वाला अनुसन्धान ..... अनुसन्धान कहलाता है। (मूल्यांकनात्मक/व्यावहारिक)

[उत्तर—1. हां—i, iii, vi, vii शेष सभी का उत्तर नही है। 2. (i) अन्वेषणात्मक, (ii) परीक्षणात्मक, (iii) कार्यान्तर तथ्य परीक्षण, (iv) क्रियात्मक, (v) मूल्यांकनात्मक।]

3

सामाजिक अनुसन्धान की प्रक्रिया

[PROCESS OF SOCIAL RESEARCH]

सामाजिक शोध की प्रकृति वैज्ञानिक है क्योंकि इसमे वैज्ञानिक पद्धतियों का उपयोग किया जाता है। शोध का मुख्य लक्ष्य वैज्ञानिक निष्कर्षों की प्राप्ति, सामान्यीकरण तथा नियमों का प्रतिपादन करना है। इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method) या वैज्ञानिक कार्य-विधि (Scientific Procedure) का सहारा लेना आवश्यक होता है। इस पद्धति या कार्य-विधि के कई चरण है जिनसे होकर शोधकर्ता को गुजरना पड़ता है। सत्य तक पहुंचने के लिए इसके अतिरिक्त कोई लघु-मार्ग (Short-cut Method) नहीं है। सामाजिक शोध भौतिक विज्ञानों की तुलना में अधिक व्यापक है। इसकी सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि शोधकर्ता सुचिन्तित और सुव्यवस्थित रूप से वैज्ञानिक कार्य विधि के प्रमुख चरणों को ध्यान में रखता हुआ आगे बढ़े। सामाजिक शोध में प्रारम्भ से अन्त तक सुनिश्चित ढंग से कार्य किया जाता है। इसमें एक निश्चित क्रम से एक चरण से दूसरे चरण में और दूसरे चरण से तीसरे चरण मे अर्थात् क्रमानुसार विभिन्न चरणों से होता हुआ आगे बढ़ा जाता है। सामाजिक शोध के चरणों के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों में कुछ मतभेद अवश्य है, परन्तु मूलतः इसके चरण एक ही हैं। इतना अवश्य है कि शोधकर्ता अपने अध्ययन में किन चरणों का उपयोग करेगा और किस क्रम में करेगा, यह शोध की प्रकृति पर निर्भर करता है। **अगस्त काम्ट** ने वैज्ञानिक पद्धति के चरणों का उल्लेख इस प्रकार किया है :

(i) विषय का चुनाव, (ii) अवलोकन द्वारा तथ्यो का संकलन, (iii) तथ्यों का वर्गीकरण, (iv) तथ्यों का परीक्षण, तथा (v) नियमो का प्रतिपादन।[1]

श्रीमती पी. वी. यंग ने वैज्ञानिक पद्धति के निम्नलिखित चरणों का उल्लेख किया है :

(i) कार्यकारी प्राक्कल्पना का निर्माण, (ii) तथ्यो का अवलोकन, एकत्रीकरण एवं लेखन, (iii) लिखित तथ्यो का श्रेणियों अथवा अनुक्रमों में वर्गीकरण, तथा (iv) वैज्ञानिक सामान्यीकरण एवं नियमो का प्रतिपादन।[2]

जार्ज ए. लुण्डबर्ग ने वैज्ञानिक पद्धति के निम्नलिखित चार चरणो का उल्लेख किया है : (i) कार्यकारी प्राक्कल्पना, (ii) तथ्यों का अवलोकन एवं लेखन, (iii) एकत्रित तथ्यों का अवलोकन एवं संगठन, तथा (iv) सामान्यीकरण एवं नियमों का प्रतिपादन।[3]

1 August Comte, *Positive Philosophy*, translated by H. Mortineav
2 P. V. Young, *op cit*, pp 96-105.
3 George A. Lundberg, *Social Research*, pp 9-11

सामाजिक शोध की प्रक्रिया को अधिक सूक्ष्मता के साथ समझने की दृष्टि से यहां शोध-प्रक्रिया के निम्नलिखित चरणो का उल्लेख और सविस्तार विवेचन करना आवश्यक है :

(i) समस्या (विषय) का चुनाव,
(ii) सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन,
(iii) इकाइयो का निर्धारण,
(iv) प्राक्कल्पना का निर्माण,
(v) अध्ययन-क्षेत्र का निर्धारण,
(vi) सूचनादाताओ का चुनाव,
(vii) सूचना के स्रोतों एवं अध्ययन के उपकरणों व प्रविधियों का निर्धारण,
(viii) उपकरणों एवं प्रविधियों का पूर्व-परीक्षण तथा अग्रगामी अध्ययन,
(ix) तथ्यों का अवलोकन व संकलन,
(x) तथ्यों का सम्पादन, संकेतन, वर्गीकरण एवं सारणीयन,
(xi) तथ्यों का विश्लेषण व विवेचन,
(xii) सामान्यीकरण एवं नियमो का प्रतिपादन।

(I) समस्या (विषय) का चुनाव
(SELECTION OF THE PROBLEM)

सामाजिक शोध का यह प्रथम चरण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कोई भी अध्ययन-कार्य उस समय तक प्रारम्भ नही किया जा सकता जब तक कि विषय या समस्या का चुनाव नहीं कर लिया जाता। मस्तिष्क मे आया हुआ प्रत्येक विचार या कल्पना शोध का विषय नही बन सकते। शोध हेतु विषय का चुनाव करते समय यह देखना होगा कि विषय के सम्बन्ध में आवश्यक तथ्य उपलब्ध हो सकेंगे या नही, किस वैज्ञानिक प्रविधि को काम में लेते हुए इन तथ्यों को संकलित किया जा सकेगा, शोध-कार्य साधनों की सीमितता को ध्यान में रखते हुए समय पर पूरा किया जा सकेगा या नहीं तथा विषय की सामान्यीकरणों व नियमों के प्रतिपादन की दृष्टि से उपयोगिता है अथवा नही। विषय के दोषपूर्ण चुनाव से श्रम व साधनों का अपव्यय होता है।

श्रीमती पी. वी. यंग[2] ने विषय या समस्या का चुनाव करने मे निम्नलिखित आवश्यक बातों का ध्यान रखने पर जोर दिया है : (i) विषय ऐसा होना चाहिए जिसको समझने की शोधकर्ता स्वयं योग्यता रखता हो एवं जिससे सम्बन्धित शोध कार्य एक निश्चित अवधि में पूरा किया जा सके। (ii) अध्ययन किये जाने वाले विषय से सम्बन्धित यदि कोई अन्य शोध उपलब्ध नहीं हो तो विषय का क्षेत्र बहुत अधिक व्यापक नही होना चाहिए। (iii) इस बात को ध्यान मे रखा जाना चाहिए कि उपलब्ध प्रविधियो की सहायता से विषय का अध्ययन या शोध-कार्य किया जा सकता है या नहीं, एवं (iv) उस विषय या समस्या के चुनाव से सामाजिक शोध के माध्यम से वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाले जा सकेंगे या नहीं। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी ऐसे विषय का चुनाव नही कर लेना चाहिए जिसके अध्ययन के लिए वैज्ञानिक प्रविधियां उपलब्ध नहीं हों, जिसके लिए प्रामाणिक तथ्य एकत्रित करना सम्भव नहीं हो तथा जिसकी सामाजिक शोध की दृष्टि से कोई उपयोगिता नहीं हो।

1 P. V Young, *op cit.*, p. 24

(II) सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन
(REVIEW OF PERTINENT LITERATURE)

विषय का चुनाव कर लेने के पश्चात् दूसरा महत्वपूर्ण चरण सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन आता है। यदि अध्ययन-विषय से सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन किये बिना ही शोध-कार्य प्रारम्भ कर दिया जाता है तो इससे सम्पूर्ण शोध-प्रक्रिया के ही दोषपूर्ण होने की सम्भावना रहती है। अतः आवश्यक है कि प्रारम्भ में ही शोध से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन कर लिया जाये। सम्बन्धित साहित्य में प्रलेख, लेख, पत्र, पुस्तकें, प्रतिवेदन, विषय से सम्बन्धित शोध-ग्रन्थ, आदि आते है। इस प्रकार के साहित्य के अध्ययन से शोधकर्ता का कार्य कुछ सरल हो जाता है, उसे अध्ययन की विभिन्न प्रविधियों का ज्ञान हो जाता है, शोध-कार्य में आने वाली कठिनाइयों का पता चल जाता है, महत्वपूर्ण अवधारणाओं की जानकारी मिल जाती है, किये हुए शोध-कार्य को पुनः दोहराने की भूल से छुटकारा मिल जाता है तथा शोध-कार्य की सही रूपरेखा तैयार करने में मदद मिलती है। सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन कर लेने से श्रीमती यंग[1] के अनुसार निम्नलिखित लाभ मिलते हैं : (i) शोधकर्ता को अध्ययन-विषय के सम्बन्ध मे ऐसी अन्तर्दृष्टि (Insight) प्राप्त होती है जिससे वह उचित प्रश्न कर सही सूचनाएं एकत्रित कर सकता है, (ii) शोध-कार्य मे उपयोगी पद्धतियों एवं प्रविधियो का ज्ञान हो जाता है, (iii) अवधारणाओं को समझने एवं प्राक्कल्पनाओं का निर्माण करने में सहायता मिलती है, तथा (iv) किसी शोध-कार्य को फिर से दोहराने की गलती से बचा जाता और विषय से सम्बन्धित उन पहलुओ पर ध्यान दिया जाता है जिन पर अन्य शोधकर्ताओं ने पूर्व में ध्यान नहीं दिया। इससे शोध-कार्य अधिक व्यवस्थित होता है।

(III) इकाइयों का निर्धारण
(DETERMINATION OF UNITS)

सामाजिक शोध का एक अन्य प्रमुख चरण शोध से सम्बन्धित इकाइयों का निर्धारण और उन इकाइयों को स्पष्टतः परिभाषित करना है। इकाइयों का निर्धारण करते समय इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा जाना चाहिए कि इकाइयां अध्ययन के उद्देश्य से सम्बन्धित हों और साथ ही सम्पूर्ण समग्र से एकरूपता रखने वाली हो। इकाइयों का पूर्णतः स्पष्ट और सुपरिभाषित होना आवश्यक है। अध्ययन की इकाइयां ऐसी हो सकती है जो अत्यन्त सरल मालूम पड़ें, जैसे निर्धन, कृषक, श्रमिक, मकान, बेकारी, शिक्षित, शहरी, ग्रामीण, आदि। अध्ययन के लिए इनमें से जिस किसी इकाई का उपयोग किया जाय, उसको स्पष्ट रूप से परिभाषित करना आवश्यक है अन्यथा अलग-अलग शोधकर्ता और सूचनादाता इनका भिन्न-भिन्न अर्थ लगाकर इन्हें अलग-अलग रूपों में समझेगे। परिणामस्वरूप सूचनादाता ऐसी सूचनाएं देगे जो शोध-कार्य में सहायक होने की बजाय बाधक ही होगी। इससे शोध-कार्य की वस्तुनिष्ठता (Objectivity) समाप्त हो जायेगी। अतः इकाइयों को ठीक से निर्धारित और स्पष्टतः परिभाषित करना आवश्यक है।

(IV) प्राक्कल्पना का निर्माण
(FORMULATION OF HYPOTHESIS)

शोधकर्ता अपनी अध्ययन-समस्या के प्राथमिक ज्ञान के आधार पर एक ऐसा सामान्य निष्कर्ष बनाता है जो उसके शोध का आधार बनता है। परन्तु यहां हमें यह नहीं भूलना चाहिए

1 *Ibid*, p 139

कि प्राक्कल्पना (उपकल्पना) एक आकस्मिक निष्कर्ष मात्र होता है। लुण्डबर्ग ने बताया है कि प्राक्कल्पना एक सामयिक सामान्यीकरण है जिसकी प्रामाणिकता की परीक्षा करना अभी शेष है। शोध द्वारा इस प्राक्कल्पना की परीक्षा की जाती है। प्राक्कल्पना को अध्ययन-समस्या के रूप में उभरे हुए प्रारम्भिक विचार का वैज्ञानिक रूप माना जा सकता है।

प्राक्कल्पना एक ऐसा सामान्य निष्कर्ष है जिसे सही नही मान लिया जाता। वास्तविक तथ्यो के आधार पर उसका पुष्टिकरण किया जाता है अर्थात् यह पता लगाया जाता है कि वह सत्य है या असत्य। जार्ज कैसवेल (George Caswell) ने बताया है कि प्राक्कल्पना अध्ययन-विषय से सम्बन्धित वह काल्पनिक एव अस्थायी निष्कर्ष है जिसकी सत्यता को केवल वास्तविक तथ्य ही प्रकट कर सकते है।

प्राक्कल्पना शोधकर्ता के कार्य को दिशा प्रदान करती है, शोध के क्षेत्र को स्पष्ट करती है। इसकी सहायता से शोधकर्ता अन्धकार में इधर-उधर भटकने से बच जाता है। डुनहम (Dunham) ने बताया है कि प्राक्कल्पना शोधकर्ता के कार्य को दिशा प्रदान करती और उसे यह बताती है कि क्या ग्रहण करना है और क्या छोड़ देना है ? इससे शोध का कार्य-क्षेत्र निर्धारित होता है, आगे का मार्ग व दिशा स्पष्ट होते हैं। तथ्यों के आधार पर प्राक्कल्पना सत्य भी प्रमाणित हो सकती है और असत्य भी। परन्तु इतना निश्चित है कि इन दोनों ही स्थितियों में ज्ञान की वृद्धि होती है। प्राक्कल्पना शोधकर्ता के कार्य को सरल बना देती है, दिशाहीन अध्ययन पर अंकुश लगाती है, ऐसे तथ्यों को एकत्रित करने पर रोक लगाती है जो शोध-कार्य की दृष्टि से आवश्यक नहीं है।

यहां हमें यह बात ध्यान में रखनी है कि सभी प्रकार के शोधों में प्राक्कल्पना का होना अनिवार्य नहीं है। उदाहरण के रूप में, अन्वेषणात्मक शोध में अध्ययन के प्रारम्भ में सामान्यतः प्राक्कल्पना का निर्माण नहीं किया जाता। ऐसी शोध के परिणाम के आधार पर प्राक्कल्पना का निर्माण किया जाता है।

(V) अध्ययन-क्षेत्र का निर्धारण
(DETERMINATION OF SCOPE OF STUDY)

अध्ययन-क्षेत्र या शोध-क्षेत्र का निर्धारण मूलतः शोध-विषय की प्रकृति पर निर्भर करता है। शोधकर्ता को अपने अध्ययन-क्षेत्र का स्पष्टतः निर्धारण कर लेना चाहिए ताकि तथ्यों का वस्तुनिष्ठ ढंग से संकलन किया जा सके। शोध-क्षेत्र के निर्धारण का तात्पर्य यही है कि शोध-कार्य

रह सकेंगे। अध्ययन-क्षेत्र न तो अधिक छोटा और न ही अधिक बड़ा होना चाहिए। ज्यादा छोटे क्षेत्र के अध्ययन के आधार पर उपयोगी निष्कर्ष निकालना कठिन होता है तथा ज्यादा बड़े क्षेत्र के अध्ययन के आधार पर शोध-कार्य निश्चित समय पर पूरा करना मुश्किल होता है।

(VI) सूचनादाताओं का चुनाव
(SELECTION OF RESPONDENTS)

शोधकर्ता के लिए अध्ययन-क्षेत्र की सभी इकाइयों से सम्पर्क कर तथ्यों को एकत्रित करना कठिन होता है। फिर भी यदि अध्ययन-क्षेत्र काफी सीमित हो तो क्षेत्र की प्रत्येक इकाई से सूचनाएं एकत्र की जाती हैं। इसे संगणना विधि (Census Method) के नाम से पुकारते है। परन्तु इस विधि द्वारा अध्ययन में काफी श्रम, समय, साधन एवं धन लगता है।

अत· अध्ययन के लिए निदर्शन-विधि या प्रतिचयन विधि (Sampling Method) का प्रयोग किया जाता है। इस विधि द्वारा समग्र (Universe) का प्रतिनिधित्व करने वाली कुछ इकाइयों को चुन लिया जाता है। समग्र में से कुछ इकाइयों का चुनाव शोधकर्ता मनमाने ढंग से नहीं करके निदर्शन या प्रतिचयन की निश्चित विधियो को काम में लेता हुआं वस्तुनिष्ठ ढंग से करता है ताकि सूचनादाताओं के चुनाव मे किसी प्रकार की अभिनति या पक्षपात (Bias) नही आ पाये। यहां यह भी निर्धारित करना होता है कि समग्र में से कितनी इकाइयो का चुनाव निदर्शन (Sample) के रूप मे किया जायेगा। मान्यता यह है कि इस निदर्शन के रूप मे चुने गये लोगों से प्राप्त तथ्यों के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले जायेंगे, वे सम्पूर्ण समग्र पर लागू होंगे, समग्र का प्रतिनिधित्व करेगे। निदर्शन के रूप में सामान्यतः 10 प्रतिशत, 20 प्रतिशत या अध्ययन-क्षेत्र के सीमित होने पर इससे भी कुछ अधिक इकाइयों का चुनाव किया जा सकता है।

(VII) सूचना के स्त्रोतों एवं अध्ययन के उपकरणों व प्रविधियों का निर्धारण

(DETERMINATION OF SOURCES OF DATA AND TOOLS AND TECHNIQUES OF STUDY)

प्राक्कल्पना की जांच करने एवं सत्यता का पता लगाने के लिए तथ्य या सूचनाएं संकलित करना आवश्यक होता है। इसके लिए शोधकर्ता को यह पता लगाना पड़ता है कि सूचना-प्राप्ति के विश्वसनीय स्रोत कौनसे है, सूचनाएं कहां-कहां से प्राप्त हो सकती हैं ? सूचना के स्रोत प्रमुखतः दो प्रकार के होते है : (i) प्राथमिक या क्षेत्रीय स्रोत (Primary Source), (ii) द्वैतीयक या प्रलेखीय स्रोत (Secondary or Documentary Source)। जो सूचनाएं अध्ययन-कर्ता क्षेत्रीय-कार्य द्वारा प्रथम बार प्राप्त करता है, वे सभी प्राथमिक सूचनाए कहलाती हैं। द्वैतीयक स्रोत के अन्तर्गत वे सूचनाएं आती है जो पहले से ही दूसरो के द्वारा संकलित की गयी हों। शोध ग्रन्थ, पुस्तकें, पांडुलिपियां, जनगणना रिपोर्ट, अभिलेख, गजेटियर, पत्र-पत्रिकाएं, आदि सूचना के द्वैतीयक स्रोत ही है।

सूचना-प्राप्ति के स्रोतों का पता लगा लेने के बाद शोध-समस्या, सूचनादाताओ एवं क्षेत्र की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए ऐसे उपकरणों व प्रविधियों का चुनाव करना होगा जिनकी सहायता से प्रामाणिक एवं वस्तुनिष्ठ तथ्य एकत्र किये जा सकें। यहां शोधकर्ता को यह भी स्पष्ट करना होगा कि तथ्य-संकलन हेतु उपकरणो एवं प्रविधियो का उपयोग किस प्रकार से किया जायेगा। उदाहरण के रूप में, यदि किसी शोध मे सूचना प्राप्त करने हेतु अनुसूची का प्रयोग किया जाता है तो न केवल इसका ठीक से निर्माण करना बल्कि यह बताना भी आवश्यक है कि इसका उपयोग किस प्रकार से किया जायेगा। यही बात अन्य प्रविधियो जैसे अवलोकन, साक्षात्कार, प्रश्नावली, आदि के सम्बन्ध में भी सही है। साक्षात्कार प्रविधि के माध्यम से तथ्य एकत्र करने हेतु साक्षात्कार-प्रदर्शिका (Interview Guide) का शोध-उपकरण के रूप में प्रयोग किया जाता है।

(VIII) उपकरणों एवं प्रविधियों का पूर्व-परीक्षण तथा अग्रगामी अध्ययन

(PRE-TESTING OF THE TOOLS AND TECHNIQUES AND PILOT STUDY)

वास्तविक शोध-कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व शोधकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि हेतु चुने गये उपकरणों एवं प्रविधियों की उन्हें छोटे पैमाने पर लागू करके जांच कर

ली जाय, उनकी कमियों या दोषों का पता लगा लिया जाय ताकि प्रारम्भ में ही उन्हें दूर किया जा सके। इसे ही पूर्व-परीक्षण या पद्धतिशास्त्रीय पूर्वाभ्यास कहते है। पूर्व-परीक्षण का इस दृष्टि से विशेष महत्व है कि इससे अध्ययन में काम में लिए जाने वाले उपकरणों, प्रविधियों एवं अन्वेषकों की जांच हो जाती है तथा इनमे आवश्यकतानुसार संशोधन कर कमियों को शोध के प्रारम्भिक स्तर पर ही दूर कर लिया जाता है। इस सम्बन्ध में **एकाफ** का कहना ठीक ही है, "पूर्व-परीक्षण शोध के विभिन्न पक्षो, उपकरणो या वैकल्पिक शोध-योजनाओ का एक नियन्त्रित अध्ययन है जिसका उद्देश्य यह निर्धारित करना है कि कौनसा विकल्प सर्वाधिक उपयुक्त है।"[1]

अध्ययन के उपकरणों की जांच हेतु पूर्व-परीक्षण किया जाता है। लेकिन मूल शोध प्रारम्भ करने के पहले सम्पूर्ण शोध-कार्य का छोटे पैमाने पर परीक्षण किया जाता है। इसमे यह पता लगाया जाता है कि चुना गया निदर्शन पर्याप्त है या नहीं, निदर्शन-विधि उपयुक्त है या नही, अन्वेषकों में आवश्यक कार्यक्षमता है या नही। वैज्ञानिक अध्ययन हेतु इन सब बातों का पता लगाना आवश्यक होता है। इस हेतु छोटे पैमाने पर या लघु स्तर पर अनुसन्धान किया जाता है। इसे **पूर्वगामी या अग्रगामी अध्ययन** (Pilot Study) कहते है। यह मुख्य शोध का लघु स्तरीय प्रतिरूप (Small Scale Replica) कहलाता है।

(IX) तथ्यों का अवलोकन व संकलन
(OBSERVATION AND COLLECTION OF DATA)

शोध-कार्य की सम्पूर्ण योजना के तैयार हो जाने के बाद क्षेत्रीय-कार्य (Field-work) प्रारम्भ होता है। अब तथ्य संकलन हेतु अवलोकन तथा अध्ययन के अन्य उपकरणों एवं प्रविधियों का सहारा लिया जाता है। शोध-प्रक्रिया के इस स्तर पर तथ्य संकलन हेतु सूचनादाताओं से सम्पर्क स्थापित किया जाता है, अन्वेषको पर पूरा ध्यान रखा जाता है तथा अप्रासंगिक या असंगत तथ्यो की फिर से जांच की जाती है।

तथ्य-संकलन में इस वात की पूरी सावधानी वरतनी होती है कि तथ्य पूर्णत. पक्षपात-रहित होकर एकत्रित किये जाएं। तथ्य-संकलन के कार्य में लगे शोधकर्ता एवं अन्वेषकों के लिए यह आवश्यक है कि वे सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों से मुक्त हों। तथ्यों को उनके वास्तविक रूप में एकत्रित किया जाना चाहिए। इस कार्य में पूर्ण शुद्धता बनाये रखना आवश्यक है वरना निष्कर्ष दोषपूर्ण हो सकते है। इस स्तर पर सूचनादाताओं द्वारा दी गयी सूचनाओं के अलावा अवलोकन विधि का सहारा भी अवश्य ही लिया जाना चाहिए। यहां यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि निष्पक्ष व सभी प्रकार के पूर्वाग्रहों से मुक्त व्यक्ति ही अवलोकन विधि के माध्यम से सही तथ्यों को संकलित कर सकता है।

(X) तथ्यों का सम्पादन, संकेतन, वर्गीकरण एवं सारणीयन
(EDITING, CODING, CLASSIFICATION AND TABULATION OF DATA)

तथ्यों के संकलन के बाद उनके विश्लेपण का कार्य प्रारम्भ होता है। एक कुशल शोधकर्ता एकत्रित तथ्यों को इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि वे सजीव मालूम पड़ने लगते हैं, स्वयं बोलने लगते हैं। सर्वप्रथम शोधकर्ता तथ्यों का **सम्पादन** करता है। विभिन्न प्रविधियों द्वारा एकत्रित तथ्यों की जांच की जाती है, कमियों को दूर किया जाता है, असंगति दूर कर तथ्यों को स्पष्टता प्रदान की जाती है। इस स्तर पर अनावश्यक सूचनाओ को निकाल दिया

1 R. L. Ackoff, *The Design of Social Research*, p 340.

जाता है तथा शेष सूचनाओ को क्रमवद्ध रूप में जमा लिया जाता है। प्रत्युत्तरों को अर्थपूर्ण श्रेणियो मे बाटने की प्रक्रिया को ही **संकेतन** के नाम से पुकारते हैं। यहां लोगों से प्राप्त व्यक्तिगत उत्तरो को कुछ समूहो में रखा जाता है, विभिन्न उत्तरों को संकेतों, प्रतीकों व संख्याओं की सहायता से व्यवस्थित बनाया जाता है। इसके बाद शोध के उद्देश्यों के आधार पर तथ्यों को विभिन्न वर्गो में वर्गीकृत किया जाता है। तथ्यों का वर्गो में विभाजन एवं वर्ग-निर्माण की प्रक्रिया ही **वर्गीकरण** के नाम से जानी जाती है। **सिन पाओ यंग** ने लिखा है कि *स्थान, समय, सम्बन्धो, व्यवहार अथवा कार्य या दृष्टिकोण के अनुसार तथ्यों को समूह में* रखने को ही वर्गीकरण कहते हैं। समान प्रकृति के तथ्यों को अलग-अलग वर्गो में रख लिया जाता है। वर्गीकरण केवल संख्यात्मक तथ्यो का ही नहीं बल्कि गुणात्मक तथ्यो का भी किया जाता है। वर्गीकरण के आधार पर ही विभिन्न घटनाओ, दशाओं या अवस्थाओं की तुलना की जाती और उनके सह-सम्बन्धों का पता लगाया जाता है।

सारणीयन मे वर्गीकृत तथ्यो को सक्षिप्त रूप प्रदान करने हेतु संख्यात्मक सारणियों में *रखा जाता है। ऐसा करने से वर्गीकृत तथ्य अधिक अर्थपूर्ण एवं स्पष्ट हो जाते है।* ऐसे सूक्ष्म, स्पष्ट एवं तुलना योग्य तथ्यो के आधार पर ही वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना एवं नियमो का प्रतिपादन करना सम्भव होता है। यहां हमें इतना अवश्य ध्यान में रखना है कि वैज्ञानिक निष्कर्षो की प्राप्ति हेतु सारणीयन के कार्य को काफी सावधानीपूर्वक सम्पन्न करना नितान्त आवश्यक है।

(XI) तथ्यों का विश्लेषण व विवेचन
(ANALYSIS AND INTERPRETATION OF DATA)

इस स्तर पर विभिन्न प्रविधियो की सहायता से संकलित तथ्यों का विश्लेषण एवं विवेचन किया जाता है। यहा एकत्रित किये गये तथ्यों का अर्थ निकालने और प्राक्कल्पना की सत्यता-असत्यता का पता लगाने का प्रयत्न किया जाता है। तथ्यों, घटनाओं एवं विभिन्न दशाओ के बीच सह-सम्बन्ध ज्ञात किया एवं कार्य-कारण सम्बन्धों का पता लगाया जाता है। इस बात की विवेचना की जाती है कि किसी विशेष दशा, परिणाम अथवा घटना के लिए कौन से कारक उत्तरदायी हैं ? इससे वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने में मदद मिलती है।

(XII) सामान्यीकरण एवं नियमों का प्रतिपादन
(GENERALIZATION AND FORMULATION OF LAWS)

शोध का यह अन्तिम चरण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यहां वैज्ञानिक निष्कर्षो पर पहुंचकर नियमो व सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है। तथ्यों के विश्लेषण एवं विवेचन के आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाले जाते हैं जो अति संक्षिप्त होते हैं। शोधकर्ता इन निष्कर्षो के आधार पर ही नियमों का प्रतिपादन करता है। उदाहरण के रूप में, प्रो. सी. आर. शॉ ने अपने क्षेत्रीय-अध्ययन के आधार पर एक नियम का प्रतिपादन किया जो इस प्रकार है, "स्कूल से भागने, बाल-अपराध एवं वयस्क-अपराध की दरें नगर के केन्द्र से दूरी के विपरीत अनुपात मे घटती-बढती हैं।"[1] इसका तात्पर्य यह है कि जैसे-जैसे नगर के केन्द्र से दूरी जितनी बढ़ती जायेगी, उसके साथ ही साथ स्कूल से भागने तथा बाल-अपराध एवं वयस्क-अपराध की दरें भी उतनी ही घटती जायेगी। किसी नियम का प्रतिपादन या सिद्धान्त का निर्माण वैज्ञानिक शोध का सार तत्व है। अतः इसका सुस्पष्ट एवं यथार्थ होना आवश्यक है। समय या

1 Clifford R. Shaw, *Delinquency Areas*, p 202.

परिस्थिति के बदल जाने के साथ-साथ पुराने नियमों की पुनः परीक्षा और नये नियमों का प्रतिपादन अनिवार्य हो जाता है। सभी विज्ञानो की प्रगति का यही एक मार्ग है, और कोई संक्षिप्त या लघु मार्ग नहीं है।

यहां यह वता देना भी आवश्यक है कि **शोधकर्ता शोध के अन्तिम चरण के रूप में प्रतिवेदन (Report) प्रस्तुत करता है।** इस प्रतिवेदन के प्रथम भाग मे शोध हेतु अपनाई गयी अध्ययन-पद्धतियों का उल्लेख किया और अवधारणाओं को स्पष्टतः समझाया जाता है। दूसरे भाग में अध्ययन-विषय से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों को प्रस्तुत किया जाता और तथ्यों के बीच पाये जाने वाले कारणात्मक सम्बन्ध का उल्लेख किया जाता है। तीसरे भाग में सामान्य निष्कर्ष निकाले और नियमों का प्रतिपादन किया जाता है। इसे ही सामान्यीकरण या सैद्धान्तीकरण कहते हैं।

अभी तक के विवेचन से स्पष्ट है कि सामाजिक शोध एक लम्बी प्रक्रिया है। वैज्ञानिक निष्कर्षो तक पहुंचने एवं नियमों के प्रतिपादन हेतु आवश्यक है कि शोध के प्रत्येक चरण से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के कार्यों का सम्पादन निष्पक्ष रूप से सावधानीपूर्वक किया जाय। साथ ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण सर्वत्र बनाये रखना भी अनिवार्य है। इसी प्रकार के शोधों से प्राप्त सामान्यीकरण एवं नियम ही किसी विषय के ज्ञान-भण्डार को बढ़ाने में योग देते हैं।

प्रश्न

1. सामाजिक अनुसन्धान की प्रक्रिया का उल्लेख कीजिए।
2. सामाजिक अनुसन्धान की प्रक्रिया के विभिन्न चरणो का वर्णन कीजिए।
3. अनुसन्धान की प्रक्रिया के एक चरण के रूप मे पूर्व-परीक्षण तथा अग्रगामी अध्ययन (सर्वेक्षण) से आप क्या समझते हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नांकित पर सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

   (1) समस्या का चुनाव, (2) प्राक्कल्पना का निर्माण, (3) सूचनादाताओं का चुनाव, (4) पूर्व-परीक्षण, (5) सामान्यीकरण।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित कथनो का उत्तर हां अथवा नहीं में दीजिए :

   (i) सामाजिक अनुसन्धान का प्रथम चरण अध्ययन इकाइयों का चुनाव करना है।

   (ii) सामाजिक अनुसन्धान का अन्तिम चरण प्राक्कल्पना का निर्माण करना है।

   (iii) सामाजिक अनुसन्धान के तथ्यों का संकलन करने के बाद उनका सारणीयन किया जाता है।

   (iv) सामाजिक अनुसन्धान मे अनुसन्धान के पूरा होने पर सामान्यीकरण किया जाता है।

   (v) सामाजिक अनुसन्धान में तथ्यो के अवलोकन के बाद ही उपकरणो का चयन किया जाता है।

   (vi) सामाजिक अनुसन्धान में अध्ययन क्षेत्र के निर्धारण के बाद सूचनादाताओं का चयन किया जाता है।

2. निम्नांकित लेखकों की पुस्तकों के नाम बताइए (कोई एक पुस्तक का) :

   (i) अगस्त कॉम्ट, (ii) जार्ज ए. लुण्डबर्ग, (iii) आर. एल. एकॉफ, (iv) सी. आर. शॉ।

[उत्तर—1. हां—iii, iv, vi. शेष सभी का उत्तर नही होगा। 2 (i) पॉजिटिव फिलोसफी, (ii) सोशियल रिसर्च, (iii) द डिजाइन ऑफ सोशियल रिसर्च, (iv) डेनिनक्वेन्सी एरिया।

4

सामाजिक सर्वेक्षण : अर्थ एवं प्रकृति

[SOCIAL SURVEY : MEANING AND NATURE]

समाज सामाजिक सम्बन्धों की एक जटिल व्यवस्था है। मानव के सामाजिक सम्बन्धों, व्यवहारो एव घटनाओ का अध्ययन करने की एक प्रमुख विधि सामाजिक सर्वेक्षण है। सर्वेक्षण सामाजिक अनुसन्धान की एक पद्धति है जिसमे व्यक्ति क्षेत्र में जाकर समस्याओं का अध्ययन करता है। सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत वैज्ञानिक विधियों द्वारा किसी विशिष्ट क्षेत्र मे रहने वाले लोगो की तात्कालिक सामाजिक समस्याओ के बारे मे जानकारी प्राप्त की जाती एवं तथ्यो का सकलन किया जाता है। इसके आधार पर सामाजिक सुधार की योजनाएं भी बनायी जाती है। यदि हम यह जानना चाहते है कि भारत मे बाल-अपराध के क्या कारण हैं, युवकों मे मद्यपान और नशाखोरी की प्रवृत्ति क्यो बढ़ रही है, छात्रों में अनुशासनहीनता के क्या कारण है, भारत मे आतंकवाद के लिए कौन-कौन से कारण उत्तरदायी है, क्षेत्रवाद, साम्प्रदायिकता और भाषावाद को बढ़ावा देने वाली शक्तियां कौन-कौनसी हैं, तो इन्हें ज्ञात करने के लिए हम सर्वेक्षण-विधि का प्रयोग कर सकते हैं। इन समस्याओ के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए हमें क्षेत्र में जाना होगा, लोगों से साक्षात्कार लेना होगा एवं तथ्यो का सकलन कर निष्कर्ष निकालने होगे। सामाजिक समस्याओ के अध्ययन का यह तरीका जिसमे शोधकर्ता घटना-स्थल पर या क्षेत्र में जाकर प्राथमिक तथ्यो का संकलन करता है, सामाजिक सर्वेक्षण कहलाता है।

सामाजिक सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषा
(MEANING AND DEFINITION OF SOCIAL SURVEY)

शब्द रचना की दृष्टि से अंग्रेजी के 'सर्वे' (survey) शब्द का हिन्दी रूपान्तरण सर्वेक्षण है। स्वय सर्वे (survey) दो शब्दो (sur+vey) से मिलकर बना है। sur अथवा sor जिसका अर्थ होता है over अर्थात् ऊपर एवं vey का अर्थ है Veeir या Veoir = to see अर्थात् देखना। इसे हम सम्मिलित रूप में घटना को ऊपर से देखना (to over see) अथवा 'निरीक्षण करना' कह सकते है। इस प्रकार शाब्दिक दृष्टि से सर्वेक्षण का तात्पर्य किसी घटना अथवा स्थिति को ऊपर से देखना, अवलोकन करना अथवा उसका सिंहावलोकन करना होता है।

वेबस्टर शब्दकोश (Webester's Dictionary) में सर्वेक्षण का अर्थ, "सही सूचना प्राप्त करने के उद्देश्य से किए गए आलोचनात्मक निरीक्षण अथवा विशेष दशाओं में किसी एक क्षेत्र का अध्ययन करना," बताया गया है।

सामान्यतः सर्वेक्षण शब्द का अर्थ सड़क, मकान, नदी के पुल के निर्माण करने में नाप-जोख एवं पैमायश करने, आदि से लिया जाता है। दैनिक जीवन में **सर्वे** शब्द का प्रयोग भूमि की सीमा निर्धारण एवं उसकी स्थिति को ज्ञात करने, आदि के लिए भी किया जाता है।

समाजशास्त्र में सामाजिक सर्वेक्षण की परिभाषाएं चार प्रकार से दी गई हैं :

(1) सामाजिक समस्या एवं सुधार के अध्ययन के रूप में, (2) वैज्ञानिक पद्धति के रूप में, (3) सहयोगी प्रक्रिया के रूप में, (4) सामान्य सामाजिक घटनाओं के अध्ययन के रूप मे।

हम यहां सामाजिक सर्वेक्षण की परिभाषाओ की विभिन्न दृष्टिकोणों से विवेचना करेंगे।

(1) **सामाजिक समस्या एवं सुधार के अध्ययन के रूप में** (As a Study of Social Problem and Reform)—अठारहवी और उन्नीसवी शताब्दी में सामाजिक सर्वेक्षण का प्रारम्भ सामाजिक समस्याओं के अध्ययन एवं उनके सुधार के रूप में किया गया था। उस समय इंगलैण्ड और यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप अनेक मजदूर समस्याएं उत्पन्न हो रही थीं जिनकी तरफ समाज-वैज्ञानिको एवं समाज-सुधारकों ने अपने अध्ययनों द्वारा शासकों का ध्यान आकर्षित किया और उनके सुधार हेतु योजनाएं बनाने के लिए प्रेरणा दी। इसलिए सामाजिक सर्वेक्षण की कई परिभाषाओं मे सामाजिक समस्याओ और उनके निदान तथा समाधान के विचारों को प्रधानता दी गई। इनमे से कुछ परिभाषाएं इस प्रकार हैं :

बर्गेस के अनुसार, "एक समुदाय का सर्वेक्षण सामाजिक विकास की एक रचनात्मक योजना प्रस्तुत करने के उद्देश्य से किया गया, उसकी दशाओं तथा आवश्यकताओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।"[1] **पी. कैल्लाग** के अनुसार, "सामाजिक सर्वेक्षण प्रायः सहकारी प्रयास माने गए है, जो सामाजिक समस्याओं का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन करते है, जो इतने गम्भीर होते हैं कि जनमत को तथा समस्या समाधान की इच्छा को जाग्रत करते हैं।"

पी. वी. यंग के अनुसार, "सामाजिक सर्वेक्षण किसी प्रचलित अथवा सामाजिक व्याधिशास्त्रीय प्रकृति की दशाओं में सुधार हेतु रचनात्मक कार्यक्रम बनाने के उद्देश्य से किए जाते हैं।"[2] **फेयरचाइल्ड** के अनुसार, "सर्वेक्षण एक सहकारी प्रयास है जिसमें वैज्ञानिक विधि का प्रयोग विशिष्ट भौगोलिक सीमाओं मे आबद्ध तथा कार्यशील तात्कालिक सामाजिक समस्याओं एवं दशाओं के अध्ययन एवं समाधान हेतु किया जाता है।"[3]

(2) **वैज्ञानिक पद्धति के रूप में** (As a Scientific Method)—अनेक विद्वान सामाजिक सर्वेक्षण को सामाजिक अनुसन्धान की एक वैज्ञानिक विधि के रूप में स्वीकार करते हैं जिसका उद्देश्य शुद्ध अनुसन्धान अथवा व्यावहारिक अनुसन्धान कुछ भी हो सकता है। 18वीं और 19वी सदी तक सर्वेक्षण का कार्य व्याधिकीय समस्याओं का अध्ययन करना और उनका निदान व समाधान ढूंढना था, किन्तु बीसवीं सदी मे सर्वेक्षण के प्रति यह दृष्टिकोण बदला और जिस तरह से सभी क्षेत्रों में विज्ञान और वैज्ञानिक विधि पर बल दिया गया, उसी तरह सामाजिक सर्वेक्षण को भी अनुसन्धान की वैज्ञानिक विधि के रूप में देखा गया। सामाजिक सर्वेक्षण को वैज्ञानिक विधि के रूप में स्वीकार करने वाली कुछ परिभाषाएं निम्नांकित हैं—मोर्स

1
2
3

के अनुसार "संक्षेप में सर्वेक्षण किसी सामाजिक स्थिति अथवा समस्या अथवा जनसंख्या के परिभाषित उद्देश्यों के हेतु वैज्ञानिक तथा व्यवस्थित रूप में विश्लेषण की एक पद्धति है।"[1]

चैपमैन के अनुसार, "सामाजिक सर्वेक्षण एक विशिष्ट भौगोलिक, सांस्कृतिक अथवा प्रशासनिक क्षेत्र में रहने वाले व्यक्तियों से सम्बन्धित तथ्यों को एक व्यवस्थित रूप में संकलित किये जाने की एक विधि है।"[2]

मोजर के अनुसार, "समाजशास्त्री के लिए सर्वेक्षण क्षेत्र का अनुसन्धान करना अध्ययन के विषय से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सम्बन्धित तथ्य एकत्रित करने का ऐसा अति उपयोगी साधन है जिससे समस्या पर प्रकाश पड़ सके तथा अन्वेषण योग्य बातों का पता चल सके।"[3]

(3) **सहयोगी प्रक्रिया के रूप में** (As a Co-operative Process)—अनेक विद्वानों ने सामाजिक सर्वेक्षण को एक सहयोगी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है। इस श्रेणी की कुछ परिभाषाएं निम्नांकित हैं :

हैरिसन के अनुसार, "संक्षेप में सामाजिक सर्वेक्षण एक सहकारी प्रयास है जो निश्चित भौगोलिक सीमाओ एवं स्थिति रखने वाली सामयिक सम्बन्धित सामाजिक समस्याओ तथा दशाओ के उपचार तथा अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करता है, साथ ही अपने तथ्यो, निष्कर्षों तथा सुझावों को इस तरह प्रसारित करता है कि वे यथासम्भव समुदाय के सामान्य ज्ञान तथा बुद्धिमत्तापूर्ण सहकारी क्रिया के लिए शक्ति बन सके।"[4]

जोसेफ एच. बन्जेल (Joseph H. Bunzel) के अनुसार, "सामाजिक सर्वेक्षण एक प्रकार की सहकारिता के आधार पर की गई अनुसन्धान परियोजना है। इसके अन्तर्गत वैज्ञानिक पद्धतियों के द्वारा तत्कालीन समाज की समस्याओं तथा परिस्थितियों का अध्ययन तथा किसी-किसी क्षेत्र में इनके उपचार के तरीके भी बताये जाते हैं। सामाजिक समस्याएं तथा परिस्थितियां किसी विशेष क्षेत्र मे सीमित होती हैं।"

(4) **सामान्य सामाजिक घटनाओं के अध्ययन के रूप में** (As a Study of General Social Phenomena)—कई विद्वानों ने सामाजिक सर्वेक्षण को सामान्य सामाजिक घटनाओं का अध्ययन माना है। इससे सम्बन्धित कुछ परिभाषाएं इस प्रकार हैं :

वेल्स के अनुसार, "साधारणतया सामाजिक सर्वेक्षण को किसी विशिष्ट प्रदेश में रहने वाले एक मानव समूह की सामाजिक संस्थाओं एवं क्रियाकलापों के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"[5]

सिन पाओ येंग के अनुसार, "सामाजिक सर्वेक्षण प्रायः लोगों के एक समूह की रचना, क्रियाकलापों तथा रहन-सहन की दशाओं के सम्बन्ध में एक जांच पडताल है।"[6]

1 "The Survey is, in brief simply a method of analysis in scientific and orderly form and for defined purposes of a given social situation or problem or population."
—H. M Morse, *The Social Survey in Town and Country Areas*, p 104

2 D Chapman, *Dictionary of Sociology* (ed) : D. Mitchell, p. 189.

3 C. A. Moser, *op cit.*, p. 4

4 S M. Harrison, *A Bibliography of Social Surveys*, p 204.

5 "The survey may generally be defined as a study of the social institutions and

अब्राम्स के अनुसार, "सामाजिक सर्वेक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक समुदाय की रचना तथा उसकी क्रियाओं के सामाजिक पक्ष के सम्बन्ध में परिमाणात्मक तथ्य एकत्रित किए जाते हैं।"[1]

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं पर ध्यानपूर्वक विचार करने से ज्ञात होता है कि सामाजिक सर्वेक्षण को विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग प्रकार से परिभाषित किया है। उपर्युक्त सभी परिभाषाओं में हैरिसन द्वारा दी गई परिभाषा सर्वाधिक उपयुक्त प्रतीत होती है क्योंकि उसमें सामाजिक सर्वेक्षण को सभी दृष्टिकोणों से देखा गया है। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि **सामाजिक सर्वेक्षण सामाजिक अनुसन्धान की वह वैज्ञानिक पद्धति है जिसके द्वारा एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले लोगों के सम्बन्ध में सामाजिक तथ्यों का संकलन किया जाता है तथा उनकी सामाजिक समस्याओं के बारे में वास्तविक जानकारी प्राप्त की जाती है ताकि उनका निदान और उपचार किया जा सके।** सर्वेक्षण का कार्य एक सहकारी प्रयास है जिसमें तथ्यों का संकलन विभिन्न अध्ययनकर्ताओं के सहयोग द्वारा किया जाता है।

सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति एवं विशेषताएं
(NATURE AND CHARACTERISTICS OF SOCIAL SURVEY)

सामाजिक सर्वेक्षण के सम्बन्ध में दी गई विभिन्न परिभाषाओं से इसकी निम्नांकित प्रकृति एवं विशेषताएं प्रकट होती हैं :

(1) **सामाजिक घटनाओं एवं समस्याओं का अध्ययन**—सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत एक समूह अथवा समुदाय में पाई जाने वाली सामाजिक घटनाओं, जीवन दशाओ, लोगों की समस्याओं, उनके कारणों, आदि का अध्ययन किया जाता है। सामाजिक घटनाओ के अध्ययन द्वारा हम सामाजिक जीवन को भली-भांति समझ सकते तथा सामाजिक घटनाओ की प्रकृति को जान सकते है।

(2) **एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र**—सामाजिक घटनाए और सामाजिक समस्याएं अनेक और विविध हैं। इन सभी का अध्ययन सर्वेक्षण के अध्ययन का विषय नहीं बन सकता। केवल वे ही घटनाएं सामाजिक सर्वेक्षण द्वारा अध्ययन की जा सकती हैं जो एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र तक सीमित हों ताकि अनुसन्धानकर्ता क्षेत्र में जाकर उनसे सम्बन्धित तथ्यों का संकलन कर सकें। यह निश्चित भौगोलिक क्षेत्र कोई एक गांव, नगर, कस्बा, वार्ड अथवा समुदाय हो सकता है।

(3) **समस्याओ का अध्ययन एवं उपचार**—सामाजिक सर्वेक्षण में केवल सामाजिक समस्याओं का अध्ययन ही नहीं किया जाता, वरन् उनके कारणों को भी खोजा जाता है जिससे कि उन्हें हल करने एवं सुधार योजनाएं बनाने में मार्गदर्शन एवं सहायता प्राप्त हो। **बर्गेस** ने इसी बात पर जोर देते हुए कहा है कि सर्वेक्षण से प्राप्त निष्कर्षों का प्रयोग सामाजिक समस्याओं के निवारण, सुधार एवं प्रगति के सुझाव हेतु किया जाता है।

(4) **वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग**—सामाजिक सर्वेक्षण में एक क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों का अध्ययन वैज्ञानिक विधियों द्वारा किया जाता है। प्रश्नावली, साक्षात्कार, अनुसूची, आदि विधियों का प्रयोग करके अनुसन्धानकर्ता वैज्ञानिक तथ्यो का संकलन करता है। सर्वेक्षण के अन्तर्गत घटनाओं के बारे में कार्य-कारण सम्बन्धों को ज्ञात किया जाता है तथा प्राप्त होने

1 "Social survey is a process by which quantitative facts are collected about the social aspects of a community's composition and activities."
—Mark Abrams, *Social Surveys and Social Action*, p. 1.

वाले निष्कर्षों के आधार पर सामान्यीकरण किया जाता है। सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों की सत्यता की परख भी की जा सकती है।

(5) **सहकारी प्रक्रिया**—कुछ वैज्ञानिको ने सामाजिक सर्वेक्षण को एक सहकारी प्रक्रिया माना है। एक छोटी और लघु क्षेत्र में सीमित समस्या का अध्ययन तो एक अकेला व्यक्ति भी कर सकता है, किन्तु जब बड़े पैमाने पर समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त करनी हो तो उसके लिए एक अध्ययन दल बनाना होता है और इसमें विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ मिलकर ही सामूहिक रूप से समस्या का अध्ययन करते हैं। इसीलिए सर्वेक्षण को एक सहकारी प्रक्रिया माना गया है।

(6) **परिमाणात्मक पक्ष**—सामाजिक सर्वेक्षणों के द्वारा संकलित किए गये तथ्यो को परिमाणात्मक रूप में प्रकट किया जाता है। यही कारण है कि वर्तमान में सामाजिक अनुसन्धानो में *सांख्यिकीय विधियों एवं सांख्यिकी का प्रयोग दिनों-दिन बढ़ता ही जा रहा है।* अब्राम्स ने इसलिए ही सर्वेक्षण को परिमाणात्मक तथ्यों से सम्बन्धित माना है।

सामाजिक सर्वेक्षण का क्षेत्र एवं विषयवस्तु
(SCOPE AND CONTENT OF SOCIAL SURVEY)

मोजर ने सामाजिक सर्वेक्षण के विषय-क्षेत्र को निम्नांकित चार भागों में विभाजित किया है :

(1) **जनसंख्यात्मक विशेषताएं** (Demographic Characteristics)—इसके अन्तर्गत सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा किसी समाज अथवा समुदाय की जनसंख्यात्मक विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है। जनसंख्यात्मक विशेषताओं के अन्तर्गत परिवार और उसकी रचना, स्त्री-पुरुषों की संख्या (लिंग अनुपात), आयु संरचना, वैवाहिक स्थिति, प्रजनन सम्बन्धी नियम, जनघनत्व, जन्म एवं मृत्यु-दर, जन्म-नियन्त्रण की घटना, परिवार नियोजन, औसत आयु, जनसंख्या की गतिशीलता, आदि को सम्मिलित किया जाता है।

(2) **सामाजिक पर्यावरण** (Social Environment)—इसके अन्तर्गत मोजर ने उन सामाजिक-आर्थिक कारको का उल्लेख किया है जो लोगो को प्रभावित करते है। इन कारकों मे समूह या समुदाय के लोगो के विभिन्न व्यवसाय, आय, घरों की दशा, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य सामाजिक और भौतिक सुख-सुविधाओं, धर्म और पडोस, आदि को सम्मिलित किया है। लोगों के रहन-सहन के स्तर एवं सामाजिक-आर्थिक दशाओं को जानने के लिए भी सामाजिक सर्वेक्षण किया जाता है। इस प्रकार के सर्वेक्षण में व्यक्ति किस प्रकार रहते हैं, उनकी विभिन्न भौतिक आवश्यकताएं क्या हैं, उनकी पूर्ति वे किन साधनों द्वारा करते है, आदि बातें जानने का प्रयास किया जाता है। लोगो के आय-व्यय का बजट, उनकी आर्थिक समस्याओं जैसे बेकारी, निर्धनता, ऋणग्रस्तता, आदि पक्षों से सम्बन्धित सर्वेक्षण भी इसके अन्तर्गत किये जाते है।

(3) **सामाजिक क्रियाएं** (Social Activities)—इसके अन्तर्गत पेशों को छोड़कर लोगों की अन्य सामाजिक क्रियाओ को सम्मिलित किया जाता है। 'व्यक्ति क्या करते हैं', यह जानना इस प्रकार के सर्वेक्षणों का मूल उद्देश्य होता है। लोगो की सामाजिक क्रियाओ के अन्तर्गत ऐसे प्रश्नो को सम्मिलित किया जाता है जैसे, वे खाली समय का उपयोग किस प्रकार करते हैं, उनकी मनोरंजन, रेडियो सुनने, अखबार पढ़ने एवं टी. वी. देखने तथा यात्रा करने से सम्बन्धित आदतें क्या हैं? खेल-कूद, त्यौहार, नाच-गान, सामूहिक भोज, सिगरेट-पान

सेवन, उत्सव, कर्मकाण्ड, आदि विषयों से सम्बन्धित सर्वेक्षण भी इसके क्षेत्र के अन्तर्गत आते है।

(4) **विचार तथा मनोवृत्ति** (Opinion and attitude)—इस श्रेणी के अन्तर्गत वे सर्वेक्षण सम्मिलित किए जाते है जो विभिन्न विषयो पर लोगों के विचारों, दृष्टिकोणों, मनोवृत्तियों, मूल्यो तथा मानसिक स्थितियो को जानने के लिए आयोजित किए जाते हैं। जनमत संग्रह, छुआछूत, विधवा-विवाह, चुनाव सम्बन्धी मत, आदि के बारे में लोगों की राय जानने के लिए किए जाने वाले सर्वेक्षण इसके अन्तर्गत सम्मिलित किए जाते हैं।

उपर्युक्त वर्गीकरण से यह नहीं समझ लेना चाहिए कि सामाजिक सर्वेक्षण का क्षेत्र केवल इन्हीं पक्षों तक सीमित है। वास्तव मे समाज मे ज्यों-ज्यों नई परिस्थितियां सामने आती जायेंगी, अनुसन्धान विधियों में सुधार होता जायेगा, त्यों-त्यों सामाजिक सर्वेक्षण का क्षेत्र भी विस्तृत होता जायेगा और नए-नए विषय इसके क्षेत्र मे सम्मिलित होते जायेंगे।

सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्य
(OBJECTIVES OF SOCIAL SURVEY)

सामाजिक सर्वेक्षण कई उद्देश्यों को लेकर आयोजित किए जा सकते हैं; सर्वेक्षण का उद्देश्य शुद्ध वैज्ञानिक अथवा व्यावहारिक हो सकता है। ज्ञान-प्राप्ति, समस्याओं के ज्ञान, उनका निवारण तथा समाज सुधार की योजनाओं को प्रस्तुत करने के उद्देश्य से भी सामाजिक सर्वेक्षण किये जा सकते है। सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए गॉर्डन लिखते है, "सर्वेक्षण जनजीवन के किसी पक्ष पर प्रशासन सम्बन्धी तथ्यों को ढूंढ निकालने के लिए अथवा समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के किसी पक्ष पर नवीन प्रकाश डालने के लिए किया जा सकता है।" सामाजिक सर्वेक्षण के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

(1) **सामाजिक तथ्यों का संकलन** (Collection of Social Facts)—सामाजिक सर्वेक्षण एक वैज्ञानिक विधि है जिसका एक उद्देश्य सामाजिक घटना अथवा समूह के रूप में विश्वसनीय तथ्यों का संकलन करना है। सामाजिक जीवन एवं व्यवहार के सम्बन्ध में गणनात्मक तथ्यों का संकलन करना सर्वेक्षण का एक मुख्य उद्देश्य है। इस प्रकार के सर्वेक्षण के द्वारा सामाजिक क्रिया और संगठन के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है। लोगों के रहन-सहन, आय वितरण, आर्थिक एवं सामाजिक स्तर, घर, जनसंख्या, शिक्षा, व्यापार एवं उद्योग, पारिवारिक रचना, जनसंख्या की प्रवृत्ति, वैवाहिक स्थिति, आदि के बारे में सर्वेक्षण के द्वारा सूचनाएं संकलित की जाती हैं। आर्थिक और व्यावसायिक क्षेत्र में प्रबन्धन में सामाजिक सर्वेक्षण का बहुत अधिक प्रयोग किया जाता है। कई व्यावसायिक संस्थाएं अपने माल की खपत की सम्भावना को जानने के लिए सर्वेक्षण कराती हैं। सर्वेक्षण के इस व्यावहारिक उपयोग से इसके विस्तृत क्षेत्र का पता चलता है।

(2) **सामाजिक समस्याओं का** [illegible] सामाजिक समस्याओ का अध्ययन करना भी सर्वेक्षण के एक मुख्य उद्देश्य है। बेकारी, अशिक्षा, भिक्षावृत्ति, [illegible] हैं। इन समस्याओं के बारे में [illegible]

1 "A survey may be [illegible] aspects of public life or [illegible] throw fresh light on [illegible]

उनके निष्कर्षों के आधार पर उनका समाधान करना सामाजिक सर्वेक्षण का एक प्रमुख उद्देश्य रहा है।

(3) **कार्य-कारण सम्बन्धों की खोज** (Search for Causal Relationship)—सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य सामाजिक घटनाओं के कारणों को ज्ञात करना भी है। कोई भी घटना समाज में क्यों और किन परिस्थितियों मे घटित होती है, इसकी पुनरावृत्ति किन कारणों से होती है तथा यह समाज को किस प्रकार से प्रभावित करती है, आदि को ज्ञात करने के लिए सर्वेक्षणो का आयोजन किया जाता है। समाज में कोई घटना बिना कारणों के घटित नही होती। इन घटनाओं में अन्तर्निहित कार्य-कारणों की खोज करना सर्वेक्षण का प्रमुख उद्देश्य है।

(4) **प्राक्कल्पनाओं का निर्माण एवं परीक्षण** (Formulation and Testing of Hypothesis)—सर्वेक्षण का एक उद्देश्य प्राक्कल्पनाओं का निर्माण और उनका परीक्षण करना भी है। जिस समुदाय या समूह का हम अध्ययन करना चाहते हैं, उसका मुख्य सर्वेक्षण कार्य प्रारम्भ करने से पहले छोटी मात्रा मे एक अग्रगामी सर्वेक्षण (Pilot Survey) भी किया जाता है। इस प्रकार के सर्वेक्षण से प्राप्त वास्तविक तथ्यों के आधार पर प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया जाता है तथा प्राक्कल्पनाओं के परीक्षण एवं सत्यापन के लिए भी सर्वेक्षणों का आयोजन किया जाता है। दैनिक जीवन में घटनाओं के अवलोकन एवं पुस्तकीय अध्ययन के द्वारा हमारे मन मे विभिन्न उपकल्पनाओं का उदय होता है। इन उपकल्पनाओं के बारे मे वैज्ञानिक विधि द्वारा सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित किया जाय और उनकी विवेचना की जाय, इसके लिए सर्वेक्षणों का आयोजन किया जाता है। इस सन्दर्भ में **मोजर** ने लिखा है, "सर्वेक्षण में दोनों उपयोगिता होती है। उनके द्वारा प्राक्कल्पनाओं की रचना तथा अत्यधिक उच्च स्तर पर इनका प्रयोग प्राक्कल्पनाओं के परीक्षण के लिए भी किया जाता है।"[1]

(5) **सामाजिक सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा** (Verification of Social Theories)—समाजशास्त्र के क्षेत्र में विभिन्न विद्वानों द्वारा निर्मित अनेक सिद्धान्त पाये जाते है। समाज परिवर्तनशील एवं गतिशील है। अतः समाज-व्यवस्था से सम्बन्धित प्राचीन काल में बनाए गये सिद्धान्त वर्तमान एवं भविष्य के समाजों के लिए भी सही हों, यह आवश्यक नही है। अतः उनका समय-समय पर पुनर्परीक्षण करना आवश्यक है। समय के साथ-साथ अनुसन्धान के यंत्रों एवं प्रणालियों में भी सुधार होता रहता है। पुराने सिद्धान्तों को नवीन अध्ययन प्रणालियों के आधार पर परखने की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि कई सर्वेक्षणों का आयोजन प्राचीन सिद्धान्तों एवं नियमो का सत्यापन करने के लिए किया जाता है।

(6) **सामाजिक घटनाओं का वर्णन** (Description of Social Events)—**मोजर** के मतानुसार, "समाजशास्त्रियों के लिए सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य पूर्णतया वर्णनात्मक हो सकता है जैसे सामाजिक दशाओं, सम्बन्धों तथा व्यवहार का अध्ययन।"[2] कई बार सर्वेक्षण किसी विशिष्ट उद्देश्य को लेकर नहीं वरन् केवल सामाजिक घटनाओ के वर्णन के लिए किया जाता है। अधिकांश सरकारी सर्वेक्षणों का आयोजन सामान्य सूचनाओं के संकलन हेतु ही किया जाता है। इस प्रकार के सर्वेक्षणों की रिपोर्ट तथा आंकड़े समय-समय पर प्रकाशित होते रहते है। भारत मे राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (National Sample Survey) द्वारा आयोजित

1 Moser, *op. cit*, p 4

2 "To a social scientist, a survey may equally have a purely descriptive purpose, as a way of studying social conditions, relationships and behaviour"
—Moser, *Ibid.*, p. 2.

सर्वेक्षण के विभिन्न दौर इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते है। इस प्रकार के सर्वेक्षणों का उद्देश्य व्यक्तिगत अनुसन्धानकर्ताओं के कार्य को सरल बनाना तथा उन्हें उचित सामग्री प्रदान करना होता है।

(7) **जीवन की दशाओं का अध्ययन** (Study of Life Conditions)—सामाजिक सर्वेक्षण के उद्भव और विकास से ज्ञात होता है कि आरम्भ में इंग्लैण्ड और अमेरिका में सर्वेक्षणों का सम्बन्ध मानव जीवन की सामान्य दशाओं को ज्ञात करने से रहा है। मूलतः सर्वेक्षण श्रमिक वर्ग की जीवन दशाओ एवं समस्याओं के अध्ययन से प्रारम्भ हुए। आज भी अधिकांश सर्वेक्षणों का आयोजन लोगों के रहन-सहन, आय-व्यय, व्यवसाय, सुख-सुविधाओं, समस्याओं, शिक्षा, धर्म, स्वास्थ्य, पारिवारिक जीवन, आदि के बारे मे वास्तविक तथ्यों को ज्ञात करने के लिए किये जाते हैं। चार्ल्स बूथ, राउण्ट्री तथा लीप्ले द्वारा किये गये सर्वेक्षणों का उद्देश्य श्रमिक वर्ग एवं सामान्य जनता की जीवन दशाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करना था।

सामाजिक अनुसन्धान एवं सामाजिक सर्वेक्षण
(SOCIAL RESEARCH AND SOCIAL SURVEY)

कई बार सामाजिक अनुसन्धान और सामाजिक सर्वेक्षण को एक ही समझ लिया जाता है, किन्तु इन दोनों में पर्याप्त अन्तर है। इस भ्रम का कारण यह है कि दोनों की प्रकृति, अध्ययन विषय एवं अध्ययन यन्त्रों में बहुत कुछ समानता है। सामाजिक अनुसन्धान में सर्वेक्षण विधियों का उपयोग इतना अधिक प्रचलित हो गया है कि बहुत से लोग सामाजिक सर्वेक्षण को ही सामाजिक अनुसन्धान समझने लगे हैं। वास्तव में सामाजिक सर्वेक्षण सामाजिक अनुसन्धान की ही एक विधि है। इन दोनों को एक ही मानने का भ्रम इन दोनों में पाई जाने वाली समानताएं हैं। ये समानताएं निम्नांकित है :

(1) सामाजिक अनुसन्धान एवं सामाजिक सर्वेक्षण दोनों ही के अन्तर्गत **सामाजिक घटनाओं का अध्ययन** किया जाता है।

(2) दोनों में नवीन **सामाजिक तथ्यों की खोज** करने का प्रयत्न किया जाता है।

(3) दोनों में **सामाजिक व्यवहार और उसकी यथार्थता को जानने का प्रयत्न** किया जाता है ताकि सामाजिक जीवन पर अधिकाधिक नियन्त्रण प्राप्त किया जा सके।

(4) दोनों में ही **वैज्ञानिक पद्धति** का प्रयोग किया जाता है।

(5) दोनों की **अध्ययन प्रविधियां तथा यन्त्र** साक्षात्कार, अनुसूची, प्रश्नावली, निदर्शन, आदि एक समान हैं।

(6) दोनों में ही अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत तटस्थता, कार्य-कारण सम्बन्ध, प्राक्कल्पना, अवलोकन, लेखन-वर्गीकरण, निर्वचन एवं सामान्यीकरण, आदि वैज्ञानिक चरणों का प्रयोग किया जाता है।

इन दोनों के उद्देश्य, अन्तर्वस्तु तथा पद्धति, आदि की सामान्य समानताओं के कारण, इनका एक मिला-जुला नाम 'सर्वेक्षण अनुसन्धान' (survey research) प्रयुक्त होने लगा है। **इन समानताओं के बावजूद भी इन दोनों में निम्नांकित महत्वपूर्ण अन्तर हैं :**

(1) **प्राक्कल्पना के आधार पर**—अक्सर सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत सामाजिक घटनाओं व तथ्यो का अध्ययन करने के लिए प्राक्कल्पना की आवश्यकता नहीं होती, परन्तु सामाजिक अनुसन्धान का प्रारम्भ ही किसी प्राक्कल्पना का परीक्षण करने के लिए किया जाता है। इस सन्दर्भ में पार्क ने लिखा है, "एक सर्वेक्षण कभी भी अनुसन्धान नहीं है. यह

सामाजिक अनुसन्धान अधिक गहन एवं सूक्ष्म होता है तथा सामान्य सिद्धान्तो की खोज से अधिक सम्बन्धित होता है।"[1]

(9) **सैद्धान्तीकरण के आधार पर**—सामाजिक सर्वेक्षण की उपलब्धियों एवं निष्कर्षो के आधार पर प्राक्कल्पनाओ का निर्माण तो सम्भव है, लेकिन सिद्धान्तों का निर्माण करना प्रायः असम्भव होता है। इसके विपरीत, सामाजिक अनुसन्धान के निष्कर्षो के आधार पर नए सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है।

(10) **व्यावहारिकता के आधार पर**—सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य व्यावहारिक और उपयोगितावादी होता है, जबकि सामाजिक अनुसन्धान का उद्देश्य सैद्धान्तिक एवं शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति होता है।

(11) **अध्ययन विधियो के आधार पर**—सामाजिक सर्वेक्षण मे प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार, आदि विधियो द्वारा प्राथमिक सामग्री का संकलन किया जाता है। इसके विपरीत सामाजिक अनुसन्धान में प्राथमिक और द्वैतीयक दोनों प्रकार की सामग्रियो का संकलन करने के लिए गुणात्मक एवं संख्यात्मक दोनो ही विधियो का प्रयोग किया जाता है।

(12) **सम्पूर्णता और भाग के आधार पर**—सामाजिक अनुसन्धान की अनेक विधिया है जैसे ऐतिहासिक विधि, तुलनात्मक विधि, सर्वेक्षण विधि, वैयक्तिक अध्ययन विधि, प्रक्षेपण विधि, प्रकार्यात्मक विधि तथा विषयवस्तु-विश्लेषण विधि, आदि। इस प्रकार सर्वेक्षण विधि सामाजिक अनुसन्धान की अनेक विधियों में से एक विधि है। यदि अनुसन्धान एक सम्पूर्णता (whole) है तो सर्वेक्षण उसका एक भाग (part) है।

सामाजिक सर्वेक्षण विधि की उपयोगिता (महत्व) एवं गुण
[UTILITY (IMPORTANCE) AND MERITS OF SOCIAL SURVEY METHOD]

वर्तमान में सर्वेक्षण-विधि सामाजिक अनुसन्धान की एक प्रमुख विधि मानी जाती है। इसका कारण इसकी निम्नांकित उपयोगिता एवं गुण हैं :

(1) **समस्या का अनुभवात्मक अध्ययन** (Empirical Study of the Problem)—सामाजिक सर्वेक्षण में अध्ययनकर्ता समस्या के प्रत्यक्ष सम्पर्क मे आता है, वह घटनाओं का क्षेत्र में जाकर अध्ययन करता है। सर्वेक्षण के अन्तर्गत व्यक्ति समस्या के बारे में व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा प्राथमिक तथ्यों का संकलन करता है, अतः उसे वे सारे लाभ प्राप्त होते हैं जो व्यक्तिगत सम्पर्क एवं प्राथमिक तथ्यों से सम्बन्धित हैं। इसके अभाव में अध्ययनकर्ता या तो दार्शनिक आधार पर या अपने व्यक्तिगत अनुभव या किसी पूर्व-निर्मित सिद्धान्त के आधार पर अध्ययन कर निष्कर्ष निकालेगा। ऐसे निष्कर्ष सैद्धान्तिक होते हैं, व्यावहारिक नहीं। सर्वेक्षण द्वारा ही हमें सभी प्रकार के व्यक्तियों एवं परिस्थितियों का प्रत्यक्ष ज्ञान हो सकता है और प्राप्त निष्कर्ष भी अधिक विश्वसनीय होते हैं।

(2) **वैषयिक अध्ययन** (Objective Study)—सर्वेक्षण में व्यक्तिगत पक्षपात की सम्भावना समाप्त हो जाती है और समस्या के बारे में वैषयिक एवं तटस्थ अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है क्योंकि इसमें क्षेत्र से संकलित तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं न कि व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर। दार्शनिक विधि द्वारा तथ्यों की विवेचना करने पर

1 "Social research differs from social surey in being more intensive and precise and more concerned with the discovery of general principles."
— Fairchild, *Dictionary of Sociology*, p. 291.

उसमें व्यक्ति के व्यक्तिगत विचारों, संस्कृति, धर्म एवं पक्षपात के प्रभाव की सम्भावना रहती है। अत. वैषयिकता की प्राप्ति के लिए सर्वेक्षण-विधि का सहारा लिया जाता है।

(3) **वैध प्राक्कल्पना के निर्माण में सहायक** (Helpful in Formulation of Valid Hypothesis)—सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर नवीन प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया जाता है और पूर्व स्थापित प्राक्कल्पनाओं का पुनर्परीक्षण किया जाता है। वैध प्राक्कल्पनाओं के आधार पर ही नवीन अनुसन्धान प्रारम्भ किये जाते हैं।

(4) **प्रामाणिक तथा विश्वसनीय निष्कर्ष** (Valid and Reliable Conclusions)—चूंकि सर्वेक्षण विधि में समस्या से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन स्वयं अध्ययनकर्ता द्वारा क्षेत्र में जाकर किया जाता है, अतः वे अधिक प्रामाणिक एवं विश्वसनीय होते हैं। इसमें सर्वेक्षणकर्ता प्रथम-स्तरीय (first hand) आंकड़ों का संकलन करता है, जिन्हें वह प्रत्यक्ष रूप से अपनी आंखो से देखता और कानो से सुनता तथा सूचनादाताओ से पूछता है।

(5) **वैज्ञानिक परिशुद्धता** (Scientific Accuracy)—सामाजिक सर्वेक्षण में वैज्ञानिक नियमों, यन्त्रों एवं विधियों का प्रयोग किया जाता है, इसलिए सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त निष्कर्षों में वैज्ञानिक परिशुद्धता पायी जाती है। वर्तमान में सर्वेक्षण में साख्यिकीय विधियों का प्रयोग बढ़ रहा है जिसके परिणामस्वरूप निश्चित एवं परिशुद्ध निष्कर्ष निकालना सम्भव है।

(6) **सामाजिक संस्थाओं एवं संरचना का अध्ययन** (Study of Social Institutions and Social Structure)—सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा हम किसी भी समाज की संस्थाओं एवं संरचना के विभिन्न अंगों जैसे परिवार, विवाह, नातेदारी, धर्म, शिक्षा, मनोरंजन, न्याय-व्यवस्था, कानून, प्रथाओं, रीति-रिवाजों, परम्पराओ एवं संस्कृति, आदि के बारे में विस्तृत एवं गहन जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। मानव व्यवहारों की जानकारी के लिए सर्वेक्षण एक उपयोगी विधि है।

(7) **सामाजिक परिवर्तन एवं समस्याओं का अध्ययन** (Study of Social Change and Problems)—सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा समाज में घटित होने वाले परिवर्तनों एवं समाज में व्याप्त समस्याओं का सरलता से अध्ययन किया जा सकता है। समाज एक गतिशील एवं परिवर्तनशील व्यवस्था है। इसके सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक पक्षों में परिवर्तन होते रहते हैं। इसी प्रकार से लोगों के विचारों, मूल्यो, भावनाओं एव दृष्टिकोणों में भी परिवर्तन होते रहते हैं। इन परिवर्तनों की दिशा, प्रवृत्ति, प्रकृति और कारणो की जानकारी हमें सामाजिक सर्वेक्षणों से मिलती है। इसी प्रकार से समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं जैसे बेकारी, निर्धनता, अपराध, अशिक्षा, मद्यपान, छात्र अनुशासनहीनता, अशिक्षा, जनाधिक्य, आदि के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए भी सर्वेक्षणों का आयोजन किया जाता है।

(8) **समस्याओं का समाधान एवं सामाजिक पुनर्निर्माण** (Solution of the Problems and Social Reconstruction)—सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा सामाजिक समस्याओ के कारणो का पता चलता है तथा सर्वेक्षण प्रतिवेदनो मे समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव भी दिये जाते है जिनका उपयोग कर समाज की बुराइयो का अन्त किया जा सकता है तथा रचनात्मक कार्यक्रमो एवं नियोजित विकास द्वारा समाज के लिए कल्याणकारी योजनाओ की रूपरेखा प्रस्तुत की जा सकती है। सर्वेक्षण के द्वारा युद्ध, भूकम्प, बाढ़, महामारी और प्राकृतिक विपदाओं द्वारा नष्ट हुए समाज की वास्तविक स्थिति का चित्रण किया जा

सकता है तथा उसके पुनर्निर्माण के लिए व्यवस्थित योजना बनायी जा सकती है। सर्वेक्षण के आधार पर सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु वैज्ञानिक हल प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

(9) **विज्ञान की उन्नति में सहायक** (Helpful in the Progress of Science)—सर्वेक्षण के द्वारा अनुसन्धान की विधियों को अधिक उपयोगी एवं विश्वसनीय बनाया जाता है। सर्वेक्षण द्वारा खोजपूर्ण निष्कर्षों के आधार पर विभिन्न अध्ययन-विधियों में सुधार, परिवर्तन एवं परिमार्जन किया जाता है ताकि वे अधिक उपयोगी एवं वैज्ञानिक बन सकें। सर्वेक्षण विधि वैज्ञानिक विधि के सबसे ज्यादा निकट है।

(10) **सरल विधि** (Simple Method)—सामाजिक सर्वेक्षण सामाजिक अनुसन्धान की एक सरल विधि है। इसके प्रयोग के लिए अध्ययनकर्ता के लिए अधिक प्रशिक्षण, अनुभव एवं तकनीकी विशेषज्ञता की भी आवश्यकता नहीं होती।

(11) **मनोवैज्ञानिक तथ्यों का अध्ययन** (Study of Psychological Facts)—सर्वेक्षण के द्वारा लोगों के मानसिक पक्षों जैसे किसी समस्या के बारे में विचारों, भावनाओं, मतों, मनोवृत्तियों, मूल्यों एवं दृष्टिकोणों का अध्ययन किया जा सकता है जो कि दार्शनिक या प्रयोगशाला पद्धति द्वारा सम्भव नही है।

(12) **व्यावहारिक उपयोगिता** (Practical Utility)—सामाजिक सर्वेक्षण विधि का उपयोग अनेक समस्याओं के व्यावहारिक हल ढूंढने के लिए भी किया जाता है। व्यापारिक संस्थाएं अपने माल की खपत के लिए बाजार सर्वेक्षण करवाती हैं। श्रमिकों की समस्याओं का अध्ययन करने तथा उनका व्यावहारिक हल प्रस्तुत करने, चुनाव में उम्मीदवारो के प्रति लोगों के रुख को ज्ञात करने तथा सामाजिक, धार्मिक एवं आर्थिक समस्याओं के प्रति लोगो के विचारों को ज्ञात करने के लिए सर्वेक्षणों का आयोजन किया जाता है।

सर्वेक्षण-विधि की सीमाएं
(LIMITATIONS OF SURVEY METHOD)

सर्वेक्षण विधि की सीमाएं निम्नांकित है :

(1) **केवल मूर्त घटनाओं का अध्ययन** (Study of only Concrete Phenomena)—सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा केवल ऐसी ही घटनाओं का अध्ययन किया जा सकता है जो मूर्त और दृश्यमान होती हैं। उदाहरण के लिए, परिवार की रचना, आकार, जनसंख्या, रहन-सहन, अपराध, निर्धनता, आय-व्यय, आदि का अध्ययन इसके द्वारा किया जा सकता है। किन्तु अनेक समस्याएं अमूर्त एवं अदृश्य भी होती है, उनके अध्ययन हेतु यह विधि सर्वथा अनुपयुक्त है। लोगों के विचारों, भावों, दृष्टिकोणों एवं विश्वासों के बारे में सर्वेक्षण द्वारा विश्वसनीय जानकारी प्राप्त नहीं की जा सकती। इनके अध्ययन के लिए तो मनोवैज्ञानिक विधियां ही उपयुक्त हैं। सर्वेक्षण के द्वारा सामान्यतः संख्यात्मक तथ्य ही एकत्रित किये जा सकते हैं, गुणात्मक नही।

(2) **अध्ययन का सीमित क्षेत्र** (Limited area of Study)—सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा एक सीमित क्षेत्र में घटने वाली घटनाओं एवं समस्याओं का ही अध्ययन किया जा सकता है। समस्याओं के व्यापक एवं बहुमुखी पक्षों के अध्ययन हेतु यह विधि अनुपयुक्त है।

(3) **अधिक समय तथा धन की आवश्यकता** (More Time and Money needed)—सर्वेक्षण विधि समय और धन की दृष्टि से एक खर्चीली प्रणाली है। सर्वेक्षण की योजना बनाने से लेकर अध्ययन का प्रतिवेदन प्रस्तुत करने तक कई चरणों से गुजरना पड़ता है जिसमें काफी समय लगता है। कई बार तो सर्वेक्षण कई वर्षों तक चलता है। निदर्शन

निकालने, प्रश्नावली व अनुसूची तैयार करने, साक्षात्कार लेने, आदि में काफी समय लग जाता है। सर्वेक्षण कार्य में लगे लोगो का वेतन, यात्रा-भत्ता, प्रशिक्षण, प्रश्नावलियों के मुद्रण, कागज, फाइलो, टाइप, टेप एवं कैमरा, आदि पर बहुत धन व्यय करना पड़ता है। धन के अभाव में कई बार सर्वेक्षण को बीच में ही बन्द कर देना पड़ता है।

(4) **एक अध्ययन दल की आवश्यकता** (Need of a Study Team)—सर्वेक्षण जब बडे पैमाने पर आयोजित किये जाते है तो कई कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, निदेशक, उप-निदेशक, अनुसन्धान अधिकारी, लिपिक, प्रगणक एव अध्ययनकर्ताओ, आदि की आवश्यकता होती है। इन सभी को प्रशिक्षित करने एवं इनमें ताल-मेल स्थापित करने मे कई कठिनाइयां आती है। यदि विभिन्न कार्यकर्ताओं में पारस्परिक सहयोग न हो एव तनावपूर्ण सम्बन्ध हों तो सर्वेक्षण कार्य को धक्का लगता है। दक्ष, अनुभवी और प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं को जुटाना भी एक कठिन कार्य है।

(5) **अभिनति की सम्भावना** (Possibility of Bias)—सर्वेक्षण कार्य एक जटिल एव लम्बी प्रक्रिया है। निदर्शन का चुनाव करने, प्रश्नावली का निर्माण करने, साक्षात्कार लेने, आदि सभी मे अध्ययनकर्ता के स्वयं के पूर्वाग्रहो के कारण पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

(6) **सैद्धान्तीकरण का अभाव** (Lack of Theorization)—सामाजिक सर्वेक्षण सामान्यत. सीमित क्षेत्र मे आयोजित किये जाते है, अतः उनके द्वारा प्राप्त निष्कर्षों से सिद्धान्तो का निर्माण करना कठिन है। सर्वेक्षणों का अधिकांशतः प्रयोग किसी विषय की प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने एवं स्पष्टीकरण करने के लिए ही उपयुक्त है, सामाजिक व्यवस्था से सम्बन्धित सिद्धान्तो के निर्माण के लिए नहीं।

(7) **गहन अध्ययन असम्भव** (Intensive Study impossible)—सर्वेक्षण के द्वारा सामाजिक घटनाओ का गहन अध्ययन सम्भव नहीं है क्योंकि इसके द्वारा अधिकांशतः 'हा' या 'नही' में उत्तर प्राप्त किये जाते है। सर्वेक्षण के द्वारा विषय के बारे मे केवल मोटी-मोटी बाते या सतही सूचनाए ही संकलित की जा सकती हैं।

(8) **कार्य-प्रणाली मे कठोरता** (Rigidity in Procedure)—सामाजिक सर्वेक्षण की अध्ययन प्रक्रिया एक व्यवस्थित तथा क्रमबद्ध प्रणाली है। इस प्रक्रिया का संचालन केवल बुद्धिमान, कुशल एवं अनुभवी व्यक्ति ही कर सकता है, सामान्य व्यक्ति नहीं। सभी व्यक्तियो का अध्ययन जड़ वस्तुओ की भाति एक ही प्रक्रिया द्वारा नहीं किया जा सकता, व्यक्तियो के अनुरूप ही प्रश्नों व अनुसूची की भाषा एव साक्षात्कार के तरीकों में परिवर्तन करना पडता है जिसकी स्वीकृति सर्वेक्षण पद्धति में नही होती। इसका परिणाम यह होता है कि कई बार महत्वपूर्ण सूचनाओ से वंचित रहना पडता है।

(9) **संदिग्ध विश्वसनीयता** (Doubtful Reliability)—सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यो की विश्वसनीयता में कई बार सन्देह व्यक्त किया जाता है। यदि प्रश्नावली में प्रश्नों की भाषा, क्रम और रचना दोषपूर्ण है अथवा प्रश्न लम्बे-लम्बे, व्यक्ति की भावनाओ पर चोट करने वाले एवं उनसे सम्बन्धित सूचना चाहने वाले है तो सही उत्तरो की आशा नही की जा सकती। इसके अतिरिक्त अध्ययनकर्ता के व्यक्तिगत विचारों, पक्षपात, मत, मूल्यों एवं पूर्वाग्रहो का भी अध्ययन के निष्कर्षों पर प्रभाव पड़ सकता है। ऐसी स्थिति में सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त तथ्य सन्देहप्रद होते हैं।

(10) **केवल तात्कालिक समस्याओं का अध्ययन** (Study of only immediate Problems)—अधिकांशतः सर्वेक्षण का प्रयोग तात्कालिक सामाजिक समस्याओं के अध्ययन के लिए ही किया जाता है, दूरस्थ सामाजिक समस्याओ के लिए नही। एक समय एवं स्थान पर किये गये सर्वेक्षण अन्य समयों एवं स्थानो के लिए अधिक उपयोगी नही होते, अतः उन पर ज्यादा निर्भर नही रहा जा सकता।

उपर्युक्त सीमाओं के अतिरिक्त इसकी कुछ अन्य कमियां भी है, जैसे—(i) सामाजिक सर्वेक्षण में व्यावहारिक उपयोगिता पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाता है तथा सैद्धान्तिक उपयोगिता भुला दी जाती है। (ii) अध्ययनकर्ताओं के व्यक्तित्व मे भी भिन्नता पायी जाती है, कुछ परिश्रमी, लगनशील, कर्तव्यनिष्ठ, बुद्धिमान और ईमानदार होते हैं तो कुछ आलसी, कार्य से जी चुराने वाले, पक्षपाती एवं कम शिक्षित। इन सभी बातो का अध्ययन के निष्कर्षो पर अच्छा और बुरा दोनों ही प्रभाव पड़ते है। (iii) सर्वेक्षण यन्त्रों के दोषपूर्ण चुनाव होने अथवा निदर्शन के चयन मे पक्षपात आने पर भी सर्वेक्षण दोषपूर्ण हो जाता है।

प्रश्न

1. सामाजिक सर्वेक्षण का अर्थ, उद्देश्य और क्षेत्र स्पष्ट कीजिए। (अजमेर, 1994)
2. सामाजिक सर्वेक्षण की विषय-वस्तु की विवेचना कीजिए। सर्वेक्षण विधि की सीमाओ पर प्रकाश डालिए।
3. सामाजिक सर्वेक्षण के अर्थ तथा विषय-वस्तु की विवेचना कीजिए।
4. सामाजिक सर्वेक्षण क्या है? इसकी प्रकृति का विवेचन कीजिए। (अजमेर, 1994)
5. सामाजिक सर्वेक्षण क्या है? सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्यो का विश्लेषण कीजिए।
6. सामाजिक सर्वेक्षण को परिभाषित कीजिए तथा इसके गुण-दोषो को समझाइए। (अजमेर, 2000)
7. सामाजिक सर्वेक्षण क्या है? इसकी प्रकृति का विवेचन कीजिए तथा सामाजिक नियोजन मे इसका महत्व समझाइए। (अजमेर, 1990)

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नांकित पर सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

   (1) सामाजिक सर्वेक्षण, (2) सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति, (3) सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्य, (4) सामाजिक सर्वेक्षण एवं सामाजिक अनुसन्धान मे अन्तर (अजमेर, 2000), (5) सामाजिक सर्वेक्षण की उपयोगिता, (6) सामाजिक सर्वेक्षण की सीमाएं।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित में से सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्य छांटिए :

   (i) निश्चित भौगोलिक क्षेत्र, (ii) सहकारी प्रक्रिया, (iii) सामाजिक तथ्यो का सकलन, (iv) कार्य-कारण सम्बन्धों की खोज, (v) सामाजिक पर्यावरण, (vi) प्राक्कल्पनाओं का निर्माण एवं परीक्षण, (vii) वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग, (viii) सामाजिक सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा।

2. निम्नांकित मे से सामाजिक सर्वेक्षण के गुण एव सीमाओ को अलग-अलग छांटकर लिखिए :

   (i) वैषयिक अध्ययन, (ii) वैज्ञानिक परिशुद्धता, (iii) अभिमति की सम्भावना, (iv) केवल मूर्त घटनाओं का अध्ययन, (v) सामाजिक पुनर्निर्माण, (vi) सरल विधि (vii) सामाजिक समस्याओ का अध्ययन, (viii) सैद्धान्तीकरण का अभाव।

   [उत्तर—(1) सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्य—iii, iv, vi, viii, (2) सामाजिक सर्वेक्षण के गुण—i, ii, v, vi, vii शेष सभी सामाजिक सर्वेक्षण की सीमाएं हैं।]

5

सामाजिक सर्वेक्षण के प्रकार, आयोजन एवं प्रमुख चरण

[TYPES, PLANNING & MAJOR STEPS OF SOCIAL SURVEY]

अध्ययन के उद्देश्यो, प्रकृति, विषय-वस्तु, समयावधि, अध्ययन-प्रणाली, आदि के आधार पर वैज्ञानिकों ने सर्वेक्षण के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख किया है। **वेल्स** ने सर्वेक्षण के दो प्रकार बताये है—प्रचार सर्वेक्षण तथा तथ्य संकलन सर्वेक्षण। **सिन पाओ यंग** ने सर्वेक्षण के दो प्रकारों—प्रसंगात्मक तथा सामान्य (विस्तृत) सर्वेक्षण का उल्लेख किया है। **हरबर्ट हाईमन** ने विवरणात्मक तथा व्याख्यात्मक सर्वेक्षण का उल्लेख किया है। व्याख्यात्मक सर्वेक्षण को हाईमन ने चार उप-भागो मे बांटा है—मूल्याकनात्मक, निदानात्मक, भविष्यवाणी योग्य तथा द्वैतीयक विश्लेषणात्मक सर्वेक्षण। **जूलियन साइयेन** ने भी सर्वेक्षण को दो भागों में बांटा है—कारणात्मक एवं वर्णनात्मक सर्वेक्षण। **कारपेण्टर** ने तथ्यमूलक एवं समस्यामूलक सर्वेक्षणो का उल्लेख किया है। **ओपेन हाइम** ने विवरणात्मक एव विश्लेषणात्मक सर्वेक्षणों का उल्लेख किया है।

सामान्य रूप से सर्वेक्षणों के निम्नांकित प्रकारों का उल्लेख किया जा सकता है :

I. समग्र के आधार पर (On the basis of Universe)—क्षेत्र के विस्तार एवं सम्पूर्णता के आधार पर सर्वेक्षण दो प्रकार के हो सकते हैं :

(i) **संगणना सर्वेक्षण** (Census Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षण में किसी विषय अथवा समस्या के अध्ययन हेतु क्षेत्र की सभी इकाइयों से सम्पर्क किया जाता है। भारत में प्रति दसवे वर्ष किया जाने वाला जनगणनात्मक सर्वेक्षण जिसमें प्रत्येक परिवार एव व्यक्ति से सम्पर्क कर सूचना संकलित की जाती हैं, इसी श्रेणी में आता है। ऐसे सर्वेक्षण द्वारा बड़े समुदायों के अध्ययन में अधिक समय, श्रम एवं धन की आवश्यकता होती है।

(ii) **निदर्शन सर्वेक्षण** (Sample Survey)—जब समग्र का विस्तार अधिक हो, इकाइयों की सख्या अधिक हो तथा समय, धन एवं श्रम की कमी हो तो समग्र में से कुछ इकाइयों को प्रतिनिधि के रूप में चुनकर उनका अध्ययन किया जाता है। इन प्रतिनिधि इकाइयो को निदर्शन कहते हैं। निदर्शन इकाइयों का सर्वेक्षण ही निदर्शन सर्वेक्षण कहलाता है।

II. सूचनाओं के आधार पर (On the basis of Data)—सूचनाओं को दो रूपो मे सकलित किया जा सकता है—संख्यात्मक रूप मे तथा गुणात्मक रूप मे। इसी आधार पर सर्वेक्षण भी दो प्रकार के होते हैं :

(i) **गुणात्मक सर्वेक्षण** (Qualitative Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षणों में विषय अथवा समस्या के बारे में गुणात्मक जानकारी संकलित की जाती है। मनोवैज्ञानिक अध्ययन जिनमें लोगों के मूल्यों, विचारों, विश्वासों, भावनाओं, विचारधाराओं, व्यवहारों या उनमें परिवर्तनों, आदि को ज्ञात किया जाता है, गुणात्मक सर्वेक्षण होते हैं।

(ii) **परिमाणात्मक सर्वेक्षण** (Quantitative Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षणो में विषय अथवा समस्या के बारे में मात्रात्मक अथवा सख्यात्मक सूचनाएं संकलित की जाती है। उदाहरण के लिए, परिवारों की संख्या, आय-व्यय के आंकड़े, जनसंख्या सम्बन्धी सूचनाएं, साक्षरता और बेकारी से सम्बन्धित आंकडों का संकलन करना परिमाणात्मक सर्वेक्षण कहलाता है।

III. **अन्वेषण स्तर के आधार पर** (On the basis of Exploration)—इस आधार पर सर्वेक्षण को दो भागों में बांटा गया है—पूर्वगामी तथा मुख्य सर्वेक्षण।

(i) **पूर्वगामी सर्वेक्षण** (Pilot Survey)—इस प्रकार का सर्वेक्षण मुख्य सर्वेक्षण से पूर्व किया जाता है। यह बड़े सर्वेक्षण का एक लघु रूप होता है, इसका उद्देश्य अध्ययन यन्त्रों की पूर्व परीक्षा करना, मुख्य सर्वेक्षण मे कितना समय, धन एवं श्रम लगेगा, आदि बातों को ज्ञात करना होता है।

(ii) **मुख्य सर्वेक्षण** (Main Survey)—पूर्वगामी सर्वेक्षण कर लेने के पश्चात् समस्या के वास्तविक अध्ययन हेतु इस प्रकार का सर्वेक्षण आयोजित किया जाता है। इन सर्वेक्षणों में समस्या के बारे में विश्वसनीय एवं वैज्ञानिक सामग्री का संकलन किया जाता है।

IV. **उद्देश्यों के आधार पर** (On the basis of Objectives)—उद्देश्यो के आधार पर सर्वेक्षण के निम्नांकित प्रकार हो सकते हैं :

(i) **विवरणात्मक सर्वेक्षण** (Descriptive Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षणों का उद्देश्य किसी भी समुदाय अथवा समूह के लोगो की सामाजिक दशा, रहन-सहन, सामाजिक व्यवहार, शिक्षा, मनोरजन, धर्म, व्यवसाय, आदि सामान्य बातों की जानकारी प्राप्त करना होता है। अन्य शब्दों में इस प्रकार के सर्वेक्षणों में समाज की यथास्थिति को ज्ञात किया जाता है। इस प्रकार के सर्वेक्षणों से परिवर्तन की प्रवृत्ति एवं दिशा को ज्ञात करने, तथ्यो की तुलना करने, भविष्यवाणी करने, आदि में सहायता मिलती है।

(ii) **व्याख्यात्मक सर्वेक्षण** (Explanatory Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षणों में किसी भी घटना के पीछे निहित कारणों को ज्ञात कर समस्या की व्याख्या की जाती है। भारत मे आतंकवाद, छात्रो में अनुशासनहीनता, बाल-अपराध, आदि समस्याओं के कारणों, आदि की व्याख्या करने हेतु किए जाने वाले सर्वेक्षण इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार के सर्वेक्षणो में क्या है, और क्यों है, आदि प्रश्नों के उत्तर ढूंढ़े जाते है।

(iii) **अन्वेषणात्मक सर्वेक्षण** (Exploratory Survey)—जब किसी समस्या के बारे में प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने के लिए सर्वेक्षण किया जाता है तो उसे अन्वेषणात्मक सर्वेक्षण कहा जाता है। इस प्रकार का सर्वेक्षण पूर्वगामी सर्वेक्षण के अनुसार ही होता है।

V. **समयावधि के आधार पर** (On the Basis of Time Period)—सर्वेक्षण मे कितना समय लगेगा, इस आधार पर सर्वेक्षण के निम्नांकित प्रकार हो सकते है :

(i) **लघुकालिक सर्वेक्षण** (Short time Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षण थोड़े समय में ही सम्पन्न हो जाते हैं। इनका उद्देश्य किसी तात्कालिक समस्या अथवा विषय के बारे में लोगो की राय जानना, आदि होता है। चुनाव के समय यदि हम किसी राजनैतिक दल के

पक्ष-विपक्ष के बारे में राय जानना चाहते हैं, किसी उम्मीदवार की जीत-हार के बारे पूर्वानुमान लगाना चाहते हैं तो हमें इसी प्रकार का सर्वेक्षण कराना होता है।

(ii) **दीर्घकालिक सर्वेक्षण** (Long Term Survey)—कई सर्वेक्षण ऐसे होते हैं जो एक लम्बे समय तक चलते हैं। जब किसी विषय या समस्या का विस्तार एक बहुत बड़े क्षेत्र में हो तो उसके अध्ययन में भी बहुत समय लगता है। किसी भी घटना की प्रवृत्ति (Trend) तथा परिवर्तन, आदि को जानने के लिए भी समय-समय पर सर्वेक्षण किये जाते हैं और उनकी परस्पर तुलना भी की जाती है। उदाहरण के लिए, भारत में जाति व्यवस्था में क्या परिवर्तन आ रहे हैं—यह जानने के लिए यदि हम हर पांच वर्ष बाद सर्वेक्षण करवाते हैं, और ऐसा बीस वर्षों तक करवाते हैं तो यह दीर्घकालिक सर्वेक्षण कहलाएगा।

VI. **सर्वेक्षण-विधियों के आधार पर** (On the Basis of Survey Techniques)—सर्वेक्षण में प्रयुक्त की जाने वाली विभिन्न विधियों के आधार पर सर्वेक्षण को निम्नांकित भागों में बांटा जा सकता है :

(i) **अवलोकन सर्वेक्षण** (Observation Survey)—काल्टन ने इस प्रकार के सर्वेक्षण का उल्लेख किया है जिसमें किसी घटना की जानकारी अवलोकन सर्वेक्षण के द्वारा की जाती है। अवलोकन का उल्लेख हमने पृथक् अध्याय में विस्तार से किया है।

(ii) **साक्षात्कार सर्वेक्षण** (Interview Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षण में लोगों से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर, किसी विषय पर पारस्परिक बात-चीत के द्वारा तथ्यों का संकलन किया जाता है।

(iii) **प्रश्नावली सर्वेक्षण** (Questionnaire Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षण में विषय से सम्बन्धित प्रश्नों की एक सूची बनायी जाती है जो डाक द्वारा सूचनादाताओं के पास भेज दी जाती है और वे उसे भरकर पुनः अध्ययनकर्ता के पास भेज देते हैं। इस विधि को 'प्रश्नावली विधि' या 'प्रश्नावली सर्वेक्षण' कहा जाता है।

VII **आयोजकों के आधार पर** (On the Basis of Organisers)—सर्वेक्षण का आयोजन किसने किया है, इस आधार पर सर्वेक्षण के प्रकार निम्नांकित है :

(i) **सरकारी सर्वेक्षण** (Government Survey)—जिन सर्वेक्षणों का आयोजन एवं संचालन सरकार अथवा सरकार के किसी विभाग द्वारा किया जाता है, उन्हें सरकारी सर्वेक्षण कहते है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (National Sample Survey) सरकारी सर्वेक्षण ही है।

(ii) **गैर-सरकारी सर्वेक्षण** (Non-Government Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षण निजी स्तर पर किसी व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा सचालित किये जाते है। उदाहरण के लिए, अपने जूतों की खपत के लिए यदि बाटा कम्पनी द्वारा कोई सर्वेक्षण कराया जाता है तो वह गैर-सरकारी सर्वेक्षण कहलाएगा।

(iii) **अर्द्ध-सरकारी सर्वेक्षण** (Semi-Government Survery)—जब किसी सर्वेक्षण का आयोजन एवं सचालन राज्य द्वारा सहायता प्राप्त विभागो द्वारा किया जाता है तो उसे अर्द्ध-सरकारी सर्वेक्षण कहते हैं।

VIII. **आवृत्ति के आधार पर** (On the Basis of Frequency)—सर्वेक्षणों की आवृत्ति के आधार पर उन्हें प्रमुख रूप से निम्नाकित दो भागों मे बाटा गया है :

(i) **अन्तिम् सर्वेक्षण** (Final Survey)—जब किसी अध्ययन का विषय बहुत अधिक सीमित और कम परिवर्तनशील होता है तो उसके बारे में एक सर्वेक्षण से ही निष्कर्ष निकाल लिए जाते हैं। इस प्रकार के सर्वेक्षण को अन्तिम सर्वेक्षण कहते है।

(ii) **पुनरावर्तक सर्वेक्षण** (Repetitive Survey)—कई सामाजिक स्थितियां ऐसी होती है कि उनके बारे में केवल एक बार सर्वेक्षण करना ही पर्याप्त नहीं होता, वरन् उनमें परिवर्तन का क्रम एवं प्रवृत्ति जानने के लिए बार-बार सर्वेक्षण करने होते हैं, ऐसे सर्वेक्षणों को पुनरावर्तक सर्वेक्षण कहते हैं।

IX. **आवश्यकता के आधार पर** (On the Basis of Need)

(i) **नियमित सर्वेक्षण** (Regular Survey)—जब किसी विषय या समस्या की जानकारी हेतु सतत् या नियमित रूप से सर्वेक्षण करने होते हैं तो ऐसे सर्वेक्षण को नियमित सर्वेक्षण कहते हैं। इस प्रकार के सर्वेक्षणों के लिए पृथक् से एक विभाग की स्थापना करनी होती है। भारत सरकार के जनगणना विभाग तथा रिजर्व बैंक, आदि के द्वारा जनसंख्या, आय-व्यय, जन्मदर, मृत्यु-दर, राष्ट्रीय सम्पत्ति, आदि के सम्बन्ध में समय-समय पर नियमित सर्वेक्षण किए जाते हैं।

(ii) **कार्यवाहक सर्वेक्षण** (Ad Hoc Survey)—जब किसी तात्कालिक आवश्यकता अथवा उद्देश्य की पूर्ति के लिए अस्थायी संगठन बनाकर सर्वेक्षण किया जाता है तो उसे हम कार्यवाहक सर्वेक्षण कहते हैं। इस प्रकार का सर्वेक्षण किसी योजना को अन्तिम रूप देने से पूर्व महत्वपूर्ण प्रश्नों को जानने के लिए किया जाता है।

X. **समुदाय एवं क्षेत्र के आधार पर** (On the Basis of Community and Locality)

(i) **ग्रामीण सर्वेक्षण** (Village Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षण में ग्रामीण लोगों के सम्बन्ध में विषयों एवं समस्याओ के बारे में सर्वेक्षण आयोजित किए जाते हैं।

(ii) **नगरीय सर्वेक्षण** (Urban Survey)—इस प्रकार के सर्वेक्षण नगरों से सम्बन्धित समस्याओं को जानने तथा उनके समाधान हेतु आयोजित किए जाते हैं।

(iii) **जनजातीय सर्वेक्षण**—इस प्रकार के सर्वेक्षणों का सम्बन्ध आदिवासी समस्याओं एवं उनके समाधान से होता है।

XI. **कुछ अन्य प्रकार के सर्वेक्षण** (Some other types of Surveys)

उपर्युक्त प्रकार के सर्वेक्षण के अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार के सर्वेक्षण इस प्रकार है :

(i) **सार्वजनिक और गुप्त सर्वेक्षण** (Public and Confidential Surveys)—कुछ सर्वेक्षण ऐसे होते हैं जिनके तथ्य लोगों से छुपाए नहीं जाते है। उनके प्रतिवेदन एवं निष्कर्ष जनता के सूचनार्थ प्रकाशित किये जाते हैं। ऐसे सर्वेक्षण को सार्वजनिक सर्वेक्षण कहते हैं। जनसंख्या, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन, आदि से सम्बन्धित सरकार द्वारा करवाए जा रहे सर्वेक्षण इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। दूसरी ओर कुछ सर्वेक्षण ऐसे होते है कि उनके निष्कर्ष राष्ट्रीय और प्रशासकीय हित की दृष्टि से प्रकाशित करना अनुचित माना जाता है। ऐसे सर्वेक्षण को गोपनीय सर्वेक्षण कहते हैं।

(ii) **तथ्यात्मक तथा जनमत सर्वेक्षण** (Factual and Opinion Survey)—कुछ सर्वेक्षण इस प्रकार के होते हैं जिनमें निश्चित, वास्तविक एवं ठोस तथ्यों का ही संकलन किया जाता है, इन्हें तथ्यात्मक सर्वेक्षण कहते है। दूसरी ओर जनमत सर्वेक्षण में विभिन्न विषयों पर लोगों की राय, विचार, दृष्टिकोण एवं मनोवृत्तियों की जानकारी प्राप्त की जाती है। इसे मनोवृत्तिमूलक सर्वेक्षण (Attitudinal Survey) भी कहते हैं।

(iii) **सामान्य तथा विशिष्ट सर्वेक्षण** (General and Specific Survey)—विशिष्ट सर्वेक्षण का सम्बन्ध समाज अथवा समुदाय के जीवन के किसी विशिष्ट पक्ष अथवा समस्या जैसे शिक्षा, धर्म, स्वास्थ्य, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, छुआछूत, आदि किसी से भी हो

सकता है। इस प्रकार के सर्वेक्षण मे समस्या से सम्बन्धित सभी पक्षो की जानकारी प्राप्त की जाती है। इसके विपरीत, सामान्य सर्वेक्षण का क्षेत्र विस्तृत होता है तथा उसमे समस्या के कई पक्षो के बारे मे जानकारी प्राप्त की जाती है। किसी क्षेत्र के बारे में सामान्य जानकारी जैसे वहा की जनसख्या, परिवार का आकार, लोगो का खानपान, वेशभूषा, संस्कृति एव अर्थव्यवस्था, आदि को जानने के लिए किए गए सर्वेक्षण भी सामान्य सर्वेक्षण कहलाते हैं।

(iv) **प्राथमिक तथा द्वितीयक सर्वेक्षण** (Primary and Secondary Survey)—जिन सर्वेक्षणो मे अनुसन्धानकर्ता प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा तथ्यों का संकलन करता है, उसे प्राथमिक सर्वेक्षण कहते है। द्वितीयक सर्वेक्षण मे अध्ययनकर्ता स्वय प्रत्यक्ष रूप से तथ्यों का संकलन नही करके दूसरे व्यक्तियो अथवा साधनों द्वारा सूचनाएं एकत्रित करता है।

(v) **मूल्यांकनात्मक तथा निदानात्मक सर्वेक्षण** (Evaluative and Diagnostic Survey)—मूल्यांकनात्मक सर्वेक्षण में सामाजिक घटना या समस्या के कारणों के आधार पर समस्या को हल करने के लिए सुधारात्मक योजना बनाई जाती है। इसलिए इसे परियोजनात्मक सर्वेक्षण भी कहते है। निदानात्मक सर्वेक्षण मे किसी समस्या के कारणो को जानने का प्रयत्न किया जाता है। उदाहरण के लिए, दहेज-प्रथा के प्रचलन के कारणो को जानने के लिए यदि हम किसी सर्वेक्षण का आयोजन करते है तो वह निदानात्मक सर्वेक्षण कहलाएगा।

८\ सामाजिक सर्वेक्षण का आयोजन एवं प्रमुख चरण
(PLANNING OF A SOCIAL SURVEY AND MAIN STEPS)

सर्वेक्षण को ठीक से संचालित करने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि योजनाबद्ध एव व्यवस्थित तरीके से आगे बढ़ा जाय। नियोजन के अभाव में किसी भी सर्वेक्षण कार्य के उद्देश्यों मे सफल होने की सम्भावना नहीं रहती। हमें सर्वेक्षण हेतु आगे बढ़ने के पूर्व प्रारम्भिक तैयारियाँ करनी होगी, यह विचार करना होगा कि हम क्या अध्ययन करना चाहते है, कैसे अध्ययन करना चाहते है, क्यो अध्ययन करना चाहते है ? सर्वेक्षण के प्रारम्भ से अन्त तक सभी प्रकार की अस्पष्टताओं से बचने एव उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने हेतु आवश्यक है कि सर्वेक्षण के आयोजन का काम काफी सोच-समझ कर किया जाय। इस सम्बन्ध मे **पार्टन** ने ठीक ही लिखा है, "किसी सर्वेक्षण की योजना, संगठन एवं संचालन किसी व्यापार को स्थापित करने व चलाने के समान है। दोनों के लिए तकनीकी ज्ञान एवं कार्य-कुशलता, प्रशासनिक योग्यता तथा विशिष्ट अनुभव या प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।"[1] स्पष्ट है कि सर्वेक्षण-कर्ता के पास समय एवं धन सीमित मात्रा मे होता है और उसे योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ते हुए इस प्रकार से सर्वेक्षण कार्य को संचालित करना है कि यथार्थ एवं विश्वसनीय निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकें। इसके लिए सर्वेक्षण का आयोजन करना पड़ेगा, योजना बनानी पड़ेगी और उसी योजना के अनुसार विभिन्न चरणो से होते हुए कार्य को आगे बढ़ाना पडेगा। सर्वेक्षण के आयोजन के प्रमुख चरणों पर हम यहां विस्तारपूर्वक विचार नहीं करके संक्षेप में ही विचार करेगे क्योंकि इन पर **'सामाजिक अनुसन्धान की प्रक्रिया'** नामक अध्याय 3 में सविस्तार विचार किया जा चुका है।

1 **Parten, *Surveys, Polls and Samples*, p. 173.**

सर्वेक्षण के आयोजन के प्रमुख चरण

(1) **समस्या का चुनाव** (Selection of the Problem)—सर्वेक्षण के आयोजन का प्रथम चरण समस्या का चुनाव है। सर्वेक्षण कार्य की सफलता-असफलता समस्या के चुनाव पर ही आधारित है। अध्ययन की समस्या ऐसी होनी चाहिए जिसमे सर्वेक्षणकर्ता की पूरी रुचि हो ताकि वह पूरी लगन से कार्य कर सके। साथ ही विषय ऐसा होना चाहिए जिसके सम्बन्ध में सर्वेक्षणकर्ता को पहले से ही कुछ ज्ञान हो ताकि वह व्यवस्थित रूप से सर्वेक्षण का आयोजन कर सके। सर्वेक्षण हेतु विषय का चुनाव करते समय साधनों की सीमितता अर्थात् धन, समय, कार्यकर्ताओं की मात्रा, आदि को ध्यान मे रखा जाना चाहिए। विषय का क्षेत्र इतना व्यापक नहीं होना चाहिए कि समय पर सर्वेक्षण-कार्य पूरा ही नही किया जा सके। विषय का चुनाव करते समय यह ध्यान मे रखा जाना चाहिए कि उसकी क्या उपयोगिता है, उससे ज्ञान मे वृद्धि होने के साथ-साथ सार्वजनिक हित की भी पूर्ति हो पायेगी या नही। सामान्यतः सर्वेक्षण के लिए विघटनकारी सामाजिक समस्याओ को चुना जाता है, जैसे बेकारी, बाल-अपराध, छात्रो में अनुशासनहीनता, दहेज-प्रथा, विधवा-विवाह निषेध, मद्यपान, आदि। आजकल सर्वेक्षण के क्षेत्र के व्यापक हो जाने से सर्वेक्षण विषय भी काफी विविधतापूर्ण हो गये है। वर्तमान में आर्थिक विषयों पर सर्वेक्षण करने की प्रवृत्ति भी बढ़ती जा रही है।

(2) **सर्वेक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण** (Determination of Purpose of Survey)—सर्वेक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण करते समय यह विचार कर लेना चाहिए कि इसके सामान्य उद्देश्य क्या होगे, और विशिष्ट उद्देश्य क्या ? उद्देश्यों को निर्धारित करने के बाद ही क्षेत्र, कार्यकर्ताओ की संख्या, समय, खर्च आदि का अनुमान लगाया जा सकता है। सूचना के स्रोत कौन-कौनसे होंगे, यह भी सर्वेक्षण के उद्देश्य पर ही निर्भर करता है। सर्वेक्षण का आयोजन मूलतः उद्देश्यों पर ही आधारित है। अतः उद्देश्यों का निर्धारण सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

(3) **अध्ययन-क्षेत्र का निर्धारण** (Determination of Field of Survey)—अध्ययन-क्षेत्र के निर्धारण का तात्पर्य यह है कि सर्वप्रथम विषय के जिन पक्षों का हमे अध्ययन करना है, उन्हें स्पष्टतः परिभाषित कर लेना चाहिए ताकि उन पक्षों से सम्बन्धित तथ्य ही संकलित किये जायं, निरर्थक तथ्यों के एकत्रीकरण से बचा जाय। यहां यह भी तय करना होगा कि अध्ययन की इकाई क्या है ? यदि श्रमिकों का अध्ययन करना है तो यह स्पष्टतः परिभाषित करना होगा कि अध्ययन की दृष्टि से हम 'श्रमिक' किसको मानेगे, साथ ही यहां हमें यह भी बताना होगा कि किस भौगोलिक क्षेत्र के श्रमिकों का अध्ययन किया जा रहा है, किस उद्योग में काम करने वाले श्रमिकों का सर्वेक्षण किया जा रहा है ? अध्ययन-क्षेत्र का स्पष्टतः निर्धारण कर लेने से ही तथ्यों का वस्तुनिष्ठ ढंग से संकलन किया जा सकता है।

(4) **प्रारम्भिक तैयारियां** (Preliminary Preparations)—इस चरण में सर्वप्रथम विषय से सम्बन्धित उपलब्ध साहित्य का अध्ययन आता है। इससे विषय के सम्बन्ध में ज्ञान में वृद्धि होगी और अध्ययन में स्पष्टता आयेगी। साथ ही इस प्राप्त ज्ञान से यह भी पता चलेगा कि अध्ययन के लिए कौनसी पद्धतियां उपयुक्त है। इसके अलावा यह अनुमान भी हो जायेगा कि विषय से सम्बन्धित कौनसे पक्ष अधिक महत्वपूर्ण है जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इस चरण में सर्वेक्षणकर्ता का क्षेत्र में जाकर लोगों से मिलकर विषय के सम्बन्ध में अनौपचारिक बातचीत करना भी सम्मिलित है। इससे क्षेत्र में आने वाली कठिनाइयों का अनुमान हो जाता है। सर्वेक्षणकर्ता को इस स्तर पर यह भी देखना होगा कि सूचना के स्रोत क्या है तथा उन

स्रोतो तक उसकी पहुंच है या नहीं। पर्याप्त सूचना या तथ्यों के अभाव में सर्वेक्षण-कार्य के सफल होने की सम्भावना नहीं रहती।

(5) निदर्शन का चुनाव (Selection of Sample)—सर्वप्रथम निदर्शन के आकार का

निदर्शन का चुनाव करने से एक ओर समय व श्रम की बचत होती है तो दूसरी ओर व्यय भी कम होता है। स्पष्ट है कि उपयुक्त आकार के निदर्शन का चुनाव सर्वेक्षण के आयोजन का एक महत्वपूर्ण चरण है।

(6) बजट व समय-सूची का निर्माण (Preparation of Budget and Time Schedule)—सर्वेक्षण-कार्य की सफलता के लिए आवश्यक है कि बजट बना लिया जाय अर्थात् यह अनुमान लगा लिया जाय कि सर्वेक्षण के विभिन्न मदों पर कितना-कितना खर्च आयेगा और सम्पूर्ण सर्वेक्षण में कुल कितने धन की आवश्यकता पड़ेगी। खर्चे का जो कुछ अनुमान लगाया जाय, उससे करीब दस प्रतिशत अधिक धनराशि की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि आकस्मिक खर्चे निकल सकें। किस सर्वेक्षण मे धन की राशि कितनी होगी, यह सर्वेक्षण के विषय, अध्ययन-क्षेत्र, कार्यकर्ताओं की संख्या एवं अध्ययन-कार्य में लगने वाले समय पर निर्भर करता है।

बजट के अलावा समय-सूची का बना लेना भी आवश्यक है। सर्वेक्षण के किस चरण में कितना समय लगेगा, यह पहले से निर्धारित होना चाहिए। सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित सर्वेक्षण निर्धारित समय पर अवश्य पूरे किये जाने चाहिए अन्यथा समस्याओं को समय पर हल नहीं किया जा सकेगा। श्री पार्टेन[1] ने ठीक ही लिखा है कि बीमारी, थकावट, छुट्टी, बहुत गर्म या बहुत ठंडा मौसम, गलतियां निकालना, साधनों की पूर्ति में कमी तथा अनेक अन्य ऐसे कारक हैं जो उत्तम से उत्तम योजनाओं की गति को धीमा कर देते हैं। अतः सन्तोषजनक समय-सूची का निर्माण सर्वेक्षण की सफलता के लिए नितान्त आवश्यक है।

(7) अध्ययन-पद्धति का चुनाव एवं अध्ययन-उपकरणों का निर्माण (Selection of Method of Study and Preparation of Study Tools)—किस सर्वेक्षण-विशेष के लिए कौनसी अध्ययन-पद्धति का चुनाव किया जाय, यह अध्ययन की प्रकृति, क्षेत्र, उपलब्ध धन एवं समय पर निर्भर करता है। अवलोकन, साक्षात्कार, वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति, अनुसूची, प्रश्नावली, आदि में से किसी एक पद्धति का चुनाव अध्ययन की आवश्यकता को ध्यान मे रखकर किया जाना चाहिए। अध्ययन हेतु ऐसी पद्धति का चुनाव किया जाना चाहिए जिससे सीमित धन और कम समय में अधिक से अधिक प्रामाणिक तथ्य प्राप्त किये जा सकें।

अध्ययन-पद्धति का चुनाव कर लेने के पश्चात् अध्ययन कार्य में काम में लिए जाने वाले उपकरणो एवं प्रपत्रों की रचना की जाती है। तथ्य संकलित करने हेतु अनुसूची या प्रश्नावली का निर्माण करना होता है और यदि अध्ययन साक्षात्कार पद्धति की सहायता से करना है तो साक्षात्कार प्रदर्शिका (Interview guide) बनानी पड़ती है। इन प्रपत्रो की

[1] arten, *Ibid*, p. 179

सावधानीपूर्वक रचना पर ही अध्ययन के लिए उपयुक्त तथ्यों का संकलित होना निर्भर करता है।

(8) **कार्यकर्ताओं का चुनाव एवं प्रशिक्षण** (Selection and Training of Investigators)—सर्वेक्षण-कार्य के लिए सर्वेक्षणकर्ता के अतिरिक्त अनेक अन्य व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है। इन कार्यकर्ताओ द्वारा ही क्षेत्र में जाकर तथ्य संकलित किये जाते हैं, इन्ही के द्वारा प्राप्त सामग्री का सम्पादन, वर्गीकरण, सारणीयन एवं विश्लेषण का कार्य किया जाता है। अतः सर्वेक्षण के लिए कार्यकर्ताओं का चुनाव करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि उनमें ईमानदारी, कर्तव्य-परायणता, कार्य के प्रति पूरी लगन, धैर्य एवं दूरदर्शिता जैसे गुण पर्याप्त मात्रा में हो। साथ ही उन्हें सर्वेक्षण-कार्य का कुछ अनुभव भी होना चाहिए। उन्हें यह ज्ञात होना चाहिए कि प्राप्त सामग्री का सम्पादन, वर्गीकरण एवं सारणीयन कैसे किया जाता है। अतः एक तो सही कार्यकर्ताओं के चुनाव और दूसरा उनके समुचित प्रशिक्षण पर पूरा-पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए।

(9) **सर्वेक्षण का संगठन** (Organization of Survey)—सर्वेक्षण-कार्य को ठीक से संचालित करने हेतु एक संगठन की आवश्यकता पड़ती है। किसी बड़े सर्वेक्षण को संचालित करने हेतु एक केन्द्रीय कार्यालय स्थापित करना पड़ता है जहां से सब प्रकार के कार्यो का सम्पादन होता है। सर्वेक्षण कार्य में लगे विभिन्न कार्यकर्ताओं को एक दल के रूप में संगठित करना पड़ता है। सर्वेक्षण-कार्य को सफलतापूर्वक आगे बढ़ाने के लिए एक 'सर्वेक्षण समिति' बनायी जाती है जो सर्वेक्षण के प्रारम्भ से लेकर प्रतिवेदन तैयार करने तक सब कामों की देखभाल करती है। इसके अलावा अनेक उप-समितियां भी बनायी जाती हैं, जैसे बजट उप-समिति, निदर्शन उप-समिति, कार्यक्रम उप-समिति, यन्त्र-निर्माण उप-समिति एवं प्रतिवेदन उप समिति, आदि। इन सब उप-समितियों में सर्वेक्षण-कार्य के विभिन्न पहलुओं पर विचार-विमर्श किया जाता और कार्यक्रम को अन्तिम रूप दिया जाता है।

(10) **पूर्व-परीक्षण एवं पूर्वगामी सर्वेक्षण** (Pre-testing and Pilot Survey)—वास्तविक सर्वेक्षण-कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व सर्वेक्षणकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि सर्वेक्षण हेतु चुने गये उपकरणों एवं प्रविधियों की उन्हें छोटे पैमाने पर लागू करके जांच करली जाय कि उनमें क्या कमियां या दोष है ताकि प्रारम्भ से ही उन्हें दूर किया जा सके। इसे ही पूर्व-परीक्षण (Pre-testing) या पद्धति-शास्त्रीय पूर्वाभ्यास कहते हैं। पूर्व-परीक्षण का इस दृष्टि से काफी महत्व है कि इससे अध्ययन में काम में लिए जाने वाले उपकरणों, प्रविधियों एवं प्रगणकों (Investigators) की जांच हो जाती है। इस जांच से यह पता चल जाता है कि अध्ययन के उपकरणों या प्रपत्रों जैसे प्रश्नावली, अनुसूची या साक्षात्कार-प्रदर्शिका में क्या कमी रह गयी है, उनमें कौनसे प्रश्न निरर्थक हैं, तथा कौनसे प्रश्न बदले जाने है, प्रगणकों को क्षेत्र मे किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, यह जानकारी इस प्रकार की जांच से मिल जाती है। इससे उपकरणों में आवश्यक परिवर्तन कर लिए जाते हैं ताकि इनकी कमियां दूर हो सकें। इससे प्रगणकों द्वारा क्षेत्र में अनुभव की जाने वाली कठिनाइयों को दूर करने का भी अवसर मिल जाता है। एकॉफ ने लिखा है कि पूर्व-परीक्षण सर्वेक्षण-शोध के विभिन्न पक्षों, उपकरणों या वैकल्पिक सर्वेक्षण-शोध-योजनाओं का एक नियन्त्रित अध्ययन है जिसका उद्देश्य यह निर्धारित करना है कि कौनसा विकल्प सबसे अधिक उपयुक्त है।

पूर्वगामी सर्वेक्षण (Pilot Survey)—इसके द्वारा सम्पूर्ण सर्वेक्षण-कार्य में आने वाली कठिनाइयों का पता चल जाता है। मूल सर्वेक्षण कार्य प्रारम्भ करने के पहले सम्पूर्ण सर्वेक्षण-कार्य का छोटे पैमाने पर परीक्षण किया जाता है। इससे अध्ययन-कार्य में आने वाली कठिनाइयों की जानकारी मिल जाती है। इससे यह पता चल जाता है कि अध्ययन हेतु चुना गया निदर्शन पर्याप्त है या नही, निदर्शन-विधि उपयुक्त है या नही, प्रगणको में आवश्यक कार्य क्षमता है या नही। पूर्वगामी सर्वेक्षण से सूचना के प्रकार एवं स्रोत का अनुमान हो जाता है। इससे अनुमानित व्यय एवं अध्ययन-कार्य में लगने वाले समय का भी पता चल जाता है। सर्वेक्षण के आधार पर वस्तुनिष्ठ सामग्री प्राप्त कर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने के लिए पूर्वगामी सर्वेक्षण आवश्यक है। यहा छोटे पैमाने या लघु स्तर पर सर्वेक्षण-कार्य किया जाता है। इसे **पूर्वगामी-सर्वेक्षण या अग्रगामी अध्ययन** (Pilot Survey/Pilot Study) कहा जाता है। यह मुख्य सर्वेक्षण का लघु-स्तरीय प्रतिरूप (Small Scale Replica) कहलाता है।

(11) **समुदाय को तैयार करना** (Preparing the Community)—सर्वेक्षण की सफलता के लिए आवश्यक है कि क्षेत्र मे सूचनादाताओं से मिलकर प्रामाणिक तथ्य एकत्रित किये जाए। इसके लिए सूचनादाताओ को मानसिक रूप से आवश्यक सहयोग देने के लिए तैयार करना अनिवार्य है। सूचनादाता अपरिचित प्रगणकों या सर्वेक्षणकर्ता को व्यक्तिगत एवं गुप्त सूचनाएं देने में संकोच करते हैं, घबराते हैं, सोचते हैं कि उनके द्वारा दी गयी सूचना का उनके नाम से दुरुपयोग तो नही किया जायेगा। ऐसी स्थिति में समुदाय के लोगों को सन्देशवाहन के साधनो जैसे पत्र-पत्रिकाओं, सिनेमा, प्रदर्शनी, सार्वजनिक सभा, रेडियो, आदि के माध्यम से सर्वेक्षण के उद्देश्य से भली-भांति परिचित कराया जाना चाहिए, उन्हे आवश्यक सहयोग प्रदान करने की अपील की जानी चाहिए। इसके लिए स्थानीय नेताओं एव प्रभावशाली व्यक्तियो का सहयोग लिया जाना चाहिए।

(12) **तथ्यो का संकलन** (Collection of Data)—अब वास्तविक सर्वेक्षण-कार्य प्रारम्भ होता है और इस स्तर पर सर्वप्रथम चरण तथ्यों का संकलन है। इस स्तर पर क्षेत्रीय-कार्य प्रारम्भ होता है। तथ्य-संकलन के लिए अवलोकन-विधि, प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार प्रदर्शिका, वैयक्तिक अध्ययन पद्धति, आदि का सहारा लिया जाता है। इस स्तर पर प्रगणको पर पूरा ध्यान रखा जाता है, यह देखा जाता है कि कहीं अविश्वसनीय सूचनाएं तो एकत्रित नही की जा रही है।

तथ्य संकलन में इस बात की पूरी सावधानी रखनी होती है कि तथ्य पूर्णतः पक्षपात-रहित होकर एकत्रित किये जाएं। प्रगणकों का सभी पूर्वाग्रहों से पूर्णतः मुक्त होना भी आवश्यक है। आवश्यकतानुसार अवलोकन विधि का सहारा भी लिया जाना चाहिए ताकि एकत्रित सामग्री की सत्यता की जांच हो सके।

(13) **तथ्यों का सम्पादन, वर्गीकरण एवं सारणीयन** (Editing, Classification and Tabulation of Data)—यहां सर्वेक्षणकर्ता तथ्यो का सम्पादन करता है। वह एकत्रित तथ्यों की जांच करता है और उनमे पायी जाने वाली कमियों को दूर करता है। यहां अनावश्यक सूचनाओं को निकाल देना भी जरूरी है। शेष सभी सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में जमा लिया जाता है। सूचनादाताओं द्वारा प्राप्त उत्तरों को अर्थपूर्ण श्रेणियो में बांटने की प्रक्रिया को ही संकेतन कहा जाता है। यहां सूचनादाताओं से प्राप्त व्यक्तिगत उत्तरों को कुछ समूहों में रख लिया जाता है। विभिन्न उत्तरों को सकेतो, प्रतीकों एवं सख्याओ की सहायता से व्यवस्थित किया जाता है। इसके बाद सर्वेक्षण के उद्देश्यों के आधार पर तथ्यों को विभिन्न वर्गों में

वर्गीकृत कर लिया जाता है। तथ्यों का वर्गों में विभाजन एवं वर्ग-निर्माण की प्रक्रिया ही वर्गीकरण कहलाती है। समान प्रकृति के तथ्यों को अलग-अलग वर्गों मे रख लिया जाता है। वर्गीकरण के आधार पर विभिन्न घटनाओं, दशाओ या अवस्थाओ की तुलना की जाती एवं उनके सह-सम्बन्धों को ज्ञात किया जाता है। सारणीयन में वर्गीकृत तथ्यो को संक्षिप्त रूप प्रदान करने हेतु संख्यात्मक सारणियों में रखा जाता है। ऐसा करने से वर्गीकृत तथ्य अधिक अर्थपूर्ण व स्पष्ट हो जाते हैं। ऐसे सूक्ष्म, स्पष्ट एवं तुलना योग्य तथ्यो के आधार पर ही वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाले जा सकते है।

(14) **तथ्यो का विश्लेषण एवं सामान्यीकरण** (Analysis of Data and Generalization)—इस स्तर पर संकलित तथ्यों का विश्लेषण एवं विवेचन किया जाता है। यहां एकत्रित किये गये तथ्यों का अर्थ निकाला तथा तथ्यो, घटनाओ एव विभिन्न दशाओं के बीच सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। यही कार्य-कारण सम्बन्धो का पता लगाया जाता है, इस बात की विवेचना की जाती है कि किसी विशेष दशा, परिणाम या घटना के लिए कौनसे कारक उत्तरदायी है ? इससे वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने एवं सामान्यीकरण मे मदद मिलती है। यहां अध्ययन-विषय या समस्या के परिणामो को ज्ञात किया जाता है और सामाजिक समस्याओ के समाधान हेतु सुझाव प्रस्तुत किये जाते है।

(15) **प्रतिवेदन का निर्माण एवं प्रकाशन** (Preparation and Publication of Data)—प्रतिवेदन का निर्माण एवं प्रकाशन सर्वेक्षण-प्रक्रिया का अन्तिम चरण है। तथ्यो के विश्लेषण एवं विवेचन के पश्चात् वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाले जाते है, सामान्यीकरण किया जाता है। सर्वेक्षण के परिणामों को निष्कर्षो के रूप में प्रतिवेदन में समुचित स्थान दिया जाता है, सामाजिक समस्या का विश्लेषण किया जाता है और उसके समाधान हेतु सुझाव दिये जाते हैं। सुझाव व्यावहारिक और साधनों की सीमा के अनुरूप होने चाहिए। प्रतिवेदन में आवश्यकतानुसार चित्रों एव बिन्दु-रेखाओं का प्रयोग भी किया जाना चाहिए। प्रतिवेदन की भाषा सरल एवं बोधगम्य होनी चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सामाजिक सर्वेक्षण एक लम्बी प्रक्रिया है। वैज्ञानिक निष्कर्षो तक पहुंचने हेतु आवश्यक है कि सर्वेक्षण के प्रत्येक चरण से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के कार्यों का सम्पादन निष्पक्ष रूप से सावधानीपूर्वक किया जाय। साथ ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण सर्वत्र बनाये रखा जाना चाहिए।

प्रश्न

1. व्याख्या कीजिये कि किस प्रकार सामाजिक सर्वेक्षण का नियोजन एकत्रित तथ्यों के विश्लेषण से अधिक महत्वपूर्ण है?
2. सामाजिक सर्वेक्षण करने के लिए नियोजन करने की क्या आवश्यकता है? एक सामाजिक सर्वेक्षण की योजना से संबधित चरणों की विवेचना कीजिए।
3. एक सामाजिक सर्वेक्षण के नियोजन के कौन-कौन से चरण होते हैं?
4. पूर्वगामी (अग्रिम) सर्वेक्षण क्या है? यह मुख्य सर्वेक्षण से किस प्रकार भिन्न है?
5. सामाजिक सर्वेक्षण के विभिन्न प्रकारो का उल्लेख कीजिए।
6. सामाजिक सर्वेक्षण को परिभाषित कीजिए। सामाजिक सर्वेक्षण के आयोजन के प्रमुख चरणों की विवेचना कीजिए। **(राज., 1998; अजमेर, 1997, 99)**

लघु उत्तरीय प्रश्न

1 निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(1) पूर्वगामी सर्वेक्षण से आप क्या समझते है? (अजमेर, 1999)

(2) अन्वेषणात्मक सर्वेक्षण

(3) व्याख्यात्मक सर्वेक्षण

(4) नियमित सर्वेक्षण।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कोष्ठक में दिए गए शब्दों में से कीजिए :

(i) जब किसी क्षेत्र की सभी इकाइयों का अध्ययन किया जाता है तो उसे...सर्वेक्षण कहते है। (संगणना/निदर्शन)

(ii) विश्वासों, भावनाओ, आदि का अध्ययन...सर्वेक्षण कहलाता है। (गुणात्मक/परिमाणात्मक)

(iii) मुख्य सर्वेक्षण से पूर्व किए गए सर्वेक्षण को...सर्वेक्षण कहते हैं। (पूर्वगामी/लघुकालिक)

(iv) जब एक ही वार सर्वेक्षण करके इससे निष्कर्ष निकाले जाते हैं तो उसे...सर्वेक्षण कहते है। (अन्तिम/कार्यवाहक)

(v) भारत सरकार द्वारा जनगणना के सर्वेक्षण को...सर्वेक्षण कहते हैं। (पुनरावर्तक/नियमित)

2. निम्नांकित पुस्तकों के लेखकों के नाम बताइए :

(i) सर्वेज, पोल्स एण्ड सेम्पल्स।

(ii) सोशियल सर्वेज एण्ड सोशियल एक्शन।

(iii) सर्वे मैथड्स इन सोशियल इन्वेस्टीगेशन।

[उत्तर—1 (i) सगणना, (ii) गुणात्मक, (iii) पूर्वगामी, (iv) अन्तिम, (v) नियमित। 2. (i) पार्टन, (ii) मार्क अब्राम, (iii) सी. ए. मोजर।]

6

वैज्ञानिक पद्धति

[SCIENTIFIC METHOD]

विज्ञान अपने आप में कोई विषय-सामग्री नहीं होकर एक ऐसी सामग्री है जिसे वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method) को काम में लेते हुए प्राप्त किया गया हो। जहां प्राकृतिक विज्ञानो मे वैज्ञानिक पद्धति का सहारा लिया जाता है, वहां सामाजिक विज्ञानों में भी सामाजिक घटनाओं को समझने हेतु इसी पद्धति का उपयोग किया जाता है। अतः किसी भी विषय-सामग्री या ज्ञान-भण्डार को विज्ञान बनाने मे इस बात का विशेष महत्व है कि उसे कैसे प्राप्त किया गया है, किस पद्धति को काम मे लिया गया है। यदि वैज्ञानिक-पद्धति की सहायता से सामाजिक घटनाओं को समझने और विषय-सामग्री को प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है तो उसे विज्ञान ही कहा जायेगा। **स्टुअर्ट चेज** ने लिखा है कि विज्ञान का सम्बन्ध पद्धति से है न कि विषय-सामग्री से। इस बात को अन्य शब्दों में व्यक्त करते हुए **प्रो. ग्रीन** ने लिखा है कि विज्ञान का अर्थ तथ्यों की खोज करने वाले तरीके से लिया जाता है। स्पष्ट है कि जिस किसी विषय में वैज्ञानिक-पद्धति का प्रयोग किया जाता है, वही विषय विज्ञान है, चाहे वह प्राकृतिक विज्ञानों के क्षेत्र में हो या सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में। यहां वैज्ञानिक-पद्धति को भली-भांति समझने के लिए विज्ञान के अर्थ को समझ लेना आवश्यक है।

विज्ञान का अर्थ

साधारणतया लोग 'विज्ञान' का अर्थ विशेष प्रकार की विषय-सामग्री (Subject matter) से ही लगाते हैं। इस दृष्टि से वे रसायनशास्त्र, भौतिकशास्त्र, जीवविज्ञान, वनस्पतिशास्त्र, आदि विषयों को ही विज्ञान मानते है। ऐसे लोग सामाजिक तथ्यों एवं प्रघटनाओं, सामाजिक समूहों, संस्थाओं, समाजों एवं सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करने वाले विषय को विज्ञान नही मानते। वे तो समझते है कि प्रोटोनो, इलैक्ट्रोनों, एटमों, मोलीक्यूलों, पिण्डों, नक्षत्रों, चट्टानों, जीवाणुओं, कंकालों एवं खोपड़ियों के अध्ययन से सम्बन्धित विषय ही विज्ञान है। परन्तु यह उनका भ्रम मात्र है। वास्तव में, विज्ञान अपने आप में कोई विषय-सामग्री नहीं होकर वैज्ञानिक पद्धति से प्राप्त किया गया व्यवस्थित ज्ञान है। यदि किसी भी विषय से सम्बन्धित तथ्यों को वैज्ञानिक पद्धति को काम में लेते हुए संग्रहित किया जाय तथा इस प्रकार से प्राप्त तथ्यो के आधार पर सिद्धान्त बनाये जायें तो ऐसे विषय को विज्ञान ही माना जायेगा।

विज्ञान का अर्थ स्पष्ट करते हुए **स्टुअर्ट चेज** ने लिखा है, "विज्ञान का सम्बन्ध पद्धति से है न कि विषय-सामग्री से।"[1]

1 "Science goes with the method and not with the subject-matter."
—Stuart Chase, *The Proper Study of Mankind*, p 6.

कार्ल पियर्सन के अनुसार, "सभी विज्ञानों की एकता उसकी पद्धति में है न कि केवल उसकी विषय-वस्तु में।"[1]

बीसंज तथा बीसंज के अनुसार, "यह एक पद्धति या उपागम है न कि विषय सामग्री जो विज्ञान की कसौटी है।"[2]

लुण्डबर्ग के अनुसार, "विज्ञान को विषय-सामग्री के रूप में परिभाषित करने का प्रयत्न भ्रम ही उत्पन्न करता है।"[3] **लेडिस** की मान्यता है कि विज्ञान, विज्ञान ही है, चाहे वह भौतिकशास्त्र मे हो या समाजशास्त्र में।

बर्नाड ने विज्ञान की परिभाषा छ. मुख्य प्रक्रियाओं के रूप में की है जो इस प्रकार है : परीक्षा (Testing), सत्यापन (Verification), परिभाषा (Definition), वर्गीकरण (Classification), सगठन (Organization) तथा अभिविन्यास (Orientation); इनमें भविष्यवाणी करना या व्यवहार मे लाना (Prediction and Application) भी सम्मिलित है।

फर्फे ने बताया है कि हमे वैज्ञानिक ज्ञान को ऐसे ज्ञान के रूप में परिभाषित करना चाहिए जो एक विशेष मात्रा तक निश्चित, कारणयुक्त एवं सामान्य हो। इस प्रकार का व्यवस्थित ज्ञान विज्ञान है।

विद्वानों के उपर्युक्त कथनों से स्पष्ट है कि **विज्ञान का सम्बन्ध किसी विशिष्ट प्रकार की विषय-सामग्री से नहीं होकर वैज्ञानिक पद्धति से प्राप्त किये गये क्रमबद्ध व व्यवस्थित ज्ञान से है।**

विज्ञान के प्रमुख तत्व (विशेषताएं)
[MAIN ELEMENTS (CHARACTERISTICS) OF SCIENCE]

मार्टिण्डेल और **मौनाचेसी** ने विज्ञान के विभिन्न तत्वों को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि विज्ञान भी विचारने का ही एक ढंग है, और सभी प्रकार के विचारो की तरह यह समस्याओं के प्रत्युत्तर के रूप में उदित होता है। **विज्ञान के लिए निम्न तत्वो का होना आवश्यक है:**

(1) **अवलोकन** (Observation)—विज्ञान में अवलोकन के महत्व पर प्रकाश डालते हुए **गुडे** एवं **हेट** ने लिखा है कि विज्ञान अवलोकन से आरम्भ होता है और उसकी पुष्टि (Validation) के लिए अन्ततः अवलोकन पर ही लौट आना पड़ता है। तब समाजशास्त्री को अपने आपको सावधानीपूर्वक अवलोकन करने में प्रशिक्षित करना चाहिए। **यंग** ने अवलोकन को 'नेत्रों द्वारा एक उद्देश्यपूर्ण अध्ययन' नाम दिया है। अनुसन्धानकर्ता स्वयं घटना-स्थल पर पहुंचकर घटना, विषय या तथ्यों का सूक्ष्म निरीक्षण करता है। विज्ञान मे अवलोकन का विशेष महत्व है।

(2) **सत्यापन तथा वर्गीकरण** (Verification and Classification)—विज्ञान की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमे अवलोकन विधि द्वारा प्राप्त तथ्यों की सत्यता की परीक्षा की जाती है। इसी को सत्यापन के नाम से पुकारा जाता है। अन्य शब्दों में सत्यापन का अर्थ किसी भी प्राप्त तथ्य या निष्कर्ष की प्रामाणिकता का पता लगाना है। सत्यापन के लिए पहली स्थिति से मिलती-जुलती किसी अन्य स्थिति को लिया जाता है और यदि दोनों स्थितियों में समानता पायी जाती है या दोनों की प्रकृति एक-सी है तो यह कहा जा सकता है कि प्राप्त तथ्य प्रामाणिक है।

---

1 "The unity of all sciences consists alone in its method, not in its material."
—Karl Pearson, *The Grammar of Science*, p. 10

2 J. Biesanz and M. Biesanz, *Modern Society*, p. 3

3 George A. Lundberg, *Social Research*, p. 3.
L. L. Bernard (ed), *Fields and Methods of Sociology*, pp. 73-74

प्राप्त तथ्यों को समान विशेषताओ के आधार पर विभिन्न वर्गों में व्यवस्थित करना ही वर्गीकरण कहलाता है। इसमें तथ्यों को अलग-अलग वर्गों में इस प्रकार रखा जाता है कि एक वर्ग में समान तथ्य ही आयें और इस आधार पर बनने वाले विभिन्न वर्गों के बीच एक पारस्परिक सम्बन्ध बना रहे। वर्गीकरण का मुख्य उद्देश्य प्राप्त तथ्यों को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करना है, ताकि वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाले जा सकें।

(3) **सामान्यीकरण** (Generalization)—विज्ञान का एक प्रमुख तत्व या विशेषता सामान्यीकरण है। सामान्यीकरण का अर्थ प्राप्त तथ्यो के आधार पर किसी सामान्य नियम या सामान्य प्रवृत्ति को ज्ञात करने से है। इसमें कुछ इकाइयो के अध्ययन के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों को सम्पूर्ण तथ्यो या पूरे समग्र (Universe) पर लागू किया जाता है। उदाहरण के रूप में, कुछ प्रतिनिधि विद्यार्थियों के अध्ययन के आधार पर कुछ ऐसे निष्कर्ष निकाले जाते हैं जो केवल अध्ययन किये गये विद्यार्थियो पर ही नही, बल्कि एक सम्पूर्ण क्षेत्र तथा समूह के सभी विद्यार्थियों पर लागू होते हैं।

(4) **भविष्यवाणी** (Prediction)—विज्ञान का एक प्रमुख तत्व उसमें भविष्यवाणी करने की क्षमता का होना है। यदि किसी भी विषय में प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर भविष्य की घटनाओं के सम्बन्ध में पहले से अनुमान लगा लिया जाय तो उस विषय को विज्ञान कहा जायेगा। सर्वेक्षण या शोध-कार्य के द्वारा प्राप्त निष्कर्ष यदि प्रामाणिक हैं, अर्थात् सत्य है तो भविष्य में भी परिस्थितियों के समान रहने पर वे सत्य (प्रामाणिक) ही रहेंगे। इस प्रकार विज्ञान में भविष्यवाणी करने की क्षमता पायी जाती है।

(5) **वैज्ञानिक प्रवृत्ति** (Scientific Attitude)—उस विषय को विज्ञान कहा जाता है जिससे सम्बन्धित तथ्यों का संकलन अध्ययनकर्ता वैज्ञानिक प्रवृत्ति को बनाये रखते हुए करे। **गिलिन और गिलिन[1] ने विज्ञान में वैज्ञानिक प्रवृत्ति को अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते हुए उसकी पांच विशेषताओं का उल्लेख किया है :**

(i) **तटस्थता या वैषयिकता** (Objectivity)—इसमें अध्ययनकर्ता तटस्थ और निष्पक्ष होकर घटनाओं का अध्ययन करता है और उन्हें ठीक उसी रूप में चित्रित करता है जिस रूप में वे वास्तव मे है। कहने का तात्पर्य यह है कि वह अपने अध्ययन में वैयक्तिक इच्छा, रुचि, रुझान, पूर्वाग्रह, भय, आदि को तनिक भी स्थान नही देता है। (ii) **धैर्य** (Patience)—तथ्यों को एकत्रित करने, उनका सावधानी-पूर्वक विश्लेषण करने और कार्य शीघ्र समाप्त कर रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए अनुसन्धानकर्ता पर कई प्रकार के दबाव पड़ते है, परन्तु उसे जल्दबाजी में न तो अवलोकन करना और न ही कोई निष्कर्ष निकालना या घोषणा करनी चाहिए। इन सबके लिए धैर्य अत्यन्त आवश्यक है। (iii) **सख्त मेहनत या कठिन परिश्रम** (Hard Work)—प्रकृति के रहस्यों, अपने चारों ओर के संसार और विभिन्न सामाजिक घटनाओं को उनके सही रूप में समझने के लिए कठिन परिश्रम करने की बलवती इच्छा का होना अत्यन्त आवश्यक है। (iv) **जिज्ञासा की प्रवृत्ति** (Attitude of Inquisitiveness)—इसका तात्पर्य यह है कि अनुसन्धानकर्ता को खुले मस्तिष्क से उस समय तक खोज करते रहना या तथ्यों का पता लगाते रहना चाहिए जब तक कि विषय से सम्बन्धित आवश्यक प्रमाण प्राप्त न हो जायें और उनकी परीक्षा न कर ली जाय। (v) **रचनात्मक विचार-शक्ति** (Creative Thinking Power)—वैज्ञानिकों के लिए केवल तथ्यों को एकत्रित कर लेना

1 Gillin and Gillin, *Cultural Sociology*, p. 80.

मात्र ही काफी नही है। उसके मस्तिष्क में तो यह बात घूमती रहनी चाहिए कि आखिर इन तथ्यों का अर्थ क्या है और इनके आधार पर क्या निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं और सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सकता है। सिद्धान्तों की खोज की दृष्टि से रचनात्मक विचार शक्ति का होना अत्यन्त आवश्यक है।

अभी तक के विवेचन से स्पष्ट है कि किसी भी विषय के विज्ञान कहलाने के लिए निम्न बातें आवश्यक हैं:

(1) तथ्यों को एकत्रित करने के लिए वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया गया हो।
(2) अवलोकन विधि को काम में लिया गया हो।
(3) वास्तविक तथ्यों का यथावत् चित्रण किया गया हो, अन्य शब्दों में 'क्या है' का स्पष्टतः उल्लेख किया गया हो।
(4) कार्य-कारण सम्बन्धों की स्पष्टतः विवेचना की गयी हो।
(5) निष्कर्ष प्रामाणिक हों अर्थात् उनकी सत्यता की जांच की जा चुकी हो।
(6) निष्कर्ष सर्वव्यापी होने चाहिए।
(7) एकत्रित तथ्यों के आधार पर भविष्यवाणी की जा सकती हो।

वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ
(MEANING OF SCIENTIFIC METHOD)

विज्ञान के अर्थ को समझ लेने के पश्चात् अब यह जान लेना आवश्यक है कि वैज्ञानिक-पद्धति किसे कहते हैं, यह क्या है, इसकी सहायता से अध्ययन कैसे किया जाता है। साधारणतः उस पद्धति को वैज्ञानिक पद्धति कहा जाता है जिसमें अध्ययनकर्ता तटस्थ या निष्पक्ष रहकर किसी विषय, समस्या या घटना का अध्ययन करता है। इस हेतु वह अवलोकन करता है, प्रश्नावली, अनुसूची या किसी अन्य प्रविधि की सहायता से तथ्य संकलित करता है, उनका वर्गीकरण एवं [illegible] करता है, उनका सत्यापन करता है। इससे उसकी [illegible]वानुमान या भविष्यवाणी करने की क्षमता बढ़ जाती है।

वैज्ञानिक पद्धति के अर्थ के सम्बन्ध में लुण्डबर्ग ने लिखा है, "व्यापक अर्थ में वैज्ञानिक [illegible]द्धति तथ्यों के व्यवस्थित अवलोकन, वर्गीकरण तथा व्याख्या [निर्वचन (Interpretation)] [illegible] निर्मित है।"[1] इसे अन्य शब्दों में स्पष्ट करते हुए आपने अन्यत्र लिखा है, "समाज-[illegible]ज्ञानिकों में यह दृढ़ विश्वास [illegible] उनके सम्मुख जो समस्याएं हैं, उनका व्यवस्थित अवलोकन, सत्यापन, वर्गीकरण [illegible] (परिशुद्ध) स्वरूप में इसी उपागम को वैज्ञानिक [illegible]

गुल्फ ने लिखा है, "व्यापक अर्थों मे कोई भी अनुसन्धान विधि जिसके द्वारा विज्ञान की [illegible]ना और विस्तार होता है, वैज्ञानिक-पद्धति कहलाती है।"[2]

एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में लिखा है, "[illegible] अनेक प्रक्रियाओ को व्यक्त करता है जिनके [illegible]

[1] George A. Lundberg, *Social Reseach*, p. 3.
[2] A. Wolfe, *Essentials of Scientific Method*, p. 15.

व्यापक अर्थ में, अन्वेषण की कोई भी पद्धति जिसकी सहायता से वैज्ञानिक या अन्य निष्पक्ष तथा व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त किया जाता है, वैज्ञानिक पद्धति कहलाती है।"[1] स्पष्ट है कि वैज्ञानिक पद्धति का सम्बन्ध व्यवस्थित ढंग से ज्ञान के सचय से है। इस पद्धति की सहायता से संचित ज्ञान के आधार पर ही कोई विषय विज्ञान का रूप ग्रहण करता है।

वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएं
(CHARACTERISTICS OF SCIENTIFIC METHOD)

वैज्ञानिक पद्धति की प्रमुख विशेषताए निम्नलिखित है :

(1) **ज्ञान का आधार वैज्ञानिक पद्धति है**—मूर्त और अमूर्त सामाजिक तथ्यों के अध्ययन के लिए समाज-विज्ञान विभिन्न वैज्ञानिक पद्धतियो का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के रूप मे, ज्ञान प्राप्त करने या तथ्य एकत्रित करने हेतु समाजमिति (*Sociometry*), अवलोकन पद्धति, अनुसूची अथवा प्रश्नावली पद्धति, सामाजिक सर्वेक्षण पद्धति, वैयक्तिक जीवन अध्ययन पद्धति, सांख्यिकीय पद्धति, साक्षात्कार पद्धति, ऐतिहासिक पद्धति, आदि का प्रयोग किया जाता है। इनमें से एकाधिक पद्धतियो को काम मे लेते हुए सामाजिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है।

(2) **अवलोकन द्वारा तथ्यों को एकत्रित किया जाता है**—वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत तथ्यों के संकलन हेतु अनुसन्धानकर्ता प्रत्यक्ष निरीक्षण और अवलोकन करता है। इसमे काल्पनिक या दार्शनिक विचारों को कोई स्थान नहीं दिया जाता। इसमें तो अध्ययनकर्ता स्वयं घटना-स्थल पर पहुंचकर घटनाओं का निरीक्षण और तथ्यों का संकलन करता है। यदि समाज-वैज्ञानिक को बाल-अपराध अथवा वेश्यावृति की समस्या का अध्ययन करना है या भीड़ व्यवहार के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी है तो वह इनसे सम्बन्धित तथ्यों को स्वयं घटनाओं का अवलोकन करते हुए एकत्रित करेगा।

(3) **तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया जाता है**—असम्बद्ध या बिखरे हुए आंकड़ों या तथ्यों के आधार पर कोई वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना सम्भव नही है। सही निष्कर्ष निकालने के लिए यह आवश्यक है कि प्राप्त तथ्यों को व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध किया जाय। इसके लिए तथ्यों को समानता के आधार पर विभिन्न वर्गों में बांटा जाता है। यह कार्य वर्गीकरण के अन्तर्गत आता है। इसके पश्चात् तथ्यो का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया जाता है। किसी भी विषय को विज्ञान मानने का प्रमुख कारण यह है कि उसमें सही निष्कर्षों तक पहुंचने के लिए तथ्यों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण किया जाता है।

(4) **क्या है का उल्लेख किया जाता है**—वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत वास्तविक घटनाओं की विवेचना की जाती है। कोई भी विज्ञान इस बात पर विचार नही करता कि क्या अच्छा है और क्या बुरा है अथवा क्या होना चाहिए और क्या नहीं होना चाहिए। वह तो घटनाओ या तथ्यों का यथार्थ चित्रण करता है, वे जिस रूप में हैं उनका ठीक वैसा ही चित्रण करता है, 'क्या है' का ही उल्लेख करता है। उदाहरण के रूप में, विज्ञान तो संयुक्त परिवार प्रथा या जाति-व्यवस्था का प्राप्त तथ्यों के आधार पर ठीक उसी रूप में उल्लेख करता है जिस रूप में वे हैं, न कि यह बताने का प्रयत्न कि वे अच्छी है या बुरी।

---

1 "Scientific Method is a collective term denoting the various processes by the aid of which the science are build up. In a wider sense, any method of investigation by which scientific or other impartial and systematic knowledge is acquired, is called a scientific method." —*Encyclopaedia Britannica*, Vol. XX (1941), p 27.

(5) **कार्य-कारण सम्बन्धो की विवेचना की जाती है**—वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत घटनाओं, तथ्यों और विभिन्न समस्याओं के कार्य-कारण सम्बन्धों को जानने का प्रयत्न किया जाता है। विज्ञान तो किसी घटना या समस्या के पीछे छिपे कारणों की खोज करता है। यह तो यह मानकर चलता है कि कोई भी घटना जादुई चमत्कार से घटित नहीं होकर कुछ विशिष्ट कारणों से घटित होती है जिनका पता लगाना वैज्ञानिक का दायित्व है। कार्ल मार्क्स का वर्ग संघर्ष का सिद्धान्त एवं दुर्खीम का आत्महत्या का सिद्धान्त कार्य-कारण के इस सम्बन्ध को स्पष्ट करते है।

(6) **सिद्धान्तों की स्थापना की जाती है**—वैज्ञानिक पद्धति की सहायता से कार्य-कारण सम्बन्धो की विवेचना की जाती है, तथ्यों या घटनाओं के पारस्परिक सम्बन्ध ज्ञात किये जाते है, वर्गीकरण या विश्लेषण किया जाता है और तत्पश्चात् सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते है। इन निष्कर्षो के आधार पर ही सिद्धान्त या वैज्ञानिक नियम बनाये जाते है।

(7) **सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा सम्भव है**—समाज-विज्ञान भी भौतिकशास्त्र या रसायनशास्त्र के समान अपने सिद्धान्तों या नियमों की परीक्षा एवं पुनर्परीक्षा करने में सक्षम हैं। इनमें वैज्ञानिक पद्धति की सहायता से तथ्य एकत्रित किये जाते है और इस पद्धति से प्राप्त तथ्यों की प्रमुख विशेषता यह है कि इनकी प्रामाणिकता की जांच की जा सकती है। समाज-विज्ञानों मे सिद्धान्तों की जांच करना वास्तव में सम्भव है। उदाहरण के रूप में, तथ्यों के आधार पर प्राप्त इस निष्कर्ष की कि टूटे परिवार बाल-अपराध के लिए काफी सीमा तक उत्तरदायी हैं, अलग-अलग स्थानों पर परीक्षा और पुनर्परीक्षा की जा सकती है।

(8) **सिद्धान्त सार्वभौमिक (Universal) है**—समाज-विज्ञान वैज्ञानिक पद्धति को काम मे लेते हुए जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं, वे सार्वभौमिक प्रकृति के होते है। इसका तात्पर्य यह है कि यदि परिस्थितियां समान रहें तो समाज विज्ञानों में विकसित सिद्धान्त विभिन्न समाजों और कालों में खरे उतरते हैं। उदाहरण के रूप में, यह सिद्धान्त सार्वभौमिक रूप से ठीक पाया गया है कि पारिवारिक विघटन सामाजिक विघटन पर आधारित है।

(9) **भविष्यवाणी (Prediction) करने की क्षमता है**—कोई भी विषय इस कारण विज्ञान माना जाता है कि वह 'क्या है' के आधार पर 'क्या होगा' बताने में अर्थात् भविष्यवाणी करने में समर्थ है। अन्य शब्दों मे, वैज्ञानिक पद्धति की सहायता से संचित ज्ञान-भण्डार के आधार पर भविष्य की ओर संकेत करने की प्रत्येक विज्ञान की क्षमता है। उदाहरण के रूप में, समाज मे वर्तमान में होने वाले परिवर्तन को ध्यान में रखकर समाजशास्त्र यह बता सकता है कि भविष्य में सामाजिक व्यवस्था का रूप क्या होगा, जाति-व्यवस्था किस रूप में रहेगी तथा परिवारों के कौन से प्रकार विशेष रूप से पाये जायेगे। समाजशास्त्र के मौजूदा ज्ञान के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राकृतिक विज्ञानों के समान यह भी भविष्यवाणी करने मे काफी सीमा तक समर्थ है।

(10) **तर्क (Logic) की प्रधानता**—वैज्ञानिक पद्धति की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह तर्क पर आधारित है। तर्क तथ्य और विवेक से जुड़ा हुआ है। किसी बात को बुद्धिमत्तापूर्वक, प्रमाणित या अप्रमाणित किया जा सकता है, इसके लिए तर्क देना आवश्यक होता है, साथ ही आवश्यकतानुसार तथ्य भी दिये जाते है। वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत सर्वप्रथम तथ्यो के सकलन के लिए ऐसी पद्धतियों एवं उपकरणों के चुनाव पर जोर दिया जाता है जो तर्क-संगत हों, तार्किकता पर आधारित हो। साथ ही इस पद्धति के अन्तर्गत सकलित तथ्यो का विश्लेषण भी तार्किकता के आधार पर किया जाता है। इस पद्धति की

सहायता से वैज्ञानिक निष्कर्षों के प्रस्तुतीकरण में भी तर्क का सहारा लिया जाता है। वैज्ञानिक पद्धति में यद्यपि अनुभवसिद्ध प्रमाणों या तथ्यों पर जोर दिया जाता है लेकिन तार्किकता के आधार पर जो बात खरी मालूम पड़ती है, यथार्थ जान पडती है, उसे भी स्वीकार कर लिया जाता है। यदि कहा जाय कि वैज्ञानिक पद्धति का आधार ही तर्क या तार्किकता है तो इसमें किसी भी प्रकार की अतिशयोक्ति नहीं है।

(11) **वस्तुनिष्ठता**—वैज्ञानिक पद्धति मे वस्तुनिष्ठता (Objectivity) पर विशेष वल दिया जाता है। विना वस्तुनिष्ठता के वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना किसी भी रूप में सम्भव नहीं है। वस्तुनिष्ठता का तात्पर्य है—घटनाओ का अध्ययन ठीक उसी रूप में करना जिस रूप में वे हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करते हुए अध्ययनकर्ता को प्रत्येक स्तर पर इस वात की विशेष सावधानी रखनी होती है कि उसके स्वयं के पूर्वाग्रह, विचार, भावनाएं, पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण अध्ययन में वाधक नही वन जायें। उसे तो पूर्णतः निष्पक्ष (वस्तुनिष्ठ) होकर तथ्यों या घटनाओं का यथार्थ चित्रण करना है, निष्कर्ष निकालने हैं, प्राक्कल्पना की सत्यता या असत्यता को प्रमाणित करना है।

वैज्ञानिक पद्धति के चरण
(STEPS OF SCIENTIFIC METHOD)

प्रत्येक वैज्ञानिक अध्ययन क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित होता है। वैज्ञानिक निष्कर्षो तक पहुंचने तथा नियमों एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने हेतु अध्ययनकर्ता को निश्चित चरणों से होकर गुजरना पड़ता है। जब वैज्ञानिक पद्धति की सहायता से कोई अध्ययन किया जाता है तो इस हेतु अध्ययनकर्ता को विभिन्न चरणो या सोपानों से होता हुआ सैद्धान्तीकरण (सामान्यीकरण) की अवस्था तक पहुंचना होता है। **लुण्डबर्ग** ने वैज्ञानिक पद्धति के चार चरणों का वर्णन किया है : **प्रथम**, कार्यशील प्राक्कल्पना का निर्माण; **द्वितीय**, अवलोकन एवं तथ्यों का आलेखन; **तृतीय**, संकलित तथ्यों का वर्गीकरण एवं संगठन; तथा **चतुर्थ**, सामान्यीकरण। **श्रीमती पी. वी. यंग** ने वैज्ञानिक पद्धति के छः चरणों का उल्लेख किया है : (i) अध्ययन हेतु समस्या का चुनाव, (ii) कार्यशील प्राक्कल्पना का निर्माण, (iii) वैज्ञानिक प्रविधियों की सहायता से समस्या या घटना का अवलोकन एवं खोज, (iv) संकलित तथ्यों का आलेखन, (v) तथ्यों का विभिन्न वर्गों में वर्गीकरण, तथा, (vi) वैज्ञानिक सामान्यीकरण।

यहां हम वैज्ञानिक पद्धति के विभिन्न चरणो का विवरण प्रस्तुत करेंगे। ये चरण निम्नलिखित हैं :

(1) समस्या का चुनाव (Selection of the Problem)
(2) अध्ययन के उद्देश्यों का निर्धारण (Determination of objects of Study)
(3) प्राक्कल्पना का निर्माण (Formulation of Hypothesis)
(4) अध्ययन-क्षेत्र एवं अध्ययन की इकाई का निर्धारण (Determination of area and unit of Study)
(5) अध्ययन-पद्धतियों एवं यन्त्रों का चुनाव (Selection of Methods of Study and Study-tools)
(6) अवलोकन एवं तथ्यों का संकलन (Observation and Collection of Data)
(7) तथ्यों का वर्गीकरण, विश्लेषण एव व्याख्या (Classification, Analysis and Interpretation of Data)

(8) सामान्यीकरण (Generalization)

(9) जांच या पुन: परीक्षण (Verification)

(10) भविष्यवाणी (Prediction)

वैज्ञानिक पद्धति के उपर्युक्त चरणों पर 'सामाजिक अनुसन्धान की प्रक्रिया', 'सामाजिक सर्वेक्षण के प्रकार, आयोजन एवं प्रमुख चरण' नामक अध्यायों में संक्षिप्त विचार किया जा चुका है, अत: यहां इन पर अति संक्षेप में ही विचार किया जा रहा है।

(1) सर्वप्रथम अध्ययनकर्ता को किसी **समस्या का चुनाव** और उससे सम्बन्धित साहित्य या उपलब्ध सूचनाओं का अध्ययन करना होता है। समस्या का चुनाव काफी सोच-विचार के पश्चात् पूर्व-ज्ञान एवं पूर्व-अवलोकन को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

(2) समस्या का चुनाव कर लेने के पश्चात् **अध्ययन के उद्देश्यों का निर्धारण** किया जाता है। ये उद्देश्य सामान्य और विशिष्ट दोनों प्रकार के हो सकते हैं।

(3) समस्या का चुनाव हो जाने के पश्चात् **प्राक्कल्पना का निर्माण** किया जाता है। लुण्डबर्ग के अनुसार प्राक्कल्पना एक कामचलाऊ निष्कर्ष या सामान्यीकरण है, जिसकी सत्यता की परीक्षा करना शेष है। प्राक्कल्पना अध्ययन की दिशा और क्षेत्र निर्धारित करने में योग देती है।

(4) **अध्ययन-क्षेत्र एवं अध्ययन की इकाई का निर्धारण** भी वैज्ञानिक पद्धति का एक प्रमुख चरण है। अध्ययन-क्षेत्र को निश्चित कर लेना इस दृष्टि से आवश्यक है कि अध्ययनकर्ता स्वयं यह जान ले कि उसे किस क्षेत्र का अध्ययन करना है ताकि वह व्यर्थ की सामग्री एकत्रित करने से बच सके। यदि अध्ययन क्षेत्र काफी बड़ा है और क्षेत्र की प्रत्येक इकाई का अध्ययन करना सम्भव नहीं है तो निदर्शन विधि की सहायता से कुछ इकाइयों का चुनाव कर लिया जाता है और उन्हीं का अध्ययन किया जाता है। यहां अध्ययन की इकाई का निर्धारण कर लेना भी आवश्यक है।

(5) क्षेत्र एवं इकाई का निर्धारण कर लेने के पश्चात् अध्ययन हेतु **अध्ययन-पद्धतियों एवं उपकरणों का चुनाव** किया जाता है। अध्ययनकर्ता अध्ययन के उद्देश्यों एवं प्रकृति को ध्यान में रखकर यह निश्चित करता है कि उसे सूचनाएं एकत्रित करने के लिए साक्षात्कार विधि, अनूसची अथवा प्रश्नावली का प्रयोग करना है या वैयक्तिक अध्ययन पद्धति या किसी अन्य विधि का। यदि वह साक्षात्कार विधि का प्रयोग कर रहा है तो अध्ययन के उपकरण के रूप में वह साक्षात्कार-निर्देशिका (Interview guide) भी तैयार करता है।

(6) अब विषय-सामग्री या घटना का **सूक्ष्म एवं सावधानीपूर्ण अवलोकन** किया जाता एवं तथ्य सकलित किये जाते है। अवलोकन के अतिरिक्त अध्ययन की किसी अन्य विधि का सहारा भी तथ्य-सकलन हेतु लिया जाता है। संकलित तथ्यों को लिखा जाता है।

(7) तथ्यो का **वर्गीकरण, विश्लेषण एवं व्याख्या** भी वैज्ञानिक पद्धति का प्रमुख चरण है। एकत्रित तथ्यों को समानताओं के आधार पर अलग-अलग वर्गों में बांटा जाता है। फिर सारणियां तैयार की जाती है एवं तथ्यो का विश्लेषण किया जाता है, कार्य-कारण सम्बन्धों का पता लगाया जाता है।

(8) तत्पश्चात् **सामान्यीकरण** किया जाता है, अर्थात वर्गीकृत तथ्यों के प्रतिमान के आधार पर निष्कर्ष निकाले एवं सामान्य नियम बनाये जाते है। इन्हीं सामान्य नियमों को वैज्ञानिक सिद्धान्त कहा जाता है।

(9) फिर सामान्य नियमों की **जांच एवं पुनर्परीक्षण** किया जाता है। निष्कर्षों एवं नियमों की जांच की जाती है, यह पता लगाया जाता है कि वे सार्वभौमिक रूप से सही हैं या नहीं अथवा उनमें किसी प्रकार के संशोधन की आवश्यकता है।

(10) तत्पश्चात् एकत्रित तथ्यों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर **भविष्यवाणी** की जाती है, भविष्य की घटनाओं के सम्बन्ध में पूर्वानुमान लगाया जाता है।

इस प्रकार जब किसी विषय की अध्ययन-वस्तु इस वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method) को काम में लेते हुए प्राप्त की जाती है, तभी वह विषय विज्ञान कहलाने का अधिकारी है। सही ज्ञान के संचय का आधार वैज्ञानिक पद्धति ही है। वैज्ञानिक विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान सदैव ही सर्वकालिक सत्य नहीं होता। ज्ञान में तो निरन्तर वृद्धि होती ही रहती है। किसी घटना या वस्तु के बारे में वैज्ञानिक विधि से प्राप्त ज्ञान में भी कमियाँ रह जाती है। वैज्ञानिक उसके बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए पुनः वैज्ञानिक प्रक्रिया का सहारा लेता है और ऐसा वह बार-बार करता है और तब तक दोहराता है जब तक अन्तिम सत्य तक न पहुँच जाय। इस प्रकार से वैज्ञानिक प्रक्रिया का बार-बार प्रयोग ही "**वैज्ञानिक प्रक्रिया की चक्रीय प्रकृति**" कहलाती है। **कार्ल पियर्सन** ने भी लिखा है, "सत्य के लिए लघु (संक्षिप्त) मार्ग नहीं है, विश्व का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक पद्धति के द्वार से गुजरने के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं है।"[1]

सामाजिक अनुसन्धान में वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग
(USE OF SCIENTIFIC METHOD IN SOCIAL RESEARCH)

कुछ लोगों का कहना है कि सामाजिक अनुसन्धान को वैज्ञानिक नहीं माना जा सकता क्योंकि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति बहुत जटिल है, सामाजिक घटनाएं बदलती रहती हैं, सामाजिक घटनाओं में सार्वभौमिकता का अभाव पाया जाता है, सामाजिक घटनाओं को नापा-तोला नहीं जा सकता, सामाजिक घटनाओं के कार्य-कारण सम्बन्धों को ज्ञात नही किया जा सकता। यह भी कहा जाता है कि सामाजिक विज्ञानों के पास प्रयोगशाला नहीं हैं, वे सार्वभौमिक नियमों का प्रतिपादन नहीं कर सकते, वे भविष्यवाणी करने में असमर्थ हैं। ऐसी स्थिति मे सामाजिक विज्ञानों और उनके क्षेत्र में किये जाने वाले सामाजिक अनुसन्धानों को कैसे वैज्ञानिक माना जा सकता है। वास्तविकता यह है कि आज विभिन्न सामाजिक विज्ञानों में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसकी सहायता से तथ्य एकत्रित किये जाते हैं, उन तथ्यों के आधार पर नियमों का प्रतिपादन किया जाता है और ये नियम सार्वभौमिक होते है। ऐसी स्थिति में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक विज्ञानों एवं सामाजिक अनुसन्धान की प्रकृति वैज्ञानिक है। समाजशास्त्र और इसके क्षेत्र में होने वाले अनुसन्धानों की प्रकृति भी वैज्ञानिक है क्योंकि इसमें विज्ञान की सभी विशेषताएं पायी जाती हैं। विज्ञान के प्रमुख तत्व या विशेषताएं निम्नलिखित है : (i) अवलोकन, (ii) सत्यापन तथा वर्गीकरण, (iii) सामान्यीकरण, (iv) भविष्यवाणी, (v) वैज्ञानिक प्रवृत्ति। इन पर इसी अध्याय में विज्ञान के प्रमुख तत्व या विशेषताएं शीर्षक के अन्तर्गत विचार किया जा चुका है।

समाजशास्त्रीय अध्ययनों में वैज्ञानिक-पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इनमें तथ्य-संकलन के लिए सामाजिक सर्वेक्षण-पद्धति, वैयक्तिक जीवन-अध्ययन पद्धति,

[1] "There is no short-cut to truth; no way to gain knowledge of the universe except through the gateway of scientific method."
—Karl Pearson, *The Grammar of Science*, p. 1.

समाजमिति, अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची, प्रश्नावली, आदि का उपयोग किया जाता है। इनमें ऐतिहासिक, तुलनात्मक एवं संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक पद्धतियों का सहारा भी लिया जाता है। इनमें से उपयुक्त पद्धतियों का प्रयोग करते हुए तथ्य एकत्रित किये जाते हैं, सामाजिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है।

समाजशास्त्रीय अध्ययनों में 'क्या है' में रुचि ली जाती है, न कि 'क्या होना चाहिए' मे। तात्पर्य यह है कि समाजशास्त्र में घटनाओं का वस्तुनिष्ठ तरीके से अध्ययन किया जाता है, उनका यथार्थ चित्रण किया जाता है। उदाहरण के रूप में, जब दहेज-प्रथा पर समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से विचार किया जाता है तो यही बताया जाता है कि दहेज प्रथा का वर्तमान स्वरूप क्या है, इसके लिए उत्तरदायी कारण क्या हैं, किन परिस्थितियों ने इसे प्रोत्साहन दिया, इस प्रथा का लोगों पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसके परिणाम क्या हैं, आदि। समाजशास्त्री अपने अध्ययन में दहेज-प्रथा से सम्बन्धित इन बातों की ही विवेचना करता है, वह यह नही कहता है कि इस प्रथा को बन्द किया जाना चाहिए अर्थात् वह उपदेशात्मक या आदर्शात्मक बातें नही बताता है।

समाजशास्त्रीय अध्ययनों में कार्य-कारण सम्बन्धों की विवेचना की जाती है, प्राप्त तथ्यों के आधार पर सामान्यीकरण किया जाता है, नियम प्रतिपादित किये जाते हैं, उन नियमों का परीक्षण और पुनर्परीक्षण किया जाता है। समाज-विज्ञानों के क्षेत्र में प्रतिपादित नियमों मे सार्वभौमिकता का गुण पाया जाता है। समाजशास्त्रीय अध्ययनों की सहायता से न केवल वर्तमान घटनाओं की विवेचना और व्याख्या ही की जाती है बल्कि भविष्य में घटित होने वाली सम्भावित घटनाओ का उल्लेख भी किया जाता है। समाजशास्त्र ने अपने अध्ययनो के आधार पर भविष्यवाणी करने की क्षमता का काफी विकास कर लिया है। अत: हम कह सकते है कि चूंकि सामाजिक अनुसन्धानों में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया जाता है, अतः इनकी प्रकृति **वैज्ञानिक** है।

प्रश्न

1. विज्ञान क्या है? विज्ञान की प्रमुख विशेषताओ को स्पष्टतः समझाइए।
2. वैज्ञानिक पद्धति की परिभाषा दीजिए तथा इसके महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. वैज्ञानिक पद्धति क्या है? इसके प्रमुख चरणों को समझाइए। (अजमेर, 1994)
4. वैज्ञानिक पद्धति क्या है? वैज्ञानिक प्रक्रिया की चक्रीय प्रकृति समझाइए। (राजस्थान, 1999)
5. वैज्ञानिक पद्धति ज्ञान प्राप्त करने की व्यवस्थित विधि है। विवेचना कीजिये। (राजस्थान, 2000)
6. सामाजिक विज्ञानो मे वैज्ञानिक पद्धति लागू की जा सकती है या नही। विवेचना कीजिए। (अजमेर, 1996)
7. विज्ञान के आवश्यक तत्वों का उल्लेख करते हुए वैज्ञानिक पद्धति के प्रमुख चरणो की व्याख्या कीजिए। (अजमेर, 1997)
8. वैज्ञानिक पद्धति क्या है? वैज्ञानिक पद्धति की महत्वपूर्ण विशेषताओ का विवेचन कीजिए। (राजस्थान, 1997)

लघु उत्तरीय प्रश्न

निम्नांकित में से प्रत्येक पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(1) वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ बताइए।

(2) विज्ञान की अवधारणा।

(3) वैज्ञानिक पद्धति की कोई पांच विशेषताएं बताइए।

(4) विज्ञान की कोई चार विशेषताएं बताइए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित मे से वैज्ञानिक विधि की विशेषताओ का चयन कीजिए :

(i) वस्तुनिष्ठता,

(ii) तर्क,

(iii) कार्य-कारण का सम्बन्ध,

(iv) व्यक्तिनिष्ठ अध्ययन,

(v) भविष्यवाणी,

(vi) सिद्धान्तों का निर्माण,

(vii) मानवतावादी दृष्टिकोण,

(viii) अवलोकन,

(ix) कहावतो को सत्य मानना,

(x) क्या है का उल्लेख।

2. निम्नांकित वाक्यों में से सत्य/असत्य कथन छांटिए :

(i) विज्ञान का सम्बन्ध पद्धति से है न कि विषय-वस्तु से।

(ii) विज्ञान मे क्या होना चाहिए का उल्लेख अति आवश्यक है।

(iii) विज्ञान अवलोकन से प्रारम्भ होता है।

(iv) विज्ञान मे तथ्यों का सत्यापन एव वर्गीकरण किया जाता है।

(v) वैषयिकता विज्ञान का प्रमुख लक्षण है।

(vi) विज्ञान मे कार्य-कारण का सम्बन्ध होना आवश्यक नही है।

(vii) विज्ञान सदैव ही तर्क-प्रधान हो, यह आवश्यक नही है।

(viii) वैज्ञानिक सिद्धान्त सार्वभौमिक होते हैं।

[उत्तर—1. विशेषताएं—(i), (ii), (iii), (v), (vi), (vii), (xi)। 2 सत्यकथन—i, iii, iv, v, viii शेष सभी असत्य कथन है।]

7

तथ्यों (सामग्री) के प्रकार एवं स्रोत

[TYPES AND SOURCES OF DATA]

किसी भी सर्वेक्षण, शोध या अनुसन्धान के लिए सामग्री या तथ्यों का संकलन अत्यन्त आवश्यक है। जब तक शोध-विषय से सम्बन्धित तथ्यों को निश्चित प्रविधियों को काम में लेते हुए एकत्रित नही किया जाएगा, तबं तक शोध (अनुसन्धान) के आधार पर कोई निष्कर्ष नही निकाले जा सकते और न ही किसी प्रकार के नियमों का ही प्रतिपादन किया जा सकता है। तथ्य-संकलन शोध-प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण चरण है। जिस प्रकार ईंट, चूना, पत्थर, सीमेण्ट, बजरी, लकड़ी, लोहे, आदि के बिना किसी भवन का निर्माण नही किया जा सकता, ठीक उसी प्रकार तथ्यों या सामग्री के बिना शोध का कार्य सम्पन्न नहीं किया जा सकता। किसी भी वैज्ञानिक निष्कर्ष तक पहुंचने एवं सामान्यीकरण तथा सैद्धान्तीकरण के लिए सूचनाएं प्राप्त करना, तथ्य एकत्रित करना, संख्यात्मक एवं गुणात्मक बातें मालूम करना आवश्यक है। उदाहरण के रूप में, यदि हम यह ज्ञात करना चाहते हैं कि किसी क्षेत्र विशेष के बालकों में अपराधी प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है, बजाय किसी अन्य क्षेत्र के, तो ऐसी दशा में दोनों क्षेत्रो के बालको का, वहां की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक परिस्थितियो का अध्ययन करना होगा, रहन-सहन की स्थिति, आजीविका के साधन, बालकों के समाजीकरण की प्रक्रिया, आदि के बारे में गहन जानकारी प्राप्त करनी होगी। इसी जानकारी या एकत्रित सूचनाओं, ऑकड़ों, आदि के आधार पर शोध-कार्य को आगे बढ़ाया जा सकेगा, कुछ निष्कर्ष निकाले जा सकेंगे, सामान्यीकरण किया जा सकेगा। ये सब सूचनाएं, आंकड़े, जानकारी, आदि ही तथ्यो (Data) के अन्तर्गत आते हैं।

शोध हेतु प्रयुक्त किए जाने वाले तथ्यो को अध्ययनकर्ता मनमाने ढग से एकत्रित नहीं करके विभिन्न उपकरणों एवं प्रविधियों की सहायता से संकलित करता है। वैज्ञानिक शोध के लिए इन तथ्यों का विश्वसनीय होना भी आवश्यक है और इस विश्वसनीयता को बनाए रखने के लिए शोधकर्ता वस्तुनिष्ठता के साथ तथ्यों को एकत्रित करता है। स्पष्ट है कि शोध या अनुसन्धान के लिए विश्वसनीय तथ्यों या सामग्री का होना नितान्त आवश्यक है।

तथ्य (सामग्री) का अर्थ (Meaning of Data)

तथ्य-सकलन के लिए शोधकर्ता में अवलोकन की चेतना का होना आवश्यक है, यद्यपि यह सही है कि तथ्यो के अन्तर्गत सूचनादाताओं से विभिन्न प्रविधियों की सहायता से प्राप्त सभी प्रकार की सूचनाएं आती हैं। तथ्यो के अन्तर्गत उन बातों या सूचनाओं को सम्मिलित जाता है जो अवलोकन के योग्य हों और जिन्हें लिखित रूप में रखा जा सकता हो।

वैज्ञानिक ज्ञान की सीमाओं के विस्तार हेतु शोध-प्रयत्नों के आधार पर संकलित की गई साधारण-सी लगने वाली छोटी-छोटी सूचनाएं भी काफी लाभदायक होती हैं। इन्हीं संकलित सूचनाओं को तथ्य या सामग्री (Data) के नाम से पुकारते हैं। ऐसे ही तथ्यों या सामग्री के आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाले जाते तथा नियमों का प्रतिपादन एवं सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है।

तथ्य-संकलन प्रत्येक विज्ञान का चाहे वह भौतिक विज्ञान हो या सामाजिक विज्ञान लक्ष्य होता है। व्यवस्थित रूप में संकलित तथ्यों के आधार पर ही वैज्ञानिक नियमों का प्रतिपादन किया जा सकता है। तथ्य-संकलन से ही घटनाओं के कार्य-कारण सम्बन्ध को जाना जा सकता है, कारण-प्रभाव (Cause and Effect) सम्बन्धों का पता लगाया जा सकता है। प्रत्येक विज्ञान में विविध घटनाओं के कारणों एवं प्रभावों को जानने का प्रयत्न तथ्यों के आधार पर ही किया जाता है। अतः हम कह सकते है कि विज्ञान की प्रगति तथ्यों पर ही निर्भर करती है। अन्य शब्दों में प्रत्येक विज्ञान तथ्यों के आधार पर ही आगे बढ़ता है, न कि कल्पनाओं के आधार पर।

अमरीकी कॉलेज शब्दकोश में तथ्यों का अर्थ स्पष्ट करने की दृष्टि से बताया गया है कि जो घटना वास्तव में घटित हुई है, जो कुछ घटा है, उसे तथ्य का नाम दिया जाता है। यहां हमें यह बात ध्यान में रखनी है कि भौतिक विज्ञानों की मूर्त घटनाएं मात्र ही सामाजिक विज्ञानो के तथ्य नहीं होतीं, बल्कि अमूर्त जैसे विश्वास, भावनाएं, मनोवृत्तियां या विचार, आदि भी तथ्यों के अन्तर्गत आते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि **तथ्य** (Data) **का तात्पर्य ऐसी सभी सूचनाओं, सामग्री व आंकड़ों से है जो कि क्षेत्रीय-कार्य** (Field-work) **और द्वैतीयक स्रोतों** (Secondary Sources) **के माध्यम से प्राप्त किए जाते हैं।**

तथ्यों के प्रकार (Types of Data)

प्रत्येक अध्ययन विषय या समस्या से सम्बन्धित तथ्य काफी विविधतापूर्ण होते हैं, कुछ तथ्य गुणात्मक तो कुछ परिमाणात्मक होते हैं। अध्ययन हेतु तथ्यों का संकलन कई प्रविधियों की सहायता से किया जा सकता है। अवलोकन-विधि, साक्षात्कार, अनुसूची, डाक द्वारा प्रेषित प्रश्नावली, आदि के माध्यम से तथ्य एकत्रित किए जा सकते है। कई बार अध्ययन-विषय की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए कुछ ऐसे तथ्यों का उपयोग भी किया जाता है जिन्हें शोधकर्ता या उसके सहायकों ने स्वयं संकलित नहीं किया है बल्कि अन्य अध्ययन-कर्ताओं ने अपने-अपने अध्ययन हेतु एकत्रित किया है। ऐसे तथ्य पुस्तकों, प्रतिवेदनों, पांडुलिपियों, डायरियों, जनगणना रिपोर्ट, आदि से प्राप्त किए जाते हैं। अतः तथ्य प्रमुखतः दो प्रकार के होते हैं : प्रथम **प्राथमिक तथ्य** (Primary Data), तथा द्वितीय, **द्वैतीयक तथ्य** (Secondary Data)। **प्राथमिक तथ्यों का संकलन प्रथम बार शोधकर्ता या उसके सहायकों द्वारा क्षेत्रीय कार्य के आधार पर किया जाता है। द्वैतीयक तथ्यों के अन्तर्गत वे तथ्य आते हैं जिनका संकलन किसी अन्य अध्ययन-कर्ता, शोधकर्ता, किसी संस्थान या संगठन द्वारा किया गया है।** अन्य अध्ययन-कर्ताओं द्वारा संकलित तथ्यों का उपयोग जब कोई शोधकर्ता करता है तो उस शोधकर्ता के लिए अन्यों द्वारा संकलित तथ्य द्वैतीयक तथ्य होते हैं क्योंकि उसने या उसके सहायकों ने इन तथ्यों को प्रथम बार एकत्रित नहीं किया है। **यहां अब हम प्राथमिक एवं द्वैतीयक तथ्यों पर सविस्तार विचार करेंगे।**

(1) **प्राथमिक तथ्य (सामग्री)** (Primary Data)—वे सभी सूचनाएं, संग्रहित की गई सामग्री और आंकड़े जिन्हें शोधकर्ता ने अपने अध्ययन (शोध) हेतु स्वयं या अपने सहायकों की मदद से एकत्रित किया हो, प्राथमिक तथ्य कहलाते हैं। ये तथ्य प्रमुखतः क्षेत्रीय कार्य (Field-work) के आधार पर प्राप्त किए जाते हैं। **रॉबर्टसन तथा राइट** ने लिखा है, "वे [illegible] प्राथमिक होते हैं, जिन्हें एक विशेष शोध-समस्या को हल करने के लिए विशेष उद्देश्य से संकलित किया गया हो।"[1] स्पष्ट है कि अनुसन्धान या शोध-समस्या से सम्बन्धित प्रथम बार एकत्रित आंकड़े, सूचनाएं एवं सामग्री प्राथमिक तथ्य कहलाते हैं।

श्रीमती पी. वी. यंग ने लिखा है, "प्राथमिक तथ्य-सामग्री का तात्पर्य उन सूचनाओं व आंकड़ों से है जिनको पहली बार संकलित किया गया हो तथा जिनके संकलन का उत्तरदायित्व शोधकर्ता या अन्वेषण-कर्ता का अपना है।"[2] यहां यह बात स्पष्ट है कि प्राथमिक तथ्यों का संकलन या तो शोधकर्ता स्वयं करता है या अपनी देखरेख में अपने सहायकों से कराता है, इस प्रकार की सामग्री या तथ्य क्षेत्रीय कार्य के आधार पर प्राप्त किए जाते हैं।

प्राथमिक तथ्यों (सामग्री) की उपर्युक्त विशेषताओं के कारण प्राथमिक सामग्री (तथ्य) को प्रथम-स्तरीय सामग्री (First-hand Data), क्षेत्रीय-सामग्री (Field Data) एवं आधार या मौलिक सामग्री (Basic Data) के नाम से पुकारते हैं। इस प्रकार की सामग्री का संकलन शोधकर्ता स्वयं या अपने सहायकों की मदद से या तो घटनाओं का सूक्ष्म अवलोकन करके करता है या शोध-विषय से सम्बन्धित लोगों से बातचीत करके, साक्षात्कार करके, अनुसूची या डाक द्वारा भेजी गई प्रश्नावली की सहायता से करता है। प्राथमिक सामग्री या तथ्य क्योंकि शोधकर्ता द्वारा प्रथम बार एकत्रित किए जाते है, इसलिए इन्हें प्राथमिक तथ्य कहते हैं। ये तथ्य नवीन और विश्वसनीय होते हैं। इन तथ्यों के अधिक विश्वसनीय होने का कारण यह है कि इन्हें शोधकर्ता नियन्त्रित रूप से अपनी प्राक्कल्पना के सत्यापन की आवश्यकता एवं अपने अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर स्वयं संकलित करता है। यदि कोई शोधकर्ता ग्रामीण-नेतृत्व का अध्ययन करना चाहे तो उसे किसी ग्राम विशेष या कुछ ग्रामों के नेताओ का पता लगाना होगा। इसके पश्चात् उसे इन नेताओं के क्रिया-कलापों व विभिन्न गतिविधियों का निरीक्षण करना होगा। शोधकर्ता को इनसे सम्पर्क स्थापित कर बहुत-सी सूचना या जानकारी प्राप्त करनी होगी। उसे यह मालूम करना पड़ेगा कि इन नेताओं ने सामूहिक हित के कौन-कौन से कार्य किए हैं। ये किस आयु-समूह मे आते है, इनकी शैक्षणिक योग्यता क्या है, इनकी आजीविका के साधन क्या है, इनकी आर्थिक स्थिति कैसी है? ये सब सूचनाएं जानकारी, आंकड़े शोधकर्ता स्वयं या कुछ सहायकों की मदद से एकत्रित करता है। इन सब एकत्रित तथ्यों को प्राथमिक तथ्य (Primary Data) कहते है।

(2) **द्वैतीयक तथ्य (सामग्री)** (Secondary Data)—वे सब सूचनाएं, आंकडे एवं तथ्य जिन्हें शोधकर्ता अपने अध्ययन हेतु स्वयं संकलित नही करता बल्कि जो पहले से ही प्रकाशित या अप्रकाशित रूप मे उपलब्ध हैं, द्वैतीयक सामग्री या तथ्य कहलाते है। इनमें पत्र, डायरियां, आत्मकथाएं, पांडुलिपियां, सरकारी प्रतिवेदन, जनगणना रिपोर्ट, गजेटियर, प्रलेख, अभिलेख आदि आते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि द्वैतीयक तथ्य पहले से ही उपलब्ध होते हैं जिनका उपयोग कोई शोधकर्ता अपने शोध-विषय की आवश्यकतानुसार करता है। किसी शोधकर्ता या संगठन द्वारा इस प्रकार की सामग्री या तथ्य पहले से संकलित किए हुए होते हैं। श्रीमती

1 L. S. Robertson and N. T. Wright, *Research Procedure in Agriculture.*
P. V. Young, *op. cit.*, p. 127.

पी. बी. यंग के अनुसार, "द्वैतीयक तथ्य वे होते हैं जिन्हें मौलिक स्रोतों से एक बार प्राप्त कर लेने के पश्चात् काम में लिया गया हो एवं जिनका प्रसारण अधिकारी उस व्यक्ति से भिन्न होता है जिसने प्रथम बार तथ्य संकलन को नियन्त्रित किया था।"[1] स्पष्ट है कि द्वैतीयक तथ्य वे होते हैं जिनका एकत्रीकरण स्वयं शोधकर्ता या उसके सहायकों द्वारा नही किया गया हो, परन्तु जिसने किसी अन्य अध्ययन हेतु किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा संकलित सामग्री का उपयोग किया हो। इस सामग्री या तथ्यों का उपयोग करने वाला इसके क्षेत्रीय संकलन से सम्बन्धित नहीं होता है। अन्य शब्दों में जब कोई शोधकर्ता, अन्य शोधकर्ता, संस्था, संगठन या किसी सरकारी या गैर-सरकारी एजेन्सी द्वारा एकत्रित सामग्री या तथ्यों का स्वयं के अध्ययन हेतु उपयोग करता है तो उसके लिए वह सामग्री द्वैतीयक सामग्री या तथ्य होंगे। यहां इसे एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करना उचित रहेगा। यदि कोई शोधकर्ता 1991 की जनगणना-रिपोर्ट के रूप में प्रकाशित सामग्री मे से कुछ तथ्यो का चयन कर अपने अध्ययन हेतु उपयोग करता है तो ऐसे तथ्य उसके लिए द्वैतीयक तथ्य कहलाएंगे। किसी अध्ययन में द्वैतीयक तथ्यों का उपयोग उस समय किया जाता है जब विषय की प्रकृति ऐसी हो कि सभी तथ्यों को नवीन सिरे से एकत्र करना आवश्यक नहीं हो तथा उस विषय से सम्बन्धित अन्य द्वारा एकत्रित तथ्य पहले से उपलब्ध हों। शोधकर्ता को अपने सीमित साधनों के कारण भी कई बार द्वैतीयक सामग्री का उपयोग करना पड़ता है। द्वैतीयक सामग्री को काम में लेने हेतु शोधकर्ता का कार्य-कुशल और सूझ-बूझ वाला होना आवश्यक है। यह सामग्री काफी विविधता लिए हुए होती है। अतः इसमें से शोधकर्ता को आवश्यक तथ्यों को संकलित करना होता है।

उपर्युक्त विवेचन से प्राथमिक एवं द्वैतीयक तथ्यो का अन्तर स्पष्ट हो जाता है जो इस प्रकार है : वास्तव में प्राथमिक एवं द्वैतीयक तथ्य सापेक्ष है। किसी अध्ययन में कौनसे तथ्य प्राथमिक और कौन से तथ्य द्वैतीयक होंगे, यह शोध के लक्ष्य से सम्बन्धित है। एक शोधकर्ता के लिए जो तथ्य प्राथमिक हैं, वे ही अन्य शोधकर्ताओं के अध्ययन मे प्रयुक्त होने पर द्वैतीयक कहलायेगे।

प्राथमिक तथ्यों को द्वैतीयक तथ्यों की तुलना मे अधिक मौलिक (Original) माना जाता है क्योंकि इनका संकलन स्वयं शोधकर्ता के द्वारा अध्ययन की आवश्यकता के अनुसार किया जाता है। इस मौलिकता का द्वैतीयक तथ्यों में सापेक्ष रूप से अभाव पाया जाता है।

प्राथमिक तथ्य द्वैतीयक तथ्यों की तुलना में अधिक विश्वसनीय होते हैं क्योंकि इन्हें शोधकर्ता या अन्वेषणकर्ता अपनी प्राक्कल्पनाओं के परीक्षण हेतु अथवा अध्ययन-विषय के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए किसी वैज्ञानिक प्रविधि द्वारा वस्तुनिष्ठ तरीके से स्वयं या अपने निर्देशन में संकलित करता है। ये तथ्य ऐसे होते हैं जिनका अन्य वैज्ञानिकों द्वारा सत्यापन किया जा सकता है। यहाँ हमें यह नहीं सोच लेना चाहिए कि द्वैतीयक तथ्य प्राथमिक तथ्यों की तुलना मे घटिया किस्म के होते है। कहने का तात्पर्य केवल यही है कि प्राथमिक तथ्य तुलनात्मक दृष्टि से अधिक विश्वसनीय एवं प्रामाणिक होते है।

प्राथमिक तथ्य क्षेत्रीय-कार्य के आधार पर प्रथम बार एकत्रित किये जाने के कारण नवीन होते है जबकि द्वैतीयक तथ्य पूर्व में किये गये अन्वेषणों के अन्तर्गत संकलित किये

1 *Ibid.*, p. 127.

जाने के कारण पुराने होते हैं। उनका यह पुरानापन कई बार वर्तमान का विश्लेषण करने में कठिनाई पैदा करता है।

प्राथमिक तथ्यों का प्रयोग प्रथम बार किया जाता है अर्थात प्रथम बार एकत्रित किये गये तथ्यों का प्रथम बार उपयोग किया जाता है। उन्हीं तथ्यों का दूसरी बार उपयोग करने पर वे द्वैतीयक तथ्यों के नाम से जाने जाते हैं।

प्राथमिक तथ्य शोधकर्ता के स्वयं के निर्देशन में एकत्रित किये जाते हैं जबकि द्वैतीयक तथ्य अन्य के द्वारा एकत्रित एवं उपयोग किये हुए होते हैं।

प्राथमिक तथ्यों का संकलन शोधकर्ता अपनी अध्ययन-समस्या के अनुरूप स्वयं करता है। अतः वह सुगमता से इस बात का निर्णय कर पाता है कि उसके अध्ययन के लिए कौनसे तथ्य उपयोगी हैं, एवं कौनसे अनुपयोगी हैं, किन्हें अध्ययन में सम्मिलित किया जाना चाहिए और किन्हें हटा दिया जाना चाहिए। द्वैतीयक तथ्यों के संकलनकर्ता को कई बार उन महत्वपूर्ण तथ्यों के संकलन से वंचित रहना पड़ता है जिन्हें निरर्थक समझकर प्राथमिक तथ्यों के संकलन-कर्ता ने अध्ययन मे सम्मिलित नहीं किया।

तथ्यों (सामग्री) के स्रोत (Sources of Data)

तथ्यों (सामग्री) के स्रोत का तात्पर्य यह है कि तथ्यों का संकलन किन स्रोतों या माध्यमों से किया जा रहा है। तथ्य-संकलन के स्रोतों के चुनाव में विशेष सावधानी की आवश्यकता है। यदि ये स्रोत विश्वसनीय नही हुए तो सम्पूर्ण शोध-कार्य ही निरर्थक साबित हो सकता है। अतः तथ्य-संकलन के विभिन्न स्रोतों को भली-भाँति समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है। प्रमुखतः तीन तरीकों से अध्ययन हेतु तथ्य एकत्रित किये जा सकते हैं। सामाजिक शोध का विषय चूकि मानव या मानव समूह होता है जिसे हम अपनी सुविधानुसार या आवश्यकतानुसार नियन्त्रित नहीं कर सकते। अतः हम उसके सम्बन्ध में तीन तरीकों से सूचना प्राप्त कर सकते या तथ्य एकत्रित कर सकते हैं :

(1) हम व्यक्ति से स्वयं बातचीत करें, वार्तालाप करें, सीधे प्रश्न करें तथा विषय या समस्या के सम्बन्ध मे उसके विचार या प्रतिक्रिया को जान लें।

(2) शोध-विषय से सम्बन्धित व्यक्ति, समूह एवं संगठन के क्रिया-कलापों, आचार व्यवहारों का प्रत्यक्ष रूप से अवलोकन करें और इस अवलोकन के आधार पर प्राप्त तथ्यों को संकलित कर ले।

(3) शोध-कार्य के समय उन दस्तावेजों, तथ्यों या सामग्री का उपयोग अपने आवश्यकतानुसार करें जो किसी अन्य अध्ययन या शोध हेतु एकत्रित किये गये थे।

तथ्य-संकलन के उपर्युक्त तीन स्रोतो को विद्वानो ने प्रमुखतः दो भागों में बाँटा है प्रथम, **प्राथमिक स्रोत** (Primary Source) तथा द्वितीय, **द्वैतीयक स्रोत** (Secondary Source)

I. प्राथमिक स्रोत (Primary Source)

प्राथमिक स्रोत से प्राप्त तथ्य वे मौलिक तथ्य होते हैं जिनको संकलित व प्रचारित करने का दायित्व उसी व्यक्ति या शोधकर्ता का होता है जिसने उन्हें एकत्रित किया है। यहाँ पर यह बात भली-भाँति समझ लेनी चाहिए कि प्राथमिक स्रोत से एकत्रित सामग्री का संकलनकर्ता रिपोर्ट या प्रतिवेदन का लेखक हो, यह आवश्यक नहीं है। श्रीमती पी. वी. यंग ने लिखा है "प्राथमिक स्रोत वे स्रोत हैं जो प्राथमिक स्तर पर तथ्यों के संकलन में सहायक होते हैं।"

" , p. 136.

पीटर एच. मान के अनुसार, "प्राथमिक स्रोत वे स्रोत हैं जो प्रथम बार तथ्य प्रदान करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि ये तथ्य संकलित करने वाले लोगों द्वारा प्रस्तुत किये तथ्यों का मौलिक स्वरूप होते हैं।"[1]

प्राथमिक स्रोत को अन्य शब्दों में हम इस प्रकार समझा सकते हैं। जहाँ शोधकर्ता स्वयं अपने अध्ययन-क्षेत्र या समग्र (Universe) की अध्ययन इकाइयो से सम्पर्क कर तथ्यों को एकत्रित करता है, वहां इसे तथ्य-संकलन का प्राथमिक स्रोत कहा जाता है। यहां अपनी अध्ययन की इकाई—व्यक्ति से वह सीधा सम्पर्क कर तथ्य सकलित करता है। इस प्रकार से प्राप्त तथ्यों को प्राथमिक स्रोत द्वारा एकत्रित सामग्री इस कारण भी कहा जाता है क्योंकि किसी विशिष्ट विषय (समस्या) के लक्ष्य को ध्यान में रखकर इसे प्रथम बार एकत्रित किया जाता है। इस सामग्री के संकलन का दायित्व स्वयं शोधकर्ता का होता है। इस सामग्री की विश्वसनीयता एवं उपयुक्तता के लिए स्वयं अनुसन्धानकर्ता उत्तरदायी होता है। इस सामग्री के संकलन में शोधकर्ता का स्वयं का लगाव होता है। इस लगाव के फलस्वरूप अपने अध्ययन को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने हेतु वह पूर्णतः निष्पक्ष रहकर तथ्यों का संकलन कर सकता है। यह भी सम्भव है कि इस लगाव के कारण वह पूर्वाग्रहो से ग्रसित हो जाये, ऐसे तथ्यो का संकलन कर ले जो उसकी प्राक्कल्पना को सही प्रमाणित करने में योग दें। ऐसी स्थिति में अध्ययन में वैज्ञानिकता बनाये रखने हेतु शोधकर्ता को सभी पूर्वाग्रहों से अपने को मुक्त रखने की आवश्यकता है।

श्रीमती पी. वी. यंग ने तथ्य-संकलन के प्राथमिक स्रोत को दो भागों में विभाजित किया है: प्रथम, **प्रत्यक्ष स्रोत** (Direct Source), तथा द्वितीय, **अप्रत्यक्ष स्रोत** (Indirect Source)। प्रत्यक्ष स्रोत के अन्तर्गत अवलोकन, अनुसूची एवं साक्षात्कार प्रविधियों की सहायता से सामग्री संकलित की जाती है। प्रत्यक्ष स्रोत में शोधकर्ता या अध्ययन-कर्ता द्वारा अध्ययन-इकाइयों से सीधा सम्पर्क स्थापित किया जाता है। अप्रत्यक्ष स्रोत में शोधकर्ता अध्ययन-इकाइयों से सीधा सम्पर्क किये बिना ही सामग्री का संकलन करता है। अप्रत्यक्ष प्राथमिक स्रोत में प्रश्नावली, रेडियो या टेलीविजन अपील, टेलीफोन साक्षात्कार, प्रतिनिधि प्रविधियां, आदि प्रमुख है। यहां इन माध्यमों से सामग्री एकत्रित की जाती है।

यहां तथ्य संकलन के प्राथमिक स्रोत के अन्तर्गत हम अवलोकन, साक्षात्कार, अनुसूची एवं प्रश्नावली पर विचार करेंगे।

(1) **अवलोकन** (Observation)—अवलोकन तथ्य-संकलन के प्राथमिक स्रोत के अन्तर्गत आता है। इसमें अध्ययनकर्ता स्वयं अध्ययन-स्थल पर पहुंच कर घटनाओं, दशाओं, वस्तुओं, रीति-रिवाजों एवं व्यवहारों को निष्पक्ष रूप से देखता है, तटस्थ होकर उनका अवलोकन करता है और इस आधार पर तथ्यों को एकत्रित करता है। इस प्रविधि का सफल प्रयोग सीमित क्षेत्र में ही किया जा सकता है। साथ ही ऐसा अध्ययन लोगों के विचारों, विश्वासों, भावनाओ एवं मनोवृत्तियों से सम्बन्धित नहीं होना चाहिए क्योंकि इनका अध्ययन अवलोकन प्रविधि से नहीं किया जा सकता। अवलोकन के तीन प्रकार हैं : प्रथम, सहभागिक अवलोकन (Participant Observation); द्वितीय, अर्द्ध-सहभागिक अवलोकन (Quasi-Participant Observation); तथा तृतीय, असहभागिक अवलोकन (Non-Participant

[1] "Primary sources provide data gathered at first hand, that is to say, they are original sets of data produced by the people who collect them."
—Peter H. Mann, *Methods of Sociological Enquiry*, p. 56.

Observation)। सहभागिक अवलोकन में अध्ययन-कर्ता स्वयं उस समूह या समु एक सदस्य या भाग बन जाता है जिसका उसे अध्ययन करना होता है। ऐसा कर समूह के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण तथ्य ज्ञात कर सकता है। अर्द्ध-सहभागिक अवलो अध्ययनकर्ता लम्बे समय तक समूह का अंग बनकर नहीं रहता। यह विशेष अवस सम्बन्धित तथ्य एकत्रित करने के लिए उन अवसरों पर समूह के निकट सम्पर्क में आ असहभागिक अवलोकन में अध्ययनकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह या लोगों के सम्पर्क में नहीं आता, उस समूह का सदस्य नहीं बन जाता। वह तो एक दर्शक के घटनाओं का निरीक्षण कर तथ्य एकत्रित करता है। तथ्य संकलन की यह प्रविधि अवलोकन अधिक विश्वसनीय और निर्भर योग्य है।

(2) साक्षात्कार (Interview)—इसमें अध्ययन-विषय से सम्बन्धित विभिन्न व्यक्ति सीधा सम्पर्क स्थापित कर बातचीत की जाती और अध्ययन हेतु आवश्यक सामग्री एक की जाती है। इस विधि को साक्षात्कार विधि के नाम से पुकारते हैं। इसमें अध्ययन अनुसूची या साक्षात्कार प्रदर्शिका (Interview Guide) की सहायता ले सकता है। वह तो मुक्त वार्तालाप के माध्यम से भी तथ्य संकलित कर सकता है। घटना या विषय से हुए लोग साक्षात्कार के माध्यम से विश्वसनीय एवं निर्भर योग्य सूचनाएं (तथ्य) दे है, फिर भी साक्षात्कारकर्ता द्वारा बीच-बीच में ऐसे प्रश्न पूछे जा सकते हैं जिनकी सहा से एकत्रित सामग्री की जांच की जा सके।

(3) अनुसूची (Schedule)—अनुसूची प्रश्नों की एक सूची होती है जिसे अनुसन्धानक स्वयं या उसके प्रगणक क्षेत्र में जाकर सूचनादाताओ से प्रश्न पूछकर उत्तरों को भरते इस विधि में अनुसन्धानकर्ता तथा सूचनादाताओ के बीच अनुसूची के माध्यम से प्रत्यक्ष सम्प स्थापित हो जाता है। इस विधि की सहायता से अशिक्षित व्यक्तियों से भी सूचनाएं सुगम से प्राप्त कर ली जाती है। यह सूचना-प्राप्ति का काफी विश्वसनीय स्रोत है। इस विधि सहायता से अध्ययन का एक प्रमुख लाभ यह है कि अनुसन्धानकर्ता को घटनाओं अवलोकन करने का अवसर भी प्राप्त हो जाता है।

(4) प्रश्नावली (Questionnaire)—यद्यपि प्रश्नावली की सहायता से प्राथमिक त संकलित किये जाते है, परन्तु फिर भी यह सूचना-प्राप्ति का प्रत्यक्ष स्रोत नही होकर अप्रत्य स्रोत है। इस विधि द्वारा अध्ययन में अनुसन्धानकर्ता तथा सूचनादाता में प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापि नही होकर अप्रत्यक्ष सम्बन्ध रहता है। प्रश्नावली अनुसन्धानकर्ता द्वारा तैयार की गयी प्रश्न की एक सूची होती है जिसे वह उत्तरदाता के पास डाक द्वारा इस अनुरोध के साथ भेजता है कि इसे भरकर समय पर अवश्य लौटाये। इस विधि का प्रयोग उस दशा मे किया जाता है जब अध्ययन-क्षेत्र या समग्र इतना विस्तृत हो कि सभी सूचनादाताओ से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर तथ्य संकलित करना सम्भव नही हो। इसके अलावा इस विधि का प्रयोग ऐसे उत्तरदाताओ के लिए ही किया जा सकता है जो शिक्षित हों, जो स्वयं प्रश्नों को समझकर बिना अनुसन्धानकर्ता की सहायता के उत्तर दे सकें। इस विधि द्वारा अध्ययन का लाभ यह है कि इसमें समय एवं धन की काफी बचत होती है। इस विधि का एक प्रमुख दोष यह है कि इसमें प्राप्त उत्तरों का सत्यापन कठिन रहता है।

प्राथमिक स्रोतों के गुण (Merits of Primary Sources)

तथ्य-संकलन के प्राथमिक स्रोतो के गुण या लाभ अग्र प्रकार है :

(1) इस प्रकार के स्रोत द्वारा तथ्य-संकलन हेतु प्रयुक्त **अध्ययन में लचीलेपन का गुण** पाया जाता है। अध्ययनकर्ता परिस्थितियो के अनुसार अध्ययन प्रविधि में परिवर्तन कर सकता है, प्रश्नावली में प्रश्नों को वदल सकता है, यदि अध्ययनकर्ता यह महसूस करता है कि विषय के किसी विशेष पक्ष से सम्वन्धित तथ्य उपलब्ध नहीं हो रहे हैं तो वह अध्ययन-प्रविधियों में संशोधन कर सकता है ताकि आवश्यक सूचनाएं प्राप्त हो सके।

(2) प्राथमिक स्रोत **व्यापक क्षेत्र के अध्ययन के लिए उपयुक्त** हैं। यहां विस्तृत क्षेत्र में फैले सूचनादाताओं का अध्ययन कर तथ्य एकत्रित करना सम्भव है। प्रश्नावली विधि की सहायता से यह कार्य सुगमता से किया जा सकता है। इस विधि के द्वारा ऐसे उत्तर भी प्राप्त हो जाते हैं जो आमने-सामने की स्थिति मे सम्भव नही हैं।

(3) प्राथमिक स्रोत द्वारा संकलित **तथ्य अधिक यथार्थ एवं विश्वसनीय** होते हैं। अनुसन्धान-कर्ता की स्वयं की उपस्थिति के कारण सूचनादाताओ पर सामान्यतः नियन्त्रण रहता है और वे गलत सूचनाएं नहीं दे पाते। यहां प्राप्त सूचनाओं के सत्यापन की सम्भावना भी रहती है। अध्ययनकर्ता चूंकि क्षेत्र में मौजूद होता है, अतः वह जो कुछ देखता व सुनता है, वही नोट करता है। इससे सामग्री के विकृत होने की सामान्यतः सम्भावना नहीं रहती।

(4) प्राथमिक स्रोत से **आन्तरिक व गुप्त सूचनाओं का संकलन सम्भव** हो पाता है। अध्ययनकर्ता अवलोकन विधि और विशेषतः सहभागिक अवलोकन की सहायता से उस समूह या समुदाय का अभिन्न अंग बन जाता है जिसका उसे अध्ययन करना है। ऐसी स्थिति में वह अनेक महत्वपूर्ण सूचनाओं को एकत्रित कर पाता है। द्वैतीयक स्रोतों से इस प्रकार की सूचनाएं प्राप्त करना सम्भव नहीं है।

(5) प्राथमिक स्रोत से संकलित सामग्री की सहायता से **प्रामाणिक निष्कर्षों तक पहुंचना सम्भव** रहता है। चूकि प्राप्त सामग्री या तथ्य, अनुसन्धानकर्ता के स्वयं के अध्ययन-क्षेत्र में उपस्थित रहने के कारण, अधिक निर्भर-योग्य एवं विश्वसनीय होते हैं, अतः इनके आधार पर प्राप्त निष्कर्षों के प्रामाणिक होने की काफी सम्भावना रहती है।

(6) प्राथमिक स्रोत द्वारा तथ्य-संकलन मे **समय व धन की काफी बचत** होती है। इसका कारण यह है कि अध्ययनकर्ता जब स्वयं क्षेत्र में उपस्थित होता है तो वह साक्षात्कार विधि के साथ-साथ अवलोकन विधि का भी सहारा ले सकता है और एक साथ कई प्रकार के तथ्य एकत्रित कर सकता है। इस स्रोत द्वारा **तथ्य-संकलन का कार्य तुलनात्मक दृष्टि से सरल है।**

प्राथमिक स्रोतों के दोष (Demerits of Primary Sources)

प्राथमिक स्रोतों द्वारा तथ्य-संकलन के निम्नलिखित दोष हैं :

(1) प्राथमिक स्रोतों द्वारा तथ्य-संकलन में **पक्षपात व मिथ्या-झुकाव की काफी सम्भावना** रहती है। इसका कारण यह है कि इस प्रकार के अध्ययन में शोधकर्ता की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रहती है। यदि वह अपने स्वयं के विचारों एवं पूर्वाग्रहों पर नियन्त्रण पाने में असमर्थ रहता है तो वह तथ्य संकलन की किसी भी विधि का यथार्थता के साथ उपयोग नहीं कर सकता है। ऐसी स्थिति में अध्ययन पक्षपातपूर्ण हो जाता है।

(2) प्राथमिक स्रोत द्वारा तथ्य-संकलन में एक कठिनाई यह आती है कि शोधकर्ता कई बार सुविधानुसार तथ्य-संकलित कर लेता है, कई तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर ग्रहण कर लेता है। परिणामस्वरूप अध्ययन में वस्तुनिष्ठता में कमी आ जाती है।

(3) चूकि प्राथमिक स्रोत द्वारा तथ्य-संकलन के कार्य में अध्ययनकर्ता स्वयं लगा होता है, अतः वह सूचनादाताओं को समय-समय पर सूचनाएं प्रदान करने की दृष्टि से कई सुझाव

दे देता है। ये सुझाव अध्ययनकर्ता के कार्य को तो सरल बनाते हैं परन्तु इससे तथ्यों की **स्वाभाविकता के नष्ट हो जाने का खतरा** रहता है।

(4) इस स्रोत द्वारा वर्तमान से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन ही सम्भव है क्योंकि इसमें जीवित लोगो से ही सूचनाएं एकत्रित की जाती हैं। इस स्रोत की सहायता से **अतीत की घटनाओ का अध्ययन या ऐतिहासिक विधि द्वारा अध्ययन सम्भव नहीं है।**

(5) प्राथमिक स्रोत द्वारा तथ्य-संकलन के लिए यह आवश्यक है कि अनुसन्धानकर्ता अपने कार्य मे पूर्णतः कुशल हो, प्रशिक्षित हो। अक्सर यह देखा जाता है कि **अध्ययनकर्ताओं में प्रशिक्षण का अभाव** होता है। परिणामस्वरूप शोधकार्य की सफलता सन्दिग्ध रहती है।

(6) प्राथमिक स्रोत द्वारा तथ्य-संकलन में सापेक्ष दृष्टि से **अधिक मानवशक्ति एवं समय की आवश्यकता** पड़ती है। वैयक्तिक स्तर पर किये जाने वाले अध्ययनों मे प्राथमिक स्रोत द्वारा सामग्री संकलित करना साधनों की सीमितता के कारण और भी कठिन है।

(II) **द्वैतीयक स्रोत** (Secondary Source)

द्वैतीयक तथ्यों या सामग्री को जिन स्रोतों से प्राप्त किया जाता है, उन्हें तथ्य-संकलन के द्वैतीयक स्रोत कहते हैं। **जॉन मेज** के अनुसार, "द्वैतीयक स्रोतों का निर्माण कही सुनी बातों एवं अप्रत्यक्ष दर्शकों के आधार पर होता है।"[1] **श्रीमती पी. वी. यंग** ने लिखा है, "इन तथ्यों (द्वैतीयक) का उपयोग करने वाले एवं इन्हें प्रथम बार एकत्रित करने वाले लोग पृथक्-पृथक् होते है।"[2] **प्रो. पी. एच. मान.** के अनुसार, "ये द्वैतीयक स्तर पर प्राप्त किये गये तथ्य होते है, यानि कि ये प्रथम बार एकत्रित किये हुए तथ्य नही होते बल्कि अन्य व्यक्तियो द्वारा एकत्रित मूल तथ्यों के आधार पर रचित तथ्य होते है।"[3] स्पष्ट है कि द्वैतीयक सामग्री तथ्य संकलन की ऐसी सामग्री है जिसका प्रथम बार संकलन करने वाले लोग अब शोधकार्य के लिए इसका उपयोग करने वाले लोगों से भिन्न थे।

द्वैतीयक स्रोतों से कई बार सुगमता से ऐसी महत्वपूर्ण सूचनाएं मिल जाती है जो प्राथमिक स्रोतों से भी नहीं मिल पाती है। सामाजिक शोध में द्वैतीयक स्रोतों का प्राथमिक स्रोतो की तुलना मे कम महत्व नहीं है। प्राथमिक तथ्यो की सत्यता का पता लगाने के लिए द्वैतीयक स्रोतों द्वारा प्राप्त तथ्यों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। द्वैतीयक स्रोत अध्ययन की प्रारम्भिक पृष्ठभूमि निर्मित करने एवं अध्ययन की दिशा तय करने में उपयोगी भूमिका निभाते है।

तथ्य संकलन के द्वैतीयक स्रोतों को प्रमुखतः दो भागों में विभाजित किया जाता है : प्रथम, **व्यक्तिगत प्रलेख** (Personal Documents) तथा द्वितीय, **सार्वजनिक प्रलेख** (Public Documents)। इन पर विचार करने से यह स्वतः ही स्पष्ट हो जायेगा कि शोधकर्ता किन-किन स्रोतो से द्वैतीयक तथ्य एकत्रित कर अपने अध्ययन हेतु उपयोग में ले सकता है।

(I) **व्यक्तिगत प्रलेख** (Personal Documents)

व्यक्तिगत प्रलेख के अन्तर्गत वह सम्पूर्ण लिखित सामग्री आ जाती है जो एक व्यक्ति अपने स्वयं के बारे में या सामाजिक घटनाओं को एक विशेष दृष्टिकोण से देख-समझकर प्रस्तुत करता है। व्यक्तिगत प्रलेखों में व्यक्ति के विचारों, भावनाओं, आदर्शों, आदि का समावेश भी हो सकता है। व्यक्तिगत प्रलेखों के रूप में उपलब्ध लिखित सामग्री प्रकाशित

1 J. Madge, *The Tools of Social Science*, p. 91.
2 P. V. Young, *op cit.*, p. 136
3 P. H. Mann, *op. cit*, p. 56.

और अप्रकाशित दोनों ही रूपों में हो सकती है। व्यक्तिगत प्रलेख का अर्थ स्पष्ट करते हुए **जान मेज** ने लिखा है, "अपने संकुचित अर्थ मे, व्यक्तिगत प्रलेख किसी व्यक्ति के द्वारा उसकी स्वय की क्रियाओं, अनुभवों एवं विश्वासों के वारे में स्वयं द्वारा लिखा गया एक विवरण है।"[1] **जहोदा एवं उनके सहयोगी लेखकों** के अनुसार, "व्यक्तिगत प्रलेखों के अन्तर्गत उन सभी प्रलेखों को सम्मिलित किया जाता है जो सामान्यतः सूचनादाताओं के व्यक्तिगत जीवन के आधार पर स्वयं उन्हीं के द्वारा लिखे होते है एवं जिनमें उनके स्वयं के अनुभव शामिल होते है।"[2]

व्यक्तिगत प्रलेख व्यक्तियों, एक समय विशेष की परिस्थितियों एवं भूतकाल में घटित सामाजिक घटनाओं को ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में समझने मे योग देते है। यद्यपि व्यक्तिगत प्रलेख व्यक्तिपरक होते हैं परन्तु फिर भी सामाजिक शोध में इनकी काफी उपयोगिता है। ये सामाजिक प्रक्रियाओं को समझने हेतु आवश्यक सामग्री प्रदान करते है। इनकी इस दृष्टि से काफी महत्ता है कि इनके आधार पर एक विशिष्ट समय मे लोगों के रहन-सहन, खान-पान, व्यवहार-प्रतिमान, सामाजिक आदर्श-नियम, आदि का पता चलता है। पत्र, डायरी, जीवन-इतिहास एवं संस्मरण व्यक्तिगत प्रलेखों के अन्तर्गत आते है। यहां अव हम इन्ही पर विचार करेंगे।

(1) **पत्र** (Letters)—सामान्य व्यक्ति अपने जीवन में कई पत्र लिखता है यद्यपि अधिकांशतः पत्र वैयक्तिक होते है, परन्तु फिर भी ये महत्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत करते है। अध्ययन की दृष्टि से इतिहासकारों एवं जीवन-लेखकों द्वारा पत्रो का विशेष उपयोग किया गया है। थॉमस एवं नैनकि द्वारा पोलैण्ड के कृषकों के अपने अध्ययन मे सर्वप्रथम पत्रो को काम मे लिया गया। व्यक्तिगत पत्र अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण सामग्री प्रदान करते है। इनसे पत्र लिखने वालों के विचारों एवं दृष्टिकोणों को समझने में मदद मिलती है। पत्र अपने निकट के व्यक्तियों को लिखे जाते है। अतः इनमें व्यक्ति महत्वपूर्ण विचारों, भावनाओ, जीवन की प्रमुख घटनाओ, अनुभवों, प्रेम, घृणा, अपनी योजनाओ, आदि को व्यक्त करता है। पत्रों में राजनीतिक घटनाओं एवं सामाजिक जीवन का विवरण मिलता है। जीवन के अन्तरंग पक्षों से सम्वन्धित बातें पत्रों मे लिखी होती हैं। पारिवारिक तनाव, वैवाहिक सम्वन्ध, यौनिक असन्तुलन, पृथक्करण, विवाह-विच्छेद, आदि से सम्वन्धित महत्वपूर्ण बातो का पता पत्रों के माध्यम से सुगमता से चल जाता है। पत्र चूंकि व्यक्तिगत और गोपनीय होते है, अतः इनसे यथार्थ एवं विश्वसनीय सामग्री मिल पाती है।

अध्ययन की दृष्टि से पत्रों की उपयोगिता सीमित ही है। इसका कारण यह है कि एक तो व्यक्तिगत होने के कारण इन्हें प्राप्त करना कठिन है। दूसरा, पत्रो में पूर्ण सन्दर्भ-सहित घटनाओं का विवरण नहीं मिलता है तथा साथ ही घटनाओं के वर्णन मे क्रमवद्धता की कमी पायी जाती है। तीसरा, पत्रों में अपूर्ण सूचनाएं मिलती है जिनके आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना कठिन है। चतुर्थ, यदि पत्र लिखने का उद्देश्य कोई प्रचार कार्य रहा है तो उनमे वर्णित बातों की यथार्थता ज्ञात करना कठिन हो जाता है। अतः पत्रों द्वारा संकलित सामग्री में अभिनति व पक्षपात का दोष पाया जाता है।

(2) **डायरी** (Diary)—कई लोग अपने दिन-प्रतिदिन की घटनाओं को डायरी के रूप में लिखते हैं। चूंकि डायरी एक पूर्णतः गोपनीय दस्तावेज है, अतः व्यक्ति के जीवन की

1 J. Madge, *op. cit.*, p. 93
2 Jahoda and others, *Research Methods in Social Relations*, pp. 323-324.

रहस्यमयी बातों का पता लगाने का यह एक विश्वसनीय स्रोत है। जॉन मेज ने लिखा "डायरियां सबसे ज्यादा रहस्योद्घाटन करने वाली होती है क्योंकि एक ओर व्यक्ति इनका जनता के सामने प्रदर्शित होने का भय नहीं होता एवं दूसरी ओर ... क्रियाओं के घटित एवं सम्पन्न होने के समय ही उनको बहुत स्पष्ट रूप में लिख दिया है।"[1] मेज के इस कथन से सामाजिक अनुसन्धान में डायरी का तथ्य-संकलन के स्रोत रूप मे महत्व स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है। इससे गोपनीय तथ्य प्राप्त होते है जो ... से अधिक विश्वसनीय होते है क्योकि लेखक डायरी में घटनाओं का यथार्थ चित्रण करता है। वह प्रदर्शन या प्रकाशन के उद्देश्य से डायरी नही लिखता है। महापुरुषों के कार्यो, यात्रा-वर्णन, जेल जीवन का वृत्तान्त, युद्ध या किसी अन्य असाधारण घटना के संस्मरण के रूप में लिखी गयी डायरियां शोध-कार्य में काफी सहायक होती है। डायरियो द्वारा सही सूचनाएं मिल पाती है क्योकि इनमें सामान्यत: घटनाओं को तोड़-मरोड़ कर प्रस्तुत नही किया जाता। गोपनीय एव विश्वसनीय तथ्यो को प्राप्त करने का यह एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

यद्यपि सामाजिक शोध में डायरी की काफी उपयोगिता है, परन्तु फिर भी इसकी कुछ सीमाएं है, कुछ दोष है। **आलपोर्ट** ने लिखा है, "डायरियों में घटनाओं को पूरी तरह स्वीकार करके चला जाता तथा अक्सर उन व्यक्तियों या दशाओ का विवरण भुला दिया जाता है जिनके अस्तित्व व चरित्र के बारे में डायरी के लेखक को अनुमान मात्र होता है।"[2] जान **मेज** ने बताया है, "डायरियां जीवन के नाटकीय एव संघर्षात्मक पक्षों का तो बढ़ा-चढ़ा कर वर्णन कर सकती है परन्तु कई महीनो के शान्तिपूर्ण एवं सुखद क्षणों को इनमे उचित मात्रा में स्थान नही दिया जाता है।"[3] इन कमियों के अलावा डायरियों द्वारा तथ्य-संकलन के कुछ अन्य दोष इस प्रकार है। इनमें घटनाओं का क्रमवद्ध विवरण नहीं मिलता है। यदि डायरी को प्रकाशित कराने की लेखक की तनिक-सी अप्रकट इच्छा भी है तो उसमें कल्पनाशीलता एवं घटनाओ को बढ़ा-चढ़ा कर लिखने का भाव आ जाता है। ऐसी स्थिति में डायरियों के माध्यम से प्राप्त तथ्यों के आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना कठिन है।

(3) **जीवन-इतिहास** (Life History)—तथ्य-संकलन के द्वैतीयक स्रोत के रूप मे जीवन-इतिहास का काफी महत्व है। **जॉन मेज** ने लिखा है, "वास्तविक अर्थ में जीवन-इतिहास का तात्पर्य किसी विस्तृत आत्म-कथा से होता है। सामान्य अर्थो में इसका प्रयोग किसी भी जीवन सम्बन्धी सामग्री के लिए किया जा सकता है।"[4] अन्य शब्दों मे हम कह सकते हैं कि जीवन-इतिहास का तात्पर्य किसी भी प्रकार की जीवन-सम्बन्धी सामग्री से है। जीवन-इतिहास के प्रमुखतः दो रूप देखने को मिलते है : प्रथम, **आत्मकथा** (Autobiography) जिसे व्यक्ति अपने सम्बन्ध में स्वय लिखता है, तथा द्वितीय, **जीवन-चरित्र** (Biography) जिसे कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति की जीवन-सम्बन्धी घटनाओं के बारे में लिखता है। साधारणतः प्रसिद्धि-प्राप्त व्यक्तियो के जीवन-चरित्र ही लिखे जाते है।

जीवन-इतिहास आत्मकथा के रूप मे स्वयं द्वारा भी लिखा जा सकता है और किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा भी। ये दोनों ही द्वैतीयक तथ्य-सकलन के प्रमुख स्रोत हैं। किसी महापुरुष के जीवन-इतिहास से उसके समय की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं विभिन्न

1 John, Madge, *op cit*, p 87.
2 Allport, Gordon W, *The Use of Personal Document in Psychological Research*, p. 98
3 John Madge, *op cit.*, p. 87.
4 Madge, *Ibid*, p. 82.

संस्कार की घटनाओं को समझने मे सहायता मिलती है। जीवन-इतिहासों से एक विशेष काल की सामाजिक परिस्थितियों एवं समस्याओं को भली प्रकार से समझा जा सकता है। भारत के समाज-सुधारकों के जीवन-इतिहास से हिन्दू-समाज और उसमें व्याप्त कुरीतियों को समझने और उनसे सम्बन्धित अध्ययन करने में काफी मदद मिली है।

जीवन-इतिहासों के उपयोग की कुछ सीमाएं भी है। प्रथम, इनमें वस्तुनिष्ठता का अभाव पाया जाता है। आत्मकथाएं लिखने वाले अधिकांशतः यह जानते है कि उनका प्रकाशन होगा, अतः वे उनके दुर्बल पक्षों को कई बार छिपा जाते हैं, परिस्थितियों व घटनाओ का यथार्थ चित्रण नही कर पाते। इससे आत्मकथाओ द्वारा प्राप्त सामग्री की वस्तुनिष्ठता एवं विश्वसनीयता कम हो जाती है। द्वितीय, जीवन-इतिहासों से संकलित तथ्यों की जांच करना सम्भव नही होता है। तृतीय, जीवन-इतिहासों में व्यक्ति के व्यक्तित्व को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किया जाता है। जीवन-चरित्र लिखने वाले, किसी नेता या महापुरुष की प्रशंसा मे घटनाओ को बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत करते है। चतुर्थ, लेखक जिन घटनाओ को अपनी दृष्टि से महत्वपूर्ण समझते हैं, उन्हें बढा-चढ़ा कर और शेष को या तो अति सक्षिप्त में प्रस्तुत करते या छोड़ देते हैं। जो बातें उनके सम्मान की दृष्टि से अरुचिकर होती है, उन्हे वे स्थान नहीं देते हैं। इससे वास्तविक स्थिति का पता नहीं चल पाता है। ऐसी सामग्री के आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना बहुत कठिन है।

(4) **संस्मरण** (Memories)—कई लोग अपनी यात्राओ, जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं एवं रोमांचकारी अनुभवों को संस्मरण के रूप में लिखते हैं, या इन्हे समय-समय पर अन्य व्यक्तियों को सुनाते हैं। ये संस्मरण न केवल व्यक्ति के जीवन-अनुभवों का लेखा-जोखा ही प्रस्तुत करते है बल्कि काल विशेष के समाज की दशाओं का चित्रण भी करते है। यात्राओं व महत्वपूर्ण घटनाओं के संस्मरण लिखने का प्रचलन प्राचीनकाल से ही चला आ रहा है। उदाहरण के रूप में, कोलम्बस, फाह्यान, ह्वेनसांग एवं मैगस्थनीज ने काफी उपयोगी संस्मरण लिखे। ब्रिटिश शासन-काल में कई अधिकारियों के द्वारा ऐतिहासिक पद्धति के आधार पर 'जनपद संस्मरण' लिखे गये। इन संस्मरणो से एक काल विशेष की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक दशाओं का पता चलता है। इनसे लोगों के रहन-सहन, रीति-रिवाजो, धर्म, भाषा एवं सम्पूर्ण जीवन-विधि अर्थात् संस्कृति को समझने में मदद मिलती है। संस्मरणों की सहायता से तथ्य संकलन की कमी यह है कि इनमें क्रमबद्धता एवं वस्तुनिष्ठता का अभाव पाया जाता है। फिर भी तथ्य-संकलन के द्वैतीयक स्रोत के रूप में इनकी उपयोगिता है।

व्यक्तिगत प्रलेखों की उपयोगिता (Value of Personal Documents)—सामाजिक अनुसन्धान मे व्यक्तिगत प्रलेखों का काफी महत्व है। मनोवैज्ञानिक शोध में तो इनकी विशेष उपयोगिता है क्योंकि इनसे व्यक्तियों की मनोवृत्तियो व दृष्टिकोणो को समझने में मदद मिलती है। सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में ये प्रलेख विस्तृत जानकारी प्रदान करते हैं। यदि पत्र, डायरियां, जीवन-इतिहास एवं संस्मरण प्रकाशन के उद्देश्य से नहीं लिखे गये हैं तो उनकी विश्वसनीयता व वस्तुनिष्ठता काफी बढ जाती है। मोजर ने लिखा है, "व्यक्तिगत प्रलेख उस समय ज्यादा महत्वपूर्ण बन जाते हैं जब ये सम्बन्धित व्यक्ति को बिना अनुरोध के प्राप्त हो जाएं। कुछ विशिष्ट सर्वेक्षणों मे ये (व्यक्तिगत प्रलेख) प्रारम्भिक खोज के स्तर पर प्राक्कल्पना का निर्माण करने और अध्ययन कार्य को आगे बढ़ाने के लिए शोधकर्ता के लिए पृष्ठभूमि तैयार करने में महत्वपूर्ण हो सकते है।"[1] जहोदा एवं उनके सहयोगियों ने

1. C.A. Moser, Survey Methods in Social Investigation, p. 166.

बताया है, "साधारणतः व्यक्तिगत प्रलेखों की उपयोगिता अवलोकन विधियो की उपयो के समान है। बाह्य व्यवहार के अध्ययन में अवलोकन विधियों के प्रयोग से जो कुछ किया जा सकता है, वही सब आन्तरिक अनुभवों के अध्ययन में पत्रों के माध्यम कर सकते है।"[1]

स्पष्ट है कि जिस प्रकार कोई अवलोकनकर्ता अपनी सहभागिता के आधार पर समूह का गहराई के साथ अध्ययन कर सकता है, उसी प्रकार सामाजिक शोधकर्ता को व अन्य व्यक्तिगत प्रलेखों के माध्यम से किसी घटना या दशा से सम्बन्धित आन्तरिक का पता चल जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्तिगत प्रलेख अध्ययन के लि उपयोगी आधार प्रदान करने में महत्वपूर्ण योग देते हैं।

व्यक्तिगत प्रलेखो की सीमाएं (Limitations of Personal Documents)—व्यक्ति प्रलेखो के उपयोग की निम्नलिखित सीमाएं है :

(1) व्यक्तिगत प्रलेखो को प्राप्त करना बहुत कठिन है। यह पता लगाना आसान है कि कौन से प्रलेख कहां से प्राप्त होंगे, वे किसके पास हैं। यदि यह पता चल भी जाय भी यह आवश्यक नही है कि वे शोध-कार्य के लिए मिल ही जायेंगे।

(2) व्यक्तिगत प्रलेखो की एक सीमा इनकी प्रामाणिकता का पता लगाने की है, इन सत्यता की जांच करने की है। कई व्यक्तिगत प्रलेख कई बार अतिशयोक्तिपूर्ण होते हैं अर उनमें घटनाओं या व्यक्तिगत अनुभवों को बढ़ा-चढ़ा कर चित्रित किया जाता है। फिर ज्ञात करना और भी कठिन है कि कौनसा व्यक्तिगत प्रलेख कितना सही है और कित गलत है।

(3) व्यक्तिगत प्रलेखों की एक सीमा यह है कि इनके आधार पर वैज्ञानिक सामान्यीक निकालना काफी कठिन है। इसका कारण यह है कि व्यक्तिगत प्रलेख व्यक्ति-विशेष के विच एवं दृष्टिकोण का परिचायक होता है। वह डायरी, पत्र, संस्मरण या आत्मकथा मे कि समूह, समाज, सामाजिक घटना, सामाजिक समस्या, आदि के सम्बन्ध में जो कुछ लिख है, क्या वह सम्पूर्ण समूह या समाज का प्रतिनिधित्व करता है। क्या ऐसे प्रलेख के आ पर निष्कर्ष निकालना वैज्ञानिक दृष्टि से उचित है।

(4) व्यक्तिगत प्रलेखो के आधार पर प्राप्त सामग्री का सांख्यिकीय विश्लेषण करना सामान्यतः सम्भव नहीं है। जहोदा एवं उनके सहयोगियों ने लिखा है, "व्यक्तिगत प्र साख्यिकीय प्रविधियो की सहायता से उपयोग मे लाये जाने के लिए ज्यादा उपयुक्त होते।"[2]

(5) कई व्यक्तिगत प्रलेखो में व्यक्तिगत पक्षपात (अभिनति) काफी मात्रा में प जाता है जो शोध-सामग्री के रूप मे उनकी उपयोगिता पर प्रश्न-चिह्न लगा देता है।

इन सीमाओ को ध्यान में रखते हुए शोधकर्ता को व्यक्तिगत प्रलेखों का उपय सावधानीपूर्वक करना चाहिए ताकि अध्ययन की वस्तुनिष्ठता बनी रह सके।

(II) सार्वजनिक प्रलेख (Public Documents)

सामग्री संकलन के द्वैतीयक स्रोत के रूप में सार्वजनिक प्रलेख का काफी महत्व किसी सार्वजनिक हित को ध्यान में रखकर सरकारी या गैर-सरकारी संस्था के द्वारा सार्वजनि

1 Jahoda and others, *op cit.*, p 325.
Ibid, p 327

लेख तैयार कराये जाते हैं। कभी व्यक्तिगत स्तर पर भी तथ्य संकलित किये जाते हैं और यदि उन्हें सार्वजनिक उपयोग के लिए काम में लाया जाता हो तो ऐसी सामग्री भी सार्वजनिक प्रलेख के अन्तर्गत ही आती है। सार्वजनिक प्रलेख व्यक्तिगत प्रलेख की तुलना में अधिक विस्तृत एवं व्यापक जानकारी प्रदान करने वाले और अधिक विश्वसनीय होते हैं। ये प्राय: व्यक्तिगत पक्षपात से मुक्त होते हैं। सार्वजनिक प्रलेखों को प्रमुखत: दो भागों में विभाजित किया जाता है, प्रथम, **प्रकाशित प्रलेख** तथा द्वितीय, **अप्रकाशित प्रलेख**।

(1) **प्रकाशित प्रलेख** (Published Documents)—सरकारी व गैर-सरकारी संगठनों द्वारा समय-समय पर कई तथ्य प्राथमिक रूप से संकलित कराये जाते हैं जिन्हें सार्वजनिक उपयोग हेतु प्रकाशित करा दिया जाता है। जब इन तथ्यों (सामग्री) का अन्य अनुसन्धान-कर्ताओं द्वारा उपयोग किया जाता है तो उनके लिए ये तथ्य प्रकाशित प्रलेखों के रूप में तथ्य-संकलन का द्वैतीयक स्रोत बन जाते हैं। यहां हम कुछ प्रमुख प्रकाशित सार्वजनिक प्रलेखों का उल्लेख करेंगे।

(i) **शोध-संस्थानों के प्रतिवेदन**—विभिन्न शोध-संस्थान अपने शोध-कार्यों का विवरण प्रस्तुत करने हेतु समय-समय पर प्रतिवेदन प्रकाशित कराते है। यह सामग्री अन्य शोधकर्ताओं के लिए काफी उपयोगी प्रमाणित होती है। टाटा समाज विज्ञान संस्थान, जनजातीय अनुसन्धान संस्थान, राष्ट्रीय शैक्षणिक शोध तथा प्रशिक्षण संस्थान, समाज-विज्ञान शोध परिषद् एवं राष्ट्रीय व्यावहारिक आर्थिक शोध परिषद् ने अपने प्रतिवेदनो का समय-समय पर प्रकाशन कराके महत्वपूर्ण शोध-सामग्री उपलब्ध करायी है।

(ii) **व्यक्तिगत शोधकर्ताओं के प्रकाशन**—अनेक शोध-छात्र विभिन्न क्षेत्रों में अपना शोध-कार्य सम्पन्न कर शोध-निबन्ध प्रकाशित कराते हैं। ये प्रकाशन भी सार्वजनिक प्रलेख के रूप मे द्वैतीयक सामग्री के प्रमुख स्रोत हैं।

(iii) **समितियों व आयोगों के प्रतिवेदन**—अनेक सरकारी व गैर-सरकारी समितियों तथा आयोगों द्वारा समय-समय पर अपने प्रतिवेदन प्रकाशित कराये जाते हैं। इन समितियों व आयोगों द्वारा कई प्रकार के तथ्य संकलित कराये जाते हैं, जैसे शिक्षा सम्बन्धी आंकड़े, अपराध सम्बन्धी आंकड़े, निर्धनता व बेकारी सम्बन्धी आंकड़े जिन्हे सार्वजनिक उपयोग हेतु प्रकाशित करा दिया जाता है। मद्य निषेध जांच समिति, राष्ट्रीय नियोजन समिति, योजना आयोग, आदि के द्वारा प्रकाशित प्रतिवेदन काफी उपयोगी सिद्ध हुए हैं। भारत में जनगणना प्रतिवदेन (Census Reports) द्वैतीयक सामग्री के प्रमुख स्रोत हैं। इनका अनेक समाजशास्त्रीय अध्ययनो में काफी उपयोग किया गया है। उदाहरण के रूप में, प्रो. आई. पी. देसाई द्वारा भारतीय संयुक्त परिवार सम्बन्धी अध्ययन जनगणना प्रतिवेदन पर ही आधारित है। भारत सरकार द्वारा प्रतिवर्ष प्रकाशित कराये जाने वाले ग्रन्थ 'भारत—1999', 'भारत—2000' द्वैतीयक तथ्य संकलन के प्रमुख स्रोत हैं।

(iv) **व्यावसायिक संस्थाओं एवं परिषदों के प्रकाशन**—राष्ट्रीय उत्पादन परिषद्, बाल-कल्याण परिषद्, सूती कपड़ा मिल मालिक संघ, आर्थिक व सांख्यिकी निदेशालय, कृषि विभाग, चैम्बर आफ कामर्स, आदि के प्रकाशन तथ्य-संकलन के महत्वपूर्ण द्वैतीयक स्रोत हैं।

(v) **अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के प्रकाशन**—संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक-वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक संगठन (UNESCO), विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO), अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO), अन्तर्राष्ट्रीय बाल सहायता कोष, आदि के द्वारा समय-समय पर प्रकाशित सामग्री तथ्य-संकलन का विश्वसनीय स्रोत है।

(vi) **पत्र-पत्रिकाएं**—विभिन्न शोध-पत्र समय-समय पर प्रकाशित होते रहते हैं। अनेक शोध पत्रिकाएं भी निकलती रहती हैं। इनके अलावा दिन-प्रतिदिन की घटनाओं का विवरण समाचार-पत्रों में प्रकाशित होता है, उनमें कई लेख व सम्पादकीय भी छपते रहते हैं। रेडियो व दूरदर्शन भी मूल्यवान् सामग्री उपलब्ध कराते हैं। यद्यपि जन-संचार के इन साधनों से महत्वपूर्ण तथ्य तो प्राप्त होते हैं, परन्तु शोध-कार्य हेतु इनका उपयोग बड़ी सावधानी के साथ किया जाना चाहिए। ऐसे तथ्यों की विश्वसनीयता का पता लगा लिया जाना चाहिए।

(2) **अप्रकाशित प्रलेख** (Unpublished Documents)—सरकारी व गैर सरकारी संगठनों द्वारा एकत्रित कुछ सामग्री उनकी गोपनीयता को बनाये रखने हेतु प्रकाशित नहीं करायी जाती, जबकि कुछ सामग्री आर्थिक या अन्य कारणों से प्रकाशित नहीं हो पाती। प्रतिरक्षा मन्त्रालय से सम्बन्धित महत्वपूर्ण दस्तावेजों की गोपनीयता बनाये रखने के उद्देश्य से ही उनका प्रकाशन नहीं कराया जाता। पुलिस विभाग, न्याय विभाग, सरकारी कार्यालयों आदि के द्वारा समय-समय पर कई महत्वपूर्ण सूचनाएं एकत्रित करायी जाती हैं। परन्तु उन्हें रिकार्ड या दस्तावेजों के रूप में ही सुरक्षित रखा जाता है, प्रकाशित नहीं कराया जाता। ऐसी सामग्री को अभिलेख कहा जाता है, ये अप्रकाशित दस्तावेज भी द्वैतीयक सामग्री के प्रमुख स्रोत हैं, यद्यपि इनका उपयोग करने के लिए आज्ञा प्राप्त करनी पड़ती है। अप्रकाशित प्रलेख के अन्तर्गत द्वैतीयक सामग्री के निम्नलिखित स्रोत आते हैं :

(i) **अभिलेख**—विभिन्न सरकारी और गैर-सरकारी कार्यालयों में उनकी आवश्यकतानुसार कई प्रकार के आंकड़े और सूचनाएं एकत्रित करके रखे जाते हैं। यह सम्पूर्ण सामग्री (अभिलेख) विभिन्न समितियों, संगठनों, आयोगों के प्रतिवेदनों व समय-समय पर आयोजित होने वाली बैठकों (मीटिंग्स) की कार्यवाहियों के रूप में होती है। यद्यपि यह सामग्री गोपनीय होती है, परन्तु साथ ही काफी विश्वसनीय भी होती है।

(ii) **अनुसन्धानकर्ताओं के प्रतिवेदन**—अनेक अनुसन्धानकर्ता शोध-कार्यों के आधार पर महत्वपूर्ण प्रतिवेदन तो तैयार कर लेते हैं, शोध-निबन्ध तो लिख लेते हैं, परन्तु उनमें से अधिकांश अप्रकाशित ही रह जाते हैं। ये भी सूचना-प्राप्ति एवं सामग्री के सत्यापन के प्रमुख स्रोत हैं।

(iii) **पांडुलिपियां**—कुछ महापुरुष, समाज-सुधारक, नेता एवं विभिन्न क्षेत्रों में ख्याति-प्राप्त व्यक्ति विभिन्न विषयों का गहन अध्ययन एवं तथ्य संकलन कर पांडुलिपियां तैयार करते हैं। वे किन्हीं कारणों से इन्हें प्रकाशित नहीं करा पाते। इनमें काफी उपयोगी सामग्री होती है। शोध हेतु इन पांडुलिपियों को प्राप्त करना काफी कठिन होता है। कई बार इन्हें संग्रहालयों में सुरक्षित रख दिया जाता है जहां इनका लाभ भी उठाया जा सकता है।

(iv) **अप्रकाशित लोक-गीत, लोक संस्कृति, शिला-लेख, लोकगाथाएं**—ये द्वैतीयक तथ्य-संकलन के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। मानवशास्त्रियों के द्वारा अनेक अध्ययनों में इनका काफी उपयोग किया गया है।

प्रलेखीय सामग्री के उपयोग सम्बन्धी समस्याएं
(PROBLEMS CONNECTED WITH USE OF DOCUMENTARY MATERIALS)

तथ्य-संकलन के द्वैतीयक स्रोत चाहे व्यक्तिगत प्रलेख के रूप में हों या सार्वजनिक प्रलेख के रूप में, चाहे वे प्रकाशित हों अथवा अप्रकाशित हों, परन्तु सामाजिक शोध की दृष्टि से उनकी काफी उपयोगिता है। कोई भी शोधकर्ता जब तक उसके अध्ययन-विषय से सम्बन्धित

द्वितीयक सामग्री का पूरी तरह अध्ययन नही कर लेता तब तक उसे अध्ययन हेतु आवश्यक आधार नही मिल पाता है, वह आवश्यक प्रश्नो एवं प्राक्कल्पनाओं की रचना नही कर पाता है, पूर्व में किये गये अध्ययनों (शोधों) को दोहराने की भूल से बच नहीं सकता है। अत: शोधकर्ता के लिए उपलब्ध द्वैतीयक सामग्री का पूरा-पूरा उपयोग करना नितान्त आवश्यक है। श्रीमती पी. वी. यंग[1] ने विश्वसनीय प्रलेखीय सामग्री के उपयोग के लाभ इस प्रकार बताये हैं : (i) इससे शोध-कार्य में अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती एवं सही प्रश्नो को पूछने में मदद मिलती है, (ii) इससे अध्ययन की विधियों का चयन करने मे मदद मिलती है, (iii) इससे प्राक्कल्पना के निर्माण एवं परीक्षण में मदद मिलती है, तथा (iv) इससे शोध-कार्य मे अनावश्यक पुनरावृत्ति से बचने में मदद मिलती है। यहां हमे इतना अवश्य ध्यान में रखना है कि द्वैतीयक सामग्री प्राथमिक सामग्री का स्थान तो नही ले सकती, परन्तु प्राथमिक सामग्री के पूरक के रूप में अवश्य काम कर सकती है। यह प्राथमिक स्रोत से प्राप्त तथ्यो के सत्यापन में योग दे सकती है।

थोमस ऐडिसन का यह कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आपने बताया है, "मै जब भी कोई खोज या अनुसन्धान करना चाहता हूं तब मै भूतकाल मे उसके सम्बन्ध में जो कुछ किया जा चुका है, उसे पढ़कर उसके पश्चात् अपना कार्य प्रारम्भ करना चाहता हूं।" इस कथन से द्वैतीयक सामग्री की उपयोगिता का पता चलता है।

द्वैतीयक सामग्री की सीमाओं का उल्लेख 'व्यक्तिगत प्रलेख' तथा 'सार्वजनिक प्रलेख' नामक शीर्षकों के अन्तर्गत पूर्व में किया जा चुका है, उन्हें यहां पुनः दोहराने की आवश्यकता नहीं है। यहां इतना बता देना ही उचित होगा कि द्वैतीयक सामग्री को काम में लेने से पूर्व उसकी विश्वसनीयता, उसके सही या गलत होने की जांच अवश्य कर लेनी चाहिए अन्यथा सम्पूर्ण शोध-कार्य निरर्थक हो सकता है। अतः काल्पनिक एवं अशुद्ध सामग्री से बचना चाहिए। द्वैतीयक स्रोतों से प्राप्त सामग्री को आधार-सामग्री नहीं मानकर पूरक सामग्री ही माना जाना चाहिए जिसका प्रयोग बहुत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। आधार सामग्री तो प्रमुखतः प्राथमिक स्रोतों से ही प्राप्त होती है।

प्रश्न

1. तथ्य संकलन के प्राथमिक स्रोतों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
2. तथ्य-संकलन के प्राथमिक स्रोतो को सक्षेप में समझाइए। (अजमेर, 1993)
3. तथ्य संकलन के द्वैतीयक स्रोतों पर प्रकाश डालिए। उनकी सीमाओं का उल्लेख कीजिए। (राजस्थान, 1998)
4. तथ्य सकलन के प्राथमिक एवं द्वैतीयक स्रोतों को स्पष्ट समझाइये।
5. प्राथमिक आकड़ों (समंकों) के महत्व की विवेचना कीजिए। (अजमेर, 1995; राजस्थान, 1996)
6. प्राथमिक तथा द्वैतीयक तथ्यों से आप क्या समझते है? प्राथमिक तथा द्वैतीयक तथ्यो के गुण-दोषों की विवेचना कीजिए। (अजमेर, 1997)
7. प्राथमिक तथ्यों से आप क्या समझते है? इसके स्रोतो की विवेचना कीजिए।

1 P. V. Young, *op cit.*, p. 139.

8 तथ्य का अर्थ समझाइए। तथ्य संकलन के प्राथमिक स्रोतों की विवेचना कीजिए। (अजमेर, 2000)

9 "सामान्यतः स्रोतों को प्रलेखीय तथा क्षेत्रीय स्रोतों के रूप में विभाजित किया जाता है" (पी. वी. यंग)। सूचना के इन दो स्रोतो का उल्लेख यंग द्वारा बताए गए रूप मे कीजिए। (राजस्थान, 1999)

10 प्राथमिक व द्वितीयक सामग्री में क्या अन्तर है? द्वितीयक सामग्री का संकलन कैसे किया जाता है? (राजस्थान, 2000)

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :
   (1) प्राथमिक तथ्य। (अजमेर, 1998)
   (2) द्वैतीयक तथ्यों के स्रोत बताइए। (अजमेर, 1999)
   (3) व्यक्तिगत प्रलेख।
   (4) तथ्य संकलन में जीवन इतिहास का महत्व। (अजमेर, 2000)
   (5) संस्मरण
   (6) तथ्यों के स्रोत। (अजमेर, 1998)
   (7) तथ्यो के प्रलेखीय स्रोत। (अजमेर, 1998)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नाकित वाक्यो के उत्तर हां अथवा नही में दीजिए :
   (i) शोधकर्ता द्वारा संकित तथ्य प्राथमिक तथ्य कहलाते है।
   (ii) अवलोकन तथ्य संकलन का द्वैतीयक स्रोत हैं।
   (iii) जीवन इतिहास तथ्य संकलन का द्वैतीयक स्रोत है।
   (iv) द्वैतीयक तथ्य वे हैं जिनका संकलन अन्य व्यक्तियों द्वारा किया जाता है किन्तु जिनका प्रयोग अनुसन्धानकर्ता अपने अध्ययन में करता है।
   (v) पत्र तथ्यो का प्राथमिक स्रोत है।
   (vi) साक्षात्कार द्वारा प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया जाता है।
   (vii) अनुसूची द्वारा एकत्रित तथ्य द्वैतीयक तथ्य है।
   (viii) सरकारी प्रतिवेदन तथ्यों का प्राथमिक स्रोत है।
2. निम्नाकित में से तथ्यो के प्राथमिक एवं द्वैतीयक स्रोत बताइए :
   (i) अवलोकन (ii) डायरी
   (iii) प्रश्नावली (iv) अनुसूची
   (v) जीवन इतिहास (vi) सार्वजनिक प्रलेख
   (vii) साक्षात्कार (viii) संस्मरण

   [उत्तर—1. हा—i, iii, iv, vi शेष सभी का उत्तर नही में होगा
   2. प्राथमिक स्रोत—i, iii, iv, vii शेष सभी द्वैतीयक स्रोत हैं।]

8

प्राक्कल्पना (उपकल्पना)

[HYPOTHESIS]

किसी भी अनुसन्धान और सर्वेक्षण की समस्या के चुनाव के बाद अनुसन्धानकर्ता समस्या के बारे में 'कार्य-कारण सम्बन्धों (Cause and effect relationship) का पूर्वानुमान लगा लेता है या पूर्व चिन्तन कर लेता है। यह पूर्व चिन्तन या पूर्वानुमान ही प्राक्कल्पना, परिकल्पना या उपकल्पना (Hypothesis) कहलाती है। उदाहरण के लिए, हम 'भारत में बढ़ती हुई अपराध-प्रवृत्ति' नामक समस्या का अध्ययन करना चाहते हैं। इस समस्या के कार्य-कारण सम्बन्धों के बारे में हम सामान्य ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर यह अनुमान लगाते है कि "**निर्धनता ही बढ़ती हुई अपराध-प्रवृत्ति के लिए प्रमुख कारण है।**" हमारा यह कथन ही हमारे अध्ययन विषय की प्राक्कल्पना कहलायेगी। हम अपने अध्ययन में यह देखने का प्रयास करेगे कि निर्धनता और अपराध के बीच क्या सम्बन्ध है? क्या हमारा पूर्वानुमान सही है अथवा नहीं ? यह कामचलाऊ अनुमान या पूर्व चिन्तन हमारे अध्ययन कार्य को आधार प्रदान करेगा और उसे आगे बढ़ायेगा। हमारे वास्तविक अध्ययन के बाद हमारी यह उपकल्पना या प्राक्कल्पना सही भी सिद्ध हो सकती है और गलत भी। हमारा उद्देश्य प्राक्कल्पना को सही साबित करना नहीं होता है, वरन् वास्तविक तथ्यों के आधार पर वैज्ञानिक सत्य को ढूढ़ना होता है। प्राक्कल्पना निर्माण का उद्देश्य तो विषय से सम्बन्धित तथ्यों को संकलित करना और शोधकर्ता का मार्गदर्शन करना तथा उसे अनिश्चय के अन्धकार में भटकने से रोकना है।

सामाजिक अनुसन्धान में प्राक्कल्पना की उपयोगिता को दर्शाते हुए **कोहेन तथा नागेल** लिखते हैं, "किसी भी गवेषणा में हम एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकते जब तक कि हम उसको जन्म देने वाली कठिनाइयों के सुझावात्मक स्पष्टीकरण अथवा समाधान से प्रारम्भ न करें। ऐसे प्रारम्भिक स्पष्टीकरण कुछ विषय-वस्तु द्वारा तथा हमारे पूर्व ज्ञान द्वारा हमें सुझाव प्रस्तुत करते है। जब वे प्रस्तावो के रूप में सूत्रबद्ध कर लिये जाते हैं, तो उन्हें प्राक्कल्पना कहा जाता है।" **गुडे एवं हाट** ने भी लिखा है, "प्राक्कल्पना अनुसन्धान और सिद्धान्त के बीच एक आवश्यक कड़ी है जो ज्ञान वृद्धि की खोज मे सहायक होती है।"[1] प्राक्कल्पना के निर्माण के अभाव में किसी भी प्रकार का प्रयोग एवं वैज्ञानिक अनुसन्धान असम्भव है।

स्पष्ट है कि प्राक्कल्पनाएं सिद्धान्त के क्षेत्रों में पाये जाने वाले ऐसे कथनों को कहते है जिन्हें परीक्षण की कसौटी पर कसा जा सकता है। एक प्राक्कल्पना दो या दो से अधिक

1 Goode and Hatt. *op. cit.*, p. 57.

चरों (variables) के बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों का अनुभवात्मक रूप से परीक्षण करने योग्य कथन है। प्राक्कल्पना एक तीक्ष्ण अनुमान है जिसका प्रतिपादन तथा अस्थायी स्वीकृति अवलोकित तथ्यों अथवा दशाओ की व्याख्या करने और अनुसन्धान का आगे मार्गदर्शन करने के लिए किया जाता है।[1] सामाजिक घटनाओं के अध्ययनों को वैज्ञानिक रूप प्रदान करने मे प्राक्कल्पना का निर्माण अति आवश्यक है। यह सफल अनुसन्धान की एक आवश्यक शर्त है। विभिन्न परिभाषाओ के आधार पर हम प्राक्कल्पना को और भी अधिक उत्तमता से समझ सकते है।

प्राक्कल्पना की परिभाषा एवं अर्थ (Definition and Meaning of Hypothesis)

विभिन्न विद्वानों ने प्राक्कल्पना को इस प्रकार परिभाषित किया है :

'वेबस्टर न्यू इण्टरनेशनल डिक्शनरी आफ दी इंगलिश लेगवेज' के अनुसार, "प्राक्कल्पना एक विचार, दशा या सिद्धान्त होती है जोकि सम्भवतः विना किसी विश्वास के मान ली जाती है जिससे कि उससे तार्किक परिणाम निकाले जा सकें और ज्ञात या निर्धारित किये जाने वाले तथ्यो की सहायता से इस विचार की सत्यता की जाच की जा सके।"[2]

• **लुण्डबर्ग** के अनुसार, "एक प्राक्कल्पना एक कामचलाऊ सामान्यीकरण है, जिसकी सत्यता की परीक्षा अभी बाकी है।"[3]

गुडे एवं हाट के अनुसार, "प्राक्कल्पना एक ऐसी मान्यता होती है जिसकी सत्यता सिद्ध करने के लिए उसका परीक्षण किया जा सकता है।"[4]

पी. वी. यंग के अनुसार, "एक कार्यवाहक विचार जो उपयोगी खोज का आधार बनता है, कार्यवाहक प्राक्कल्पना माना जाता है।"[5]

बोगार्डस के अनुसार, "एक प्राक्कल्पना एक प्रस्थापना (Proposition) है जिसका परीक्षण किया जाना है।"[6]

पीटर एच. मन्न के शब्दों में, "प्राक्कल्पना एक कामचलाऊ अनुमान है।"[7]

टाउन सैण्ड के अनुसार, "प्राक्कल्पना अनुसन्धान की समस्या के लिए सुझाया गया उत्तर है।"

एम. एच. गोपाल के अनुसार, "यह ज्ञात व प्राप्त तथ्यो के सामान्य अवलोकन पर आधारित एक कार्यकारी अस्थायी उपचार अथवा हल होती है जो कि कुछ विशेष घटनाओं को समझने व अन्य खोज मे मार्गदर्शन के लिए अपनायी जाती है।"[8]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि **प्राक्कल्पना एक ऐसा पूर्व विचार, निष्कर्ष, कथन, सामान्यीकरण, अमूर्तीकरण, अनुमान या प्रस्थापना है जिसे अनुसन्धानकर्ता अपनी शोध की**

1 C. V. Good and D. E. Scates, *Methods of Research*, p. 90
2 Webster's *New International Dictionary of the English Language*, 1956.
3 "A hypothesis is a tentative generalization, the validity of which remains to be tested." —Lundberg, G.A., *Social Research*, p. 9
4 "It (hypothesis) is a proposition which can be put to test to determine its validity." —Goode and Hatt. *op. cit.*, p. 56
5 "—a provisional central idea which becomes the basis for fruitful investigation is known as a working hypothesis." —P. V. Young, *op cit.*, p. 96
6 "A hypothesis is a proposition to be tested " —Bogardus, *Sociology*, p. 551
7 "The hypothesis is a tentative supposition." —Peter H. Mann, *Methods of Sociological Enquiry* p. 38
M. H. Gopal, *An Introduction to Research Procedure in Social Sciences*, p. 115.

समस्या हेतु निर्मित करता है और उसकी सत्यता की जांच करने के लिए आवश्यक सूचनाओ का संकलन करता है। एक प्राक्कल्पना विभिन्न चरों (variables) के बीच सम्बन्धों को स्थापित करती है। प्राक्कल्पना सामाजिक अनुसन्धान और खोज को आधार प्रदान करती है, नवीन ज्ञान प्राप्ति की प्रेरणा प्रदान करती है। प्राक्कल्पना की तुलना हम ध्रुव तारे या कुतुबनुमा से कर सकते है जो अध्ययनकर्ता का मार्गदर्शन करती है और उसे सही दिशा बताती है। प्राक्कल्पना के अभाव में अनुसन्धान के क्षेत्र में हम एक कदम भी आगे नही बढ़ सकते।

एक अच्छी प्राक्कल्पना की विशेषताएं
(QUALITIES OF A GOOD HYPOTHESIS)

प्राक्कल्पनाएं केवल ख्याली पुलाव तथा मीठे सपने नहीं होने चाहिए वरन् ऐसी होनी चाहिए जिनका प्रयोग हम अनुसन्धान मे कर सकें। एक उत्तम और उपयोगी प्राक्कल्पना में निम्नांकित विशेषताएं अथवा गुण होने चाहिए :

(i) **स्पष्टता** (Clarity)—प्राक्कल्पनाएं दो दृष्टि से स्पष्ट होनी चाहिए, एक भाषा की दृष्टि से तथा दूसरी अवधारणा की दृष्टि से। प्राक्कल्पना में प्रयुक्त शब्द और उनके अर्थ तथा विचार स्पष्ट तथा भ्रमरहित होने चाहिए। जहां सम्भव हो विशिष्ट शब्दों की परिभाषा और व्याख्या भी दी जानी चाहिए। प्राक्कल्पना मे प्रयुक्त शब्द ऐसे हों कि दूसरे लोग भी इनका सही अर्थ समझ सकें। प्राक्कल्पना की स्पष्टता अनुसन्धानकर्ता की सूझबूझ और अनुभव पर भी निर्भर करती है।

(ii) **प्रयोगसिद्धता** (Empirical referents)—प्राक्कल्पनाओं में इस प्रकार की अवधारणाओ का उपयोग होना चाहिए जिनकी सत्यता की जांच वास्तविक तथ्यों के आधार पर की जा सके। प्राक्कल्पना में किसी नैतिकता अथवा आदर्श को प्रस्तुत करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए अर्थात् उसमें 'अच्छे' और 'बुरे' जैसे शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। प्राक्कल्पनाएं वास्तविक तथा वैज्ञानिक आधार पर जांच करने योग्य होनी चाहिए। इस प्रकार की आदर्शात्मक प्राक्कल्पनाएं जैसे दहेज हिन्दू समाज पर एक कलक है, संयुक्त परिवार वर्तमान परिस्थितियों में अनुपयोगी हैं, जीव हत्या पाप है, दान देना अच्छी बात है, आदि, शोध की दृष्टि से अनुपयुक्त मानी जाती हैं।

(iii) **विशिष्टता** (Specificity)—एक प्राक्कल्पना को अध्ययन विषय के किसी विशिष्ट पहलू से सम्बन्धित होना चाहिए। सामान्य शब्दों में व्यक्त की गयी प्राक्कल्पना का परीक्षण करना कठिन होता है एवं उसका क्षेत्र भी विस्तृत एवं अनिश्चित होता है। ऐसी प्राक्कल्पनाएं तथ्य संकलन की दृष्टि से अनुपयोगी होती हैं। अतः यह आवश्यक है कि उपयोगी अध्ययन के लिए हम विशिष्ट और छोटी-छोटी प्राक्कल्पनाएं बनाएं जो हमें तथ्यों के संकलन, शोध को व्यवस्थित करने एवं निष्कर्ष निकालने में सहायता प्रदान कर सके।

(iv) **उपलब्ध-प्रविधियों से सम्बद्ध** (Related to Available Techniques)—प्राक्कल्पना का निर्माण करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसकी सत्यता की परख उपलब्ध प्रविधियों के द्वारा हो सके। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि अनुसन्धानकर्ता को उपलब्ध प्रविधियों की जानकारी हो। ऐसी प्राक्कल्पनाएं अनुसन्धान की दृष्टि से व्यर्थ मानी जाती हैं जिनके परीक्षण के लिए हमारे पास प्रविधियां उपलब्ध न हों। इस सम्बन्ध में गुडे एवं हाट लिखते हैं कि "जो सिद्धान्तकार यह नही जानता है कि उसकी प्राक्कल्पना की जांच के लिए कौन-कौनसी प्रविधियां उपलब्ध हैं, वह उपयोगी प्रश्नों के निर्माण में असफल रहता

है।"[1] अतः स्पष्ट है कि प्राक्कल्पनाएं प्रचलित प्रविधियों की पहुंच में हों, किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि हम प्राक्कल्पनाओं की जांच के लिए नवीन प्रविधियों का निर्माण नहीं कर सकते। वर्तमान में विभिन्न समस्याओं एवं प्राक्कल्पनाओं के अध्ययन हेतु वैज्ञानिकों ने अनेक नवीन प्रविधियों को जन्म दिया है।

(v) **सिद्धान्त-समूह से सम्बन्धित** (Related to Body of Theory)—गुडे एवं हाट कहते हैं कि सामाजिक अनुसन्धान के नौसिखिये विद्यार्थी इस नियम की अक्सर अवहेलना कर जाते हैं कि उनकी प्राक्कल्पना किसी सिद्धान्त से सम्बद्ध नहीं होती। सामान्यतः वे ऐसे विषय का चयन करते हैं जो उन्हें रुचिकर तथा आकर्षक प्रतीत होता है। वे इस बात का भी ध्यान नहीं रखते कि उनका अनुसन्धान कार्य पूर्व प्रचलित किसी सिद्धान्त को गलत प्रमाणित करने अथवा उसकी पुष्टि करने या उसे संशोधित करने में सहायक होगा या नहीं। वे लिखते हैं, "एक विज्ञान तभी संचयी बन सकता है यदि वह उपलब्ध तथ्यों तथा सिद्धान्त समूह पर पूर्णतया लागू होता है। यदि प्रत्येक अध्ययन एक पृथक् सर्वेक्षण के रूप में होगा तो विज्ञान का विकास नहीं हो सकता।"[2] प्राक्कल्पनाएं और सिद्धान्त एक-दूसरे पर निर्भर है और विज्ञान के विकास के लिए प्राक्कल्पनाओं का निर्माण सिद्धान्तों के सन्दर्भ में ही किया जाना चाहिए।

(vi) **सरलता** (Simplicity)—एक उत्तम प्राक्कल्पना में सरलता का गुण भी होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि उसमे अनावश्यक रूप से अधिक कारकों को स्थान नहीं दिया जाना चाहिए। ऐसी स्थिति में प्राक्कल्पना जटिल एवं परीक्षण के अयोग्य हो जाती है। **श्रीमती यंग** का मत है कि जो अनुसन्धानकर्ता अपनी समस्या से पूरी तरह परिचित है एवं सूझबूझ रखता है, वह प्राक्कल्पना का निर्माण आसानी से कर सकता है। वे लिखती हैं, "सरलता एक तेज धार वाला यन्त्र है जो व्यर्थ की प्राक्कल्पनाओ तथा विवेचनाओं को काट भी सकता है, अतः इसे विलियम ओकम का उस्तरा (Occam's razor) कहा गया है।" सरलता का यह अर्थ नहीं है कि प्राक्कल्पनाएं सामान्य जन के लिए भी बोधगम्य हों। बहुत अधिक सरल प्राक्कल्पनाएं घातक भी सिद्ध हो सकती है।

७\ प्राक्कल्पना के प्रकार (Types of Hypothesis)

समाजशास्त्र एवं समाज-विज्ञानों मे अनेक प्रकार की प्राक्कल्पनाओं का प्रचलन है। सामाजिक तथ्यों, घटनाओं एवं समस्याओं की प्रकृति, अनुसन्धान के उद्देश्य एवं तथ्यों के प्रकार के आधार पर प्राक्कल्पनाएं भी कई प्रकार की हो सकती हैं। विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार की प्राक्कल्पनाओं का उल्लेख किया है। उनमें से कुछ का हम यहां उल्लेख करेंगे।

गुडे तथा **हाट** ने निम्नांकित तीन प्रकार की प्राक्कल्पनाओं का उल्लेख किया है :

(1) **अनुभवात्मक समानताओ से सम्बन्धित** (Related to empirical uniformities)—ये प्राक्कल्पनाएं मानव के सामान्य ज्ञान, तर्क वाक्य, दैनिक जीवन के अनुभवों, मान्यताओं

1 "The theorist who does not know what techniques are available to test h hypothesis in a poor way to formulate usable questions."
—Goode and Hatt, *op. cit.*, pp. 69-7

2 "A Science, however, can be cumulative only by binding on an existing body of fa and theory It cannot develop if each study is an isolated survey."
—*Ibid*, pp. 70-7

1 P. V Young, *op. cit.*, p. 98.

ोकोक्तियो, कहावतों, वक्तव्यों, वार्ताओं तथा विश्वासों पर आधारित होती हैं। उदाहरण के लिए, सामान्यतः ऐसी कहावतें प्रचलित हैं कि गंजा व्यक्ति धनवान होता है, पशुओं में सियार, क्षियो मे कौआ, मनुष्यों में नाई तथा स्त्रियों में मालिन चतुर होते हैं। ऐसी प्राक्कल्पनाओं में समान तथ्यों की जांच करना ही अध्ययन का मुख्य बिन्दु होता है।

(2) **जटिल आदर्श-प्ररूपों से सम्बन्धित** (Concerned with Complex ideal types)—इस प्रकार की प्राक्कल्पनाओं में प्रायः एक सामान्य तथ्य अथवा निष्कर्ष को पूर्वाधार मानकर अन्य तथ्यों की तर्कपूर्ण रूप से परीक्षा की जाती है। ऐसी प्राक्कल्पनाएं अल्पसंख्यक समूहों तथा परिस्थिति की दशाओं (ecological conditions) से सम्बन्धित होती है। उदाहरण के लिए, **बर्गेस** ने अपने अध्ययन में यह प्राक्कल्पना की थी कि "केन्द्रीभूत गोलाकार नगर विकास की प्रकृति के लक्षण होते है।" इस प्रकार की प्राक्कल्पनाओं का उद्देश्य आनुभविक एकरूपताओं में तार्किक रूप से निकाले गये सम्बन्धो की उपस्थिति का परीक्षण करना होता है। ऐसी प्राक्कल्पनाओं में विभिन्न कारको के बीच तार्किक अन्तर्सम्बन्धों के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते है, इसलिए इन्हे सम्बन्धात्मक प्राक्कल्पनाएं (Relational Hypotheses) भी कहते है। चूंकि ये प्राक्कल्पनाएं तार्किक निष्कर्षो पर आधारित होती है, अतः ये सिद्धान्त निर्माण में भी सहायक होती हैं। दुर्खीम ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'आत्महत्या' में निम्नांकित सम्बन्धात्मक प्राक्कल्पनाओं को विकसित किया था :

(अ) गांवों की अपेक्षा नगरों में आत्महत्या की दर अधिक पायी जाती है।

(ब) स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष अधिक आत्महत्या करते हैं।

(3) **विश्लेषणात्मक चरो से सम्बन्धित** (Related to Analytical Variables)—कुछ प्राक्कल्पनाएं विश्लेषणात्मक चरों के सम्बन्ध से सम्बन्धित होती है। कोई भी सामाजिक घटना अनेक कारको का परिणाम होती है, फिर भी इनमें से कोई एक कारक ही प्रमुख कारक होता है और अन्य कारक सहायक कारक होते है। उदाहरण के लिए, बाल-अपराध के लिए मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्तकार मानसिक विकृति और दुर्बलता को, तो वंशानुक्रमणवादी 'बुरे वंशानुक्रम' को उत्तरदायी मानते हैं। इस प्रकार की प्राक्कल्पना को कारणात्मक प्राक्कल्पना (Causal Hypothesis) भी कहते हैं। इसमें यह ज्ञात किया जाता है कि यदि किसी एक चर (कारक) में परिवर्तन होता है तो वह किस सीमा तक दूसरे चर (कारक) को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए, उत्तम फसल उत्तम खाद, बीज, भूमि, पर्यावरण एवं पानी की पर्याप्त मात्रा पर निर्भर करती है। यदि इनमें से किसी एक कारक में परिवर्तन कर दिया जाता है तो फसल पर क्या प्रभाव पड़ेगा, यह जानने का प्रयत्न करना कारणात्मक प्राक्कल्पना है।

कुछ अन्य प्रकार की प्राक्कल्पनाएं (Some other types of Hypothesis)

(i) **सकारात्मक कथनों से सम्बन्धित** (Related to Positive Statements)—कुछ प्राक्कल्पनाओं का सम्बन्ध सकारात्मक कथनों से होता है जैसे, पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां अधिक दयालु होती है। गरीबों की अपेक्षा धनवान अधिक अपराध करते हैं।

(ii) **नकारात्मक कथनों से सम्बन्धित** (Related to Negative Statements)—इस प्रकार की प्राक्कल्पना में कथनों को नकारात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जैसे पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां अधिक दयालु नही होतीं, गरीबों की अपेक्षा धनवान अधिक अपराध नहीं करते।

(iii) **शून्य कथनों से सम्बन्धित** (Related to Null Statements)—इस प्रकार की प्राक्कल्पना में सकारात्मक और नकारात्मक दोनो सम्भावनाओ को व्यक्त किया जाता है और परीक्षण द्वारा उन्हे स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है, जैसे पुरुषों और स्त्रियों की दयालुता मे कोई अन्तर नहीं होता, गरीब एवं धनवान की अपराध प्रवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नही होता।

(iv) **कामचलाऊ प्राक्कल्पना** (Working Hypothesis)—**श्रीमती पी. वी. यंग** ने ऐसे पैने अनुमान व अस्थायी महत्वपूर्ण विचारों को जो किसी अनुसन्धान का आधार बन सकते है, कामचलाऊ प्राक्कल्पना कहा है। कामचलाऊ प्राक्कल्पना किसी भी अध्ययन को प्रारम्भ करने का एक प्रारम्भिक विचार होता है। ज्यों-ज्यो अध्ययनकर्ता को अनुभव होता जाता है, वह उसमे परिवर्तन एवं संशोधन करता जाता है। यह भी हो सकता है कि वह प्रारम्भिक विचार को पूरी तरह त्याग कर उसके स्थान पर नई प्राक्कल्पना बनाले। चूंकि यह विचार एक अस्थायी, कार्यवाहक और कामचलाऊ महत्व का होता है, इसलिए इसे काम चलाऊ या कार्यवाहक प्राक्कल्पना कहते है। उदाहरण के लिए, प्रारम्भ में भौतिक वैज्ञानिकों की मान्यता थी कि परमाणु अविभाज्य है, किन्तु बाद में अध्ययन के आधार पर उन्हें यह प्राक्कल्पना बदलनी पड़ी, जब यह ज्ञात हुआ कि परमाणु का और अधिक विभाजन सम्भव है।

०\ प्राक्कल्पना के स्रोत (Sources of Hypothesis)

एक अध्ययनकर्ता अनेक स्रोतों से प्राक्कल्पना ग्रहण कर सकता है। व्यक्ति अपनी स्वयं की सूझ-बूझ, विचारधारा, कल्पना अथवा अन्तर्दृष्टि के आधार पर भी प्राक्कल्पना का निर्माण कर सकता है। **लुण्डबर्ग** का मत है कि हम एक उपयोगी प्राक्कल्पना की खोज कविता, साहित्य, दर्शन, समाजशास्त्रीय साहित्य, मानव जाति शास्त्र एवं सिद्धान्तों मे कर सकते है। **गुडे एवं हाट** ने प्राक्कल्पना के चार स्रोत बताए है—सामान्य संस्कृति, वैज्ञानिक सिद्धान्त, समरूपताएं तथा व्यक्तिगत अनुभव। हम यहां प्राक्कल्पना के प्रमुख स्रोतों का उल्लेख करेगे।

1. **सामान्य संस्कृति** (General Culture)—प्रत्येक समाज की एक संस्कृति होती है, उसके सदस्यों की रहन-सहन, खान-पान और वस्त्र की एक शैली होती है, परिवार, विवाह, नातेदारी और सामाजिक सस्थाओं तथा आचरण के नियमों में एक एकरूपता पायी जाती है जोकि उनकी एक सामान्य संस्कृति का निर्माण करती है। यह सामान्य सस्कृति भी प्राक्कल्पना के विकास में सहायक होती है। सामान्य संस्कृति के अन्तर्गत तीन बातें प्रमुख हैं—सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, लोक विश्वास तथा सामाजिक परिवर्तन। हम यहां इन तीनों ही पक्षों का उल्लेख करेगे।

(i) **सांस्कृतिक पृष्ठभूमि** (Cultural Background)—सांस्कृतिक पृष्ठभूमि भी विज्ञान के विकास और प्राक्कल्पनाओ के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक देश की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि इस प्रकार के वातावरण को जन्म देती है जो विज्ञान के उद्भव और विकास को प्रोत्साहित या हतोत्साहित करता है। आधुनिक भौतिक विज्ञानों का विकास और स्वयं समाजशास्त्र का विकास पश्चिमी देशो और अमरीका में ही क्यों अधिक हुआ, अन्य देशो मे क्यो नहीं, इसका कारण भी उन देशों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और सांस्कृतिक मूल्य है। अमरीका और भारत की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में भिन्नता होने के कारण दोनो देशो में निर्मित प्राक्कल्पनाए भी भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। भारतीय संस्कृति में आध्यात्मवाद, भाग्यवादिता, सयुक्त परिवार प्रथा, नातेदारी, जाति व्यवस्था, आदि का विशेष महत्व है।

सलिए भारत में कोई भी प्राक्कल्पना इन पर आधारित हो सकती है। दूसरी ओर पश्चिमी समाजों में व्यक्तिवाद का अधिक बोल-बाला है। वहां जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्तिवादिता को महत्व दिया जाता है। वहां व्यक्तिगत सुख का सम्बन्ध कई बातों से जोड़ा जाने लगा है। वहां व्यक्तिगत सुख के प्रसंग को लेकर अनेक प्राक्कल्पनाएं बनायी गई हैं। दूसरी ओर भारत में संयुक्त परिवार, जाति-प्रथा, छुआछूत, जजमानी-प्रथा, पंचायत व्यवस्था, आदि को लेकर महत्वपूर्ण प्राक्कल्पनाएं बनायी गयी हैं। उदाहरण के लिए, संयुक्त परिवार में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की स्थिति निम्न होती है, उच्च जातियो की तुलना में निम्न जातियों की सामाजिक स्थिति निम्न होती है, आदि। स्पष्ट है कि सांस्कृतिक पृष्ठभूमि एक विशेष प्रकार की प्राक्कल्पना को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

(ii) **लोक विश्वास** (Folk Beliefs)—प्रत्येक संस्कृति में कुछ ऐसी सामान्य मान्यताएं एव विश्वास पाये जाते हैं जिनकी अभिव्यक्ति कहावतो, मुहावरों, दोहों, तुकबन्दियों, सूक्तियों, आदि के द्वारा होती है। चूंकि इनका प्रचलन समाज में एक लम्बे समय से होता है, अतः कई लोग तो इन्हें सहज रूप में स्वीकार कर लेते है। किन्तु ये कहावतें और विश्वास वास्तव कहां तक सत्य हैं, यह जानने के लिए अनुसन्धानकर्ता इनमें से किसी को भी प्राक्कल्पना ानकर अध्ययन कर सकता है।

(iii) **सामाजिक परिवर्तन** (Social Change)—कोई भी समाज और संस्कृति स्थिर नहीं । समय के साथ इनमें परिवर्तन होना स्वाभाविक है। यह परिवर्तन नई-नई प्राक्कल्पनाओं को भी जन्म देता है। उदाहरण के लिए, भारतीय समाज में होने वाले परिवर्तनों के सन्दर्भ में कुछ प्राक्कल्पनाएं इस प्रकार हो सकती हैं—भारत में ज्यों-ज्यों औद्योगीकरण एवं नगरीकरण बढ़ता जायेगा, संयुक्त परिवार टूटेंगे तथा जाति प्रथा का विघटन होगा शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ भारतीय समाज में स्त्रियों की प्रस्थिति उच्च होती जायेगी, प्रजातन्त्रीय मूल्यों के प्रसार के साथ-साथ समानता की भावना में वृद्धि होगी, आदि।

(2) **वैज्ञानिक सिद्धान्त** (Scientific theories)—कई प्राक्कल्पनाओं का आधार समाज मे पूर्व-प्रचलित वैज्ञानिक सिद्धान्त होते हैं। अनुसन्धानकर्ता इन सिद्धान्तों पर ही कई अन्य सामान्यीकरण करते हैं और ये सामान्यीकरण ही प्राक्कल्पनाओं के रूप में ग्रहण कर लिए जाते हैं। मार्क्स के वर्ग संघर्ष के सिद्धान्त पर ही समाज-वैज्ञानिकों ने वर्ग से सम्बन्धित अनेक प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया है।

(3) **सादृश्यताएं** (Analogies)—कई बार समरूपताएं भी प्राक्कल्पनाओं को जन्म देती हैं। हरबर्ट स्पेन्सर ने सामाजिक सावयव (social organism) की कल्पना जीवों की

के आधार हो सकते हैं। कुछ विशेष प्रकार के व्यवहार मानव और पशु मे समान रूप से पाए जाते हैं। पेड़ पौधो तथा पशु पक्षियों पर पड़ने वाले पर्यावरण के प्रभाव के आधार पर ही मानव समाज पर भी पर्यावरण के प्रभाव की समान कल्पना की गई। लूई पाश्चर ने चेचक के टीके का आविष्कार गायों में होने वाले चेचक की सादृश्यता के आधार पर ही किया था।

(4) **व्यक्तिगत अनुभव** (Personal
अनुभवों का भी परिणाम होती हैं। उदाह
है", इस प्राक्कल्पना को सैनिकों के अध्ययन से सम्बन्धित अपने व्यक्तिगत अनुभवो के

आधार पर ही ग्रहण किया था। न्यूटन की पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति की प्राक्कल्पना, डार्विन की अस्तित्व के लिए संघर्ष की प्राक्कल्पना तथा माल्थस की जनसंख्या-वृद्धि प्राक्कल्पना, आदि उनके व्यक्तिगत अनुभव का ही परिणाम है। इस प्रकार [illegible] या अवस्थाओं में एक अध्ययनकर्ता को जो विशेष अनुभूतियां होती हैं, उसी के आधार वह विभिन्न प्राक्कल्पनाओ को जन्म देता है।

(5) **अन्तःप्रज्ञा** (Intution)—अनेक प्राक्कल्पनाओं का आधार मानव की अन्तर्दृष्टि अथवा अन्तरात्मा की आवाज होती है। जीवन की अनेक घटनाओं के प्रति हमारे निष्कर्ष अन्तर्दृष्टि पर ही आधारित होते है। कई वार हम लोगों को यह कहते हुए सुनते हैं—"मेरा मन ऐसा कहता है", यही उसकी अन्तःप्रज्ञा कही जा सकती है। अन्तःप्रज्ञा पर आधारित प्राक्कल्पनाओं का कई वार परीक्षण करना वहुत कठिन होता है। महापुरुषो तथा आध्यात्मिक गुरुओ द्वारा अनेक निष्कर्ष अन्तःप्रज्ञा के आधार पर दिये जाते हैं।

(6) **अनुसन्धान एवं साहित्य** (Research and literature)—कई बार हम अन्य व्यक्तियों द्वारा किए गए अध्ययनों के निष्कर्षों एवं साहित्य के आधार पर भी प्राक्कल्पना का निर्माण करते है। लुण्डवर्ग की मान्यता है कि हम कविता, साहित्य, दर्शन, समाजशास्त्र, नृजाति विज्ञान एवं वर्णनात्मक साहित्य तथा कलाकारों और चिन्तकों के मानव के सामाजिक सम्बन्धों पर आधारित सिद्धान्तों के आधार पर भी प्राक्कल्पनाओ का निर्माण कर सकते हैं।

प्राक्कल्पना का महत्व (Importance of Hypothesis)

अनुसन्धान में प्राक्कल्पना के महत्व को अनेक प्रकार से दर्शाया गया है। विद्वान इसकी तुलना ध्रुव तारे एवं कुतुबनुमा से करते है तो कुछ समुद्र में जहाजों को रास्ता दिखलाने वाले प्रकाश स्तम्भ (Light house) से जो अनुसन्धानकर्ताओं और वैज्ञानिकों को भटकने से बचाते है। **मैक्स वेबर** का मत है कि प्राक्कल्पना से प्रत्येक वैज्ञानिक गवेषणा में नये प्रश्नों को प्रोत्साहन मिलता है। **गुडे एवं हाट** का मत है कि एक प्राक्कल्पना यह बताती है कि हम किसकी खोज कर रहे है।"[1] उन्होने आगे फिर लिखा है, "अच्छे अनुसन्धान में प्राक्कल्पना का निर्माण एक केन्द्रीय चरण है।"[2] **कोहेन** तथा **नागेल** लिखते है, "एक प्राक्कल्पना का प्रकार्य हमारी खोज में तथ्यों के बीच व्यवस्था लाने के लिए पथ-प्रदर्शन करना है।"[3]

इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी भी अनुसन्धान मे प्राक्कल्पना के अभाव में निश्चयात्मक निष्कर्ष प्राप्त करना कठिन है। इसके अभाव में अध्ययनकर्ता अपने मार्ग से भटक सकता है। इसी के द्वारा वह सत्य और असत्य की पुष्टि करता है एवं विषय से सम्बन्धित वास्तविकता का पता लगाता है। प्राक्कल्पना के अभाव में अनुसन्धान पतवारविहीन जहाज की भाति होता है। प्राक्कल्पना के महत्व की विवेचना हम इस प्रकार कर सकते हैं।

(1) **अध्ययन के उद्देश्य का निर्धारण** (Determination of the Goal of the Study)—प्राक्कल्पना हमारे अध्ययन के उद्देश्य को निर्धारित करती है कि हमें किसकी खोज करनी है। अध्ययन के उद्देश्य को स्पष्ट करके ही हम उससे सम्बन्धित तथ्यों की गवेषणा करते है। प्राक्कल्पनाएं हमें यह बताती हैं कि हमे किन तथ्यों का संकलन करना है और किन का नहीं, कौनसे तथ्य हमारे उद्देश्य के अनुरूप और सार्थक हैं तथा कौन से निरर्थक।

1 Goode and Hatt, *op. cit.*, p. 56.
2 "The Formulation of the Hypothesis is a central step in good research"
—Goode and Hatt, *Ibid*, p 73
3 Cohen and Nagel, *An Introduction to Logic and Scientific Method*, 1934.

हेन एवं नागेल लिखते है, "प्राक्कल्पना के अभाव में अनुसन्धान एक अनिश्चित तथा चारहीन भटकाव की भांति है। उसके निष्कर्षों को स्पष्ट अर्थ वाले तथ्यों के रूप मे प्रकट ी किया जा सकता है।" अध्ययन के उद्देश्य हमारे संकलन स्रोतों का भी निर्धारण करते है।

(2) **उचित दिशा प्रदान करना** (Providing Suitable direction)—प्राक्कल्पना नुसन्धानकर्ता के लिए पथ-प्रदर्शक का कार्य करती है, उसे इधर-उधर भटकने से रोकती है। ससे अध्ययनकर्ता का ध्यान मुख्य विषय पर ही टिका रहता है, प्राक्कल्पना उसे विभिन्न ार्गों में से केवल उचित और सही मार्ग पर ही ले जाती है। **वान डलेन** प्राक्कल्पना को ऐसे क्तिशाली आकाशदीप के रूप में मानते है जो अनुसन्धानकर्ता का मार्ग प्रशस्त करता है।

[redacted]

सिद्ध हो सकते हैं।"[1]

(3) **अध्ययन क्षेत्र को सीमित करना** (Restricting the field of study)—**लुण्डबर्ग** के अनुसार प्राक्कल्पना के आधार पर, "हम जान बूझकर अपनी विचार शक्तियो को स्वीकार करते है और अपने अनुसन्धान के क्षेत्र को सीमित करके त्रुटियों की सम्भावना को कम करने का प्रयास करते हैं।"[2] प्राक्कल्पना अनुसन्धान कार्य की सीमा निर्धारित करके अध्ययनकर्ता का ध्यान अध्ययन विषय के एक विशिष्ट पहलू अथवा तथ्यों पर ही केन्द्रित करती है। दूसरे शब्दों में प्राक्कल्पना अध्ययन को एक निश्चित सीमा में बांध देती है। अध्ययनकर्ता के लिए यह सम्भव नही है कि वह एक विषय से सम्बन्धित सभी पक्षों का एक साथ अध्ययन करे। अतः यह आवश्यक है कि अध्ययन को विशिष्ट, यथार्थ और वैज्ञानिक बनाने के लिए उसे सीमित किया जाय।

(4) **अध्ययन में निश्चितता लाना** (Bringing definiteness in the study)—प्राक्कल्पना के द्वारा अध्ययन को सुनिश्चित बनाया जा सकता है। इससे अध्ययनकर्ता को यह ध्यान रहता है कि उसे कब, कहां और कौनसी सूचनाएं संकलित करनी हैं। इससे अनियमितता एवं अव्यवस्था की सम्भावना नहीं रहती।

(5) **तथ्यों के संकलन में सहायक** (Helpful in collection of facts)—प्राक्कल्पना अनुसन्धानकर्ता को समस्या से सम्बन्धित उपयुक्त तथ्यों को सकलित करने को प्रेरित करती है। प्रारम्भ में ऐसा भी हो सकता है कि वैचारिक अस्पष्टता के कारण हम तथ्यों के एक जंगल को एकत्रित कर ले। किन्तु बाद मे उनमें से हमें कुछ विशिष्ट तथ्यों का ही चुनाव करना पड़ता है। इस कार्य में प्राक्कल्पना सहायक होती है। **एम. एच. गोपाल** ने लिखा है, "प्राक्कल्पना के विना अध्ययनकर्ता अनावश्यक यहां तक कि व्यर्थ सामग्री भी एकत्रित कर सकता है और वास्तव में महत्वपूर्ण तथा लाभकारी तथ्य उसकी दृष्टि से छूट सकते हैं।"[3]

(6) **निष्कर्ष निकालने में सहायक** (Helpful in drawing conclusions)—प्राक्कल्पनाओं के आधार पर तथ्यों का संकलन किया जाता है और तथ्यों के आधार पर ही यह ज्ञात किया जाता है कि हमारी प्राक्कल्पनाएं सत्य हैं अथवा असत्य। दोनों ही स्थितियों

1 "The use of a hypothesis thus prevents a blind search and indiscriminate gathering of masses of data which may later prove irrelevant to the problem under study." —P. V. Young, *op. cit.*, p. 99.

2 G A. Lundberg, *op. cit*, p. 119.

3 "Without it the investigator may collect non-essential and even useless data and may also overlook really significant and useful ones."
—M. H. Gopal, *op. cit.*, p. 117

में हमे सत्यान्वेषण करना होता है जो कि इसके अभाव में नहीं हो सकता। नोर्थ्रप[1] का मत है कि "किसी प्राक्कल्पना में विद्यमान तथ्य समस्या के समाधान भी हो सकते क्या वे वास्तव में समाधान हैं, यह जांच का कार्य है।"[1]

(7) **सिद्धान्तों के निर्माण में सहायक** (Helpful in formulation of एच मन्न का मत है कि प्राक्कल्पना तथ्यों व सिद्धान्तों के बीच की कड़ी है। एम. एच. के शब्दों में, "एक सिद्धान्त तथा एक प्राक्कल्पना के बीच का अन्तर प्रकार की का अधिक है, क्योंकि जब प्राक्कल्पना सत्य सिद्ध हो जाती है तथा स्थापित हो व वह एक सिद्धान्त का भाग बन जाती है। एक प्रकार से ये एक-दूसरे से विकसित होते

विलियम जॉर्ज ने लिखा है, "व्यावहारिक रूप से एक सिद्धान्त एक विस्तृत प्राक्क है, यह एक सरल प्राक्कल्पना की अपेक्षा अधिक प्रकारों के तथ्यो से सम्बन्धित होती किसी भी सामाजिक अनुसन्धान का प्रारम्भ हम प्राक्कल्पनाओं के आधार पर करते तथ्यो के आधार पर ये प्राक्कल्पनाएं सत्य सिद्ध हो जाती हैं तो वे सिद्धान्तों का रूप लेती है।

डा. सुरेन्द्र सिंह ने प्राक्कल्पना के निम्नांकित कार्यों (महत्व) का उल्लेख किया है :

(i) अनुसन्धान से सम्बन्धित विशिष्ट प्रश्नों को स्पष्ट करना, (ii) अनुसन्धान को उचित

निर्माण के लिए कार्यकारी उपकरण के रूप में कार्य करना तथा, (vi) निगमन पद्धति प्रयोग करते हुए निष्कर्ष निकालने मे सहायता पहुंचाना।[4]

उपर्युक्त विवेचना से प्राक्कल्पना का महत्व स्पष्ट हो जाता है, फिर भी सदैव सभी वैज्ञानिक अध्ययन और खोजें प्राक्कल्पनाओं से ही आरम्भ नहीं हुए है। न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त, पेनिसीलीन, एक्सरे, रेडियम और अनेक अन्य आविष्कार किसी प्राक्कल्पना के आधार पर नही वरन् संयोग का ही परिणाम हैं। फिर भी हम गुडे एवं हाट के इस कथन को स्वीकार करते हैं, "इस (प्राक्कल्पना) के अभाव मे अनुसन्धान एक प्रकार से निर्देश्य अथवा अनिर्दिष्ट विचारहीन भटकना है।

प्राक्कल्पना की सीमाएं
(LIMITATIONS OF HYPOTHESIS)

प्राक्कल्पनाएं सामाजिक अनुसन्धान मे मार्गदर्शन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है फिर भी यदि इनका प्रयोग सावधानी से नहीं किया जाता है तो ये अध्ययन के लिए खतरा भी पैदा कर सकती है। इनके दोष या सीमाएं निम्नांकित हैं :

(1) **प्राक्कल्पना में अटूट विश्वास** (Full Confidence in Hypothesis)—कई बार अध्ययनकर्ता प्राक्कल्पना को अपने अध्ययन का मार्गदर्शक न मानकर उसे सिद्ध करने

1 "The suggestions formulated in any hypothesis may be solutions to the problem whether they are, is the task of the enquiry."
—Northrop, *The Logic of the Sciences and the Humanities*, p. 1

2 M. H. Gopal, *op. cit*, p. 115.

3 "In practice, a theory is an elaborate, hypothesis which deals with more types facts than does the hypothesis."
—George William, *The Scientist in Action*, 1936, p. 2

4 डॉ. सुरेन्द्र सिंह, सामाजिक अनुसन्धान, पृष्ठ 149.

द्धा में ही तथ्यों का संकलन करता है। ऐसी स्थिति में अध्ययन की वैज्ञानिकता समाप्त हो जाती है। इसलिए ही **पी. वी. यंग** ने लिखा है, "एक अनुसन्धानकर्ता को अपनी प्राक्कल्पना की शुद्धता को स्थापित करने के उद्देश्य से अध्ययन का प्रारम्भ नहीं करना चाहिए।"[1]

(2) **प्राक्कल्पना आधारित तथ्य** (Hypothesis based Facts)—प्रारम्भ में अध्ययनकर्ता प्राक्कल्पना के आधार पर ही तथ्यों का संकलन करता है, किन्तु उसे चाहिए कि वह वास्तविक तथ्यों के आधार पर अपनी प्राक्कल्पना में संशोधन एवं परिवर्तन करले। ऐसा न करने पर संकलित तथ्य हानिप्रद एवं व्यर्थ सिद्ध होते हैं। इस सन्दर्भ मे **फ्राई** (Fry) ने लिखा है, "मात्र विशिष्ट प्रश्नों के सन्दर्भ में ही तथ्यों का संकलन नहीं करना चाहिए वरन् एक संस्था अथवा परिस्थिति की गवेषणा में प्रश्नों को सदैव सुझाव के रूप में समझना चाहिए।

(3) **विशिष्ट अभिरुचियों तथा संवेगों का प्रभाव** (Influence of specific interests and emotions)—कई बार अनुसन्धानकर्ता अपनी किसी विशिष्ट रुचि और संवेग के कारण एक विशेष अध्ययन-विषय का चुनाव करता है और उसके प्रति पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाता है, तब उसके द्वारा किया जाने वाला अध्ययन अवैज्ञानिक हो जाता है।

(4) **अध्ययनकर्ता का प्रतिष्ठा बिन्दु** (Prestige point of the investigator)—कई बार अध्ययनकर्ता अपनी प्राक्कल्पना को श्रेष्ठ व सही मान लेता है और उसके साथ अपने सम्मान को जोड़ लेता है। ऐसी स्थिति में वह प्राक्कल्पना के विपरीत यथार्थ तथ्यों को भी स्वीकार नही करना चाहता। यह स्थिति वैज्ञानिक सत्य तक पहुंचने में बाधक है।

स्पष्ट है कि यद्यपि प्राक्कल्पनाएं अनुसन्धान के लिए उपयोगी होती हैं, फिर भी उनके प्रयोग में सावधानी बरतनी चाहिए। इस सन्दर्भ में **वेस्टावे** (Westaway) ने उचित ही लिखा है, "प्राक्कल्पनाएं वे लोरियां हैं जो कि असावधान को गाना गाकर सुला देती है। **पी. वी. यंग** लिखती हैं, "यदि अध्ययनकर्ता वास्तविक वैज्ञानिक भावना के आधार पर किसी विशेष परिस्थिति में तथ्यों को सिद्ध करने की ओर नहीं वरन् सीखने और समझने की ओर बढ़ता है, तब उसकी प्राक्कल्पना कोई निहित स्वार्थ नहीं बनेगी और यदि नवीन तथ्य उसकी प्राक्कल्पना को असत्य सिद्ध करते है तो उसकी ख्याति तथा प्रतिष्ठा को कोई आघात नहीं पहुंचेगा।"[2]

प्राक्कल्पना निर्माण में प्रमुख कठिनाइयां
(MAIN DIFFICULTIES IN FORMULATION OF HYPOTHESIS)

प्राक्कल्पना का निर्माण करना कोई सरल कार्य नहीं है। गुडे व हाट के अनुसार इसके अन्तर्गत दो प्रकार की कठिनाइयां आ सकती है—सैद्धान्तिक ढांचे से सम्बन्धित तथा अध्ययन-प्रणालियों से सम्बन्धित।

I. **सैद्धान्तिक ढांचे से सम्बन्धित** (Related to theoretical frame-work)—प्राक्कल्पना के निर्माण में सैद्धान्तिक ढांचे से सम्बन्धित निम्नांकित कठिनाइयां आ सकती हैं:

(1) **स्पष्ट ढांचे की अनुपस्थिति** (Absence of definite frame-work)—कई बार ऐसी स्थिति भी होती है कि अनुसन्धानकर्ता को विषय से सम्बन्धित सिद्धान्तों का ही ज्ञान नहीं होता है तब वह उपयुक्त प्राक्कल्पनाओं का निर्माण नहीं कर पाता। नवीन विज्ञानों के सन्दर्भ मे यह बात अधिक खरी उतरती है।

[1] "A researcher should not start out to prove the correctness of his hypothesis"
—P. V. Young, *op. cit.*, p. 104

[2] P. V. Young, *op cit.*, p. 105

(2) **ढांचे के तार्किक एवं कुशल प्रयोग का अभाव** (Lack of logical and eff use of frame)—यदि सैद्धान्तिक ढांचा उपलब्ध है, किन्तु प्राक्कल्पना निर्माण में उस प्रयोग तार्किक एवं कुशलतापूर्वक करने में अध्ययनकर्ता अक्षम है, तब भी सही प्राक्कल्प का निर्माण नहीं किया जा सकता।

II. **अध्ययन प्रणालियों से सम्बन्धित** (Related to Research Techniques)—वर्तमान वैज्ञानिक ज्ञान एवं अनुसन्धान की प्रणालियों में बहुत अधिक वृद्धि हुई है जिनके बारे सभी को जानकारी होना आवश्यक नही है। आज सामाजिक सम्बन्धों का अभिव्यक्ति गणितीय सूत्रों में की जाने लगी है। कम्प्यूटर द्वारा अध्ययन में मदद ली जाती है। अतः यह आवश्यक है कि प्राक्कल्पनाओं के निर्माण में अध्ययनकर्ता अध्ययन प्रणालियों को भी ध्यान में रखे ताकि अध्ययन में समय, श्रम और धन की बचत की जा सके।

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य कठिनाइयां इस प्रकार है :

(i) **घटना की परिवर्तनशीलता**—सामाजिक घटनाओं की यह विशेषता है कि वे परिवर्तनशील है। जो स्थिति आज है, वह कल नहीं रहेगी। मानव के विचार, विश्वास, भावनाए और मनोवृत्तियां बदलती रहती है, अतः उनके बारे में अनुमान लगाना कठिन कार्य है। मानव सम्बन्धों को प्रभावित करने वाले कारक एवं उनके पारस्परिक सम्बन्ध भी बदलते रहते है, अतः उनके बारे में प्राक्कल्पना का निर्माण करना एक कठिन कार्य है।

(ii) **अध्ययनकर्ता का पक्षपात**—प्राक्कल्पना निर्माण में एक कठिनाई अध्ययनकर्ता की अभिनति या पक्षपात भी है। यदि वह किसी पूर्वाग्रह से ग्रसित है या किसी घटना के प्रति भावात्मक लगाव रखता है तो उसके द्वारा निर्मित प्राक्कल्पना के दोषपूर्ण एवं अवैज्ञानिक होने की सम्भावना रहती है।

(iii) **सजातिवाद या समूह केन्द्रितता** (Ethnocentrism)—दूसरों की तुलना मे अपने समूह, जाति, प्रजाति के प्रति व्यक्ति के मन मे संवेदनशीलता और भावात्मक लगाव होता है, जिसे सजातिवाद या समूह केन्द्रितता कहते है। ऐसी दशा में व्यक्ति अन्य समाजो, समूहों एवं संस्कृतियों की तुलना में अपने समाज, समूह और संस्कृति की श्रेष्ठ समझता है। ऐसी स्थिति में प्राक्कल्पना निर्माण में व्यक्ति का स्वयं का पक्षपात आना स्वाभाविक ही है। **पी. वी. यंग** ने प्राक्कल्पना के निर्माण के समय अध्ययनकर्ता को तीन बातों का ध्यान रखने का सुझाव दिया है :

(i) अनुसन्धानकर्ता की तीक्ष्ण दृष्टि, (ii) नियन्त्रित कल्पना शक्ति तथा रचनात्मक चिन्तन, (iii) सैद्धान्तिक ढांचे की उपलब्धता तथा उसका ज्ञान। अन्त में हम कोहेन के शब्दों मे कह सकते है कि "जो लोग विषय के पूर्व ज्ञान के अभाव में कोरे मस्तिष्क से अनुसन्धान कार्य आरम्भ करते है, उन्हें वैज्ञानिक उपलब्धियां बड़ी कठिनता से प्राप्त होती है। कुछ प्राप्त करने के लिए हमें विषय की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। किसी पूर्ण ज्ञान के अभाव मे हम नही जान पाते कि किन तथ्यों को खोजना है तथा जांच हेतु क्या प्रासंगिक है?" प्राक्कल्पना का निर्माण करते समय उपर्युक्त सभी बातों को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है।

प्रश्न

1. उपकल्पना से आप क्या समझते हैं। (अजमेर, 1996)
2. वैज्ञानिक सामाजिक गवेषणा मे प्राक्कल्पना की महत्ता की विवेचना कीजिए। भारत में छात्र असन्तोष की समस्या के सम्बन्ध मे कम से कम दो प्राक्कल्पनाओं की रचना कीजिए।

4. सामाजिक अनुसंधान में उपकल्पना की भूमिका का विवेचन कीजिये। (राजस्थान, 1998)
5. प्राक्कल्पना को परिभाषित कीजिये। प्राक्कल्पना के महत्व तथा स्रोतों को समझाइये। (अजमेर, 1996; राजस्थान, 1998, 2000)
6. सामाजिक अनुसंधान में प्राक्कल्पना के महत्व को समझाइये। प्राक्कल्पना की रचना में कौन-सी मुख्य कठिनाइयां हैं ? (अजमेर, 1990)
7. सामाजिक अनुसन्धान में उपकल्पना का क्या महत्व है? इसके विभिन्न प्रकारों को समझाइए।
8. उत्तम उपकल्पना (परिकल्पना) के महत्व एवं आवश्यक लक्षणों का वर्णन कीजिए। (अजमेर, 1995)
9. एक अच्छी उपकल्पना की विशेषताओं का वर्णन कीजिए और इसके निर्माण में आने वाली प्रमुख कठिनाइयों की व्याख्या कीजिए। (राजस्थान, 1996)
10. प्राक्कल्पना की परिभाषा दीजिए। सामाजिक अनुसन्धान में उसकी उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए। (राजस्थान, 1997)
11. उपकल्पना को परिभाषित कीजिए। इसके विभिन्न स्रोतो की व्याख्या कीजिए। (अजमेर, 1999)
12. उपकल्पना के प्रकारों एवं महत्व को समझाइए। (अजमेर, 2000)
13. प्राक्कल्पना के प्रकार बताइये। प्राक्कल्पना की रचना में आने वाली समस्याओं को स्पष्ट कीजिए। (राजस्थान, 1999)

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :
   (1) प्राक्कल्पना की अवधारणा।
   (2) प्राक्कल्पना के स्रोत।
   (3) सामाजिक अनुसन्धान में उपकल्पना के महत्व को समझाइए। (अजमेर, 1999)
   (4) उपकल्पना की सीमाओं की विवेचना कीजिए। (अजमेर, 2000)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित में से प्राक्कल्पना के स्रोतों का चयन कीजिए :
   (i) अन्तर्दृष्टि, (ii) लोक विश्वास, (iii) समुद्री यात्राएं, (iv) राजा-रानी के किस्से, (v) सामान्य संस्कृति, (vi) व्यक्तिगत अनुभव, (vii) तर्क, (viii) सादृश्यताएं, (ix) प्रश्नावलियां, (x) जीवन इतिहास, (xi) साहित्य।
2. निम्नांकित में से प्राक्कल्पना के महत्व एवं सीमाओं को पृथक कीजिए :
   (i) उचित दिशा प्रदान करना,
   (ii) अध्ययन क्षेत्र को सीमित करना,
   (iii) प्राक्कल्पना में अटूट विश्वास,
   (iv) अध्ययनकर्ता का प्रतिष्ठा बिन्दु,
   (v) तथ्यों के संकलन में सहायक,
   (vi) सिद्धान्त निर्माण मे सहायक,
   (vii) अभिरुचियों एव संवेगों का प्रभाव,
   (viii) निष्कर्ष निकालने में सहायक,
   (ix) अध्ययन के उद्देश्य का निर्धारण करना।

   [उत्तर—1. स्रोत—i, ii, vi, viii, xi, 2. प्राक्कल्पना का महत्व—i, ii, v, vi, viii, ix शेष सभी प्राकल्पना की सीमाएं हैं।]

9

अवलोकन विधि

[OBSERVATION METHOD]

अवलोकन विधि अनुसन्धान की अत्यधिक प्राचीन और सर्वाधिक प्रचलित विधि है। मानव ने अपने चारों ओर के विश्व का प्रारम्भिक ज्ञान अवलोकन द्वारा ही प्राप्त किया। मानव के पास संचित ज्ञान का अधिकांश भाग अवलोकन का ही परिणाम है। सामान्य ज्ञान से लेकर सृष्टि के रहस्यों तक को जानने में मानव ने अवलोकन विधि का सहारा लिया है। विभिन्न विज्ञानों के प्रारम्भिक विकास में अवलोकन की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। नक्षत्र विद्या एवं ज्योतिष का प्रारम्भिक ज्ञान चांद, तारों, सूर्य, नक्षत्रों एवं ग्रहों के अवलोकन; ऋतु विज्ञान का ज्ञान, मौसम परिवर्तन के अवलोकन; वनस्पतिशास्त्र एवं जीवशास्त्र का ज्ञान, वनस्पतियों के फलने-फूलने एवं जीवों के जन्म-मृत्यु, वृद्धि, शारीरिक परिवर्तन एवं अन्तर के अवलोकन के आधार पर ही प्राप्त किया गया। मैडम मेरी क्यूरी ने रेडियोधर्मिता का, एलेक्जेण्डर फ्लेमिंग ने पेनिसीलीन का एवं न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का ज्ञान अवलोकन विधि द्वारा ही प्राप्त किया था। ज्ञान की खोज मे अवलोकन विधि का योगदान अति प्राचीन काल से होने के कारण ही **मोजर** इसे वैज्ञानिक अनुसन्धान की शास्त्रीय पद्धति कहते है। यह सही है कि मानव ने सामान्य अवलोकन से ही अतीत में बहुत सारा ज्ञान प्राप्त किया है, किन्तु एक वैज्ञानिक विधि के रूप में अवलोकन का व्यवस्थित होना आवश्यक है। व्यवस्थित अवलोकन में घटनाओं को देखना, सुनना, समझना और उन्हें लिखना भी होता है, वह नियोजित, उद्देश्यपूर्ण एवं सैद्धान्तिक मान्यताओं से सम्बन्धित होता है।

दैनिक जीवन में ही नही, वरन् विज्ञानों में अवलोकन को अध्ययन एवं अनुसन्धान की प्रमुख विधि माना जाता है। इसी बात को स्पष्ट करते हुए **जहोदा** एवं **कुक** ने लिखा है, "अवलोकन केवल दैनिक जीवन की ही अत्यधिक व्यापक क्रिया मात्र नहीं है, यह वैज्ञानिक जांच का भी एक प्राथमिक यंत्र है।"[1] **गुडे** एवं **हाट** भी अवलोकन को विज्ञान का आधार मानते हैं। वे लिखते हैं, "विज्ञान अवलोकन से प्रारम्भ होता है तथा उसे सत्यापन के लिए अन्ततः आवश्यक रूप से अवलोकन पर ही पुनः लौट आना पड़ता है।"[2] **जॉन डॉलर्ड** इसे

1 "Observation is not only one of the most pervasive activities of the daily life, it is also a primary tool of Scientific enquiry."
—Jahoda and Cook, *Research Methods in Social Relations*, p. 200.

2 "Science begins with observation and must ultimately return to observation for its final validation." —Goode and Hatt, *Methods in Social Research*, p. 119.

ार्य उसमें किसी न किसी रूप में निहित थे, उस व्यक्ति के दृष्टिकोण से निश्चय ही कहीं धिक यथार्थ व भिन्न होगा जो सहभागी न होकर केवल ऊपरी द्रष्टा या विवेचनकर्ता के रूप रहता है।"

हभागी अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा

सहभागी अवलोकन करने के लिए अवलोकनकर्ता उस समूह अथवा समुदाय में जाकर हने लगता है जिसकी सामाजिक घटनाओं का वह अध्ययन करना चाहता है। वह लोगो ी दैनिक एवं अन्य सभी क्रियाओं में भाग लेता है और उनका निरीक्षण भी करता है। समें अवलोकनकर्ता को समूह के लोग अपना लेते हैं और वे उसे अपना एक सदस्य समझने गते हैं। इस प्रकार अध्ययनकर्ता अस्थायी रूप से समूह का आन्तरिक व्यक्ति बन जाता है।

सहभागी अवलोकन को परिभाषित करते हुए **गुडे एवं हाट** लिखते हैं, "इस कार्य-प्रणाली का उस समय प्रयोग किया जाता है जबकि अनुसन्धानकर्ता अपने को इस प्रकार छिपा लेता कि वह समूह के एक सदस्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है।"[1]

पी. वी. यंग के अनुसार, "अनियन्त्रित अवलोकन का प्रयोग करने वाला सहभागी अवलोकनकर्ता साधारणतया उस समूह के जीवन में रहता तथा भाग लेता है जिसका कि वह अध्ययन कर रहा है।"[2]

लुण्डबर्ग के अनुसार, "अवलोकनकर्ता अवलोकित समूह के प्रति यथा सम्भव पूर्णतया घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करता है अर्थात् वह समुदाय में बस जाता है तथा उस समूह के दैनिक जीवन में भाग लेता है।"[3]

फोरकेस तथा **रिचर** लिखते हैं, "सहभागिक अवलोकन से अनुसन्धानकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह का सदस्य बन जाता है। ऐसा करने के पीछे मूल भावना यही रहती है कि वह समूह की विशेषताओं को निकट से जान सके जोकि समूह के बाहर रहने पर सम्भव नही होती।"[4]

जॉन मेज लिखते हैं, "जब अवलोकनकर्ता के हृदय की धड़कनें समूह के अन्य व्यक्तियों के हृदयों की धड़कनों से मिल जाती हैं और वह बाहर से आया हुआ कोई अनजान नहीं रह जाता तो यह समझना चाहिए कि उसने सहभागी अवलोकनकर्ता कहलाने का अधिकार प्राप्त कर लिया है।"[5]

पी. एच. मान के अनुसार, "सहभागी अवलोकन का तात्पर्य एक ऐसी दशा से है जिसमें अवलोकनकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह की सभी सामान्य गतिविधियों में स्वयं भी भाग लेता है।"[6]

---

1 "This procedure is used when the investigator can so disguise himself as to be accepted as a member of the group." —Goode and Hatt. *op. cit.*, p. 121.

2 "The Participant observer, using non-controlled observation, generally lives or otherwise shares in the life of the group which he is studying."
—P. V. Young, *op. cit.*, p. 159

3 G A. Lundberg, *Social Research*, p. 375.

4 Forcese and Richer, *Social Research Methods*, p 159.

5 John Madge, *The Tools of Social Sciences*, p 112.

6 "Participant observation usually refers to a situation where the observer as near as may be a member of the group he is studying and participates normal activities." —P. H. Mann, *Methods of Sociological Enquiry*,

ऑक्सफोर्ड कन्साइज शब्दकोश में अवलोकन को इस प्रकार परिभाषित किया गया है "घटनाएं कार्य-कारण अथवा पारस्परिक सम्बन्धों के सम्बन्ध में, जिस रूप में वे उपस्थित होती है, का यथार्थ निरीक्षण एवं वर्णन है।"[1]

श्रीमती पी. वी. यंग के अनुसार, "अवलोकन को नेत्रो द्वारा सामूहिक व्यवहार एवं जटिल सामाजिक संस्थाओं के साथ-ही-साथ सम्पूर्णता की रचना करने वाली पृथक् इकाइयों के अध्ययन की विचारपूर्ण पद्धति के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।" श्रीमती यंग ने अन्यत्र लिखा है, "अवलोकन स्वतः विकसित घटनाओं का उनके घटित होने के समय ही उनका नेत्रो द्वारा व्यवस्थित तथा जान-बूझकर किया गया अध्ययन है।"[2]

सी. ए. मोजर के अनुसार, "ठोस अर्थ में अवलोकन में कानों तथा वाणी की अपेक्षा नेत्रों के प्रयोग की स्वतन्त्रता है।"[3]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि अवलोकन प्राथमिक सामग्री संकलित करने की एक प्रत्यक्ष एवं महत्वपूर्ण प्रविधि है। इसमें अध्ययनकर्ता घटनाओं को देखता है, सुनता है, समझता है और सम्बन्धित सामग्री का सकलन करता है। अवलोकन के लिए अवलोकनकर्ता समूह अथवा समुदाय के दैनिक जीवन में भाग ले भी सकता है और दूर बैठकर भी देख कर सकता है। अवलोकन में मानव अपनी ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग करता है।

अवलोकन की विशेषताएं

विभिन्न परिभाषाओ के आधार पर अवलोकन की निम्न विशेषताएं प्रकट होती हैं :

(1) **मानव इन्द्रियों का प्रयोग** (Use of Human Senses)—अवलोकन विधि में मानव इन्द्रियों का पूर्ण एवं व्यवस्थित प्रयोग किया जाता है। इसमें अवलोकनकर्ता अपने कान एवं वाणी का प्रयोग भी करता है, किन्तु नेत्रों का प्रयोग ही इसमे विशेष रूप से किया जाता है। वह नेत्रों द्वारा घटनाओं का निरीक्षण करता है और उन्हें संकलन हेतु नोट कर लेता है।

(2) **प्राथमिक सामग्री का संकलन** (Collection of Primary Data)—इस विधि में अवलोकनकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होकर घटनाओं के बारे में प्राथमिक स्तर (first hand) की सूचनाएं एकत्रित करता है, अतः वे अधिक विश्वसनीय होती है।

[illegible] Purposive

करता है जिनका सम्बन्ध उसके अध्ययन से है।

(4) **कार्य-कारण सम्बन्ध का पता लगाना** (To find out cause-effect Relationship)—सामान्य अवलोकन एवं वैज्ञानिक अवलोकन में यह मूल अन्तर है कि सामान्य अवलोकन में अवलोकनकर्ता केवल घटनाओ को देखता है जबकि वैज्ञानिक अवलोकन में वह घटनाओं को देखकर उनके कारणों और परिणामो की भी खोज करता है जिनके आधार पर सिद्धान्त निर्माण की ओर बढ़ा तथा वास्तविकता का पता लगाया जाता है।

---

1 "..... accurate watching and noting of phenomena as they occur in nature with regard to cause and effect or mutual relations." Oxford Concise Dictionary, quoted by C. A. Moser, *Survey Methods in Social Investigation*, p. 169.

2 "Observation is a systematic and deliberate study through the eyes, of the spontaneous occurances at the time they occur."
—P. V. Young, *Scientific Social Surveys and Research*, p. 154.

3 ".. In the strict sense, Observation implies the use of the eyes rather than of the ears and voice."
—C. A. Moser, *op. cit.*, p. 119

(5) **व्यावहारिक एवं अनुभवाश्रित अध्ययन** (Practical and Empirical study)—**मोजर** का मत है कि अवलोकन एक प्रयोगात्मक एवं अनुभवाश्रित अध्ययन पद्धति है जिसके द्वारा सामूहिक एवं विशेष दोनों ही प्रकार के व्यवहारों का अध्ययन किया जा सकता है। अवलोकन द्वारा किया जाने वाला अध्ययन काल्पनिक न होकर व्यावहारिक या अनुभवों पर आश्रित होता है।

(6) **निष्पक्षता** (Impartiality)—अवलोकन में अध्ययनकर्ता स्वयं अपनी आंखों से घटनाओं को देखता है और उनकी भली-भांति जांच करता है, उन्हें वैज्ञानिक कसौटी पर कसता है, अतः उसका निष्कर्ष निष्पक्ष एवं वैज्ञानिक होता है और वह अभिनति (Bias) से बच जाता है।

(7) **प्रत्यक्ष अध्ययन** (Direct Study)—इसमे अध्ययनकर्ता घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप से देखता है, उनसे सम्बन्धित लोगों से सम्पर्क करता है तथा तथ्यों का संकलन करता है।

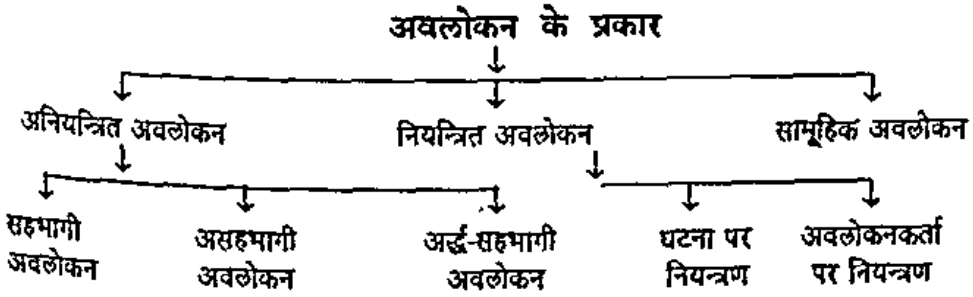
(8) **सामूहिक व्यवहार का अध्ययन** (Study of the Collective Behaviour)—जिस प्रकार से व्यक्तिगत व्यवहार का अध्ययन करने के लिए 'वैयक्तिक अध्ययन पद्धति' (Case Study Method) को श्रेष्ठ माना गया है, उसी प्रकार से सामूहिक व्यवहार का अध्ययन करने के लिए अवलोकन विधि को उत्तम माना गया है।

(9) **विचारपूर्वक किया जाने वाला अध्ययन** (Deliberate Study)—श्री जहोडा का मत है कि अवलोकन एक ऐसी विधि है जिसमे अवलोकनकर्ता स्वयं घटनाओं का विचारपूर्वक अध्ययन कर तथ्यों का संकलन करता है। वह दूसरो की कही हुई या सुनी हुई बातों पर निर्भर नही रहता।

अवलोकन की इन्हीं विशेषताओं के कारण इसे विश्वसनीय एवं वैज्ञानिक विधि की एक महत्वपूर्ण प्रविधि माना गया है।

अवलोकन के प्रकार

सामाजिक घटनाएं विविध एवं जटिल प्रकृति की होती हैं। सभी प्रकार की घटनाओं का अध्ययन एक ही प्रकार के अवलोकन से नहीं किया जा सकता। कभी तो एक अकेला अध्ययनकर्ता ही सम्पूर्ण घटना की जानकारी कर लेता है, किन्तु कभी अध्ययन के लिए विशेषज्ञों के एक दल की आवश्यकता होती है। कभी अध्ययनकर्ता अध्ययन के समय स्वयं पर नियन्त्रण रखता है तो कभी अध्ययन किये जाने वाले समूह पर। कभी वह स्वयं अध्ययन किये जाने वाले समूह की दैनिक क्रियाओं मे भाग लेता है तो कभी दूर बैठकर निरीक्षण करता है। इन्हीं कारणों से अवलोकन के विभिन्न प्रकार विकसित हुए। मूलतः अवलोकन को नियन्त्रित और अनियन्त्रित तथा सहभागी और असहभागी श्रेणियों में बांटा गया है। अवलोकन के विभिन्न प्रकारों को चार्ट द्वारा हम इस प्रकार प्रकट कर सकते हैं :



हम यहां अवलोकन के उपर्युक्त सभी प्रकारों का उल्लेख करेंगे।

I. अनियन्त्रित अवलोकन (Un-controlled Observation)

हम सामाजिक घटनाओं का अध्ययन नियन्त्रित और अनियन्त्रित दोनों प्रकार के अवलोकनों द्वारा कर सकते हैं। अनियन्त्रित अवलोकन में अवलोकनकर्ता एवं अवलोकित किये जाने वाले समूह दोनों में से किसी पर भी किसी प्रकार का नियन्त्रण नहीं रखा जाता। अवलोकनकर्ता घटनाओं का उनके वास्तविक एवं स्वाभाविक रूप में ही अध्ययन करता है। अनियन्त्रित अवलोकन में किसी प्रकार की विशेष संरचना, औपचारिकता एवं नियोजन नहीं होता। इसके एक साधारण क्रिया होने के कारण **गुडे** एवं **हाट** इसे 'साधारण अवलोकन' (Simple Observation) कहते हैं। **जहोडा** एवं **कुक** इसे 'असंरचित अवलोकन' (Unstructured Observation) कहते हैं। अनियन्त्रित अवलोकन को 'स्वतन्त्र अवलोकन' (Open Observation), अनौपचारिक अवलोकन (Informal Observation) तथा 'अनिर्देशित अवलोकन' (Undirected Observation), आदि नामों से भी पुकारा जाता है।

सामाजिक अनुसन्धान के क्षेत्र में अनियन्त्रित अवलोकन एक प्राचीन विधि है। इस बात को प्रकट करते हुए **गुडे** एवं **हाट** लिखते हैं, "सामाजिक सम्बन्धों के विषय में मनुष्य के पास जो कुछ भी ज्ञान है, उसका अधिकांश भाग अनियन्त्रित अवलोकन के द्वारा ही प्राप्त किया गया है, चाहे वह सहभागी हो या असहभागी।"[1] इस कथन से अनियन्त्रित अवलोकन का महत्व एवं उपयोगिता स्वतः स्पष्ट हो जाती है।

अनियन्त्रित अवलोकन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए **पी. वी. यंग** ने लिखा है, "अनियन्त्रित अवलोकन में हम वास्तविक जीवन से सम्बन्धित परिस्थितियों की सतर्कतापूर्वक जांच करते हैं जिनमें यथार्थता के यन्त्रों के प्रयोग अथवा निरीक्षण की हुई घटना की शुद्धता की जांच का कोई प्रयत्न नहीं किया जाता।" यंग की इस परिभाषा से अनियन्त्रित अवलोकन की तीन विशेषताएं प्रकट होती है—(i) इस विधि में अवलोकनकर्ता पर किसी प्रकार का नियन्त्रण नही रखा जाता, (ii) इसमें अध्ययनकर्ता घटनाओं व परिस्थितियों का उनके स्वाभाविक रूप में अध्ययन करता है, तथा (iii) अवलोकनकर्ता इस विधि में घटनाओं को परखता नहीं है, अतः यह एक अत्यन्त सरल प्रविधि है। अनियन्त्रित अवलोकन को उसकी प्रकृति के आधार पर सहभागी, असहभागी एवं अर्द्ध-सहभागी प्रकारों में बांटा गया है। हम यहां इन तीनों ही प्रकारों का उल्लेख करेंगे।

1. सहभागी अवलोकन (Participant Observation)

सन् 1924 में **लिण्डमैन**[2] ने अपनी पुस्तक 'सोशल डिस्कवरी' (*Social Discovery*) मे सर्वप्रथम सहभागी अवलोकन शब्द का प्रयोग किया। उन्होंने अनुसूची और प्रश्नावली के द्वारा किये जाने वाले अध्ययनों की कमियों एवं सहभागी अवलोकन की उपयोगिता की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया। **लिण्डमैन** ने सहभागी अवलोकन के बारे में लिखा है, "सहभागी अवलोकन इस सिद्धान्त पर आधारित है कि किसी घटना का निर्वचन तभी करीब-करीब शुद्ध हो सकता है जब वह वाह्य तथा आन्तरिक दृष्टिकोण से मिलकर बना हो। इस प्रकार उस व्यक्ति का दृष्टिकोण, जिसने घटना में भाग लिया तथा जिसकी इच्छाएं एवं

1 "Most of the knowledge which people have about social relations is derived from un-controlled observation, whether participant or non-participant."
—Goode and Hatt, *op. cit*, p. 120

Lindman, *Social Discovery*, pp. 178-179.

अनुसन्धान का एक प्रमुख यन्त्र मानते हुए लिखते हैं, "अनुसन्धान का प्राथमिक यन्त्र मानव-बुद्धि का अवलोकन तथा अनुभवों के आधार पर ज्ञान प्राप्त करना होता है।"[1]

अवलोकन विधि का प्रयोग केवल भौतिक विज्ञानों तक ही सीमित नहीं है, वरन् सामाजिक विज्ञानों में भी इसका प्रयोग काफी हुआ है। मानव व्यवहार एवं वह परिस्थिति जिसमें मानव व्यवहार घटित होता है, का अध्ययन करने के लिए अवलोकन विधि का प्रयोग किया जाता है। समाज-वैज्ञानिकों ने इस विधि का प्रयोग अपने ही साथी एवं स्वजातीय मनुष्यों एवं स्त्रियों तथा संस्थाओं के निरीक्षण के लिए किया है। समाजशास्त्र के जन्मदाता **आगस्त कॉम्ट** जब समाजशास्त्र की रूपरेखा का निर्माण कर रहे थे, तब उन्होंने यह अनुभव किया कि समाजशास्त्र (जिसको सर्वप्रथम उन्होंने सामाजिक भौतिकी कहा था) को वैज्ञानिक आधारो का विषय बनाना है तो अवलोकन विधि द्वारा उसकी विषय-वस्तु का निर्माण होना चाहिए। उन्होंने कहा, "समाजशास्त्र तभी विज्ञान की श्रेणी में आ सकता है जब वह सामाजिक घटनाओं का प्रत्यक्ष अवलोकन एवं उनका वर्गीकरण करे।" उन्होंने प्रत्यक्ष अवलोकन द्वारा घटनाओं के अध्ययन पर बल दिया। सम्भवतः तभी से समाजशास्त्र में अवलोकन विधि अध्ययन की एक महत्वपूर्ण विधि बन गई।

समाज-विज्ञानों के क्षेत्र में अवलोकन विधि का प्रयोग कई विद्वानों ने किया है। **जॉन हावार्ड** (John Howard) ने कैदियों के जीवन तथा जेल की दशाओं के अध्ययन के लिए सहभागिक अवलोकन किया। **फ्रेडरिक लीप्ले** (Frederic Le-Play) ने श्रमिक परिवारों पर औद्योगीकरण के प्रभावों का अध्ययन करने के लिए सहभागिक अवलोकन विधि का प्रयोग किया। **चार्ल्स बूथ** ने लंदन के श्रमिकों का अध्ययन सहभागिक अवलोकन द्वारा किया और 'द लाइफ एण्ड लेबर ऑफ द पीपुल ऑफ लन्दन' (The Life and Labour of the People of London) नामक पुस्तक 17 ग्रन्थों में प्रकाशित की। **मैलिनोवस्की** ने ट्रोब्रियाण्डा द्वीप-वासियों का, **लिण्ड** ने 'मिडिल टाउन का, **डोलार्ड** ने 'सदर्न स्टेट्स' का, **वार्नर** एवं **लंट** ने 'यांकीसिटी का अध्ययन अवलोकन विधि द्वारा ही किया। भारत में भी डॉ. एम. एन. श्रीनिवास, डा. श्यामा चरण दुबे, डा. वृजराज चौहान, डॉ. मजूमदार, आदि समाजशास्त्रियों ने ग्रामीण अध्ययनों में इस विधि का भी सहारा लिया। वर्तमान समय में सामाजिक अनुसन्धान एवं सर्वेक्षण के क्षेत्र में प्राथमिक स्तर पर प्रत्यक्ष एवं वैज्ञानिक रूप से घटनाओं की जानकारी एवं तथ्यों के संकलन के लिए अवलोकन विधि का प्रयोग सर्वाधिक उचित एवं संतोषजनक माना जाता है। ज्ञान संग्रह की यह एक महत्वपूर्ण प्रविधि है।

अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा
(MEANING AND DEFINITION OF OBSERVATION)

'अवलोकन' शब्द अंग्रेजी भाषा के 'Observation' का हिन्दी रूपान्तरण है जिसका अर्थ 'देखना', 'प्रेक्षण', 'निरीक्षण', और 'अवलोकन करना' है। दूसरे शब्दों मे 'कार्य-कारण अथवा पारस्परिक सम्बन्धों को जानने के लिए स्वाभाविक रूप से घटित होने वाली घटनाओं को सूक्ष्म रूप से देखना ही अवलोकन है।'

1 "The primary research instrument would seem to be observing the human intelligence, trying to make sense out of the experience."

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि **सहभागी अवलोकन में अवलोकनकर्ता अध्ययन किये जाने वाले समूह में रहता है और उसका एक अंग बनकर तथ्यों का संकलन करता है।**

अनेक समाज-वैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन में सहभागी अवलोकन विधि का प्रयोग किया है। जॉन हावर्ड ने कैदियों का, लीप्ले तथा वूथ ने श्रमिक परिवारों का, मैलिनोवस्की ने ट्रोब्रियाण्डा द्वीप की 'अग्रोनाट जनजाति' का, रेमण्ड फर्थ ने 'टिकोपिया' लोगों का, नेल्स एण्डरसन ने होबो लोगों का एवं **वाईट** ने सड़कों पर जीवन व्यतीत करने वाले लोगों का सहभागी अवलोकन विधि से ही अध्ययन किया। इस विधि द्वारा सामान्यतः समुदायों, आदिम जातियों एवं उनकी संस्कृति का अध्ययन किया जाता रहा है। किसी भी समूह की प्रथाओं, उत्सवों, विश्वासों, लोकगीतों, धार्मिक क्रियाओं एवं व्यवहारों के अध्ययन के लिए यह एक उपयुक्त विधि मानी जाती है।

इस सन्दर्भ में ये प्रश्न उठते हैं कि एक अवलोकनकर्ता को किस सीमा तक अपने को अध्ययन किये जाने वाले समूह के साथ घुला-मिला देना चाहिए, किन-किन क्रियाओं में उसे भाग लेना चाहिए और किन में नहीं । क्या उसे समूह के लोगों को अपना उद्देश्य एवं परिचय बता देना चाहिए ? अध्ययनकर्ता का समूह में क्या स्थान होना चाहिए ?

इनके उत्तर में मत भिन्नता पायी जाती है। **अमेरिकन समाजशास्त्रियों का मत** है कि एक अवलोकनकर्ता को अपना परिचय एवं उद्देश्य बताए बिना ही समूह का अध्ययन करना चाहिए। उसे इस चालाकी और सतर्कता से काम करना चाहिए कि समूह के लोग उसे अपना ही व्यक्ति समझने लगें। ऐसा करने पर ही वह समूह का वास्तविक अध्ययन कर सकता है।

दूसरी ओर **भारतीय समाजशास्त्रियों का मत** इसके विपरीत है। वे कहते हैं कि भारत जैसे देश में अवलोकनकर्ता को समूह के लोगों को अपना परिचय एवं उद्देश्य स्पष्ट कर देना चाहिए ताकि लोग उसे शंका की दृष्टि से नहीं देखें और तथ्यों के संकलन में वे अपना सहयोग दे सकें। ऐसा करने से अवलोकनकर्ता को समूह के लोगों का विश्वास प्राप्त हो जायेगा और वे उसे समूह में उचित स्थान प्रदान करेंगे। भारत जैसे देश में जहां अधिकांश लोग अशिक्षित हैं, बिना अपना परिचय एवं उद्देश्य बताए लोगों के सामाजिक जीवन में भाग लेना उनमें अनुसन्धानकर्ता के प्रति सन्देह ही उत्पन्न करता है, तब वे अपने वास्तविक व्यवहार में परिवर्तन कर सकते हैं। नैतिक दृष्टि से भी यह उचित है कि अवलोकनकर्ता समूह के लोगो को मिथ्या बातें न कहें।

श्री बी. डी. पाल ने उन कार्यों का उल्लेख किया है जिनमें सहभागी अवलोकनकर्ता भाग ले सकता है, जैसे—खेत जोतने में सहायता देना, मकान बनाने में मदद करना, धनुष-बाण से शिकार करने वाली जनजाति के लिए अपनी बन्दूक से शिकार कर उन्हें भोजन उपलब्ध कराना, अपनी गाड़ी में बिठाकर ले जाना व उनसे बातचीत करना, उनमें चित्र और फोटो का वितरण करना, त्यौहारों पर भोजन व धन बांटना, वाद्य यन्त्र बजाना, लोगों को अपने घर पर गप-शप के लिए बुलाना, बच्चो को मिठाइयां व खिलौने देना, आदि।

सफल सहभागी अवलोकनकर्ता के लिए आवश्यक है कि उसे अपने अध्ययन समूह के लोगों की भाषा, रीति-रिवाज, व्यवहार, प्रथाओं एव परम्पराओं की पूर्व जानकारी हो। जब वह समूह के लोगो से उनकी भाषा में बात करता है तो वे उसे अपना ही व्यक्ति समझने लगते हैं और उससे किसी बात को साधारणतः छुपाते नही। सहभागी अनुसन्धानकर्ता को वाकपटु एवं व्यवहार कुशल भी होना चाहिए। एक अनुसन्धानकर्ता किस सीमा तक सहभागी सकता है, यह समूह के आकार पर भी निर्भर करता है। परिवार में पूर्ण सहभागिता

सरल है जबकि एक बड़े नगर में सीमित मात्रा में ही सम्भव है। इसके अतिरिक्त अनुसन्धान के विषय, एवं अवलोकनकर्ता के व्यक्तित्व एवं कुशलता पर भी सहभागिता की मात्रा निर्भर है। सहभागी अवलोकनकर्ता को चाहिए कि वह अपने को समूह से इतना घनिष्ठ नहीं बना ले कि समूह के प्रति उसमें पक्षपात की भावना आ जाए।

सहभागी अवलोकन के गुण (लाभ) (Merits of Participant Observation)

सामाजिक अनुसन्धान में सहभागी अवलोकन का महत्व उसके निम्नांकित गुणों या लाभों से स्पष्ट है :

(1) **विस्तृत सूचनाएं** (Wider Informations)—इस विधि में अध्ययनकर्ता समूह की सभी गतिविधियों में भाग लेता है, अतः उसके बारे में विस्तृत सूचनाएं संकलित कर सकता है। इतनी विस्तृत सूचनाएं प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार अथवा अन्य विधियों से ज्ञात नहीं की जा सकती।

(2) **सूक्ष्म एवं गहन अध्ययन** (Minute and Intensive Study)—इस अध्ययन विधि मे अध्ययनकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होता है और समूह के जीवन में भाग लेता है, अतः वह समूह के बारे में छोटी-से-छोटी बातों का भी गहराई से अध्ययन कर लेता है। इस विधि की गहनता व सूक्ष्मता को प्रकट करते हुए **जहोडा** एवं **कुक** लिखते हैं, "सक्रिय सहभागिता उन सूचना स्रोतों के द्वार खोलती है जो अन्यथा बन्द ही रह सकते थे।"[1]

(3) **प्रत्यक्ष अध्ययन** (Direct Study)—इस विधि में अवलोकनकर्ता सामाजिक व्यवहारों का प्रत्यक्ष रूप से अध्ययन करता है, अतः उसकी जानकारी अधिक सही एवं वैज्ञानिक होती है। अध्ययनकर्ता अस्थायी रूप से समूह में रहता है, लोगों के व्यवहारों, कार्यकलापों, संस्कृति, आदि के बारे में प्रत्यक्ष रूप से तथ्यों का संकलन करता है। इसके लिए वह लोगों से घनिष्ठ एवं औपचारिक सम्बन्ध भी स्थापित करता है।

(4) **वास्तविक व्यवहार का अध्ययन** (Study of Actual Behaviour)—चूंकि सहभागी अवलोकनकर्ता को समूह के सदस्यों द्वारा भी अपना लिया जाता है, अतः वे उसके सामने कृत्रिम व्यवहार नहीं करते जैसा कि अनजान लोगों के समक्ष किया जाता है, अतः इस विधि द्वारा लोगों के वास्तविक व्यवहार का अध्ययन करना सम्भव है। **जहोडा** एवं **कुक** ने भी इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है, "सामुदायिक जीवन में सहभागिता वास्तव में अवलोकनकर्ता की स्थिति में 'स्वाभाविकता' को बढ़ाती है।"

(5) **अधिक विश्वसनीयता** (Greater Reliability)—चूंकि इस विधि मे अध्ययनकर्ता स्वयं सूचनाएं संकलित करता है, अतः वे अधिक विश्वसनीय होती हैं। दूसरों के द्वारा घटनाओं को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करने से घटनाएं विश्वसनीय नहीं रह पातीं, सहभागी अवलोकन इस दोष से मुक्त है।

(6) **संग्रहित सूचनाओं की सत्यापनशीलता** (Verifiability of Collected informations)—इस विधि मे अवलोकनकर्ता द्वारा संग्रहित सूचनाओं की सत्यता की जांच भी कर ली जाती है क्योंकि अध्ययनकर्ता स्वयं समुदाय की गतिविधियों में भाग लेता है। अतः आशंका होने पर पुनः वैसी ही परिस्थितियां आने पर वह तथ्यों का पुनर्परीक्षण कर सकता है।

(7) **सरल अध्ययन** (Easy Study)—चूंकि सहभागी अवलोकन में अवलोकनकर्ता समूह का सदस्य बन जाता है, उस पर सन्देह एवं अविश्वास नहीं किया जाता, अतः वह

1 Jahoda and Cook, *op. cit.* p. 220.

विना रोक-टोक के समूह के सभी कार्यक्रमों में भाग लेता है और सरलता से उनका कर सकता है। चूंकि अध्ययनकर्ता को वार-वार अध्ययन क्षेत्र में नहीं जाना पड़ता है, यह एक सुविधापूर्ण अध्ययन विधि भी है।

(8) **अध्ययनकर्ता की कुशलता में वृद्धि** (Increase in Skillness of observer)—लम्बे समय तक समूह में रहने एवं उसकी क्रियाओं में भाग लेने के कारण अध्ययन अनुभवी एवं कुशल हो जाता है, उसमें प्रत्येक स्थिति को समझने की क्षमता पैदा हो जाती

(9) **स्वयं अवलोकनकर्ता सामुदायिक जीवन का एक दर्पण** (Observer Himself mirror of Community Life)—सहभागी अवलोकनकर्ता स्थानीय समूह के साथ इ घुल-मिल जाता है कि वह स्वयं भी समूह के अन्य सदस्यों की भाति व्यवहार करने ल है, उसका व्यवहार अवलोकित किये गये समूह का प्रतिनिधित्व करता है। अतः उसके व्यव से ही समूह के बारे में कई सूचनाएं प्रकट हो जाती हैं।

उपर्युक्त गुणों के अतिरिक्त सहभागी अवलोकन के कुछ और लाभ भी है, जैसे (i) इ उत्तरदाताओं की संवेगात्मक स्थितियों को सरलता से समझा जा सकता है, (ii) अवलोकनक संवेदनशील प्रश्नों के उत्तर भी ज्ञात कर सकता है, (iii) इसमें भावनात्मक एवं गुणात्म तथ्यों का विश्लेषण सरलता से किया जा सकता है, (iv) संग्रहित तथ्यों को अंकित का सरल होता है, (v) इसमें अवलोकनकर्ता की निगाहे अधिक सूक्ष्म एवं पैनी हो जाती (vi) कम समय मे इस विधि द्वारा अधिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

सहभागी अवलोकन के दोष एवं सीमाएं (Demerits and Limitations of Participant Observation)

सहभागी अवलोकन के कई लाभों के होते हुए भी यह एक पूर्ण विश्वसनीय ए वैज्ञानिक विधि नही कही जा सकती क्योंकि इसकी कुछ सीमाएं या कमियां भी है :

(1) **पूर्ण सहभागिता सम्भव नहीं** (Full Participation Impossible)—**एम. एन. ब** कहते है, "एक क्षेत्रीय कार्यकर्ता कुछ व्यावहारिक कारणों से, अध्ययन किये जाने वाले समुदाय के जीवन में कभी भी पूर्णतया भाग नहीं ले सकता।"[1] बसु का यह कथन पूर्णतया सत्य है क्योंकि कैदियों या वेश्याओं के अध्ययन में अध्ययनकर्ता उनके मध्य रह तो सकता है किन्तु उनकी मनोवृत्तियों, आदतों, आदि को अपने में विकसित करना कठिन है। इसी प्रकार से जनजातियों के अध्ययन के दौरान उनके रीति-रिवाजों के अनुसार ही रहना एक अध्ययनकर्ता के लिए सामान्यतः सम्भव नहीं है। इन कठिनाइयों के कारण ही रेडिन और हर्षकोविट्स जैसे अमेरिकन समाज-वैज्ञानिक इस प्रविधि को अव्यावहारिक मानते हैं। **लुण्डबर्ग** का मत है कि सस्तरण वाले समुदाय में भी यह विधि उपयोगी नहीं है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति हरिजन वस्ती में रह कर उसका सहभागी अध्ययन करता है, किन्तु यदि वही व्यक्ति ब्राह्मण वस्ती मे जाकर भी अध्ययन करना चाहे तो लोग उसे अपनाने एव सूचना देने से मना कर सकते हैं।

(2) **वैषयिकता का अभाव** (Lack of Objectivity)—अध्ययन किये जाने वाले समूह मे निवास करने के कारण अध्ययनकर्ता में समूह के प्रति वफादारी, आत्मीयता, सहयोग एवं लगाव की भावना उत्पन्न हो जाती है, अतः वह निष्पक्षतापूर्वक तथ्यो का संकलन नहीं

1 M. N. Basu, *Field Methods in Anthropology and other Social Sciences.* (1961) pp. 20-21.

र पाता है। एक तटस्थ अवलोकनकर्ता के स्थान पर वह अपने को एक वर्ग का सदस्य ानने लगता है, उसका वैज्ञानिक दृष्टिकोण समाप्त हो जाता है और वह घटनाओं को ातिरंजित रूप में देखने लगता है। गुडे एवं हाट ने सच ही कहा है, "जितना अधिक वह ावात्मक रूप से सहभागी बनता है, उतना ही उसकी वैषयिकता, जो उसकी एकमात्र ेशाल सम्पत्ति है, नष्ट हो जाती है।"[1]

(3) समूह के व्यवहार में परिवर्तन (Change in group Behaviour)—कई बार ाध्ययनकर्ता समूह में महत्वपूर्ण पद प्राप्त कर लेता है और वह स्वयं ही समूह के लोगों के यवहारों को प्रभावित एवं परिवर्तित करने लगता है। उदाहरण के लिए, यदि अध्ययनकर्ता ेसी पाठशाला का अध्यापक, पंचायत का पंच या सरपंच, सहकारी समिति का अध्यक्ष, ादि बना दिया जाता है और वह अपने अधिकारों, गुणों एवं व्यक्तित्व के प्रभाव से लोगों के वास्तविक व्यवहारों में परिवर्तन ला देता है तब उस समूह का वह वैज्ञानिक अध्ययन हीं कर पायेगा।

(4) अत्यधिक खर्चीली प्रणाली (Most Expensive Method)—सहभागी अवलोकन विधि अत्यधिक खर्चीली है क्योंकि इस विधि द्वारा अध्ययन करने में बहुत समय लगता है। प्रश्नावली एवं अनुसूची, आदि विधियों की तुलना में इस विधि द्वारा अध्ययन में सर्व भी अधिक होता है।

(5) सीमित क्षेत्र में अध्ययन (Study in Limited Area)—सहभागी अवलोकन की एक कमी यह है कि इसके द्वारा एक सीमित क्षेत्र का अध्ययन ही सम्भव है क्योंकि इसमें समय और धन अधिक लगता है तथा सभी लोगों से सम्पर्क स्थापित कर सूचनाएं संकलित करना भी कठिन रहता है। इस प्रकार इस विधि द्वारा विस्तृत क्षेत्र का अध्ययन नहीं किया जा सकता।

(6) धीमा अध्ययन (Slow Study)—चूंकि सहभागी अवलोकन में लोगों से घनिष्ट सम्पर्क स्थापित करना पड़ता है और उसमें अधिक समय लगता है, इसलिए इस पद्धति द्वारा अध्ययन धीमी गति से होता है। अतः यह तेज गति से अध्ययन करने की आधुनिक विधियों में असमर्थ है।

लिखते है, "यह कोई एक शाम को किसी नाटकीय अभिनय करने की बात नहीं है। इसका मतलब है—सारे समय सफल अभिनय करना। मेरी समझ में ऐसे सफल अभिनेता का चित्र सन्देहप्रद ही है जो अनुसन्धान में भी रुचि रखता हो।"[1]

2. **असहभागी अवलोकन** (Non-participant Observation)

जब अवलोकनकर्ता किसी समूह के जीवन में भाग लिए बिना समूह की क्रियाओं से अलग रहकर एक वैज्ञानिक की भांति तटस्थ द्रष्टा के रूप मे उनका अध्ययन करता है तो इसे असहभागी अवलोकन कहते हैं। इस विधि में अध्ययनकर्ता समूह या समुदाय में जाकर लम्बे समय तक निवास नहीं करता और न ही उनकी गतिविधियों में भाग ही लेता है। वह एक अपरिचित और मौनदर्शक होता है। इस प्रकार के अध्ययन मे स्वतन्त्रता व निष्पक्षता की अधिक सम्भावना रहती है। लोगों को पूर्व सूचना दिये बिना वह घटनाओ के समय उपस्थित होकर जानकारी प्राप्त कर लेता है। वह जो कुछ देखता है, उसकी गहराई से जानकारी प्राप्त करता है। किन्तु पूर्ण असहभागी अध्ययन भी सम्भव नही है। उसे कुछ क्रियाओं व गतिविधियों में तो समूह के लोगों के साथ रहना ही पड़ता है। **गुडे एवं हाट** लिखते हैं, "जैसा कि छात्र समझ सकते हैं, विशुद्ध असहभागी अवलोकन कठिन है।"[2] असहभागी विधि का प्रयोग प्रायोगिक अवलोकन के लिए अधिक होता है। जैसे किसी कारखाने के श्रमिकों एवं स्कूली बच्चों के कार्य एवं अवकाश के क्षणो का अध्ययन इस विधि द्वारा किया जाता है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों के लिए भी अध्ययनकर्ता दूर बैठकर बालकों की विभिन्न क्रियाओं का अध्ययन करता है। इस विधि में समूह के वाह्य लक्षणों का ही अध्ययन हो पाता है, आन्तरिक सम्बन्धों की सूक्ष्म एवं गहन जानकारी इससे सम्भव नहीं है। असहभागी अवलोकनकर्ता ग्रामो में मंचित नाटकों को दूर बैठकर देख सकता है, लोकगीतों को चुपके से बैठकर टेप कर सकता है या सुन सकता है।

असहभागी अवलोकन के गुण (लाभ) (Merits of Non-participant Observation)

सहभागी अवलोकन के दोष ही असहभागी अवलोकन के गुण है। प्रमुखतः इसके गुण (लाभ) या उपयोगिता इस प्रकार हैं :

(1) **वैषयिकता** (Objectivity)—असहभागी अवलोकन में अवलोकनकर्ता समूह के साथ अपने को घुलाता-मिलाता नहीं है वरन् एक तटस्थ और निष्पक्ष द्रष्टा के रूप में घटनाओं को देखता है। उसकी उपस्थिति से घटनाएं प्रभावित नहीं होतीं, अतः अध्ययन में वैषयिकता एवं वैज्ञानिकता बनी रहती है और पक्षपात नही आ पाता।

(2) **विश्वसनीयता** (Reliability)—इस प्रकार के अध्ययन में अवलोकनकर्ता दूर बैठकर स्वयं ही सभी घटनाओं को नोट कर लेता है, अतः उसके द्वारा एकत्रित सूचनाएं अधिक विश्वसनीय होती हैं।

(3) **अधिक सहयोग** (More Co-operation)—इसमें अवलोकनकर्ता समुदाय के किसी विशिष्ट समूह के साथ घुलता-मिलता नहीं है, अतः उसे सभी लोगों का आदर और सहयोग प्राप्त होता है।

---

1 William F. Whyte, Quoted by Johada & others in '*Research Methods in Social Relations*.'

2 Goode and Hatt, *op. cit.*, p. 122.

(4) **कम खर्चीली** (Less Expensive)—असहभागी अवलोकन में सहभागी अवलोकन ी तुलना में कम समय एवं धन खर्च होता है।

(5) **दर्शक अभिनेता की तुलना में अधिक आनन्द ले सकता है** (Spectator can enjoy nore than the actor)—एक दर्शक के रूप में असहभागी अवलोकनकर्ता दूर बैठकर टनाओं की विस्तृत, सूक्ष्म एवं यथार्थ जानकारी प्राप्त कर सकता है जो कि सहभागी अध्ययन सम्भव नहीं है क्योंकि अभिनेता की अपेक्षा दर्शक ही किसी नाटक की वस्तु-स्थिति को ही रूप में आंक सकते है।

सहभागी अवलोकन के दोष या सीमाएं (Demerits or Limitations of Non-participant Observation)

असहभागी अवलोकन की विभिन्न उपयोगिताओ के बावजूद भी इसकी निम्नांकित ीमाएं हैं :

(1) **गुडे एवं हाट** का मत है कि विशुद्ध असहभागी अवलोकन कठिन है। अध्ययनकर्ता ो कुछ न कुछ सीमा तक तो सहभागी होना ही पड़ता है।

(2) असहभागी अवलोकन में अध्ययनकर्ता घटनाओं को अपने ही दृष्टिकोण से देखता , अतः उनकी मौलिकता नष्ट हो जाती है।

(3) कई विषय ऐसे है जिनकी जानकारी केवल सहभागी अवलोकन से ही प्राप्त की ा सकती है, वहां यह विधि सर्वथा अनुपयुक्त है।

(4) असहभागी अवलोकन में कभी-कभी और आकस्मिक रूप से घटने वाली घटनाओं ा अध्ययन नहीं हो पाता।

(5) असहभागी अवलोकन में समूह के लोग अध्ययनकर्ता को सन्देह की दृष्टि से देखते और उसके सम्मुख कृत्रिम व्यवहार करने लगते हैं।

(6) इसमे समस्या के बारे में केवल सतही ज्ञान हो पाता है, विस्तृत एवं गहन नही।

हभागी और असहभागी अवलोकन में अन्तर (Distinction Between Participant and Non-participant Observation)

(1) **सहभागिता के आधार पर**—सहभागी अवलोकन में अध्ययनकर्ता समूह व समुदाय ा एक अभिन्न अंग बनकर उनकी सभी गतिविधियों में भाग लेता है, जबकि असहभागी ावलोकन में वह एक तटस्थ और मौन द्रष्टा के रूप मे अध्ययन करता है।

(2) **गहनता में अन्तर**—सहभागी अवलोकन मे घटनाओ का गहन और सूक्ष्म अध्ययन म्भव है और गुप्त सूचनाएं भी संकलित की जा सकती हैं, जबकि असहभागी अवलोकन यह सम्भव नहीं है।

(3) **समूह के व्यवहार के आधार पर**—सहभागी अवलोकन मे समूह के लोग अवलोकनकर्ता ो अपना ही समूह सदस्य या साथी मानते हैं, अतः उसके सम्मुख स्वाभाविक व्यवहार करते , जबकि असहभागी अवलोकन में अध्ययनकर्ता एक अजनबी और बाहरी व्यक्ति समझा ाता है जिसके सम्मुख कृत्रिम व्यवहार व्यक्त किया जाता है।

(4) **सत्यापन के आधार पर**—सहभागी अवलोकन में अध्ययनकर्ता को घटनाओं की त्यता की जांच करने के कई अवसर प्राप्त होते है, जबकि असहभागी अवलोकन में सत्यापन अवसर सीमित होते हैं।

(5) **समय एवं धन के आधार पर**—असहभागी अवलोकन की तुलना मे सहभागी ावलोकन में समय एवं धन अधिक लगता है।

(6) **वस्तुनिष्टता के आधार पर**—सहभागी अवलोकन की तुलना में असहभागी अवलोकन अधिक वैज्ञानिक एव वस्तुनिष्ठ होता है और उसमें व्यक्ति के पक्षपात के आने की कम सम्भावना रहती है।

(7) **अध्ययन यन्त्रों के आधार पर**—सहभागी अध्ययन में अवलोकनकर्ता अवलोकन कार्ड का प्रयोग नही कर सकता है, जबकि असहभागी अवलोकन मे अवलोकनकर्ता अनुसूची, अवलोकन कार्ड, आदि का प्रयोग कर सकता है।

(8) **कुशलता के आधार पर**—सहभागी अवलोकन में अध्ययनकर्ता अधिक कुशल व प्रशिक्षित होना चाहिए, जबकि असहभागी में सामान्य अनुभव एवं प्रशिक्षण के आधार पर ही अध्ययन सम्भव है।

3. **अर्द्ध-सहभागी अवलोकन** (Quasi-participant Observation)

किसी भी अध्ययन मे पूर्णतः सहभागी और पूर्णतः असहभागी अवलोकन सम्भव नहीं हो पाता, इसलिए ही **गुडे** एवं **हाट** दोनों के मध्यवर्ती मार्ग के रूप में अर्द्ध-सहभागी अवलोकन का सुझाव देते है जिसमें दोनो के गुणों का समावेश होता है। वे लिखते हैं, "व्यक्ति को किसी एक (सहभागी अथवा असहभागी) रूप को पूर्णतया अपनाने की अपेक्षा इन दोनों कार्यों की साथ-साथ पूर्ति करना ही अधिक सुगम होता है।"[1] अर्द्ध-सहभागी अवलोकन में अध्ययनकर्ता समूह के दैनिक कार्यों मे तो सहभागी बना रहता है लेकिन किसी विशेष उत्सव, घटना, क्रिया एवं समारोह के अवसर पर दूर बैठकर उनका अध्ययन करता है। इस विधि मे सहभागी और असहभागी दोनों ही विधियों के लाभ प्राप्त होते हैं और दोनों के दोषों से बचाव हो जाता है। इस सन्दर्भ में **विलियम वाईट** ने उचित ही लिखा है, "हमारे समाज की जटिलता के कारण पूर्ण एकीकरण का दृष्टिकोण अव्यावहारिक रहता है। एक वर्ग के साथ एकीकरण से उसका सम्बन्ध अन्य वर्गों से समाप्त हो जाता है। इसलिए अर्द्ध-तटस्थ स्थिति बनाये रखना ही अधिक श्रेयस्कर होता है, जैसे सामाजिक उत्सवों में भाग लेना, गेंद फेंकना, खेलना, साथ-साथ खाना-पीना और फिर भी यह स्थिति बनाये रखना कि तुम्हारा मुख्य उद्देश्य अनुसन्धान है।"

इस अध्ययन विधि का उपयोग लीप्ले, लिण्ड एवं कई अन्य समाज-वैज्ञानिको ने किया है। जब हम किसी समूह के विशिष्ट व्यवहारो एवं सास्कृतिक जीवन का अध्ययन करना चाहते है तो इस विधि का प्रयोग करते है। लोकगीतो एवं कथाओं, धार्मिक कर्म-काण्डो, उत्सवो, खेल-कूद, जादुई-क्रियाओ, मनोरंजन एवं सांस्कृतिक-कार्यक्रमों, आदि के अध्ययन की यह एक उपयुक्त विधि है।

अनियन्त्रित अवलोकन के गुण (लाभ) [Merits (Advantages) of Uncontrolled Observation]

सामाजिक घटनाओं की प्रकृति ही कुछ ऐसी है कि उनका सदैव ही नियन्त्रित अवलोकन सम्भव नही हो पाता, अतः स्वाभाविक स्थितियो मे ही उनका अवलोकन करना होता है। **पी. वी. यंग** ने उचित ही लिखा है, "ऐसी जीवन की परिस्थितियां जिन्हें नियन्त्रित तथा कृत्रिम दशाओ में अध्ययन किया जा सकता है, अपेक्षाकृत थोड़ी ही होती है। प्रायः ही हमे उस समय अवलोकन करना पड़ता है जब वह सम्भव होता है तथा उसे वास्तविक सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों में जिनमें घटना घटित हुई है, अवलोकन करना पड़ता है।" सम्भवतः

[1] *Ibid.*, p. 123

सी कारण से अनेक सामाजिक सिद्धान्तों का निर्माण और दैनिक जीवन का ज्ञान अनियन्त्रित ावलोकन का ही परिणाम है। अनियन्त्रित अवलोकन किसी भी समुदाय के सम्पूर्ण जीवन ा अध्ययन की सर्वोत्तम विधि है। **गुडे** एवं हाट प्राक्कल्पना की जांच में इसकी उपयोगिता ा उल्लेख करते हुए लिखते हैं, "अनियन्त्रित अवलोकनों को किसी अनुसन्धान योजना के ारम्भिक स्तर पर सम्पन्न करना इसलिए महत्वपूर्ण बताया है कि इसके द्वारा किसी सूक्ष्म ाक्कल्पना की भी क्षेत्रीय जांच की जा सकती है।"[1] **पी. वी. यंग** ने लिखा है, "ध्यानपूर्वक केये गये अवलोकन में अधिक यथार्थता होती है तथा इसमे घटनाओं को भली प्रकार देख सकने की क्षमता का समावेश होता है।"[2] इसकी उपयोगिता को प्रकट करते हुए **मोजर** लेखते है, "क्योंकि इस प्रकार संकलित तथ्य प्रतिष्ठा तथा स्मृति के प्रभावो से बचते रहते हैं तथा इनमे प्रश्नोत्तरों जैसी विश्वसनीयता की कमी नहीं रहती है, ये अधिक शुद्ध तथा सही ा (i) घटनाओं को उनके वास्तविक घटनास्थल पर अवलोकनकर्ता का प्रभाव अध्ययन पर नहीं पड़ता, (iii) इसमें निष्पक्षता, वस्तुनिष्ठता एवं विश्वसनीयता बनी रहती है, तथा (iv) इस विधि द्वारा परिवर्तनशील एवं गतिशील सामाजिक जीवन का अध्ययन सम्भव है।

अनियन्त्रित अवलोकन के दोष (सीमाएं) [Dements (Limitations) of Uncontrolled Observation]

अनियन्त्रित अवलोकन के दोषों का उल्लेख करते हुए **प्रो. बर्नार्ड** लिखते है, "आंकड़े इतने वास्तविक एवं सजीव होते हैं और उनके बारे में हमारी भावनाएं इतनी दृढ़ होती है कि कभी-कभी हम अपनी कल्पना शक्ति को ही ज्ञान का विस्तार समझ लेने की गलती कर बैठते हैं।"[4] इसके प्रमुख दोष इस प्रकार है—(i) इसमें अध्ययनकर्ता पर नियन्त्रण न होने से त्रुटि की सम्भवना रहती है, (ii) इसमें ऐसे तथ्यों के सकलन की भी सम्भावना रहती है जिनका सम्बन्ध अध्ययन से नहीं होता, (iii) तथ्यों का लेखन अवलोकन के बाद में होने से त्रुटिपूर्ण लेखन तथा साथ ही तथ्यों के छूटने की सम्भावना रहती है, (iv) इसमें अवलोकनकर्ता को यह भ्रम पैदा हो जाता है कि वह समूह के बारे में बहुत कुछ जानता है, जबकि वास्तव मे ऐसा नही होता।

II. नियन्त्रित अवलोकन (Controlled Observation)

समाज-विज्ञानों के विकास के साथ-साथ सामाजिक अनुसन्धान की प्रविधियो में भी परिवर्तन आया। इसी के परिणामस्वरूप अनियन्त्रित अवलोकन की कमियों को दूर करने के लिए नियन्त्रित अवलोकन विधि का विकास हुआ। नियन्त्रित अवलोकन में अध्ययनकर्ता स्वयं या घटना पर योजनाबद्ध रूप से नियन्त्रण रखता है। वह वास्तविक स्थिति एवं प्राप्त सामग्री के बीच एक कड़ी या मध्यस्थ की भूमिका निभाता है। वह तो तथ्य संकलन के विभिन्न साधनों का प्रयोग करने का कार्य करता है, ये साधन स्वयं ही सामग्री का संग्रहण करते हैं। इसलिए इस विधि मे तटस्थता तथा वैषयिकता बनी रहती है एवं तथ्यों का सत्यापन सरल रहता है।

1 *Ibid*, p 126.
2 P. V. Young, *op. cit.*, p. 159.
3 C. A. Moser, *op. cit.*, p. 171.
4 "The data are so real and vivid and therefore our feelings about them are so strong that we sometimes tend to mistake the strength of emotions for extensiveness of knowledge." —J Bernard, *Fields and Methods of Sociology*, p 173.

इस विधि को पूर्व नियोजित अवलोकन, संरचित अवलोकन या व्यवस्थित अवलोकन कहते है। नियन्त्रित अवलोकन में तथ्यों का संकलन निश्चित एवं पूर्व नियोजित [illegible] द्वारा किया जाता है। वर्तमान में इस विधि का प्रयोग नेतृत्व, आक्रमण, [illegible] वाले श्रमिको एव शिशु-गृहों के बच्चों के अध्ययन, आदि के लिए किया जाता है।

नियन्त्रित अवलोकन में निम्नांकित बातें स्पष्ट की जाती है—(i) अवलोकित की जाने वाली इकाइयो को स्पष्टत: परिभाषित किया जाता है, (ii) अवलोकन से सम्बन्धित तथ्यों का चुनाव, (iii) अवलोकन की दशाओं, व्यक्तियों, समय तथा स्थान का निर्धारण, (iv) सूचियों को लेखबद्ध करना, (v) अवलोकन में प्रयुक्त होने वाले यंत्रों जैसे फोटोग्राफ, नक्शे, अनुसूचियां, टेप रिकार्डर, फिल्म, आदि का निर्धारण करना। चूकि इस विधि में समय, श्रम और धन की बचत होती है तथा अध्ययन मे [illegible] बनी रहती है, अत: विशेष क्षेत्रो मे किये जाने [illegible] किया जाता है।

नियन्त्रित अवलोकन दो प्रकार से किया जा सकता है—1. अवलोकित की जाने वाली घटनाओ पर नियन्त्रण रखकर और, 2. स्वयं अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण रखकर।

1 **घटनाओ पर नियन्त्रण** (Control over Situations)—जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों मे वैज्ञानिक भौतिक विश्व की परिस्थितियों को प्रयोगशाला की नियन्त्रित अवस्थाओं के अन्तर्गत लाकर नियन्त्रित करने एवं अध्ययन करने का कार्य करते हैं, उसी प्रकार से समाज-वैज्ञानिक भी सामाजिक घटनाओं को सामाजिक परिस्थितियों के अन्तर्गत नियन्त्रित करने एव अध्ययन करने का कार्य करते है। इसलिए इसे सामाजिक प्रयोग भी कहा जाता है, यद्यपि भौतिक विज्ञानों की तरह सामाजिक घटनाओ का प्रयोगशाला मे अध्ययन सरल नही है। इस विधि द्वारा सामाजिक घटनाओं एवं परिस्थितियों पर नियन्त्रण लागू किया जाता है और किसी विशेष परिवर्तन एव उसके प्रभावो को ज्ञात किया जाता है। उदाहरणार्थ, हम समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा पंचायती राज के एक ग्रामीण समुदाय पर पडने वाले प्रभावो को इस विधि द्वारा ज्ञात कर सकते है। इस विधि की सहायता से थकान का अध्ययन, समय एवं गति का अध्ययन, उत्पादकता एवं बालकों के व्यवहारों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया गया है।

2. **अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण** (Control on Observer)—नियन्त्रित अवलोकन की दूसरी विधि यह है जिसमें अवलोकनकर्ता घटना के बजाय स्वय अपने पर नियन्त्रण लागू करता है। सामाजिक घटना की प्रकृति ही ऐसी होती है कि उस पर नियन्त्रण लागू करना कठिन है। ऐसी स्थिति में अवलोकनकर्ता स्वयं पर ही नियन्त्रण लागू कर अध्ययन में आने वाले पक्षपात और व्यक्तिगत प्रभाव से बच सकता है। अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण रखने के लिए साक्षात्कार, अनुसूची, फोटोग्राफ, टेप रिकार्डर, नक्शे, क्षेत्रीय नोट्स, डायरी, कैमरा एवं फिल्म, आदि यन्त्रो का उपयोग किया जाता है। **गुडे एवं हाट** ने अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण के महत्व को बताते हुए लिखा है, "सामाजिक अनुसन्धान में अध्ययन-विषय पर नियन्त्रण रख सकना तुलनात्मक दृष्टि से कठिन होता है, अत: अध्ययनकर्ता को कम-से-कम अपने व्यवहारो पर नियन्त्रण अवश्य ही रखना चाहिए।"[1]

[1] Goode and Hatt, *op. cit.*, p 127.

नियन्त्रित और अनियन्त्रित अवलोकन में अन्तर

(1) नियन्त्रित अवलोकन में घटनाओं या परिस्थितियों पर नियन्त्रण रखकर अध्ययन किया जाता है, जबकि अनियन्त्रित अवलोकन मे घटनाओं को उनके स्वाभाविक एवं स्वतन्त्र रूप में देखा जाता है। उन पर कोई नियन्त्रण लागू नही किया जाता।

(2) नियन्त्रित अवलोकन में अध्ययनकर्ता पर नियन्त्रण होने पर उसे एक निश्चित सीमा के अन्तर्गत व्यवहार करना होता है, जबकि अनियन्त्रित अवलोकन में अध्ययनकर्ता पर किसी प्रकार का नियन्त्रण न होने से वह मुक्त एवं स्वाभाविक व्यवहार करता है।

(3) नियन्त्रित अवलोकन में एक पूर्व-नियोजित योजना के अनुसार अध्ययन करना होता है जबकि अनियन्त्रित अवलोकन में पूर्व नियोजन की आवश्यकता नहीं होती।

(4) नियन्त्रित अवलोकन में अनुसूची, फोटोग्राफ, मानचित्र, टेप, फिल्म, आदि का प्रयोग किया जाता है जो अनियन्त्रित अवलोकन में आवश्यक नही है।

(5) नियन्त्रित अवलोकन में अध्ययनकर्ता के पक्षपात, विश्वास, विचारधारा एवं व्यक्तिगत झुकाव का अध्ययन पर प्रभाव नही पड़ता, अतः अध्ययन वैज्ञानिक, विश्वसनीय एवं वस्तुनिष्ठ बना रहता है, जबकि अनियन्त्रित अवलोकन में अध्ययनकर्ता के स्वयं के पक्षपात के आने की सम्भावना रहती है और वह कम विश्वसनीय होता है।

(6) नियन्त्रित अवलोकन मे अध्ययनकर्ता को एक सीमा में रहकर ही अध्ययन करना होता है, अतः ऐसा अध्ययन गहन एवं सूक्ष्म न होकर सीमित होता है जबकि अनियन्त्रित अवलोकन विस्तृत, गहन एवं सूक्ष्म होता है। वह गोपनीय तथ्यों को भी ज्ञात कर लेता है।

(7) नियन्त्रित अवलोकन से सीमित क्षेत्र एवं विशेष व्यवहारों का ही अध्ययन किया जा सकता है, जबकि अनियन्त्रित अवलोकन से सम्पूर्ण समुदाय का अध्ययन किया जा सकता है, अतः इसका कार्यक्षेत्र विस्तृत है।

(8) नियन्त्रित अवलोकन में कृत्रिमता एवं बनावटीपन आ जाता है, जबकि अनियन्त्रित अवलोकन में स्वाभाविकता बनी रहती है।

III. सामूहिक अवलोकन (Mass Observation)

अवलोकन की इस विधि में अध्ययन—कार्य किसी एक व्यक्ति द्वारा न किया जाकर विभिन्न अध्ययनकर्ताओं के एक समूह द्वारा किया जाता है। इसे सामूहिक अवलोकन कहते हैं। **सिने पाओ येंग** ने इसे स्पष्ट करते हुए लिखा है, "सामूहिक अवलोकन नियन्त्रित तथा अनियन्त्रित अवलोकन का एक मिश्रण है। यह अवलोकन अनेक व्यक्तियों द्वारा तथ्यों का अवलोकन करने तथा उनका आलेखन करने पर निर्भर होता है, यद्यपि सूचनाओं का संकलन तथा उनका प्रयोग एक केन्द्रीय व्यक्ति द्वारा किया जाता है।"[1] इस परिभाषा से स्पष्ट है कि (i) सामूहिक अवलोकन में अवलोकन का कार्य कई व्यक्तियों द्वारा एक साथ किया जाता है, (ii) इसमे नियन्त्रित एवं अनियन्त्रित दोनों अवलोकन पद्धतियों का मिश्रण होता है, (iii) सभी अवलोकनकर्ताओं में कार्य का बंटवारा होता है और उनके कार्यो का समन्वय एक केन्द्रीय अधिकारी द्वारा किया जाता है। इस विधि का प्रयोग कई देशों में हुआ है। सन् 1937 में इंग्लैण्ड के लोगों के स्वभाव, विचार एवं जीवन के अध्ययन हेतु एवं 1944 में

1 "Mass observation is a combination of controlled and uncontrolled observation Mass observation depends on the observing and recording of information by a number of people and the pooling and treatment of their contribution by a central person."
—Hsin Pao Yang, quoted by P V. Young, *op. cit.*, p 152.

जमैका की स्थानीय दशाओं के अध्ययन हेतु इस विधि का प्रयोग किया गया। चूंकि यह एक खर्चीली विधि है और इसमें कुशल प्रशासन की आवश्यकता होती है, अतः यह किसी व्यक्ति के बजाय सरकारी या अर्द्ध-सरकारी संगठनों द्वारा प्रयुक्त होती है। इस में कार्य का बंटवारा होने तथा घटना के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, अन्य पक्षो का साथ-साथ अध्ययन होने से उसके बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने लाभ प्राप्त होते है, यद्यपि इसके एक खर्चीली प्रणाली होने से सामान्यतः इसका कम ही किया जाता है।

अवलोकन की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता (Reliability and Validity of Observation)

सामाजिक अनुसन्धान की प्रविधियों मे अवलोकन विधि सबसे अधिक विश्वसनीय मानी जाती है क्योकि इसमे अध्ययनकर्ता स्वयं अपनी आंखों से घटनाओं को देखता एवं कानों से सुनता है। साक्षात्कार, प्रश्नावली और अनुसूची में तो दूसरों द्वारा कही और लिखी बातों पर विश्वास करना होता है। स्वयं अपनी आंखों द्वारा देखी घटनाओं में त्रुटि या भ्रम की गुंजाइश नही होती है। फिर भी अवलोकन को सत्यता का अचूक प्रमाण नही माना जा सकता। अवलोकन में भी अविश्वसनीयता आने के कई कारण हैं, जैसे—

(1) **ज्ञानेन्द्रियो की सीमाएं** (Limitations of Senses)—अवलोकन मे हमारे नेत्रों का ही अधिक प्रयोग होता है, किन्तु आंखो द्वारा देखी बातें भी सदैव प्रामाणिक नही होतीं, उनमे भी पक्षपात आने के अवसर रहते हैं। इस सन्दर्भ में **ब्लैकवर्न** ने उचित ही लिखा है, "मनोवैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह बात सिद्ध हो चुकी है कि कोई व्यक्ति किसी विशेष अवसर पर क्या देखता है, यह बहुत कुछ उस समय उसके मन तथा शरीर की दशा, उसकी ताजगी, आराम, बाधाओ से स्वतन्त्रता, आत्मविश्वास की मात्रा, आदि बातों पर निर्भर है।" हम विचित्र आवाजों, घटनाओ एवं चटकीले रंगों की ओर शीघ्र आकर्षित होते है। **जॉन मैक** ने ठीक ही कहा है, "हमारी ज्ञानेन्द्रियां पर्याप्त रूप से विभिन्नतापूर्ण, अनिश्चित तथा पक्षपात पूर्ण ढंग से काम करती है।"

(2) **व्यवहार की कृत्रिमता** (Artificiality of Behaviour)—अवलोकन की विश्वसनीयता तभी समझी जानी चाहिए जब लोगो के वास्तविक व्यवहार का अध्ययन किया गया हो। किन्तु कई बार जब लोगों को यह ज्ञात हो जाता है कि उनके व्यवहार का निरीक्षण किया जा रहा है तो उसमें कृत्रिमता आ जाती है, स्वाभाविकता नहीं रह पाती और विश्वसनीयता समाप्त हो जाती है।

(3) **अवलोकन एवं निर्वचन** (Observation and Interpretation)—कई बार हम देखते कुछ है और उसका निर्वचन हमारे पूर्व ज्ञान और अनुभव के आधार पर कुछ और कर देते है। इससे अवलोकन में अविश्वसनीयता आ जाती है। उदाहरण के लिए, किसी फैक्ट्री के दरवाजे पर धुंधला-सा कोई वाक्य लिखा हो और लोगों को उसे पढने को कहा जाय तो वे 'विना इजाजत अन्दर आना मना है' ही पढ़ेगे। इस सन्दर्भ में दार्शनिक **रसैल** ने एक उदाहरण दिया है—यदि समुद्र में क्षितिज पर किसी काले विन्दु को दिखाकर यह पूछा जाय कि वह क्या है तो प्रायः ही उत्तर होगा, वह एक जहाज है जबकि वास्तव मे वह काला विन्दु ही होता है। जहाज होने का निष्कर्ष उसने अपने पूर्वज्ञान के आधार पर दिया। इसी प्रकार घर के बाहर लगी तख्ती को हम पढ़ लेते है—'कुत्ते से सावधान'। **जॉन मैक** ने

हा है—"कोई भी वस्तु जो हमारी ज्ञानेन्द्रियों को प्रभावित करती है, कोई न कोई अर्थ कट करती है तथा हम उसे अपने पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित कर लेते है।"

(4) **निरीक्षणकर्ता का पक्षपात** (Bias of the Observer)—यदि अवलोकनकर्ता किसी शेष मत एवं विचारधारा को मानने वाला है तो उसका अवलोकन दोषपूर्ण हो सकता है। सका निर्वचन भी उसके पक्षपात से प्रभावित होता है। यही कारण है कि एक ही घटना ा निर्वचन लोगों द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार से किया जाता है। व्यक्तित्व, संस्कृति, अनुभव, चार, ज्ञान एवं शिक्षा में भिन्नता के कारण एक ही घटना का निर्वचन भी भिन्न-भिन्न होता । हम अपने देश, जाति, धर्म, सम्प्रदाय, रुचियों एवं विश्वासो से मुक्त होकर विशुद्ध ज्ञानिक अवलोकन नहीं कर सकते। इससे अध्ययन में प्रामाणिकता एवं विश्वसनीयता की मस्या पैदा हो जाती है।

(5) **घटना की अपर्याप्तता** (Incompleteness of the Phenomena)—कई बार नेरीक्षण सही होने पर भी यदि घटनाएं अपूर्ण हैं और पर्याप्त प्रतिनिधित्वपूर्ण नही है तो अवलोकन अविश्वसनीय हो सकता है। यदि निष्कर्ष थोड़ी-सी घटनाओ को देखकर या किसी वेशेष परिस्थिति में घटने वाली घटनाओं या आधी घटनाओं के आधार पर निकाला गया है ो वह भी दोषपूर्ण होगा।

अवलोकन की विश्वसनीयता के उपाय (Remedies for Relaibility in Observation)

अवलोकन में प्रामाणिकता एवं विश्वसनीयता लाने के लिए निम्नाकित उपाय अपनाए ाने चाहिए :

(1) **विस्तृत अवलोकन योजना** (Broad Observation Plan)—अवलोकन मे विश्वसनीयता लाने के लिए अवलोकनकर्ता को अवलोकन की एक विस्तृत योजना कार्य प्रारम्भ करने से पहले ही बना लेनी चाहिए जिसके अन्तर्गत यह तय कर लिया जाय कि कौन-कौनसे तथ्यों का संकलन करना है और किस प्रकार से ? प्रत्येक घटना को कई छोटे-छोटे पहलुओं में विभाजित कर देना चाहिए। इससे अध्ययन प्रमापित विधियो द्वारा समान रूप से होगा, उसके संचालन और संगठन में आसानी रहेगी तथा घटनाओं की तुलना भी हो सकेगी

(2) **अनुसूची का प्रयोग** (Use of Schedule)—अवलोकन की विश्वसनीयता के लिए 'अवलोकन अनुसूची' का प्रयोग भी किया जाना चाहिए। अवलोकनकर्ता घटनाओं को देखता जाता है और अनुसूची में लिखे प्रश्नों का उत्तर भरता जाता है। जहां एकाधिक व्यक्ति अवलोकन में लगे हुए हों, वहा अध्ययन को वैषयिक एवं प्रमापित बनाने के लिए अनुसूची का प्रयोग लाभदायक सिद्ध होता है।

(3) **प्राक्कल्पना का निर्माण** (Formulation of Hypothesis)—विधिवत् अवलोकन में प्राक्कल्पना का निर्माण एक केन्द्रीय चरण है। इससे अध्ययन में विशिष्टता एवं स्पष्टता आती है। इससे अध्ययनकर्ता उन्ही तथ्यों का संकर न करेगा जो अध्ययन से सम्बन्धित हो और इधर-उधर के निरर्थक तथ्यों के संकलन में समय व श्रम नष्ट नही करना पड़ेगा। यदि तथ्यों के अभाव में प्राक्कल्पना न बन सके तो अध्ययन की समस्या व क्षेत्र का निर्धारण तो कर ही लेना चाहिए।

(4) **वैज्ञानिक यन्त्रों का प्रयोग** (Use of Scientific Instruments)—अवलोकन को प्रामाणिक एवं विश्वसनीय बनाने के लिए वैज्ञानिक यन्त्रों जैसे फोटो, टेप रिकार्डर, फिल्म, आदि का प्रयोग किया जाना चाहिए जिससे अध्ययनकर्ता द्वारा कोई गलती हुई हो तो उसका पता लग जाता है तथा अध्ययन में पक्षपात नहीं आ पाता। किन्तु इस विधि का यह दोष है

कि जब लोगो को यह ज्ञात हो जाता है कि उनका चित्र लिया जा रहा है या उनकी आवाज टेप की जा रही है तो वे अपने व्यवहार में कृत्रिमता ले आते हैं और स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है।

(5) **समाजमिति पैमाने का प्रयोग** (Use of Sociometric Scales)—अवलोकन में विश्वसनीयता लाने के लिए समाजमिति पैमाने का प्रयोग किया जाना चाहिए। समाजमिति पैमाने में गुणात्मक तथ्यों को गणितीय माप में ज्ञात किया जाता है। इस अध्ययन में स्पष्टता व शुद्धता आ जाती है।

(6) **सामूहिक अवलोकन** (Mass Observation)—सामूहिक अवलोकन का हम पूर्व मे उल्लेख कर चुके हैं। इसमें कई व्यक्तियों द्वारा एक ही घटना का साथ-साथ अध्ययन किया जाता है, उनके निष्कर्षों की परस्पर तुलना की जाती है यदि कोई अन्तर हो तो कारण ज्ञात किये जाते हैं। इस प्रकार सामूहिक अवलोकन मे पक्षपात आने के अवसर नही रहते और इसमे विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों की सहायता ली जाती है।

अवलोकन विधि की उपयोगिता (गुण)

अवलोकन विधि की उपयोगिता, महत्व या गुणों को हम विभिन्न शीर्षको के अन्तर्गत इस प्रकार प्रकट कर सकते है :

(1) **सरल एवं प्राथमिक पद्धति** (Easy and Primary Technique)—सामाजिक अनुसन्धान की विभिन्न विधियों में अवलोकन विधि सबसे सरल है क्योंकि अन्य विधियो की तरह इसमें अवलोकनकर्ता के लिए विशेष ज्ञान और प्रशिक्षण की आवश्यकता नही होती। मानव प्राचीन काल से ही अवलोकन का प्रयोग स्वाभाविक रूप से करता आया है, अत यह एक प्राथमिक विधि भी है।

(2) **यथार्थता एवं विश्वसनीयता** (Accuracy and Reliability)—चूंकि अवलोकन पद्धति में अध्ययनकर्ता दूसरों पर निर्भर न रहकर स्वयं अपने नेत्रों द्वारा घटनाओं का अवलोकन करता है, अतः यह विधि अन्य विधियों की तुलना में अधिक विश्वसनीय एवं यथार्थ है।

(3) **प्राक्कल्पना के निर्माण में सहायक** (Helpful in the formulation of Hypothesis)—अवलोकन में व्यक्ति को कई घटनाओं को देखने, सुनने व समझने का अवसर मिलता है, इससे उसके अनुभवों में वृद्धि होती है और उसे अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है जिसके फलस्वरूप अवलोकनकर्ता विभिन्न प्राक्कल्पनाओं का निर्माण करने की क्षमता प्राप्त कर लेता है।

(4) **सर्वाधिक प्रचलित विधि** (Most Popular Technique)—सामाजिक अनुसन्धान के लिए प्रचलित विभिन्न पद्धतियों में सर्वाधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय पद्धति अवलोकन है जिसका प्रचलन अनादि काल से है। अतः यह एक परिष्कृत विधि है।

(5) **सत्यापन की सुविधा** (Possibility of Verification)—अवलोकन विधि में सकलित किये गये तथ्यों की सत्यता की परख सरलता से की जा सकती है। अवलोकनकर्ता एक ही घटना को कई बार घटते देख सकता है जो कि अन्य विधियों में सम्भव नहीं है।

(6) **निरन्तर उपयोग की सुविधा** (Possibility of continuous use)—अवलोकन का प्रयोग निरन्तर किया जा सकता है। हम हमारे आस-पास की घटनाओं का अवलोकन कर अपने ज्ञान में वृद्धि कर सकते और प्राक्कल्पनाओं का आधार तैयार कर सकते हैं।

अवलोकन पद्धति के दोष या सीमाएं (Demerits or Limitations of Observation Method)

जहां अवलोकन विधि की कई उपयोगिताएं है, वहीं इसमे कुछ कमियां भी है जो इसकी सीमाएं तय करती हैं। वे इस प्रकार हैं :

(1) **ज्ञानेन्द्रियों की सीमाएं** (Limitations of Senses)—अवलोकन का कार्य ज्ञानेन्द्रियों, विशेषकर नेत्रों द्वारा किया जाता है, जिनकी शक्ति अचूक नहीं है। ये कई बार विभिन्नतापूर्ण, अनिश्चित एवं पक्षपातपूर्ण ढंग से काम करती हैं। हमारे नेत्र तथा कान कुछ विशेष घटनाओं की ओर शीघ्र आकर्षित होते है। ऐसी स्थिति में हमारा अध्ययन दोषपूर्ण हो जाता है।

(2) **व्यवहार की कृत्रिमता** (Artificiality in Behaviour)—जब लोगों को यह पता चलता है कि उनके व्यवहारों का अवलोकन किया जा रहा है तो वे अपने व्यवहार में कृत्रिमता ले आते हैं और स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है, अतः अध्ययन दोषपूर्ण हो जाता है।

(3) **पक्षपात की सम्भावना** (Possibility of Bias)—अवलोकन में अवलोकित घटनाओं का निर्वचन अवलोकनकर्ता पर ही निर्भर करता है। निर्वचन में उसके विचारों, मूल्यों, आदर्शों एवं संस्कृति का भी प्रभाव पड़ता है, अतः अध्ययन के निष्कर्ष दोषपूर्ण हो जाते है।

(4) **कुछ अध्ययनों में अनुपयुक्त** (Inadequate in Some Studies)—कई ऐसी घटनाएं है जैसे अपराध, व्यक्तिगत जीवन का इतिहास, आदि जो अवलोकन का अवसर नहीं देतीं। **पी. वी. यंग** ने लिखा है, "सभी घटनाओं का निरीक्षण नहीं हो सकता। सभी घटनाओं के घटित होते समय अवलोकनकर्ता वहां उपस्थित भी नही होता तथा न ही विभिन्न अवलोकन विधियों के द्वारा सभी घटनाओं का अध्ययन किया जा सकता है।"

पी. वी. यंग के इस कथन के तीन निष्कर्ष निकलते हैं : (i) कुछ घटनाएं ऐसी होती है जिनका अवलोकन निषिद्ध होता है, जैसे प्रेमी-प्रेमिका का व्यक्तिगत जीवन। (ii) कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं जिनके घटने का स्थान व समय तय नहीं होता, अतः उनका अवलोकन सम्भव नहीं है, (iii) कुछ घटनाओं की प्रकृति ही ऐसी होती है कि उनका अवलोकन सम्भव नहीं है, जैसे व्यक्ति के विचारों, भावनाओं, उद्देश्यों, प्रवृत्तियो एवं भूतकाल में घटी हुई घटनाओं, आदि का।

अवलोकन विधि की कुछ सीमाओं के होते हुए भी सामाजिक अनुसन्धान में इसका प्रयोग प्राचीन काल से होता आया है। सरल, विश्वसनीय, उपयोगी एवं सत्यापन की सुविधा प्रदान करने वाली विधि के रूप में इसका महत्व सदैव ही बना रहेगा। समय के साथ-साथ इसमें कई सुधार हुए हैं और यह दिनोंदिन अधिक प्रामाणिक एवं विश्वसनीय विधि बनती जा रही है।

प्रश्न

1. सामाजिक सर्वेक्षण में अवलोकन पद्धति के गुणों व दोषों की उपयुक्त उदाहरणों सहित संक्षेप में विवेचना कीजिए।
2. सहभागी अवलोकन के गुण व दोषों की व्याख्या कीजिए।
3. सहभागी और असहभागी अवलोकन विधियों के गुणों एवं दोषों की तुलना कीजिए।
4. सामाजिक अनुसन्धान की एक वैज्ञानिक प्रविधि के रूप में अवलोकन की व्याख्या कीजिए तथा इसके उपयोग और सीमाएं बताइये।
5. अवलोकन को परिभाषित कीजिए। सहभागी अवलोकन एवं असहभागी अवलोकन में अन्तर स्पष्ट कीजिए। (राजस्थान, 1998, 2000)

6. अवलोकन से आप क्या समझते हैं? सहभागी अवलोकन के गुणो व दोषो की [illegible] कीजिए। (अजमेर, 200
7. नियन्त्रित अवलोकन किसे कहते हैं ? समाजशास्त्रीय शोध में इसकी सीमाओ की [illegible] कीजिए।
8. अवलोकन के प्रकार बताइये। सहभागी अवलोकन के गुण-दोषो का उल्लेख कीजिए।
9 सामाजिक शोध की एक प्रविधि के रूप में अवलोकन की क्या समस्याएं तथा सीमाएं हैं?
10. अवलोकन पद्धति से आप क्या समझते है? इसके विभिन्न प्रकारों को समझाइए। (अजमेर, 1994, 9

लघु उत्तरीय प्रश्न

1 निम्नाकित पर सक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(1) अवलोकन
(2) सहभागी अवलोकन (अजमेर, 1990, 9
(3) असहभागी अवलोकन
(4) नियन्त्रित अवलोकन (अजमेर, 199
(5) अनियन्त्रित अवलोकन
(6) सामूहिक अवलोकन
(7) अवलोकन की विश्वसनीयता की विवेचना कीजिए (अजमेर, 200
(8) अर्द्ध-सहभागी अवलोकन (अजमेर, 199

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नाकित वाक्यों मे रिक्त स्थानों की पूर्ति कोष्ठक में दिए गए शब्दो मे से सही शब्द का चयन करके कीजिए :
   (i) अवलोकन में.....का अधिक प्रयोग किया जाता है। (कानो/नेत्रों)
   (ii) अवलोकन विधि द्वारा...तथ्यो का सकलन किया जाता है। (प्राथमिक/द्वितीयक)
   (iii) अवलोकन विधि में अध्ययनकर्ता घटनाओ का अध्ययन..... रूप मे करता है। (प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष)
   (iv) जब एक अध्ययनकर्ता किसी समूह मे जाकर रहता है और उसका अध्ययन करता है तो उसे.....अवलोकन कहते हैं। (सहभागी/असहभागी)
   (v) जब अवलोकनकर्ता किसी समूह को मौन दर्शक के रूप में देखकर उसका अध्ययन करता है तो उसे.....अवलोकन कहते है। (सहभागी/असहभागी)
   (vi) जब अवलोकन का कार्य अध्ययनकर्ताओ के एक समूह द्वारा किया जाता है तो उसे कहते है.....अवलोकन। (नियन्त्रित/सामूहिक)
2. निम्नाकित वाक्यों मे से सत्य और असत्य वाक्य छांटकर लिखिए :
   (i) नियन्त्रित अवलोकन में केवल घटनाओं पर नियन्त्रण किया जाता है, अध्ययनकर्ता पर नही।
   (ii) सहभागी अवलोकन में अध्ययनकर्ता अपने को अध्ययन किए जाने वाले समूह का सदस्य मानता है किन्तु वह समूह उसे अपना सदस्य नही मानता।
   (iii) घटनाओ को दूर से देखकर अध्ययन करना असहभागी अवलोकन है।
   (iv) सामूहिक अवलोकन का अर्थ है समूह का अवलोकन करना।
   (v) अनियन्त्रित अवलोकन में घटनाओ पर नियन्त्रण नहीं किया जाता किन्तु अध्ययनकर्ता को नियन्त्रित किया जाता है।
   (vi) अवलोकन तथ्य संकलन की प्राथमिक विधि है।

[उत्तर—1. (i) नेत्रों (ii) प्राथमिक (iii) प्रत्यक्ष (iv) सहभागी (v) असहभागी (vi) सामूहिक
2. सत्य कथन—iii, vi शेष सभी कथन असत्य है]

10

साक्षात्कार विधि

[INTERVIEW METHOD]

साक्षात्कार सामाजिक अनुसन्धान तथा सर्वेक्षण के अन्तर्गत तथ्य संकलन की एक प्रमुख प्रविधि है। सामान्यतः दैनिक जीवन में जब हम 'साक्षात्कार' अथवा 'इण्टरव्यू' (Interview) शब्द का प्रयोग करते है तो हमारा तात्पर्य होता है किसी अधिकारी से मिलना, किसी नौकरी हेतु अथवा किसी प्रशिक्षण देने वाली संस्था में प्रवेश हेतु प्रत्याशियों की योग्यता, कार्यकुशलता एवं क्षमता की जांच करना। किन्तु समाजशास्त्र मे इसका अर्थ भिन्न है। समाजशास्त्रीय दृष्टि से साक्षात्कार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमे साक्षात्कारकर्ता एव सूचनादाता के मध्य किसी विशिष्ट उद्देश्य को लेकर आमने-सामने की स्थिति मे वार्तालाप अथवा उत्तर-प्रत्युत्तर होता है। यह एक मनोवैज्ञानिक स्थिति है, जिसमें साक्षात्कारकर्ता तथा सूचनादाता एक-दूसरे के निकट आते है तथा स्वतन्त्र विचार-विमर्श करते है। साक्षात्कार का उद्देश्य व्यक्ति के विचारों, विश्वासों, मूल्यों, भावनाओ, अतीत के अनुभवों तथा भविष्य के इरादों को ज्ञात करना है। साक्षात्कार लोगों के बारे में हमारे ज्ञान एवं अनुभव में वृद्धि करता है तथा साक्षात्कार के अतिरिक्त अन्य प्रविधियों द्वारा संकलित सामग्री के सत्यापन एवं नियन्त्रण मे सहायता करता है। यह एक लचीला उपकरण है जिसमें समय एवं परिस्थिति के अनुरूप परिवर्तन एवं समायोजन सम्भव है। मानवशास्त्र, समाजशास्त्र और मनोविज्ञान में साक्षात्कार का प्रयोग बहुत हुआ है। मनोचिकित्सकों, मनोविश्लेषकों एवं चिकित्सकों द्वारा रोगियों से चिकित्सा सम्बन्धी साक्षात्कार भी किए जाते रहे है। मानवीय मूल्यों एवं मनोवृत्तियों को जानने में साक्षात्कार का महत्व बताते हुए आल्पोर्ट ने लिखा है, "यदि हम यह जानना चाहते हैं कि लोग किस प्रकार अनुभव करते हैं, वे क्या अनुभव करते है, और वे क्या याद रखते है, उनके संवेग एवं मनोवृत्तियां किस प्रकार की हैं, तथा उस प्रकार से कार्य करने के कारण क्या है जिस प्रकार वे कार्य करते हैं, तो उनसे पूछ ही क्यों न लें ?"[1]

साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा

अंग्रेजी का 'इन्टरव्यू' शब्द दो शब्दो से मिलकर बना है—'inter' अर्थात् 'भीतर' अथवा 'अन्दर' तथा 'view' अर्थात् 'दृष्टि' या 'देखना'। दोनों शब्दों का सम्मिलित अर्थ है 'अन्तर-दर्शन' अथवा 'अन्तर-दृष्टि'। दूसरे शब्दो में जिन अप्रकट अथवा अदृश्य तथ्यों का

1 ...

Cook, *Research Methods in Social Relations*, p. 236.

वाह्य रूप से निरीक्षण नहीं हो सकता, उन तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना ही उचित कहलाता है। विभिन्न विद्वानों ने साक्षात्कार को निम्नांकित रूप से परिभाषित किया है :

सी. ए. मोजर के अनुसार, "एक सर्वेक्षण साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता के मध्य एक वार्तालाप है, जिसका उद्देश्य उत्तरदाता से निश्चित सूचना प्राप्त करना होता है।"[1]

पी. वी. यंग के शब्दों में, "साक्षात्कार को एक ऐसी क्रमवद्ध प्रणाली के रूप में कहा जा सकता है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के आन्तरिक जीवन में थोड़ा कल्पनात्मक रूप से प्रवेश करता है जो कि उसके लिए सामान्यतया तुलनात्मक रूप से अपरिचित होता है।"[2]

एम. एन. बसु के अनुसार, "एक साक्षात्कार को कुछ विषयों को लेकर व्यक्तियों के आमने-सामने का मिलन कहा जा सकता है।"[3]

सिन पायो यंग के अनुसार, "साक्षात्कार क्षेत्रीय कार्य की एक ऐसी प्रविधि है जो कि एक व्यक्ति या व्यक्तियों के व्यवहार को देखने, कथनों को लिखने तथा सामाजिक या सामूहिक अन्त:क्रिया के वास्तविक परिणामों का निरीक्षण करने के लिए प्रयोग में लायी जाती है। अत: यह एक ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें दो व्यक्तियों के मध्य अन्त:क्रिया सम्मिलित होती है।"[4]

गुडे तथा हाट[5] ने साक्षात्कार को मूलरूप से सामाजिक अन्त:क्रिया की एक प्रक्रिया माना है। **हैडर तथा लिण्डमेन**[6] ने साक्षात्कार को दो अथवा अधिक व्यक्तियों के मध्य एक संवाद माना है जिसमें मौखिक उत्तर-प्रत्युत्तर होते हैं। **पामर**[7] ने साक्षात्कार को एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया माना है जिसमें दो व्यक्तियों के बीच उत्तर-प्रत्युत्तर होते है। लुथर फ्राई का मत है कि साक्षात्कार सामग्री-संग्रहण की एक प्रणाली है, यह किसी निश्चित उद्देश्य हेतु वार्तालाप के अलावा कुछ भी नही है। इसमें दो या अधिक व्यक्ति परस्पर एक-दूसरे से प्रेरणा पाते हुए उत्तर-प्रत्युत्तर करते है।

उपर्युक्त परिभाषाओ से स्पष्ट है कि साक्षात्कार एक ऐसी व्यवस्थित पद्धति है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी विशिष्ट उद्देश्य को सामने रखकर परस्पर आमने-सामने होकर संवाद, वार्तालाप एवं उत्तर प्रति-उत्तर करते हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है जिसमें साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता की भावनाओं, विचारो, मनोवृत्तियों एवं आन्तरिक जीवन का अध्ययन करता है। यह एक सामाजिक प्रक्रिया भी है।

---

1 C. A. Moser and G. Kalton, *Survey Methods in Social Investigation*, p. 271

2 "The interview may be regarded as a systematic method by which one person enters more or less imaginatively into the inner life of another who is generally a comparative stranger to him."
—P. V. Young, *Scientific Social Survey and Research*, p. 24

3 "An interview can be defined as a meeting of persons face to face on some points."
—M. N. Basu, *Field Methods in Anthropology and other Social Sciences*, p. 2

4 "The interview is a technique of field-work which is used to watch the behaviour of an individual or individuals, to record statements to observe the concrete results of social or group interactions. It is, therefore, a social process and usually involves interaction between two persons."
—Hsin Pao Yang, *Fact Finding with the Rural People*, p. 3

5 "Interviewing is fundamentally a process of social interaction."
—Goode and Hatt, *Methods in Social Research*, p. 18

6 J. J. Hader and A. C. Lindman, *Dynamic Social Research*, p. 129.

7 V. M. Plamer, *Field Studies in Sociology*, p. 170.

साक्षात्कार की विशेषताएं (Characteristics of Interview)

विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर साक्षात्कार की निम्न विशेषताएं प्रकट होती हैं :

(1) साक्षात्कार के लिए दो या दो से अधिक व्यक्तियो का होना आवश्यक है जो परस्पर सम्पर्क, वार्तालाप एवं अन्तःक्रिया करते हैं।

(2) इन व्यक्तियों में एक साक्षात्कार लेने वाला होता है और दूसरा उत्तरदाता।

(3) साक्षात्कार एक सामाजिक प्रक्रिया है।

(4) साक्षात्कार एक उद्देश्यपूर्ण वार्तालाप है।

(5) यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया भी है।

(6) साक्षात्कार में दोनों पक्षों के बीच आमने-सामने के और प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित हो जाते है।

(7) साक्षात्कार में अनुसन्धानकर्ता द्वारा अध्ययन विषय से सम्बन्धित सूचनाओं एवं तथ्यों का संकलन किया जाता है।

(8) साक्षात्कार सूचना संकलन की एक मौखिक विधि है।

साक्षात्कार के उद्देश्य (Objectives of Interview)

साक्षात्कार के प्रमुख उद्देश्य निम्नांकित है :

(1) **प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा सूचनाएं** (Informations through Direct Contact)—साक्षात्कार में दो या अधिक व्यक्तियो के मध्य आमने-सामने के प्रत्यक्ष एवं प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं और इस स्थिति में अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता से विषय से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सूचनाओं का संकलन करता है। अनुसन्धानकर्ता अपनी उपस्थिति के कारण सूचनादाता को सूचनाए देने के लिए प्रेरित करता है, वे दोनों खुलकर वार्तालाप करते हैं, सूचनादाता अपनी आन्तरिक सूचनाएं प्रदान करता है। इस प्रकार प्रत्यक्ष सम्पर्क के द्वारा अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता की आन्तरिक भावनाओं, संवेगों, मनोवृत्तियों, धारणाओं एवं इच्छाओं, आदि के बारे में जानकारी प्राप्त करता है जो साक्षात्कार के अतिरिक्त किसी अन्य विधि द्वारा साधारणतः सम्भव नहीं है।

(2) **उपकल्पनाओं का स्रोत** (Source of Hypotheses)—साक्षात्कार का एक उद्देश्य उपकल्पनाओं के निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री प्राप्त करना है। साक्षात्कार के दौरान व्यक्ति और समूहों के बारे में नवीन ज्ञान का उद्‌घाटन होता है, नये क्षेत्रों का पता लगता है, लोगो की भावनाओं, मनोवृत्तियों, विचारों एवं आकांक्षाओं के बारे में जानकारी प्राप्त होती है, व्यक्ति एवं सामूहिक जीवन के सम्बन्ध में उपयोगी अनुभव प्राप्त होते हैं जिनका प्रयोग नवीन उपकल्पनाओं के निर्माण हेतु किया जा सकता है।

(3) **व्यक्तिगत तथ्यों की प्राप्ति** (Personal Informations)—साक्षात्कार का उद्देश्य लोगों के जीवन से सम्बन्धित व्यक्तिगत एवं आन्तरिक सूचनाएं प्राप्त करना भी है। ऐसी सूचनाएं जिन्हें पी. वी. यंग 'मानव व्यक्तित्व का एक चित्र' कहकर पुकारती है और जो वैयक्तिक अध्ययनों की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है, भी साक्षात्कार द्वारा ही प्राप्त की जा सकती हैं।

(4) **गुणात्मक तथ्यो के लिए** (For Qualitative Informations)—मानव जीवन से सम्बन्धित ऐसे गुणात्मक तथ्य हैं जैसे भावनाएं, मनोवृत्तियां, उद्वेग, आकांक्षाएं, विचार,

लोकविश्वास, प्रवृत्तियां, मूल्य, आदर्श, रुचियां, आदि जिनका अध्ययन केवल साक्षात्कार द्वारा ही सम्भव है। इन्हें हम संख्या में प्रकट नहीं कर सकते।

(5) **अवलोकन का अवसर** (Opportunity for Observation)—साक्षात्कार से व्यक्तिगत तथ्यो की जानकारी प्राप्त करने के साथ-साथ व्यक्ति के व्यवहार, और जीवन की बहुत-सी बातों का अवलोकन करने का अवसर भी प्राप्त होता है। इस प्रकार साक्षात्कार में अवलोकन एव साक्षात्कार दोनों के गुण पाये जाते हैं।

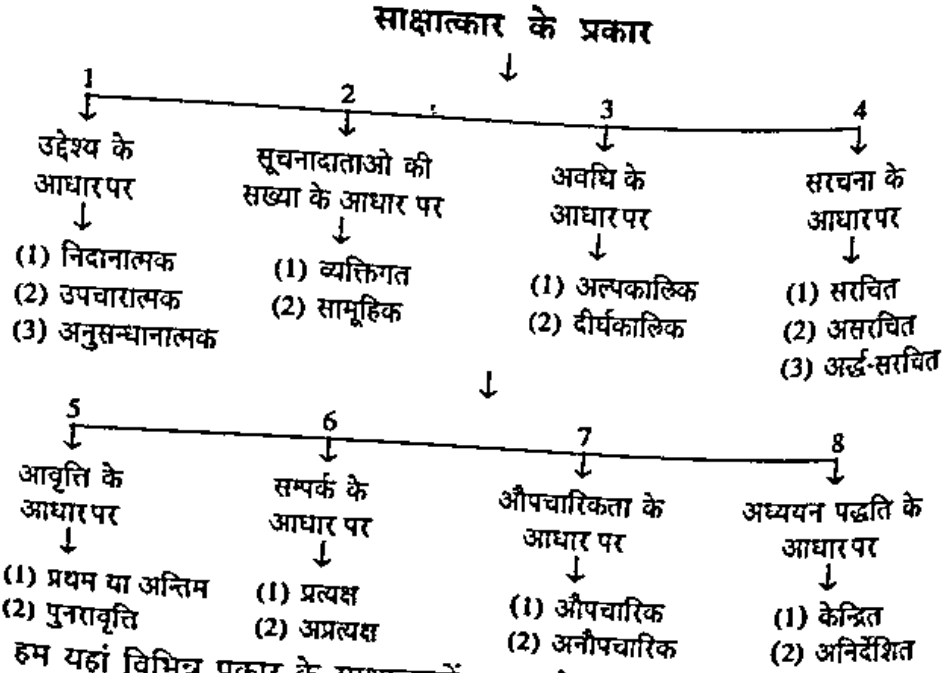
(6) **अन्य विधियों से प्राप्त सामग्री का सत्यापन** (Verification of informations received through other Methods)—साक्षात्कार का एक उद्देश्य प्रश्नावली, अवलोकन एवं अन्य विधियों द्वारा प्राप्त सामग्री की विश्वसनीयता एव प्रामाणिकता ज्ञात करना भी है। कई बार कुछ तथ्य प्रश्नावली एवं अवलोकन से स्पष्ट नहीं होते, तब सूचनादाताओ से साक्षात्कार द्वारा पूछकर उन्हें ज्ञात किया जाता है।

(7) साक्षात्कार का एक उद्देश्य समस्या के बारे में **विभिन्न विचारो तथा अतिरिक्त सूचनाओं को ज्ञात करना भी है।**

(8) साक्षात्कार के द्वारा किसी **घटना के लिए उत्तरदायी कारकों की खोज** की जाती है। उन कारको के सह-सम्बन्धों एवं प्रभावक कारकों को भी ज्ञात किया जाता है।

साक्षात्कार के प्रकार
(TYPES OF INTERVIEW)

विभिन्न विद्वानो ने साक्षात्कार के उद्देश्यों, अवधि, क्षेत्र, औपचारिकता, उपागम के आधार, भाग लेने वाले व्यक्तियों की संख्या, आदि के आधार पर साक्षात्कार के प्रकारो का उल्लेख किया है। साक्षात्कार के विभिन्न प्रकारो को चार्ट के द्वारा हम इस प्रकार प्रकट कर सकते हैं :



हम यहां विभिन्न प्रकार के साक्षात्कारों का उल्लेख करेंगे :

उद्देश्य के आधार पर (On the basis of Purpose)

(1) **निदानात्मक साक्षात्कार** (Diagonistic Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार उद्देश्य किसी सामाजिक समस्या के कारणों को ज्ञात करना होता है। जिस प्रकार से एक क्टर रोग के कारणों को जानने के लिए रोगी से पूछ-ताछ करता है, उसी प्रकार से माजिक समस्याओं एवं घटनाओं के कारणों को जानने के लिए अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता साक्षात्कार करता है। उदाहरण के लिए, अपराध, बाल-अपराध, बेकारी, आदि समस्याओ कारणों को जानने के लिए किये जाने वाले साक्षात्कार निदानात्मक साक्षात्कार ही हैं।

(2) **उपचारात्मक साक्षात्कार** (Treatment Interview)—सामाजिक समस्या के कारणों ा जान लेने मात्र से ही समस्या का हल नही हो जाता वरन् समस्या को दूर करने के लिए गों से सुझाव एवं उपाय भी पूछे जाते है। ऐसे साक्षात्कार को उपचारात्मक साक्षात्कार हा जाता है।

(3) **अनुसन्धानात्मक साक्षात्कार** (Research Interview)—अनुसन्धानात्मकसाक्षात्कार ा उद्देश्य सामाजिक जीवन एवं घटनाओं के बारे मे नवीन ज्ञान एवं तथ्यों की खोज करना ता है। सूचनादाताओं की भावनाओं, विचारों, मनोवृत्तियों, मूल्यों एवं आदर्शों, आदि के रे मे जानकारी प्राप्त करने के लिए इस प्रकार के साक्षात्कार आयोजित किये जाते है।

सूचनादाताओं की संख्या के आधार पर (On the basis of number of informants)

(1) **व्यक्तिगत साक्षात्कार** (Personal Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार मे एक मय में एक साक्षात्कार लेने वाला एवं एक सूचनादाता परस्पर विषय से सम्बन्धित वार्तालाप रते हैं। इसमें साक्षात्कारकर्ता प्रश्न पूछता जाता है और सूचनादाता उसका उत्तर देता जाता । इसमें सूचनादाता को साक्षात्कारकर्ता से व्यक्तिगत प्रेरणा भी मिलती रहती है जिससे वह यक्तिगत तथ्यों को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त करता है।

लाभ—(i) इस प्रकार के साक्षात्कार में विषय से सम्बन्धित विश्वसनीय, सही एवं ामाणिक सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं। यदि सूचनादाता किसी प्रश्न को नही समझ पाता ; या गलत समझता है तो साक्षात्कारकर्ता उसके सही अर्थ को स्पष्ट कर सही सूचनाएं प्राप्त कर सकता है। (ii) इस प्रकार के साक्षात्कार मे संवेदनशील प्रश्नों को जिनमें उत्तरदाता के क्षोभित होने या भावुक होने का डर हो, इस प्रकार से हेर-फेर कर पूछा जा सकता है जिससे उसकी भावना को ठेस न लगे और उत्तर भी प्राप्त हो जाय। (iii) प्रश्नों की कठिन भाषा को भी साक्षात्कारकर्ता सूचनादाता के समक्ष सरल शब्दों में रख सकता है। (iv) ऐसे साक्षात्कार में प्राप्त सूचनाओं की जांच सम्भव है। (v) इसमें विषय से सम्बन्धित गहन एवं विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सकती है। (vi) इसमें अन्तरंग एवं घनिष्ठ सम्बन्धों की स्थापना सम्भव होती है।

दोष—(i) इसमें अधिक समय, धन एवं श्रम खर्च होता है। (ii) इसमें पक्षपात आने की भी अधिक सम्भावना रहती है। (iii) इसमें प्रत्येक सूचनादाता से सम्पर्क स्थापित करना होता है जो कि एक कठिन कार्य है। (iv) इस प्रकार के साक्षात्कार का आयोजन एवं संगठन भी एक कठिन कार्य है।

(2) **सामूहिक साक्षात्कार** (Group Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार के अन्तर्गत एक साक्षात्कार के अन्तर्गत एक साक्षात्कारकर्ता एक समय में एक से अधिक व्यक्ति अथवा एक समूह से इच्छित एवं आवश्यक सूचनाओं को प्राप्त करता है। वह समूह में लोगों से बारी-बारी से प्रश्न कर सकता है अथवा किसी प्रश्न का उत्तर समूह का कोई नेता, व्यक्ति

या सामूहिक रूप से भी दे सकते हैं। समूह के लोग मौन रहकर सूचनादाता के प्रति अपनी सहमति व्यक्त कर सकते है अथवा उसका विरोध और आलोचना भी कर सकते हैं। इस प्रकार के साक्षात्कार द्वारा ऐसी सूचनाएं संकलित की जाती हैं जिनका सम्बन्ध सम्पूर्ण समूह से हो।

लाभ—यह कम खर्चीली विधि है। (ii) इसमें विस्तृत जानकारी प्राप्त की जा सकती है। (iii) इसमें प्राप्त सूचनाओं की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता दूसरे व्यक्तियो की उपस्थिति के कारण सम्भव हो पाती है। उनसे घटना का स्पष्टीकरण प्राप्त किया जा सकता है। (iv) इससे काफी जनसंख्या वाले क्षेत्र में सामग्री का संकलन सरलता से किया जा सकता है। (v) इसमें व्यक्तिगत पक्षपात की सम्भावना नहीं रहती। (vi) इससे अधिक सूचनाएं एकत्रित की जा सकती है। (vii) इसमें कम कुशल व्यक्ति भी साक्षात्कार का सचालन कर सकता है।

दोष—(i) इसमें गोपनीयता का अभाव पाया जाता है। अतः इस प्रकार के साक्षात्कार द्वारा व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित सूचनाएं प्राप्त नहीं की जा सकती। (ii) इसका उपयोग गहन अध्ययन के लिए नही किया जा सकता। (iii) समूह में कई उत्तरदाता प्रश्नो को समझने में असमर्थ रहते है, अतः सही उत्तर प्राप्त नही हो पाते।

3 **अवधि के आधार** (On the basis of Duration)

सूचनादाताओं से सम्पर्क की अवधि के आधार पर साक्षात्कार को दो भागो मे बांटा गया है :

(1) **अल्पकालिक साक्षात्कार** (Short term Interview)—कुछ साक्षात्कार ऐसे होते है जिनमें विषय से सम्बन्धित कुछ छोटी-मोटी बातें ही जाननी होती है, और उनमे गिने-चुने प्रश्नो के ही उत्तर प्राप्त किये जाते हैं, अतः वे शीघ्र समाप्त हो जाते है। इसलिए इन साक्षात्कारों को अल्पकालिक साक्षात्कार कहा जाता है।

(2) **दीर्घकालिक साक्षात्कार** (Long term Interview)—कुछ समस्याएं ऐसी होती है जिनके बारे में गहन और विस्तृत जानकारी प्राप्त करनी होती है, उनके लिए लम्बी अवधि के साक्षात्कारों का आयोजन किया जाता है जो कई घण्टे, कई दिनों और महीनो तक भी चलाए जा सकते है। मनोविश्लेषणकर्ता एवं मनोचिकित्सक मानसिक रोगियों के उपचार हेतु इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग करते है।

4. **संरचना के आधार पर** (On the basis of Structure)

यहां साक्षात्कार मे पहले से ही प्रश्नों का निर्माण किया जाता है अथवा मूल रूप से प्रश्न पूछे जाते है। इस आधार पर साक्षात्कार को निम्नांकित तीन भागों में बाटा गया है :

(1) **संरचित साक्षात्कार** (Structured Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार में अध्ययन विषय से सम्बन्धित कुछ प्रश्नो का पहले से ही निर्माण कर लिया और उन्हे एक व्यवस्थित क्रम में रख लिया जाता है। साक्षात्कारकर्ता इन प्रश्नों को सूचनादाता से पूछकर जानकारी प्राप्त करता है। प्रश्नों की इस सूची को 'साक्षात्कार अनुसूची' (Interview Schedule) कहते हैं। [illegible]
में पूछता है, उनमें हेर-फेर,
अवधि तथा परिस्थिति,
समानता बनी रह सके।
पर नियन्त्रण बना रहता है। इस प्रकार के साक्षात्कार को नियोजित साक्षात्कार, निदेशित साक्षात्कार या औपचारिक साक्षात्कार भी कहा जाता है। [illegible]

बाजार सर्वेक्षण एवं मतदान व्यवहार को ज्ञात करने के लिए इस प्रकार के साक्षात्कारों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के साक्षात्कारो मे पक्षपात आने की सम्भावना नही होती क्योंकि प्रश्नों का निर्माण पहले से ही कर लिया जाता है।

(2) **असंरचित साक्षात्कार** (Unstructured Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार को अनिर्देशित, अनियन्त्रित, अनौपचारिक तथा असंरचित साक्षात्कार भी कहते हैं। इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता के पास प्रश्नों की कोई पूर्व-निर्धारित सूची नही होती है, वरन् विषय से सम्बन्धित प्रश्नों का तत्काल ही निर्माण किया जाता है। इस प्रकार के साक्षात्कार द्वारा सूचनादाता की भावनाओं, मनोवृत्तियों, विचारो एवं आदर्शों, आदि को ज्ञात किया जाता है। इसमें साक्षात्कारकर्ता का मार्गदर्शन करने के लिए साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका (Interview-guide) का प्रयोग अवश्य किया जाता है, जिसमें विषय से सम्बन्धित जिस प्रकार की जानकारी प्राप्त करनी हो, उसके बारे में मोटी-मोटी बातें लिखी होती है। इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग आदिम जनजातियो के अध्ययन में मानवशास्त्रियो ने काफी किया है। ऐसे साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता में उच्चस्तरीय ज्ञान और कुशलता की आवश्यकता होती है। इसके अन्तर्गत नमनीयता या लचीलेपन की भी अधिक सम्भावना रहती है। इसमे साक्षात्कारकर्ता परिस्थिति के अनुसार प्रश्नों को बदलकर महत्वपूर्ण तथ्यों को प्राप्त कर सकता है।

(3) **अर्द्ध-संरचित साक्षात्कार.** (Semi-structured Interview)—इस प्रकार का साक्षात्कार न तो पूर्ण रूप से संरचित होता है और न ही पूर्णतया असंरचित ही वरन् इसमें दोनों का सम्मिश्रण होता है। विषय से सम्बन्धित कुछ प्रश्न तो पहले से ही निर्मित कर लिए जाते है और कुछ साक्षात्कारकर्ता स्वतन्त्र रूप से पूछता है।

5. **आवृत्ति के आधार पर** (On the basis of Frequency)

कई बार साक्षात्कार एक ही बार मे पूर्ण हो जाता है और कई बार उसकी पुनरावृत्ति करनी पड़ती है। इस आधार पर साक्षात्कारो को दो भागो में बांटा गया है :

(1) **प्रथम या अन्तिम साक्षात्कार** (First or final Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार में पहली बार में ही सारी सूचनाएं संकलित कर ली जाती है, और सूचनादाता से इस सन्दर्भ में बार-बार सम्पर्क की आवश्यकता नहीं होती, इसलिए इसे प्रथम या अन्तिम साक्षात्कार कहा जाता है। इस प्रकार का साक्षात्कार समस्या के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

(2) **पुनरावृत्ति साक्षात्कार** (Repetitive Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग लेजार्सफील्ड ने किया था। जब किसी निरन्तर परिवर्तित होने वाली प्रवृत्ति को ज्ञात करना हो अथवा विकास के प्रतिमान का पता लगाना हो तो इस पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसमे सूचनादाता से कुछ अवधि के बाद बार-बार भेंट कर सूचनाएं संकलित की जाती है। किसी नगर पर बढ़ते हुए औद्योगीकरण के प्रभावों को ज्ञात करने के लिए इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग किया जा सकता है। इस विधि के कई लाभ होते हुए भी इसकी कुछ सीमाएं भी हैं, जैसे यह एक खर्चीली प्रणाली है। इसमे समय भी अधिक लगता है। इसके लिए स्थायी अनुसन्धान संस्था का निर्माण करने की आवश्यकता पड़ती है। साथ ही इसमें स्थायी सूचनादाताओ को भी खोजना पड़ता है।

6. **सम्पर्क के आधार पर** (On the basis of Contact)

सूचनादाता से सम्पर्क के आधार पर साक्षात्कार को निम्न दो भागों में बांटा गया है:

(1) **प्रत्यक्ष साक्षात्कार** (Direct Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता एवं सूचनादाता परस्पर आमने-सामने होकर वार्तालाप करते हैं। इसमें साक्षात्कारकर्ता सूचनादाता के हाव-भाव, चेहरे की अभिव्यक्ति, आदि को देखकर उसके मनोभावों का अध्ययन कर सकता है।

(2) **अप्रत्यक्ष साक्षात्कार** (Indirect Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता के आमने-सामने की स्थिति में नहीं होता है। टेलीफोन के द्वारा साक्षात्कार लेना अथवा पर्दे में रहने वाली स्त्रियों से पर्दा डालकर अथवा किसी मध्यस्थ व्यक्ति के माध्यम से सूचना एकत्रित करना अप्रत्यक्ष साक्षात्कार कहलाता है।

7. **औपचारिकता के आधार पर** (On the basis of Formality)

(1) **औपचारिक साक्षात्कार** (Formal Interview)—इसमें पहले से ही कुछ प्रश्न बनाकर लिख लिए जाते है। इनके अतिरिक्त नये प्रश्न बनाने व शब्दों मे परिवर्तन करने की छूट साक्षात्कारकर्ता को नही होती है। इसे नियमित, संचालित व निर्देशित साक्षात्कार भी कहते है।

(2) **अनौपचारिक साक्षात्कार** (Informal Interview)—इसमें साक्षात्कारकर्ता को प्रश्नों को बनाने, क्रम परिवर्तन करने, अर्थ की व्याख्या करने, नये प्रश्न बनाने एवं प्रश्नो की शब्दावली मे परिवर्तन करने की छूट होती है। इसमें साक्षात्कार के समय किसी भी प्रकार की अनुसूची की सहायता नहीं ली जाती है। इसे अनियन्त्रित एवं अनिर्देशित साक्षात्कार भी कहते हैं।

8. **अध्ययन पद्धति के आधार पर** (On the basis of Methodology)

अध्ययन पद्धति के आधार पर साक्षात्कार को निम्नांकित दो भागो में बाटा गया है:

(1) **केन्द्रित साक्षात्कार** (Focussed Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरिकन समाजशास्त्री **मर्टन** ने 1946 में सार्वजनिक सन्देशवाहन के साधनों जैसे रेडियो, टी. वी. फिल्म, समाचार-पत्र, आदि के सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभावो को जानने के लिए किया था। आपने रेडियो के सामाजिक जीवन पर 150 प्रभावो का उल्लेख किया है। यह साक्षात्कार उन्ही सूचनादाताओं का लिया जाता है जो अध्ययन विषय से सम्बन्धित रहे हों। उदाहरण के लिए, किसी रेडियो कार्यक्रम को सुनने अथवा किसी फिल्म को देखने के बाद उसके प्रभाव को जानने के लिए श्रोताओं एवं दर्शको का साक्षात्कार लिया जाता है। चूंकि इसमें किसी विशेष घटना, अवस्था या परिस्थिति के प्रभाव पर ही साक्षात्कार केन्द्रित होता है, इसलिए इसे 'केन्द्रित साक्षात्कार' कहा जाता है। इसकी निम्न विशेषताएं हैं

(i) यह साक्षात्कार केवल उन्हीं लोगों का लिया जाता है जो उस विषय विशेष से सम्बन्धित रह चुके हों। (ii) इस प्रकार के साक्षात्कार में 'साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका' (Interview guide) का सहारा लिया जाता है जिसमे विषय से सम्बन्धित ज्ञात की जाने वाली बातों का उल्लेख होता है। (iii) इस प्रकार का साक्षात्कार एक विशिष्ट परिस्थिति के प्रति सूचनादाता के अनुभवों, मनोवृत्तियों एवं भावनाओं को जानने के लिए किया जाता है। (iv) इसमें साक्षात्कारकर्ता सूचनादाताओ के उत्तरों को प्रभावित नही कर सकता है। (v) इसमे घटना पूर्व विश्लेषण कर प्रश्नों की एक सूची तैयार करली जाती है।

(2) अनिर्देशित साक्षात्कार (Non-directive Interview)—इसे अनियन्त्रित एवं असंचालित साक्षात्कार भी कहते हैं। इसमें किसी कठिन समस्या के बारे में सूचनादाता से स्वतन्त्रतापूर्वक प्रश्न पूछे जाते हैं। इसमें प्रश्नों की पूर्व निर्धारित अनुसूची नहीं होती है और न ही सूचनादाता पर उत्तर देने के सन्दर्भ में कोई नियन्त्रण ही होता है। इसमें सूचनादाता मुक्त होकर विषय के बारे में सूचनाएं देता है और साक्षात्कारकर्ता धैर्यपूर्वक उन्हें सुनता जाता है। यदि कोई सूचना छूट जाए तो सूचनादाता के द्वारा सारी बात कह देने के बाद ही अन्य प्रश्न पूछे जाते हैं। यह साक्षात्कार अनौपचारिक साक्षात्कार के समान ही है।

साक्षात्कार की प्रक्रिया एवं तकनीक
(PROCESS AND TECHNIQUE OF INTERVIEW)

साक्षात्कार मौलिक रूप से सामाजिक अन्तःक्रिया की एक प्रक्रिया है। साक्षात्कार का संचालन करना भी एक कला है। इसलिए इसे योजनाबद्ध रूप से संगठित किया जाना चाहिए। साक्षात्कार का संचालन किस प्रकार किया जाय, इस पर बहुत कुछ लिखा गया है। इस सम्बन्ध में हरबर्ट हाईमैन, विन्धम, वाल्टर एवं मूर, ओल्डफील्ड, वेनलैंड व गौरा, रोजर्स, स्टेली, आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने साक्षात्कार की प्रक्रिया, तकनीक एवं समस्याओं, आदि के बारे में विस्तृत विवरण दिया है। किसी भी साक्षात्कार की प्रक्रिया के मुख्यतः तीन चरण होते हैं : (i) साक्षात्कार के बारे में प्रारम्भिक तैयारी, (ii) साक्षात्कार की प्रक्रिया, (iii) साक्षात्कार का समापन एवं प्रतिवेदन। हम इन सब पदों पर यहां विचार करेंगे।

I. साक्षात्कार की प्रारम्भिक तैयारी
(PRELIMINARY PREPARATION OF INTERVIEW)

किसी भी साक्षात्कार को प्रारम्भ करने से पूर्व साक्षात्कार के विषय में सूचनादाताओं की प्रकृति, साक्षात्कार के प्रकार, साक्षात्कार का समय, स्थान व उपकरण के बारे में प्रारम्भिक विचार कर लेना चाहिए, ताकि साक्षात्कार का संचालन सफलतापूर्वक किया जा सके। साक्षात्कार के प्रारम्भिक विज्ञान अथवा तैयारी में निम्न बातों को सम्मिलित किया जाता है :

(i) समस्या की पूर्ण जानकारी (Full knowledge of the problem)—साक्षात्कार का आयोजन करने वाले व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि उसे समस्या के बारे में पूर्ण जानकारी हो क्योंकि साक्षात्कार के दौरान जब सूचनादाता साक्षात्कारकर्ता से अनेक प्रकार के प्रश्न करता है अथवा वाद-विवाद करता है तो उसे प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर एवं [illegible]

के समक्ष स्पष्ट कर सके।

(ii) सूचनादाताओं के बारे में जानकारी (Information about respondents)—साक्षात्कारकर्ता को सूचनादाताओं की योग्यता, उनके निवास-स्थान, व्यवसाय, स्वभाव, अवकाश तथा मिलने के समय, आदि के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। सूचनादाताओं की प्रकृति, विचार और संस्कृति तथा जाति और सामाजिक स्थिति, आदि का भी ज्ञान होना चाहिए। ये सभी बातें जानना साक्षात्कार की सफलता के लिए आवश्यक है।

6. **सम्पर्क के आधार पर** (On the basis of Contact)

सूचनादाता से सम्पर्क के आधार पर साक्षात्कार को निम्न दो भागों में बांटा गया है :

(1) **प्रत्यक्ष साक्षात्कार** (Direct Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता एवं सूचनादाता परस्पर आमने-सामने होकर वार्तालाप करते हैं। इसमें साक्षात्कारकर्ता सूचनादाता के हाव-भाव, चेहरे की अभिव्यक्ति, आदि को देखकर उसके मनोभावों का अध्ययन कर सकता है।

(2) **अप्रत्यक्ष साक्षात्कार** (Indirect Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता के आमने-सामने की स्थिति में नही होता है। टेलीफोन के द्वारा साक्षात्कार लेना अथवा पर्दे में रहने वाली स्त्रियों से पर्दा डालकर अथवा किसी मध्यस्थ व्यक्ति के माध्यम से सूचना एकत्रित करना अप्रत्यक्ष साक्षात्कार कहलाता है।

7. **औपचारिकता के आधार पर** (On the basis of Formality)

(1) **औपचारिक साक्षात्कार** (Formal Interview)—इसमें पहले से ही कुछ प्रश्न बनाकर लिख लिए जाते है। इनके अतिरिक्त नये प्रश्न बनाने व शब्दों में परिवर्तन करने की छूट साक्षात्कारकर्ता को नही होती है। इसे नियमित, संचालित व निर्देशित साक्षात्कार भी कहते है।

(2) **अनौपचारिक साक्षात्कार** (Informal Interview)—इसमे साक्षात्कारकर्ता को प्रश्नों को बनाने, क्रम परिवर्तन करने, अर्थ की व्याख्या करने, नये प्रश्न बनाने एवं प्रश्नो की शब्दावली में परिवर्तन करने की छूट होती है। इसमें साक्षात्कार के समय किसी भी प्रकार की अनुसूची की सहायता नही ली जाती है। इसे अनियन्त्रित एवं अनिर्देशित साक्षात्कार भी कहते है।

8 **अध्ययन पद्धति के आधार पर** (On the basis of Methodology)

अध्ययन पद्धति के आधार पर साक्षात्कार को निम्नांकित दो भागों में बांटा गया है :

(1) **केन्द्रित साक्षात्कार** (Focussed Interview)—इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरिकन समाजशास्त्री **मर्टन** ने 1946 में सार्वजनिक सन्देशवाहन के साधनों जैसे रेडियो, टी. वी. फिल्म, समाचार-पत्र, आदि के सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभावों को जानने के लिए किया था। आपने रेडियो के सामाजिक जीवन पर 150 प्रभावों का उल्लेख किया है। यह साक्षात्कार उन्ही सूचनादाताओं का लिया जाता है जो अध्ययन विषय से सम्बन्धित रहे हो। उदाहरण के लिए, किसी रेडियो कार्यक्रम को सुनने अथवा किसी फिल्म को देखने के बाद उसके प्रभाव को जानने के लिए श्रोताओं एवं दर्शकों का साक्षात्कार लिया जाता है। चूंकि इसमें किसी विशेष घटना, अवस्था या परिस्थिति के प्रभाव पर ही साक्षात्कार केन्द्रित होता है, इसलिए इसे 'केन्द्रित साक्षात्कार' कहा जाता है। इसकी निम्न विशेषताएं हैं :

(i) यह साक्षात्कार केवल उन्ही लोगों का लिया जाता है जो उस विषय विशेष से सम्बन्धित रह चुके हो। (ii) इस प्रकार के साक्षात्कार मे 'साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका' (Interview guide) का सहारा लिया जाता है जिसमें विषय से सम्बन्धित ज्ञात की जाने वाली बातों का उल्लेख होता है। (iii) इस प्रकार का साक्षात्कार एक विशिष्ट परिस्थिति के प्रति सूचनादाता के अनुभवों, मनोवृत्तियों एवं भावनाओ को जानने के लिए किया जाता है। (iv) इसमें साक्षात्कारकर्ता सूचनादाताओ के उत्तरों को प्रभावित नही कर सकता है। (v) इसमें घटना का पूर्व विश्लेषण कर प्रश्नों की एक सूची तैयार करली जाती है।

(2) **अनिर्देशित साक्षात्कार** (Non-directive Interview)—इसे अनियन्त्रित एवं असंचालित साक्षात्कार भी कहते हैं। इसमें किसी कठिन समस्या के बारे में सूचनादाता से स्वतन्त्रतापूर्वक प्रश्न पूछे जाते है। इसमें प्रश्नो की पूर्व निर्धारित अनुसूची नहीं होती है और न ही सूचनादाता पर उत्तर देने के सन्दर्भ में कोई नियन्त्रण ही होता है। इसमें सूचनादाता मुक्त होकर विषय के बारे में सूचनाएं देता है और साक्षात्कारकर्ता धैर्यपूर्वक उन्हें सुनता जाता है। यदि कोई सूचना छूट जाए तो सूचनादाता के द्वारा सारी बात कह देने के बाद ही अन्य प्रश्न पूछे जाते हैं। यह साक्षात्कार अनौपचारिक साक्षात्कार के समान ही है।

साक्षात्कार की प्रक्रिया एवं तकनीक
(PROCESS AND TECHNIQUE OF INTERVIEW)

साक्षात्कार मौलिक रूप से सामाजिक अन्तःक्रिया की एक प्रक्रिया है। साक्षात्कार का संचालन करना भी एक कला है। इसलिए इसे योजनाबद्ध रूप से संगठित किया जाना चाहिए। साक्षात्कार का संचालन किस प्रकार किया जाय, इस पर बहुत कुछ लिखा गया है। इस सम्बन्ध में हरबर्ट हाईमैन, बिन्घम, वाल्टर एवं मूर, ओल्डफील्ड, वेनलैंड व गोस, रोजर्स, स्टेस्ली, आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं जिन्होंने साक्षात्कार की प्रक्रिया, तकनीक एवं समस्याओं, आदि के बारे में विस्तृत विवरण दिया है। किसी भी साक्षात्कार की प्रक्रिया के मुख्यतः तीन चरण होते हैं : (i) साक्षात्कार के बारे में प्रारम्भिक तैयारी, (ii) साक्षात्कार की प्रक्रिया, (iii) साक्षात्कार का समापन एवं प्रतिवेदन। हम इन सब पक्षों पर यहां विचार करेंगे।

I. साक्षात्कार की प्रारम्भिक तैयारी
(PRELIMINARY PREPARATION OF INTERVIEW)

किसी भी साक्षात्कार को प्रारम्भ करने से पूर्व साक्षात्कार के विषय में सूचनादाताओं की प्रकृति, साक्षात्कार के प्रकार, साक्षात्कार का समय, स्थान व उपकरण के बारे में प्रारम्भिक विचार कर लेना चाहिए, ताकि साक्षात्कार का संचालन सफलतापूर्वक किया जा सके। साक्षात्कार के प्रारम्भिक चिन्तन अथवा तैयारी मे निम्न बातों को सम्मिलित किया जाता है :

(i) **समस्या की पूर्ण जानकारी** (Full knowledge of the problem)—साक्षात्कार का आयोजन करने वाले व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि उसे समस्या के बारे में पूर्ण जानकारी हो क्योंकि साक्षात्कार के दौरान जब सूचनादाता साक्षात्कारकर्ता से अनेक प्रकार के प्रश्न करता है अथवा वाद-विवाद करता है तो उसे प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर एवं स्पष्टीकरण देना पड़ता है। विषय के ज्ञान के अभाव में साक्षात्कारकर्ता को लज्जित होना पड़ सकता है और ऐसी स्थिति में अनुसन्धान की सफलता भी संदिग्ध हो जाती है। अतः यह आवश्यक है कि साक्षात्कारकर्ता को विषय के बारे में पूर्ण जानकारी हो जिसे वह सूचनादाता के समक्ष स्पष्ट कर सके।

(ii) **सूचनादाताओं के बारे में जानकारी** (Information about respondents)—साक्षात्कारकर्ता को सूचनादाताओं की योग्यता, उनके निवास-स्थान, व्यवसाय, स्वभाव, अवकाश तथा मिलने के समय, आदि के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। सूचनादाताओ की प्रकृति, विचार और संस्कृति तथा जाति और सामाजिक स्थिति, आदि का भी ज्ञान होना चाहिए। ये सभी बातें जानना साक्षात्कार की सफलता के लिए आवश्यक है।

(iii) **साक्षात्कारदाताओं का चुनाव** (Selection of Interviewees)—अध्ययन विषय की आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त साक्षात्कारदाताओं का चुनाव आवश्यक है, उदाहरण के लिए, यदि हम किसी औद्योगिक समस्या का अध्ययन कर रहे हैं तो हमें औद्योगिक श्रमिकों, कारखाने के प्रवन्धकों, श्रम-संघ के नेताओं और अधिकारियों, आदि का चुनाव करना चाहिए। साक्षात्कारदाताओं का चुनाव करते समय हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि हम अनुभवी, अध्ययन समस्या से सम्वन्धित तथा तटस्थ व्यक्तियों का चयन करें जो कि समस्या के वारे में गहन, विस्तृत, विश्वसनीय एवं प्रामाणिक सूचनाएं दे सकें। कई वार स्थायी साक्षात्कारदाताओं का एक समूह (Panel) वना लेना भी लाभदायक होता है और यदि साक्षात्कारदाता बहुत अधिक संख्या में हों तो निदर्शन द्वारा उसमे से वांछित मात्रा में सदस्यों का चयन कर लिया जाता है।

(iv) **समय एवं स्थान का निर्धारण** (Fixation of time and place)—साक्षात्कार के लिए उचित समय एवं स्थान का निर्धारण भी एक आवश्यक चरण है जो कि साक्षात्कारदाता की सलाह से किया जाना चाहिए। इसके लिए उससे पत्र, टेलीफोन या व्यक्तिगत रूप से सम्पर्क स्थापित कर लिया जाता है। समय और स्थान का निर्धारण करने से पूर्व उसे परिचय-पत्र भी भेजना चाहिए, ताकि वह साक्षात्कार के सम्बन्ध मे किसी प्रकार का सन्देह न करे। समय ऐसा होना चाहिए जब उसे अवकाश हो और वह किसी कार्य मे व्यस्त न हो। इसी तरह से स्थान का निर्धारण करते समय भी यह ध्यान में रखा जाए कि स्थान ऐसा हो जहां वह गोपनीय सूचनाएं दे सके। सार्वजनिक स्थान एवं व्यवसाय स्थल पर सामान्यतः साक्षात्कार लेना उपयुक्त नही रहता है।

(v) **साक्षात्कार यन्त्रों की रचना** (Construction of interview tools)—साक्षात्कार के सचालन के लिए प्रमुखतः दो यन्त्रों की रचना की जाती है (i) अनुसूची, और (ii) साक्षात्कार प्रदर्शिका (निर्देशिका) की। इनमें से कौनसा यन्त्र कहां प्रयोग में लाया जाएगा, यह साक्षात्कार के प्रकार एवं अध्ययन-विषय पर निर्भर करता है। हम संक्षेप में इन दोनों ही यन्त्रों का यहा उल्लेख करेंगे।

(1) **साक्षात्कार अनुसूची** (Interview Schedule)—यह विषय से सम्वन्धित प्रश्नों की एक सूची होती है जिसे क्रमबद्ध रूप में लिखा जाता है। इन प्रश्नों को साक्षात्कारकर्ता पूछता जाता है और रिक्त स्थान में, उनके सामने लिखता जाता है। यह प्रश्नावली का ही एक रूप है। साक्षात्कार अनुसूची मे उत्तरदाता का नाम, स्थान, आयु, जाति, वैवाहिक स्थिति, धर्म, व्यवसाय, आदि का उल्लेख होता है और उसके बाद अध्ययन समस्या से सम्वन्धित अनेक प्रश्न होते है। साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग औपचारिक और निर्देशित साक्षात्कारों के लिए किया जाता है।

(2) **साक्षात्कार निर्देशिका (पथ-प्रदर्शिका)** (Interview guide)—साक्षात्कार निर्देशिका एक लिखित प्रपत्र होता है जिसमें समस्या के विभिन्न पक्षों का विवरण होता है। **गुडे एवं हाट** ने इसे स्पष्ट करते हुए लिखा है, "साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका ऐसे शोध-प्रसंगों अथवा विषयों की एक सूची होती है जिसमें साक्षात्कारकर्ता को प्रश्न पूछने के लिए प्रश्नों के क्रम, भाषा तथा तरीके की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है।"[1] अनिर्दिष्ट और अनौपचारिक साक्षात्कार मे इसका प्रयोग प्रमुख रूप से किया जाता है। साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका में समस्या के विभिन्न पहलुओं

1 Goode and Hatt, *op. cit*, p. 133

की रूपरेखा निहित होती है। इसमें साक्षात्कार की पूर्ण योजना का विवरण होता है, पूछने योग्य महत्वपूर्ण प्रश्नों की सूची तथा साक्षात्कार की प्रक्रिया के बारे में आवश्यक सावधानियों एवं निर्देशों का उल्लेख होता है। साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका की रचना करते समय यह ध्यान रहे कि यह नियन्त्रक सिद्ध न हो, वरन् केवल मार्ग-दर्शक ही हो। साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका के निम्नांकित लाभ हैं :

(1) इससे अध्ययन में एकरूपता आती है।
(2) यह अध्ययन के प्रधान तत्वों की ओर ध्यान आकर्षित करती है।
(3) यह विभिन्न साक्षात्कारों द्वारा तुलनात्मक तथ्यों की प्राप्ति में सहायक है।
(4) साक्षात्कारकर्ता की स्मरणशक्ति पर अनावश्यक भरोसा नहीं करना पड़ता है।
(5) इससे अध्ययन में क्रमबद्धता आती है।
(6) निर्मित उपकल्पना के आधार पर आवश्यक सामग्री का संग्रहण किया जाता है।
(7) विशिष्ट प्रकार के ठोस तथ्यों का संग्रहण किया जाता है।

II. साक्षात्कार की प्रक्रिया
(PROCESS OF INTERVIEW)

साक्षात्कार की प्रारम्भिक तैयारी कर लेने के बाद सूचनादाता से साक्षात्कार करना होता है। साक्षात्कार की प्रक्रिया में जो पद्धति वह अपनाता है, वह सूचनादाता की बुद्धि, क्षमता, योग्यता एवं शैक्षणिक स्तर पर निर्भर होती है। साक्षात्कार का संचालन करते समय निम्नांकित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए :

(1) **सूचनादाता से सम्पर्क** (Contact with the informants)—वास्तविक साक्षात्कार को प्रारम्भ करने के लिए सबसे पहला कार्य होता है, सूचनादाता से पूर्व निश्चित समय एवं स्थान पर सम्पर्क स्थापित करना। सर्वप्रथम मिलते ही साक्षात्कारकर्ता को अभिवादन करना चाहिए। उसे हंसमुख होना चाहिए एवं समुचित पोषाक धारण करनी चाहिए। यदि उसके पास कोई परिचय-पत्र हो तो उसे भी दिखाना चाहिए। इन सब बातों का सूचनादाता पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

(2) **उद्देश्य बताना** (Telling the Purpose)—साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कारदाता को अपने अध्ययन का उद्देश्य बता देना चाहिए जिसमें अनुसन्धान करने वाली संस्था और विषय, आदि का भी उल्लेख कर देना चाहिए ताकि वह यह जान जाए कि उसके द्वारा दी गई सूचना का कोई दुरुपयोग नही होगा।

(3) **सहयोग की प्रार्थना** (Appeal for Co-operation)—अनुसन्धान का उद्देश्य बताने के बाद साक्षात्कारकर्ता को अध्ययन में सहयोग देने की प्रार्थना करनी चाहिए, इसके लिए उसकी प्रशंसा भी की जानी चाहिए, उसे यह कहा जाना चाहिए कि आपके सहयोग के अभाव मे यह अनुसन्धान कार्य पूर्ण नही हो पाएगा, अतः आपका सहयोग अनुसन्धान के लिए अति आवश्यक है। साथ ही उसे यह भी विश्वास दिलाया जाना चाहिए कि उसके द्वारा दी गई सूचनाएं गुप्त रखी जाएंगी तथा अध्ययन का उद्देश्य विशुद्ध वैज्ञानिक है।

(4) **वार्तालाप प्रारम्भ करना** (Beginning of Conversation)—उपर्युक्त बातों के बाद सूचनादाता से विषय से सम्बन्धित वार्तालाप प्रारम्भ किया जाता और विभिन्न प्रकार के प्रश्न पूछे जाते है। प्रश्न करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि प्रश्नों का क्रम सही हो, प्रश्न विषय से सम्बन्धित हों, उनकी भाषा सरल हो तथा प्रश्न ऐसे न हों जिनसे सूचनादाता क्रुद्ध हो जाए अथवा जिनके उत्तर वह टालना चाहे। प्रश्न आदेशात्मक, उपदेशात्मक,

निषेधात्मक तथा पथ-प्रदर्शक भी नहीं होने चाहिए। प्रश्न समय एवं परिस्थिति को ध्यान में रखकर किये जाने चाहिए। एक प्रकार के प्रश्नों के समाप्त होने के बाद ही दूसरे प्रकार के प्रश्न पूछे जाने चाहिए। उदाहरण के लिए, आय के सम्बन्ध में प्रश्न पूछते-पूछते ही बीच में विवाह एव परिवार से सम्बन्धित प्रश्न नहीं करने चाहिए।

(5) **सहानुभूतिपूर्वक सुनना** (Sympathetic listening)—साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता को कम बोलना चाहिए और सूचनादाता को धैर्य एव सहानुभूतिपूर्वक सुनना चाहिए। साक्षात्कारकर्ता को सूचनादाता का विश्वास जीत लेना चाहिए और उसे बीच में टोकना नहीं चाहिए। साक्षात्कारकर्ता को सूचनादाता की बातों में रुचि का संकेत देना चाहिए और यह कहना चाहिए कि उसके स्वय के विचार, दृष्टिकोण एवं पसन्द-नापसन्द भी सूचनादाता के समान ही है। ऐसी बातें कहने से वह मुक्त होकर अधिकाधिक सूचनाएं प्रदान करेगा।

(6) **प्रोत्साहन एवं पुनःस्मृति** (Stimulation and Recall)—सूचनादाता कई बार सूचना देते-देते भटक जाता है, थक जाता है अथवा उसकी रुचि कम हो जाती है, ऐसी स्थिति में साक्षात्कारकर्ता को चाहिए कि वह ऐसे वाक्यों का प्रयोग करे जिनसे सूचनादाता का उत्साहवर्धन हो और उसे सूचना देने हेतु प्रोत्साहन मिले। उदाहरण के रूप में, 'आपने हमे बहुत ही महत्वपूर्ण बातें बतायी हैं', 'आपके अनुभव अनुसन्धान के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगे', 'आपकी सूचना ने तो हमे नवीन दिशा प्रदान की है', आदि वाक्यो का प्रयोग किया जाना चाहिए।

कभी-कभी सूचनादाता बोलते-बोलते भावों मे बह जाता और विषय से परे हट जाता है। तब साक्षात्कारकर्ता को चाहिए कि वह उसे पुनः सावधानीपूर्वक विषय पर ले आए, इसे पुनः स्मरण कराना (Recall) कहते है। मुख्य विषय पर लाने के लिए ऐसे वाक्यों का प्रयोग किया जा सकता है जैसे—'आप अभी अमुक विषय के बारे मे बता रहे थे', 'बहुत अच्छा लगा, कृपया उसके बारे में कुछ और कहिए', 'हां तो उसका फिर क्या हुआ', 'आपने बताया कि .....तो इसके प्रति आपकी क्या प्रतिक्रिया है'?

(7) **क्रोधित होने से बचाव** (Avoid irritating points)—साक्षात्कारकर्ता को चाहिए कि वह सूचनादाता से ऐसे प्रश्न नहीं पूछे जिससे वह क्रोधित हो जाय और साक्षात्कार को बीच मे ही समाप्त करना पड़े। उदाहरण के लिए, किसी डाकू या हत्यारे का साक्षात्कार लेते समय उससे यह नही पूछना चाहिए—'डकैती और हत्या तो जघन्य अपराध है, आपने ऐसा क्यों किया, क्या आपको ऐसे कार्यो से शर्म नहीं आती' ? ऐसे प्रश्नों से सूचनादाता उत्तेजित हो सकता है जो कि साक्षात्कार की दृष्टि से उचित नही है।

(8) **उचित एवं समयानुसार प्रश्न** (Adequate and timely questions)—साक्षात्कार के समय यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि समयानुसार उचित प्रश्न किये जाएं। प्रश्न सदैव जो विषय चल रहा हो, उससे ही सम्बन्धित होने चाहिए, एक विषय छोडकर यकायक दूसरे विषय पर प्रश्न नही पूछने चाहिए, इससे साक्षात्कार की निरन्तरता टूट जाती है। जहां तक हो गहन व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित प्रश्नों से बचा जाना चाहिए क्योंकि ऐसे प्रश्नों से व्यक्ति या तो बचना चाहेगा या वह क्रोधित हो जायेगा।

(9) **अन्य सामान्य बाते** (Other general things)—उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त साक्षात्कार के दौरान कुछ अन्य बातों का भी ध्यान रखना चाहिए जो निम्नांकित हैं—(i) प्रत्यक्ष प्रश्न नही पूछने चाहिए, (ii) जटिल प्रश्न नहीं पूछने चाहिए (iii) ऐसे प्रश्न भी नहीं किये जाने चाहिए जिनके उत्तर बहुत सक्षिप्त हों, (iv) साक्षात्कारकर्ता को सदैव ही विषय पर

रहने का प्रयास करना चाहिए। (v) पथ-पदर्शक प्रश्न नहीं पूछे जाने चाहिए, (vi) आज्ञा देने एवं उपदेश देने वाले प्रश्नों से भी बचना चाहिए, (vii) दोहरे प्रश्नों से बचना चाहिए।

(10) साक्षात्कार का नियन्त्रण एवं प्रमाणीकरण (Controlling and Validating the interview)—साक्षात्कार लेते समय साक्षात्कार को नियन्त्रित करना एवं प्राप्त सूचनाओ की विश्वसनीयता को ज्ञात करना भी आवश्यक है, क्योंकि कई बार सूचनादाता बोलते-बोलते भावुकता में बहने लग जाता है और ऐसी बातें कहने लगता है जिनसे अनुसन्धान का कोई सम्बन्ध न हो, ऐसी स्थिति में साक्षात्कारकर्ता को साक्षात्कार का नियन्त्रण कर सावधानीपूर्वक सूचनादाता को पुनः विषय पर लाना चाहिए। साक्षात्कार के प्रमाणीकरण के सन्दर्भ में निम्नांकित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए :

(i) साक्षात्कार में सूचनादाता ने कोई परस्पर विरोधी बातें तो नहीं कही है, ऐसा होने का यह कारण हो सकता है कि सूचनादाता ने किसी बात को ठीक से न समझा हो या गलत समझा हो।

(ii) कई बार सूचनादाता साक्षात्कारकर्ता को धोखा देने या झूठ बोलने का प्रयास करता है, तब उसे ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे यह प्रकट हो कि ये सब बाते साक्षात्कारकर्ता को पहले ही मालूम है।

(iii) सूचनाओं की प्रामाणिकता को ज्ञात करने के लिए खोजपूर्ण प्रश्न तथा प्रति प्रश्न (Cross questuons) किये जाने चाहिए।

(iv) साक्षात्कार द्वारा प्राप्त तथ्यों के बीच कार्य-कारण का सम्बन्ध ज्ञात करना चाहिए, अन्य शब्दों में साक्षात्कार में कही गई बातों की तर्क संगतता को देखा जाना चाहिए।

III. साक्षात्कार का समापन एवं प्रतिवेदन
(COMPLETION OF INTERVIEW AND REPORTING)

साक्षात्कार का अन्तिम और महत्वपूर्ण चरण है—साक्षात्कार की समाप्ति एवं प्रतिवदेन। इस चरण में निम्नांकित तीन बातें प्रमुख हैं :

(i) साक्षात्कार की समाप्ति (Closing of Interview)—साक्षात्कार की समाप्ति भी सुन्दर ढंग से होनी चाहिए। जब सूचनादाता कोई महत्वपूर्ण बात कह रहा हो, नई बात बता रहा हो या किसी अन्य बात के लिए प्रस्ताव कर रहा हो तो साक्षात्कार को समाप्त नही करना चाहिए। जब सूचनादाता सब कुछ कह चुका होता है तो उसकी गति मन्द हो जाती है, या वह रुकने लगता है तो समझ लेना चाहिए कि साक्षात्कार समाप्ति की ओर है। कई बार सूचनादाता साक्षात्कार के बाद भय और आत्मग्लानि की भावना से भर जाता है क्योंकि वह सोचता है कि उसने अपनी गुप्त बातें किसी अपरिचित व्यक्ति को बता दीं, तब उसे यह विश्वास दिलाना चाहिए कि उसने अपनी सूचनाओं द्वारा अनुसन्धान में महत्वपूर्ण योग दिया है। सूचनादाता को साक्षात्कार की समाप्ति के बाद प्रसन्न एवं सन्तुष्ट मुद्रा में छोड़ना चाहिए जिससे कि यदि साक्षात्कार को कभी पुनः प्रारम्भ करना पड़े तो वह सूचना देने के लिए तैयार रहे। साक्षात्कार के अन्त में साक्षात्कारकर्ता को सूचनादाता के प्रति कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए तथा उसके द्वारा दिए गए सहयोग के लिए धन्यवाद देना चाहिए और भविष्य में भी सहयोग की अपेक्षा के साथ विदा लेनी चाहिए।

(ii) साक्षात्कार को लिखना (Recording the Interview)—साक्षात्कार की समाप्ति के बाद एक महत्वपूर्ण कार्य है—साक्षात्कार को लिखना। संरचित साक्षात्कार में तो अनुसूची

मे सूचनाओं को हाथों-हाथ लिख लिया जाता है, किन्तु असंरचित, अनिर्देशित तथा अनौपचारिक साक्षात्कारो मे सूचनाओं का लिखना एक कठिन कार्य है क्योंकि जो सूचनादाता मुक्त रूप से सूचना दे रहा हो तो सम्पूर्ण वार्तालाप को लिखने मे क्रम टूटने का डर रहता है अथवा सूचनादाता को झुंझलाहट आ सकती हे। ऐसी स्थिति मे या तो साक्षात्कारकर्ता की केवल कुछ मोटी-मोटी वातो को नोट कर लेना चाहिए अथवा संक्षिप्त शब्दों या संकेत लिपि का या टेपरिकॉर्डर का प्रयोग करना चाहिए। कई वार साक्षात्कारकर्ता साक्षात्कार समाप्त होने के बाद एकान्त मे अथवा अपने कार्यालय में वैठकर भी सूचनाओं को लिख सकता है, किन्तु ऐसा करने में साक्षात्कारकर्ता की स्मरण-शक्ति पर निर्भर रहना पडेगा और प्रत्येक व्यक्ति की स्मरण शक्ति की भी अपनी सीमाएं होती हैं।

(iii) **साक्षात्कार प्रतिवेदन** (Interview Report)—साक्षात्कार की समाप्ति के वाद एक और महत्वपूर्ण कार्य है—साक्षात्कार प्रतिवेदन तैयार करना। प्रतिवेदन तैयार करने के लिए साक्षात्कारकर्ता द्वारा लिए गए नोट्स, टेपरिकॉर्डर, आदि की सहायता ली जानी चाहिए। इस रिपोर्ट के आधार पर ही संकलित की गई सूचनाओं का निर्वचन व वर्गीकरण किया जाता एवं निष्कर्ष निकाले जाते हैं। रिपोर्ट लिखने का कार्य भी साक्षात्कार की समाप्ति के बाद यथाशीघ्र कर लिया जाना चाहिए ताकि सूचनाओं के छूटने, परिवर्तित होने या भूलने के अवसर नहीं रहे। प्रतिवेदन लिखते समय यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि वह सही और पक्षपात-रहित हो।

एक अच्छे साक्षात्कारकर्ता के गुण (Qualities of a good Interviewer)

साक्षात्कार की सफलता बहुत कुछ साक्षात्कारकर्ता पर निर्भर होती है, और साक्षात्कार लेना विज्ञान की अपेक्षा कला अधिक है, जैसा कि **पी. वी. यंग** ने लिखा है, "इसीलिए साक्षात्कार अधिकाश रूप मे एक कला है न कि एक विज्ञान।"[1] साक्षात्कार का सफल संचालन साक्षात्कारकर्ता की योग्यता एवं व्यवहार-कुशलता पर वहुत कुछ निर्भर करता हैं। कई वार सूचनादाता चतुर एव मक्कार होते है तो कई बार वे मन्दवुद्धि, डरपोक, अपनी वात को वढा-चढाकर कहने वाले, झूठे एवं तथ्यों को छिपाने वाले होते हैं। साक्षात्कारकर्ता को इन सभी से सम्पर्क करना होता है और उनसे सूचनाए प्राप्त करनी पड़ती है, अतः उसमे अनेक गुणो का होना आवश्यक है। **एक अच्छे साक्षात्कारकर्ता में निम्नांकित गुण होने चाहिए :**

(i) साक्षात्कारकर्ता का व्यक्तित्व हंसमुख, प्रभावशाली एवं आकर्षक होना चाहिए।
(ii) उसमे धैर्य एवं सहनशीलता होनी चाहिए।
(iii) उसमे आत्म-नियन्त्रण रखने की क्षमता होनी चाहिए।
(iv) उसे एक व्यवहारकुशल, विनम्र एवं चतुर व्यक्ति होना चाहिए।
(v) उसमे वाक्पटुता तथा हाजिरजवाबी का गुण होना चाहिए।
(vi) उसमे वौद्धिक ईमानदारी एवं निष्पक्षता होनी चाहिए।
(vii) साक्षात्कारकर्ता को बुद्धिमान होना चाहिए।
(viii) उसमे शीघ्र निर्णय लेने की क्षमता होनी चाहिए।
(ix) उसमे समय एवं परिस्थिति के अनुसार अनुकूलन करने का गुण होना चाहिए।

1 "Therefore interviewing remains largely an art, rather than a Science."
—P. V. Young, *op. cit*, p 225.

साक्षात्कार विधि के गुण (महत्व)
(MERITS OF INTERVIEW METHOD)

साक्षात्कार एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा अनुसन्धान विषय से सम्बन्धित मौखिक सूचनाएं प्राप्त की जाती हैं। साक्षात्कार में व्यक्ति को अवलोकन का अवसर भी मिलता है। इसके द्वारा अनेक गुणात्मक एवं प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया जाता है। गुडे तथा हाट ने इसके महत्व को बताते हुए लिखा है, "आधुनिक अनुसन्धान में साक्षात्कार करना, गुणात्मक साक्षात्कार का फिर से मूल्यांकन करने हेतु अधिक महत्वपूर्ण हो गया है।"[1]

साक्षात्कार के महत्व अथवा गुणों को हम विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत इस प्रकार प्रकट कर सकते हैं।

(i) **मनोवैज्ञानिक महत्व** (Psychological importance)—साक्षात्कार वह विधि है जिसके द्वारा व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक अध्ययन सम्भव है। साक्षात्कार में व्यक्ति के उद्वेगों, भावनाओं, धारणाओं, इच्छाओं, आकांक्षाओं, विचारों, आदि का आसानी से अध्ययन सम्भव है। साक्षात्कार के दौरान सूचनादाता द्वारा प्रकट किये गये भावों, चेहरे की मुद्राओं, आदि के आधार पर सूचनादाता के मनोवैज्ञानिक व्यवहार एवं मानसिक स्थिति का अध्ययन किया जा सकता है। बातचीत के दौरान भी सूचनादाता के कई मानसिक पक्ष उजागर होते हैं। इस प्रकार साक्षात्कार के द्वारा मानव व्यवहार को प्रभावित करने वाले मनोवैज्ञानिक तथ्यों का अवलोकन एवं अध्ययन आसानी से किया जा सकता है।

(ii) **सभी स्तर के लोगों से सूचना प्राप्ति** (Securing information from persons of all levels)—साक्षात्कार के द्वारा शिक्षित और अशिक्षित तथा विभिन्न संस्कृतियों से सम्बन्धित सभी प्रकार के लोगों से सम्पर्क कर सूचनाएं प्राप्त की जा सकती है क्योंकि साक्षात्कारकर्ता प्रश्नों को उनकी बुद्धि एवं स्तर के अनुसार समझाकर वांछित उत्तर प्राप्त कर सकता है।

(iii) **भूतकालीन घटनाओं का अध्ययन** (Study of Past Events)—साक्षात्कार के द्वारा भूतकालीन घटनाओं एवं उनके प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है क्योंकि कई घटनाएं ऐसी होती हैं जिनकी पुनरावृत्ति नहीं हो सकती। उनके बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए हमें उन लोगों का साक्षात्कार लेना होगा जिन्होंने उस घटना को देखा है, उससे सम्बन्धित रहे हैं अथवा प्रभावित हुए हैं। उदाहरण के लिए, भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए किन-किन कठिनाइयों से गुजरना पड़ा, यह बात हम उन लोगों के साथ साक्षात्कार द्वारा ज्ञात कर सकते हैं जो स्वतन्त्रता संग्राम से सम्बन्धित रहे हैं।

(iv) **अमूर्त घटनाओं का अध्ययन** (Study of abstract Phenomena)—साक्षात्कार के द्वारा हम अमूर्त और अदृश्य घटनाओं का अध्ययन कर सकते हैं। व्यक्ति की मानसिक स्थिति, विचारों, भावनाओं, धारणाओं, संवेगों, आदि का अध्ययन साक्षात्कार के द्वारा आसानी से किया जा सकता है। ये सभी अमूर्त तथ्य मानव व्यवहार को प्रभावित करते हैं, अतः इनका अध्ययन अनुसन्धान की दृष्टि से आवश्यक है।

(v) **पारस्परिक प्रेरणा** (Inter-stimulation)—साक्षात्कार में कम से कम दो व्यक्ति (साक्षात्कारकर्ता तथा सूचनादाता) आमने-सामने होते हैं, अतः वे परस्पर एक-दूसरे को प्रेरित,

1 "Interviewing has become of greater importance in contemporary research because of the reassessment of the qualitative interview."
—Goode and Hatt, *op. cit.*, p. 185.

प्रोत्साहित एवं प्रभावित करते हैं। इस मित्रतापूर्ण वातावरण में दोनों एक-दूसरे से घनिष्ठत एवं मित्रता स्थापित कर लेते हैं। इसके परिणामस्वरूप सूचनादाता गोपनीय एवं महत्वपूर तथ्यों को प्रकट कर देता है।

(vi) **सूचनाओं का सत्यापन** (Verification of informations)—साक्षात्कार मे सूचनादाता द्वारा दी गई सूचनाओं की विश्वसनीयता एवं सत्यता साक्षात्कार के दौरान ही ज्ञात की जा सकती है। साक्षात्कार के दौरान खोजपूर्ण प्रश्न एवं प्रतिप्रश्नों के द्वारा सूचनाओं की सत्यता ज्ञात की जा सकती है। अपनी उपस्थिति के कारण साक्षात्कारकर्ता सन्देहास्पद और अस्पष्ट बातो को भी सूचनादाता के समक्ष स्पष्ट कर देता है।

(vii) **घटनाओं का अवलोकन** (Observation of Events)—साक्षात्कार के दौरान साक्षात्कारकर्ता को घटनाओं के बारे मे न केवल प्रश्न पूछने की सुविधा होती है वरन् वह कई घटनाओं का अपनी आंखों से अवलोकन भी कर सकता है, तथा इस आधार पर संग्रहीत सामग्री की सत्यता को भी ज्ञात कर सकता है।

(viii) **विविध सूचनाओं की प्राप्ति** (Securing various informations)—साक्षात्कार के द्वारा विभिन्न प्रकार के सूचनादाताओं से कई प्रकार की सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं। विभिन्न वर्ग, जाति, धर्म, व्यवसाय, आय, आयु, लिंग तथा सामाजिक एवं शैक्षणिक स्तर के लोगों का साक्षात्कार लेकर अनुसन्धान से सम्बन्धित सूचनाओं का संकलन किया जा सकता है।

(ix) **लचीली विधि** (Flexible Method)—साक्षात्कार विधि विषयवस्तु एवं संचालन दोनों ही दृष्टियों से एक लचीली विधि है जिसका प्रयोग विभिन्न प्रकार के तथ्यों का संकलन करने के लिए किया जाता है।

साक्षात्कार विधि के दोष (सीमाएं)
(DEMERITS OR LIMITATIONS OF INTERVIEW METHOD)

साक्षात्कार विधि के
प्रयोग हम सभी प्रकार के
साक्षात्कार के सफल संचालन की अपेक्षा नहीं की जा सकती। **श्रीमती यंग** ने लिखा है, "साक्षात्कारकर्ता समझदार होने पर भी दोषपूर्ण अन्तर्दृष्टि, दोषपूर्ण स्मृति, सूक्ष्म दृष्टि की कमी तथा स्पष्ट अभिव्यक्ति की अयोग्यता से ग्रसित हो सकते है।"[1] **हाइमन** ने भी लिखा है, "साक्षात्कारकर्ता प्रायः अपने सूचनादाताओ के पास एक निश्चित प्रकार की आशा लेकर जाते है कि वे किस रूप में विशेष प्रश्नों का उत्तर देंगे। कभी-कभी तो साक्षात्कार के दौरान ही शीघ्रतापूर्वक अथवा अपूर्ण उत्तरों के आधार पर ही यह आशा कर लेते है।"[2] इन कथनों से साक्षात्कार की कुछ सीमाएं प्रकट होती है। **हम यहां साक्षात्कार के प्रमुख दोषों अथवा सीमाओं का उल्लेख करेंगे :**

(1) **दोषपूर्ण स्मरणशक्ति** (Faulty Memory)—साक्षात्कार में सूचनाओं को साक्षात्कार के दौरान नही लिखा जाता, अतः साक्षात्कारकर्ता की स्मरण-शक्ति पर भरोसा करना पड़ता है। प्रत्येक साक्षात्कारकर्ता से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह सभी बातों को याद रख पायेगा, अतः कुछ तथ्यों के भूल जाने या गलत नोट कर लिये जाने की सम्भावना रहती

1 P. V. Young, *op. cit.* p 208.
2 H. Hyman, quoted by P. V Young, *Ibid.*, p. 208.

है। सूचनादाता से भी यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि उसे भूतकाल की सभी घटनाओं का सारा वृत्तान्त याद रहे। ऐसी स्थिति में संकलित तथ्य अपूर्ण एवं दोषयुक्त होते है।

(2) **अभिनति की सम्भावना** (Possibility of Bias)—साक्षात्कार में व्यक्तिगत पक्षपात आने की सम्भावना रहती है, क्योंकि सूचनादाता और साक्षात्कारकर्ता के विचारों, मूल्यों और संस्कृति में भिन्नता होने पर एक ही घटना, प्रश्न और शब्दों का वे भिन्न-भिन्न अर्थ लगाते है। सूचनादाता तो अपने विचार प्रकट करते समय अपने व्यक्तिगत भावों एवं पक्षपात को जोड़ता ही है, स्वयं साक्षात्कारकर्ता भी उन्हें ग्रहण करने में पक्षपात से बच नहीं सकता। इसीलिए संकलित सामग्री की विश्वसनीयता संदिग्ध बनी रहती है।

(3) **हीनता की भावना** (Inferiority Complex)—साक्षात्कार के लिए साक्षात्कारकर्ता को सूचनादाता के कई चक्कर लगाने पड़ते हैं, उसकी चापलूसी तक करनी पड़ती है। साक्षात्कार हेतु उसे अनेक प्रकार के लोगों के पास जाना पड़ता है जो उसके साथ अच्छा और बुरा सभी तरह का व्यवहार करते हैं, फलस्वरूप उसमें हीनता की भावना पनप जाती है, उसके आत्म-सम्मान को ठेस लगती है। अतः कई बार वह महत्वपूर्ण सूचनाओं का संकलन विवशतावश नही कर पाता।

(4) **साक्षात्कारदाता पर निर्भरता** (Dependence on Interviewee)—साक्षात्कार में सूचना का संकलन पूर्णतः साक्षात्कारदाता पर निर्भर करता है। कई बार वह अपनी इस स्थिति का दुरुपयोग भी करता है और साक्षात्कारकर्ता को अपने घर के कई चक्कर लगाने तक को मजबूर कर देता है। वह बहाने बनाकर उसे टालने का प्रयास भी करता है। इस प्रकार यह विधि पूर्णतः साक्षात्कारदाता की दया पर निर्भर है।

(5) **अशुद्ध रिपोर्ट** (Inaccurate Report)—साक्षात्कारकर्ता द्वारा लिखित प्रतिवेदन में उसके व्यक्तिगत पक्षपात, विचारों एवं भावनाओं का समावेश होने के कारण रिपोर्ट में अशुद्धता आने की सम्भावना रहती है जो वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से ठीक नहीं है।

(6) **कुशल साक्षात्कारकर्ता की समस्या** (Problem of expert Interviewer)—साक्षात्कार की सफलता साक्षात्कारकर्ता की योग्यता, कुशलता, प्रशिक्षण, बुद्धि, वाक्पटुता एवं बौद्धिक ईमानदारी पर निर्भर है। सभी साक्षात्कारकर्ताओं से इन गुणों की अपेक्षा नहीं की जा सकती। ऐसी स्थिति में या तो वे साक्षात्कार का संचालन सफलतापूर्वक नहीं कर पाते या उनके द्वारा संकलित तथ्य अप्रामाणिक एवं अविश्वसनीय होते हैं।

(7) **खर्चीली प्रणाली** (Costly Method)—साक्षात्कार समय एवं कार्यकर्ताओं की दृष्टि से एक खर्चीली प्रणाली है। कई साक्षात्कारदाताओं से सम्पर्क करने के लिए कई बार चक्कर लगाने पड़ते हैं जिसमें अधिक समय चाहिए तथा कार्यकर्ता भी अधिक चाहिए। कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण, वेतन एवं यात्रा व्यय, आदि के लिए धन भी अधिक चाहिए। इस प्रकार यह विधि एक महँगी विधि है।

(8) **पृष्ठभूमि की भिन्नता** (Different Background)—साक्षात्कारकर्ता एवं साक्षात्कारदाता की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में भिन्नता होती है। उनके सामाजिक पर्यावरण, मूल्यों, आदर्शों, भाषा, आदि मे पर्याप्त अन्तर पाये जाते हैं जो कि उनके बीच एक दीवार बन जाते हैं। अतः वे साक्षात्कार में कठिनाई अनुभव करते हैं तथा शब्दों एवं घटनाओं का भिन्न-भिन्न अर्थ लगाते हैं जिसका अध्ययन के उद्देश्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

(9) **अविश्वसनीय एवं अप्रामाणिक सूचनाएं** (Unreliable and Invalid Informations)—साक्षात्कार द्वारा प्राप्त सूचनाओं मे विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता का अभाव पाया जाता है। ऐसी कोई विधि नहीं है जो साक्षात्कार में आने वाले पक्षपात एवं कृत्रिमता को रोक सके। अत: साक्षात्कारकर्ता एवं सूचनादाता दोनों के पक्षपात के प्रवेश की पूरी सम्भावना रहती है।

(10) **झूठी प्रतिष्ठा का भाव** (Notion of false Prestige)—साक्षात्कारदाता कई बार अपनी झूठी प्रतिष्ठा को बनाए रखने के लिए सही सूचनाएं नहीं देता है। उदाहरण के लिए, कोई भी राजनेता जातिवाद, बाल-विवाह, शराबवृत्ति, आदि के पक्ष में अपनी राय नहीं देना चाहेगा। क्योंकि उसे इस बात का डर रहता है कि ऐसा करना समाज में प्रचलित मूल्यो एवं विश्वासो के विपरीत होगा तथा लोग उसकी आलोचना कर सकते हैं तथा उसकी नागरिक छवि बिगड़ सकती है।

(11) **अपूर्ण सूचनाएं** (Incomplete Informations)—कई बार सूचनादाता कुछ सूचनाओं को महत्वहीन समझकर छोड़ देता है अथवा उसे घटना के बारे में अपर्याप्त जानकारी हो सकती है या वह अपने विचारों को बताने में असमर्थ हो सकता है। ऐसी स्थिति में साक्षात्कार द्वारा संकलित सूचनाएं अधिक उपयोगी नहीं हो पातीं।

(12) **प्रशिक्षण का अभाव** (Lack of Training)—साक्षात्कार के लिए ऐसे कुशल एवं प्रशिक्षित साक्षात्कारकर्ताओं की आवश्यकता होती है जिन्हें मनोविज्ञान एवं मानव-व्यवहार

त

त

नहीं की जा सकतीं।

(13) कई बार सूचनादाता अनावश्यक रूप से विषय से परे जाकर बोलता रहता है जिसे मजबूरन सुनना पड़ता है जिसमें समय की बर्बादी होती है।

(14) सूचनादाताओ की मानसिक स्थिति में भी असमानता एवं अस्थिरता पायी जाती है। कई प्रश्नों एवं विषयों को उन्हें समझाना एक कठिन कार्य है। भूतकालीन कुछ घटनाएं ऐसी हो सकती हैं जिनकी याद दिलाने पर वे क्रोधित एवं उत्तेजित हो सकते है।

प्रश्न

1. साक्षात्कार को परिभाषित कीजिए और तथ्य संकलन मे इसके महत्व को समझाइए। **(अजमेर, 1999)**
2. साक्षात्कार को परिभाषित कीजिए। साक्षात्कार प्रक्रिया के चरणो को समझाइए। **(अजमेर, 2000)**
3. क्षेत्र-कार्य में साक्षात्कार का महत्व बताइए। साक्षात्कार के प्रमुख प्रकारो की विवेचना कीजिए।
4. साक्षात्कार को परिभाषित कीजिए तथा इसके प्रकार बताइए। **(अजमेर, 1998)**
5. एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में साक्षात्कार विधि को समझाइए। **(राजस्थान, 1999)**
6. साक्षात्कार प्रक्रिया तथा पद्धति का वर्णन कीजिए।
7. साक्षात्कार को परिभाषित कीजिए तथा इसके प्रकार बताइए। **(अजमेर, 1996; राजस्थान, 1996)**
8. साक्षात्कार का महत्व समझाइए। साक्षात्कार के प्रमुख प्रकारो की विवेचना कीजिए।
9. साक्षात्कार के प्रकारो का उल्लेख कीजिए। इसके गुण और दोष बताइए।
10. साक्षात्कार को परिभाषित कीजिए तथा इसकी विभिन्न विधिया बताइए। **(अजमेर, 1993)**

लघु उत्तरीय प्रश्न

निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(1) साक्षात्कार विधि।
(2) साक्षात्कार के उद्देश्य बताइए।
(3) साक्षात्कार के कोई चार गुण बताइए।
(4) साक्षात्कार विधि के कोई चार दोष बताइए।
(5) केन्द्रित साक्षात्कार से आप क्या समझते हैं? (अजमेर, 2000)
(6) निदानात्मक साक्षात्कार।
(7) पुनरावृत्ति साक्षात्कार।
(8) साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका।
(9) एक अच्छे साक्षात्कार कर्ता के गुण बताइए। (अजमेर, 1999)
(10) सामूहिक साक्षात्कार।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

निम्नांकित कथनों का उत्तर हां अथवा नहीं में दीजिए :

(i) साक्षात्कार सामाजिक अन्तःक्रिया की एक प्रक्रिया है।
(ii) साक्षात्कार में अप्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा भी तथ्यों का संकलन किया जा सकता है।
(iii) बाल-अपराध की समस्या के समाधान हेतु किया गया साक्षात्कार निदानात्मक साक्षात्कार है।
(iv) बेकारी के कारणों को जानने के लिए किया गया साक्षात्कार उपचारात्मक साक्षात्कार है।
(v) 'साक्षात्कार अनुसूची' के द्वारा लिया जाने वाला साक्षात्कार संरचित साक्षात्कार कहलाता है।
(vi) किसी फिल्म को देखने के बाद उसके दर्शकों से उस फिल्म के बारे में लिया जाने वाला साक्षात्कार केन्द्रित साक्षात्कार है।
(vii) सफल साक्षात्कारकर्ता बनने के लिए उत्तरदाताओं को बांटने के लिए उसके पास धन होना आवश्यक है।
(viii) साक्षात्कार विधि प्रश्नावली विधि से कम खर्चीली है।

2. नीचे कुछ रिक्त वाक्य एवं कोष्ठक में उनके सम्भावित उत्तर दिए गए हैं। सही उत्तर का चयन कीजिए :

(i) साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता एव साक्षात्कारदाता में.....सम्बन्ध होते हैं। (प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष)
(ii) साक्षात्कार सूचना संकलन की एक.....विधि है। (लिखित/मौखिक)
(iii) साक्षात्कार एक.....वार्तालाप है। (उद्देश्यपूर्ण/सहज)
(iv) साक्षात्कार एक मनोवैज्ञानिक.....है। (घटना/प्रक्रिया)

3. निम्नांकित में से सही कथनों का चयन कीजिए :

(i) साक्षात्कार एक सामाजिक प्रक्रिया है।
(ii) साक्षात्कार का कार्य केवल धनाढ्य व्यक्ति ही कर सकते हैं।
(iii) साक्षात्कार विधि सूचना संकलन की प्राथमिक विधि है।
(iv) साक्षात्कार विधि का प्रयोग केवल शिक्षित लोगों में ही किया जा सकता है।
(v) साक्षात्कार ही एक ऐसी विधि है जिसमें सूचना सकलन करने वाले को किसी प्रकार का प्रशिक्षण देने की आवश्यकता कभी नहीं होती है।

4. निम्नांकित मे से साक्षात्कार विधि के गुण छांटिए :
   (i) अमूर्त घटनाओं का अध्ययन
   (ii) सूचनाओं का सत्यापन
   (iii) साक्षात्कारदाता पर निर्भरता
   (iv) स्मरणशक्ति पर भरोसा
   (v) लचीली विधि
   (vi) पारस्परिक प्रेरणा
5. निम्नांकित पुस्तकों के लेखकों के नाम बताइए :
   (i) सर्वे मेथड्स इन सोशियल इन्वेस्टीगेशन
   (ii) फेक्ट फाइण्डिंग विथ द रूरल पीपुल
   (iii) मेथड्स इन सोशियल रिसर्च

[उत्तर—1 हां—i, ii, v, vi शेष सभी का उत्तर नही होगा।
2 (i) प्रत्यक्ष, (ii) मौखिक, (iii) उद्देश्यपूर्ण, (iv) प्रक्रिया।
3 सही कथन—(i), (ii)।
4 गुण—(i), (ii), (v), (vi)।
5 (i) मोजर एवं कॉल्टन, (ii) सिन पाओ यंग, (iii) गुडे एव हाट।]

11

अनुसूची

[SCHEDULE]

सामाजिक अनुसन्धान तथा सर्वेक्षण में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात विषय से सम्बन्धित वैध एवं विश्वसनीय तथ्यों का संकलन है। तथ्यों के संकलन की एक प्रमुख विधि अनुसूची है। यद्यपि प्रश्नावली और अनुसूची में पर्याप्त समानता है, फिर भी अनुसूची की अपनी निजी विशेषताएं हैं। इसके द्वारा साक्षात्कार एवं अवलोकन पर नियन्त्रण रखा जाता है। अनुसूची वास्तव में प्रश्नों की एक लिखित सूची होती है, जिसे अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता से पूछता जाता और भरता जाता है। अनुसूची को उत्तरदाता के पास डाक द्वारा नहीं भेजा जाता है। प्रश्नावली में आने वाले दोषों को दूर करने के लिए भी अनुसूची विधि का प्रयोग किया जाता है। अनुसूची प्राथमिक तथ्यों का संकलन करने की एक ऐसी विधि है, जिसमें अवलोकन, साक्षात्कार तथा प्रश्नावली तीनों की ही विशेषताओं एवं गुणों का समन्वय पाया जाता है। अनुसूची के माध्यम से वैयक्तिक मान्यताओं, सामाजिक अभिवृत्तियों, विश्वासों, विचारों, व्यवहार प्रतिमानों, समूह व्यवहारों, आदतों तथा जनगणना, आदि से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन किया जाता है। इसके द्वारा संग्रहित तथ्यों में एकरूपता लाकर उनका गुणात्मक एवं संख्यात्मक मापन सरलता से किया जा सकता है। यही कारण है कि वर्तमान में सामाजिक सर्वेक्षणों एवं अनुसन्धानों में अनुसूची का प्रयोग दिनों-दिन बढ़ता ही जा रहा है। सूचना की सजातीयता के लिए आवश्यक है कि सभी क्षेत्रीय कार्यकर्ता समान प्रश्न पूछें एवं एक ही प्रकार की सूचनाएं एकत्रित करें, जिसके लिए अनुसूची एक प्रमुख उपकरण है।

अनुसूची का अर्थ एवं परिभाषा

अनुसूची एक फार्म के रूप में है जिसमें अध्ययन विषय से सम्बन्धित प्रश्न एवं सारणियां होती हैं, जिसे क्षेत्रीय कार्यकर्ता सूचनादाता से पूछकर या व्यक्तिगत रूप से अवलोकन करके भरता है। विभिन्न विद्वानों ने इसको निम्नांकित प्रकार से परिभाषित किया है :

बोगार्डस (Bogardus) के अनुसार, "अनुसूची उन तथ्यों को प्राप्त करने की एक औपचारिक विधि है जो स्थूल रूप में होते हैं तथा जिन्हें सरलता से देखा जा सकता है.....इस प्रकार अनुसूची अध्ययनकर्ता द्वारा स्वयं ही भरी जाती है।"[1]

1 "The Schedule represents a formal method of securing facts that are in objective form and easily descernible....the schedule is filled out by the investigator himself." —E. S. Bogardus, *Introduction to Social Research*, p. 45.

गुडे एवं हाट (Goode and Hatt) के अनुसार, "अनुसूची उन प्रश्नों के एक समूह का नाम है जो साक्षात्कारकर्ता द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति से आमने-सामने की स्थिति में पूछे और भरे जाते है।"[1]

डॉ. एम. एच. गोपाल के अनुसार, "अनुसूची उन विभिन्न मदों की एक विस्तृत, वर्गीकृत, नियोजित तथा क्रमबद्ध सूची होती है जिसके विषय में सूचनाएं एकत्रित करने की आवश्यकता पड़ती है।"[2]

मैककोर्मिक (McCormic) के अनुसार, "अनुसूची उन प्रश्नों की एक सूची से अधिक कुछ नही है, जिनका उत्तर देना उपकल्पना या उपकल्पनाओं की जांच के लिए आवश्यक प्रतीत होता है।"[3]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि अनुसूची अध्ययन विषय से सम्बन्धित प्रश्नों की एक व्यवस्थित एवं वर्गीकृत सूची होती है जिन्हें अध्ययनकर्ता साक्षात्कार द्वारा सूचनादाता को पूछता और भरता जाता है।

अनुसूची की विशेषताएं (Characteristics of Schedule)

अनुसूची की विशेषताओं के आधार पर हम इसे और भी अच्छी तरह से समझ सकते हैं :

(1) अनुसूची अध्ययन-समस्या से सम्बन्धित शीर्षक, उप-शीर्षक एवं प्रश्नों से सम्बन्धित एक व्यवस्थित तथा वर्गीकृत सूची होती है।
(2) इसे एक प्रपत्र अथवा फार्म के रूप मे छपवाया जाता है जिसमें क्रमबद्ध रूप से प्रश्न रखे जाते हैं।
(3) इसे भरने के लिए अध्ययनकर्ता उत्तरदाता से प्रत्यक्ष व्यक्तिगत एवं आमने-सामने का सम्पर्क करता है।
(4) इसे अध्ययनकर्ता स्वयं भरता है न कि उत्तरदाता।
(5) इसमें साक्षात्कार, अवलोकन एवं प्रश्नावली तीनों विधियों की विशेषताओं का समन्वय पाया जाता है।
(6) अनुसूची का प्रयोग शिक्षित एवं अशिक्षित दोनों ही प्रकार के उत्तरदाताओं के लिए किया जाता है।
(7) अनुसूची में प्रश्नों को एक निश्चित क्रम में रखा जाता है और उसी क्रम में पूछा जाता है उनमें क्रम परिवर्तन की छूट नहीं होती है।
(8) इसमें घटनाओं का अवलोकन भी होता है।
(9) अनुसूची अध्ययनकर्ता पर नियन्त्रण भी रखती है जिससे कि वह अध्ययन विषय से परे न हटे।

---

[1] "Schedule is the name usually applied to a set of questions which are asked and filled in by an interviewer in a face-to face situation with another person."
—Goode and Hatt, *op. cit.*, p. 133.

[2] "The schedule, in a sense, is a detailed, classified, planned and serialed list of items on which information is required."
—M. H. Gopal, *An Introduction to Research in Social Science*, p. 142.

[3] "The schedule is nothing more than a list of the questions which it seems necessary to answer in order to test the hypothesis or hypotheses."
—T. C. McCormic, *Elementary Social Statistics*, p. 37.

(10) इसका प्रयोग छोटे क्षेत्र के अध्ययन के लिए ही विशेष रूप से किया जाता है, किन्तु अपवाद रूप मे बड़े क्षेत्रों में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

अनुसूची के उद्देश्य (Objectives of a Schedule)

एम. एच. गोपाल ने अनुसूची के उद्देश्यों को बताते हुए लिखा है, "इसका प्रयोग सूचना-स्रोतों से प्रत्यक्ष रूप में निश्चित परिमाणात्मक तथा वैषयिक सूचना प्राप्त करने में होता है। कभी-कभी उदाहरणार्थ, एक पूर्वगामी सर्वेक्षण में इसे अनुसन्धान के प्रोत्साहन हेतु प्रयोग किया जा सकता है। यह प्रामाणिक तथा माप योग्य सूचनाएं प्रदान करती है।"[1] इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नांकित है :

(1) अनुसूची का प्रमुख उद्देश्य प्रामाणिक, विश्वसनीय एवं यथार्थ सूचनाएं संकलित करना है।

(2) इसका उद्देश्य गुणात्मक तथ्यों को संख्यात्मक तथ्यों में प्रकट कर उन्हें अनुमापन योग्य बनाना है।

(3) अध्ययन-समस्या के बारे में वैषयिक सूचना संकलित करना।

(4) तथ्यों का एक व्यवस्थित क्रम में संकलन करना।

(5) स्थानीय एवं क्षेत्रीय अध्ययन करना।

(6) अनुसूची में अध्ययनकर्ता की स्मरण शक्ति पर भरोसा नहीं किया जाता, क्योंकि उसकी भी एक सीमा होती है। वह कुछ तथ्य भूल सकता है। इसलिए इसमें प्रश्न लिखित में होते हैं जिन्हें हाथों-हाथ सूचनादाता से पूछकर भरना होता है।

(7) इसमें अनावश्यक तथ्यों के संकलन से बचा जाता है।

अनुसूची के प्रकार (Types of Schedule)

लुण्डबर्ग ने तीन प्रकार की अनुसूचियों का उल्लेख किया है—(1) वस्तुनिष्ठ तथ्यों को एकत्रित करने वाली अनुसूचियां। इनके भी तीन प्रकार हैं : (अ) अध्ययनकर्ता के प्रत्यक्ष अवलोकन पर आधारित, (ब) जिन व्यक्तियों के पास वांछित तथ्य उपलब्ध हैं, उनके साक्षात्कार पर आधारित, (स) बिना साक्षात्कार के प्रश्नावलियों पर आधारित। (2) अभिवृत्तियों तथा विचारों का निर्धारण एवं मापन करने वाली अनुसूचियां, तथा (3) सामाजिक संस्थाओं एवं संगठनों की स्थिति तथा कार्यों को जानने से सम्बन्धित अनुसूचियां। **श्रीमती पी. वी. यंग** ने चार प्रकार की अनुसूचियों का उल्लेख किया है : (1) अवलोकन अनुसूची, (2) मूल्यांकन अनुसूची, (3) प्रलेख अनुसूची, (4) संस्था सर्वेक्षण अनुसूचियां, तथा (5) साक्षात्कार अनुसूची। हम यहां अनुसूची के प्रमुख प्रकारों का उल्लेख करेंगे।

(1) **अवलोकन अनुसूची** (Observation Schedule)—इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग अध्ययनकर्ता अपने अवलोकन को लिखने के लिए करता है। इसमें वह सूचनादाता से प्रश्न नहीं पूछता है, वरन् घटनाओं का अवलोकन कर स्वयं ही प्रश्नों के उत्तर दे देता है। एक प्रकार से यह अवलोकन पथ-प्रदर्शिका (Observation guide) होती है। यह अनुसन्धानकर्ता पर नियन्त्रण रखती है और उसे किस प्रकार की सूचनाएं संकलित करनी हैं, इसका मार्ग-दर्शन भी करती है। इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग लिण्डे स्मिथ एवं शार्लेट बुहलर द्वारा अपने अध्ययन में किया गया। इसके गुण निम्नलिखित हैं :

(i) यह अनुसन्धानकर्ता को पुनःस्मरण की शक्ति प्रदान करती है।

1 M. H. Gopal, *op. cit.*, p. 142.

(ii) यह विषयात्मक अभिलेख को सम्भव बनाती है।

(iii) यह प्रमापीकरण को सम्भव बनाती है।

(iv) यह विषय क्षेत्र को सीमित करने एवं आवश्यक तथ्यों पर ध्यान देने में सहायक होती है।

(2) **मूल्यांकन अनुसूची** (Rating Schedule)—इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग किसी विषय के बारे में लोगों की अभिवृत्ति, रुचि, राय, विश्वास तथा [illegible] के सांख्यिकीय मापन हेतु किया जाता है।

[illegible] (Sociometric Studies), समाजशास्त्र एवं [illegible] में भी इनका काफी प्रयोग हुआ है। इसमें सूचनादाता की पसंद-नापसंद तथा पक्ष-विपक्ष के विचारों को जाना जाता है।

(3) **प्रलेख अनुसूची** (Document Schedule)—श्रीमती यंग के अनुसार, "इन अनुसूचियों का उपयोग ऐसी सामग्री का आलेखन करने के लिए किया जाता है, जिन्हें विभिन्न प्रकार के प्रलेखों, व्यक्तिगत जीवन इतिहासों तथा अन्य सामग्री से प्राप्त किया जाता है।"[1] इस प्रकार की अनुसूचियों का उपयोग लिखित प्रलेखों जैसे आत्मकथा, डायरियों, सरकारी तथा गैर-सरकारी दस्तावेजों, आदि से प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इस प्रकार की अनुसूचियों का प्रयोग किसी विषय की प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है जिनके बारे में लिखित प्रलेखों से सूचनाएं मिलने की सम्भावनाएं हों।

(4) **संस्था सर्वेक्षण अनुसूची** (Institution Survey Schedule)—श्रीमती पी.वी. यंग के अनुसार, "किसी संस्था के समक्ष उत्पन्न होने वाली अथवा उसमें विद्यमान समस्याओं का निरीक्षण करने के लिए इस प्रकार की अनुसूचियों का प्रयोग किया जाता है।"[2] किसी संस्था के किसी विशेष [illegible] जाँच की कार्यप्रणाली का अध्ययन सरलता से किया जा सकता है।

(5) **साक्षात्कार अनुसूची** (Interview Schedule)—इस प्रकार की अनुसूचियों में सूचनाएं प्रत्यक्ष साक्षात्कार के द्वारा एकत्रित की जाती हैं। इसमें निश्चित प्रश्न अथवा खाली सारणी दी हुई होती है, जिन्हें साक्षात्कारकर्ता सूचनादाता से पूछकर भरता है। इसके द्वारा साक्षात्कार को व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध किया जाता है। इनसे प्राप्त सूचनाओं का वर्गीकरण एवं सारणीयन बहुत आसान होता है। सहायक सूचनाओं की प्राप्ति, संग्रहित सामग्री की जांच अथवा अध्ययन को प्रारम्भ करने के लिए इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार की अनुसूची के प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं—(i) इसके द्वारा विश्वसनीय एवं प्रामाणिक सूचनाएं प्राप्त होती हैं (ii) व्यक्तिगत सम्पर्क के कारण इसमें अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता को सूचना देने के लिए प्रेरित कर सकता है, (iii) इसमें प्राप्त सूचनाओं का

1 "These are used for recording the data obtained from documents, case histories and other materials."
—P. V. Young, *op. cit.*, p. 181.

2 "Schedules of this type are used to visualise the problems faced by or inherent in a given type of institution."
—P. V. Young, *op. cit.*, p. 182.

सत्यापन हो जाता है, (iv) कई घटनाओं का अवलोकन द्वारा भी सत्यापन हो जाता है, (v) इसके द्वारा अशिक्षित उत्तरदाताओं से भी सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं, (vi) इसके द्वारा अध्ययनकर्ता की स्मरण शक्ति पर आवश्यकता से अधिक भरोसा करने की जरूरत नहीं पड़ती।

साक्षात्कार अनुसूची की कुछ सीमाएं भी है जैसे, (i) इसमें उत्तरदाता से प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किये जाते हैं, अतः उसे विचार-विमर्श व सलाह मशविरा का समय नहीं मिलता। ऐसी स्थिति में कई बार सूचनाएं यथार्थ, विश्वसनीय एवं प्रामाणिक नही हो पाती। (ii) सूचनाओं को लिखने में अध्ययनकर्ता का पक्षपात आने की सम्भावना रहती है। (iii) अनुसन्धानकर्ता सूचनाओं को लिखने एवं प्रश्नों के उत्तरों के निशान लगाने में त्रुटि कर सकता है। (iv) इसके द्वारा सीमित क्षेत्र का ही अध्ययन हो सकता है। (v) समय, श्रम एवं धन की दृष्टि से यह एक खर्चीली विधि है। (vi) सभी सूचनादाताओ से सम्पर्क सम्भव नहीं हो पाता। (vii) सर्वगुण सम्पन्न अनुसूची का निर्माण असम्भव है।

अनुसूची निर्माण की प्रक्रिया

[PROCESS (PROCEDURE) OF PREPARING A SCHEDULE]

किसी भी अनुसूची के निर्माण अथवा रचना के लिए निम्नांकित प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है :

(1) अध्ययन विषय का निर्धारण करना तथा यह तय करना कि विषय के किन पक्षों से सम्बन्धित तथ्य संकलित किये जायेंगे।

(2) दूसरे चरण में यह तय किया जाता है कि समस्या के प्रत्येक पहलू से सम्बन्धित कौनसी सूचनाएं प्राप्त करनी हैं। प्रत्येक पहलू को भी कई उप-भागों में बांट दिया जाता है।

(3) तीसरे चरण में प्रश्नों की भाषा, वाक्यों की रचना, सारणी के खानों और उनकी भाषा तय की जाती है।

(4) चौथे चरण में बनाए गये प्रश्नों को एक व्यवस्थित क्रम में लगाया जाता है जिससे कि सिलसिलेवार सूचना प्राप्त की जा सके तथा उनसे प्राप्त सूचनाएं आसानी से सारणीबद्ध एवं वर्गीकृत की जा सकें।

(5) अन्तिम चरण में अनुसूची की वैधता की जांच की जाती है। एक छोटे से निदर्शन पर उसका प्रयोग किया जाता है जिससे मुख्य अनुसन्धान में आने वाली कठिनाइयों एवं अनुसूची की कमियों का पता लग जाता है, जिन्हें दूर करके ही उन्हें वास्तविक प्रयोग के लिए तैयार किया जाता है।

एक उत्तम अनुसूची की रचना करते समय ध्यान में रखने योग्य बातें (Essential Considerations while Framing a good Schedule)

अनुसूची के दो प्रमुख भाग होते है : (i) भौतिक पक्ष, (ii) आन्तरिक पक्ष। दोनों की रचना के समय किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए, इसी का यहां हम उल्लेख करेंगे।

I. अनुसूची का भौतिक या बाह्य पक्ष (Physical or External Part of Schedule)

अनुसूची निर्माण के भौतिक पक्षों या बाह्य पक्षों में भी उन्ही बातों का ध्यान रखना चाहिए जिनका उल्लेख प्रश्नावली के निर्माण के दौरान किया गया है। संक्षेप में इस सन्दर्भ में प्रमुख बातें इस प्रकार हैं :

(1) अनुसूची का आकार 8" × 11" से अधिक बड़ा न हो।

(2) अनुसूची हेतु प्रयुक्त कागज छकने वाला व खुरदरा न हो वरन् चिकना व साफ हो।

(3) रंगीन कागज का प्रयोग आकर्षक होता है।

(4) सूचनाएं लिखने के लिए पर्याप्त खाली स्थान छोड़ा जाय।

(5) हाँशिया छोड़ा जाय।

(6) अनुसूची में कागज के एक तरफ ही लिखना श्रेष्ठ होता है।

(7) कॉलम, शीर्षक तथा उप-शीर्षकों द्वारा मदों को व्यवस्थित कर दिया जाय।

(8) अनुसूची में पदों की संख्या अधिक नहीं हो।

II अनुसूची की अन्तर-वस्तु (Content of Schedule)

अनुसूची की अन्तर-वस्तु के अन्तर्गत दो प्रकार की बातें होती हैं : (i) **उत्तरदाता के बारे में प्रारम्भिक जानकारी**—इसमे उत्तरदाता का नाम, पता, आयु, लिंग, शिक्षा, जाति, धर्म, [illegible] लिए आवश्यक निर्देश भी होते हैं। इसी में अनुसन्धान विषय तथा अनुसन्धान करने वाले संस्थान या व्यक्ति का परिचय भी होता है।

III अनुसूची की शब्दावली एवं प्रश्न (Wordings and Questions of Schedule)

अनुसूची में भी प्रश्नो के द्वारा सूचनाओं का संकलन किया जाता है, अतः उसके निर्माण मे उचित शब्दो एवं प्रश्नों का चयन आवश्यक है जिनके अभाव में हम अपने उद्देश्य मे सफल नही हो पायेंगे। किसी भी प्रश्नावली या अनुसूची में विभिन्न प्रकार के जो प्रश्न पूछे जाते हैं, उन्हे निम्नांकित भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है :

(1) **अनिर्दिष्ट प्रश्न** (Open end Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर देने में सूचनादाता को स्वतन्त्रता होती है और वह अपनी राय जिस प्रकार चाहे, व्यक्त कर सकता है। इस प्रकार के प्रश्न प्रायः किसी समस्या पर जनमत जानने, उसके कारण एवं उसका समाधान ढूढने के लिए बनाए जाते हैं। इनके उत्तर विविधतापूर्ण, अनिश्चित एवं लम्बे होते हैं सूचनादाता की मनोवृत्तियों को जानने के लिए भी ऐसे प्रश्न पूछे जाते हैं। ऐसे प्रश्नों के उदाहरण हैं :

(i) अस्पृश्यता का अन्त करने के लिए आप क्या सुझाव देंगे?

(ii) आपकी राय में छात्र असन्तोष के क्या कारण हैं?

(2) **निर्दिष्ट प्रश्न** (Structured Questions)—इनमें प्रश्नों के सम्भावित उत्तर पहले से ही लिखे होते है और सूचनादाता को इन्हीं में से कोई उत्तर चुनना होता है। ऐसे प्रश्नो के उत्तर देना सरल होता है तथा उनका वर्गीकरण एवं सारणीयन भी सुविधानजनक होता है। ऐसे प्रश्नों के उत्तरों में सजातीयता भी अधिक होती है। निर्दिष्ट प्रश्नों के उदाहरण इस प्रकार हैं :

(i) आपकी वैवाहिक स्थिति क्या है?
विवाहित/अविवाहित/विधुर/विधवा/तलाकशुदा।

(ii) आप शिक्षित है अथवा अशिक्षित? शिक्षित/अशिक्षित।

(3) **दोहरे प्रश्न** (Dichotomous Questions)—जब किसी प्रश्न के दो ही सम्भावित उत्तर हो सकते हों तो ऐसे प्रश्नों को द्वन्द्वात्मक अथवा दोहरे उत्तरों वाले प्रश्न कहते हैं। इन प्रश्नों का एक उत्तर सकारात्मक एवं दूसरा नकारात्मक होता है। इस प्रकार के प्रश्नों का वर्गीकरण एवं सारणीयन सरल एवं सुविधाजनक होता है। ऐसे प्रश्नों के उदाहरण हैं :

(i) क्या आप अनुसूचित जाति के छात्र हैं? *हां/नहीं*

(ii) क्या आप शराब पीते है? *हां/नहीं*

(iii) क्या आप सह-शिक्षा के पक्ष में है? *हां/नहीं*

(4) **बहुवैकल्पिक प्रश्न** (Multuple Choice Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों में कई सम्भावित उत्तर दिये होते हैं और उत्तरदाता को उनमे से कोई एक उत्तर छांटना पड़ता है। ये निर्दिष्ट प्रश्नो से बहुत कुछ समानता रखते हैं। इसमें सभी सम्भावित उत्तर लिखने के बाद अन्त मे 'अन्य कोई' भी जोड़ दिया जाता है जिससे और भी कोई उत्तर होने पर उसके अन्तर्गत लिखा जा सकता है। इसका एक उदाहरण इस प्रकार है :

जीवन-साथी के चुनाव मे आप किसे प्राथमिकता देगे ?

- (अ) स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य, (ब) आयु, (स) पारिवारिक पृष्ठभूमि, (द) शिक्षा, (य) सम्पत्ति, (र) स्वभाव एवं गुण, (ल) अन्य कोई।

(5) **निर्देशक प्रश्न** (Leading Questions)—जब किसी प्रश्न के द्वारा उसके उत्तर की ओर सकेत किया जाता है तो उसे निर्देशक प्रश्न कहते है। ऐसे प्रश्न पक्षपात को प्रोत्साहन देते है, यद्यपि यह आवश्यक नही है कि उनका उत्तर सदैव 'हां' में ही दिया जाए। फिर भी ऐसे प्रश्न चूंकि संकेत एवं सुझाव देने वाले होते हैं अतः उनके सकारात्मक उत्तर की ज्यादा सम्भावना रहती है। ऐसे प्रश्नों के उदाहरण है :

(i) क्या आप इस मत से सहमत हैं कि शिक्षित स्त्रियां अपने सास-ससुर की सेवा नहीं करती हैं? *हां/नहीं*

(ii) क्या आप मानते है कि स्त्रियां प्रशासन के योग्य नही होती? *हां/नहीं*

(6) **बहुअर्थक (पेचीदा) प्रश्न** (Ambiguous Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों की भाषा ऐसी होती है कि उनके एक से अधिक अर्थ निकलते हैं। ऐसे प्रश्नों के सूचनादाता अपने-अपने अर्थ लगाते हैं। ऐसे प्रश्न अनुसूची एवं प्रश्नावली में सम्मिलित नहीं किये जाने चाहिए। इसका एक उदाहरण इस प्रकार है :

(i) आप कहां के निवासी हैं?

इस प्रश्न में यह स्पष्ट नही है कि घर, गांव, प्रान्त, देश, आदि में से क्या लिखना है।

(7) **श्रेणीबद्ध प्रश्न** (Ranking item Questions)—इस प्रकार के प्रश्नो में उत्तरदाता को कई उत्तरों में से एक नहीं वरन् सभी को चुनना तथा उन्हें अपनी पसंद के अनुसार एक क्रम में लिखना होता है। इस प्रकार के प्रश्नो में अनुसूची मे छपा हुआ क्रम उत्तरों को बहुत प्रभावित करता है। इसका उदाहरण है :

आप कौनसा व्यवसाय पसन्द करते हैं?

- (क) भारतीय प्रशासनिक सेवा, (ख) पुलिस सेवा, (ग) व्यापार, (घ) वकालत, (ङ) डॉक्टर, (च) इन्जीनियर, (छ) प्रोफेसर।

(8) **अस्पष्ट प्रश्न** (Vague Questions)—ऐसे प्रश्नों से उत्तरदाता यह नहीं जान पाता है कि प्रश्न क्या पूछा गया है और उसका उत्तर क्या होगा।

उदाहरणार्थ—क्या आप सुशिक्षित है?

इस प्रश्न में सुशिक्षित का अर्थ स्पष्ट नहीं है। इसके स्थान पर यह पूछा जाना चाहिए कि, "आपने कहां तक शिक्षा ग्रहण की है?"

किस प्रकार के प्रश्न सम्मिलित किये जाने चाहिए (What type of questions are to be Includcd ?)

अनुसूची मे सम्मिलित किए जाने वाले प्रश्नों का चुनाव करते समय निम्नांकित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए :

(1) प्रश्नो का आकार छोटा हो, प्रश्न थोड़े, सूक्ष्म, स्पष्ट शब्दों में वर्णित तथा उत्तर देने मे सहज व सरल होने चाहिए।

(2) प्रश्न ऐसे होने चाहिए जिनका उत्तरदाता को ज्ञान हो।

(3) प्रश्न सारणीयन के योग्य हों।

(4) प्रश्न अनुसन्धान विषय से सम्बन्धित होने चाहिए, अनावश्यक नहीं।

(5) यदि प्रत्यक्ष प्रश्नों से सही उत्तर की आशा न हो तो अप्रत्यक्ष रूप से पूछा जाना चाहिए।

(6) प्रश्न एक-दूसरे से सम्बन्धित हों और सम्पूर्ण क्रम में हों। एक विषय से सम्बन्धित सभी प्रश्न एक ही साथ होने चाहिए न कि बिखरे हुए।

(7) पूरक प्रश्न भी दिये जाने चाहिए जिससे कि दोहरी जांच हो सके।

(8) यदि उसी विषय पर पहले कोई अनुसन्धान हो चुका हो तो उसमें प्रयुक्त विशिष्ट शब्दों अथवा इकाइयों का भी अर्थ वही रखना चाहिए जो पहले अनुसन्धान में था इससे तुलनात्मक अध्ययन में सुविधा रहती है।

(9) जो प्रश्न व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित नहीं हैं तथा पक्षपात रहित हैं, उन्हें सम्मिलित किया जाना चाहिए।

(10) प्रश्न ऐसे होने चाहिए जिनका उत्तर देने में कम से कम लिखना पड़े। इसलिए प्रश्न, उत्तर के साथ में सही का निशान (√), क्रॉस मार्क (×), संख्या में, अथवा 'हां' या 'नहीं' में लिखने योग्य होने चाहिए।

(11) प्रश्नों में सन्देह की गुंजाइश नहीं होनी चाहिए तथा इस प्रकार के शब्द जैसे अगले साल, पिछले साल, आदि का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(12) जब विचारो तथा भावनाओं से सम्बन्धित प्रश्न करने हों तो क्यों, कब, क्या, कैसे, कहा वाले प्रश्न अवश्य किए जाने चाहिए ताकि उन विचारों अथवा भावनाओं की पृष्ठभूमि का पता लग जाए।

बहिष्कार के योग्य प्रश्न (Questions to be rejected)—निम्नांकित प्रकार के प्रश्नों को प्रश्नावली अथवा अनुसूची में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए :

(1) प्रश्न इतने लम्बे न हों कि उत्तरदाता को समझने में कठिनाई हो।

(2) प्रश्न इतने जटिल न हों कि सूचनादाता को समझने में कठिनाई हो।

(3) जब तक अनुसन्धान विषय से उनका सीधा सम्बन्ध न हो व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित प्रश्न नहीं पूछने चाहिए। इसका कारण यह है कि प्रायः लोग अपने पारिवारिक एवं वैवाहिक जीवन, बीमारी तथा चरित्र, आदि से सम्बन्धित प्रश्नो का उत्तर देना नहीं चाहते।

(4) सन्देहजनक प्रश्न को भी सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए।

(5) उत्तरदाता को असमंजस में डाल देने वाले प्रश्न भी नहीं पूछने चाहिए।
(6) प्रेरक तथा निर्देशित प्रश्नों से बचना चाहिए।
(7) ऐसे प्रश्न भी नहीं पूछे जाने चाहिए जिनका उत्तर अन्य साधनों द्वारा प्राप्त किया जा सके।
(8) ऐसे प्रश्न जिनका सम्बन्ध अनुसन्धान विषय से नहीं है, नहीं किये जाने चाहिए।
(9) वे प्रश्न भी सम्मिलित नहीं किए जाने चाहिए जिनके सही उत्तर मिलने की सम्भावना नहीं रहती।
(10) समाज में स्वीकृत आदर्शों के विपरीत प्रश्न भी नहीं किए जाने चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि कोई बहुपतित्व से सम्बन्धित प्रश्न किया जाता है तो शायद ही कोई उससे सहमति व्यक्त करेगा।

अनुसूची द्वारा सूचना-प्राप्ति (Collecting Information through Schedule)

केवल मात्र अनुसूची का निर्माण करने से ही सूचनाओं का संकलन नहीं हो जाता वरन् इसके लिए विभिन्न स्तरों से गुजरना पड़ता है जो निम्नांकित हैं :

(1) **उत्तरदाताओं का चुनाव** (Selection of Respondents)—अनुसूची का निर्माण करने के बाद सर्वप्रथम उन लोगों का चुनाव करना होता है जिनसे साक्षात्कार के द्वारा अनुसूची को भरा जाना है। उत्तरदाताओं का चुनाव जनगणना पद्धति अथवा निदर्शन पद्धति में से किसी के भी आधार पर किया जा सकता है।

(2) **अनुसूची का पूर्व परीक्षण** (Pretesting of Schedule)—जिस प्रकार से प्रश्नावली द्वारा सूचना संकलित करने से पूर्व उसका परीक्षण किया जाता है, उसी तरह से अनुसूची का भी पूर्व-परीक्षण किया जाता है। इससे प्रश्नों के सम्बन्ध में विभिन्न कमियों का पता लगता है तथा इससे उत्तरों में क्रम का अभाव, 'नही मालूम' वाले प्रश्न, उत्तर देने से मना करने वाले प्रश्न, अनिश्चित उत्तरों वाले प्रश्न, आदि के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इन कमियों को दूर करने के पश्चात् ही अनुसूची को प्रयोग में लिया जाता है।

(3) **कार्यकर्ताओं का चुनाव** (Selection of Investigators)—उत्तरदाताओं से सम्पर्क स्थापित करने तथा अनुसूची के भरने के लिए प्रगणकों तथा कार्यकर्ताओं का चयन किया जाता है क्योंकि उनकी योग्यता, कुशलता तथा परिश्रम पर ही अनुसूची भरना और अध्ययन की सफलता निर्भर है। कार्यकर्ता अनुभवी, निष्पक्ष, कुशल, चतुर, ईमानदार, धैर्यवान एवं स्थानीय परिस्थितियों से परिचित होने चाहिए। कार्यकर्ताओं को अध्ययन-क्षेत्र में भेजने से पूर्व प्रशिक्षित भी किया जाना चाहिए। इस दृष्टि से प्रशिक्षण शिविर तथा गोष्ठियों का आयोजन किया जाना चाहिए।

(4) **सूचना संकलन** (Collection of Data)—कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने के बाद उन्हें सूचनाएं संकलित करने के लिए क्षेत्र में भेजा जाता है। क्षेत्र में निम्नांकित तीन प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है :

(i) **उत्तरदाता से सम्पर्क** (Contact with respondents)—अनुसूची को भरने के लिए क्षेत्र कार्यकर्ताओं को सर्वप्रथम उत्तरदाताओं से सम्पर्क स्थापित करना पड़ता है, इसके लिए उसे अपनी व्यवहारकुशलता, नम्रता और प्रभावपूर्ण भाषा का उपयोग करना चाहिए ताकि उत्तरदाता सूचना देने के लिए तैयार हो जाए।
(ii) **साक्षात्कार** (Interview)—सूचनादाता से सम्पर्क के बाद विषय से सम्बन्धित सूचनाएं ज्ञात करने के लिए अध्ययनकर्ता सूचनादाता का साक्षात्कार लेता है।

प्रश्नावली में सूचनादाता स्वतन्त्र रूप से अपने विचार व्यक्त करता है, अतः उसमें पक्षपात आने की सम्भावना नहीं रहती।

(12) **प्रत्युत्तर का प्रतिशत**—अनुसूची द्वारा प्राप्त प्रत्युत्तर की सम्भावना शत-प्रतिशत होती है, जबकि प्रश्नावली में यह प्रतिशत बहुत प्रयत्न करने पर भी 50 से अधिक नहीं हो पाता।

(13) **अवलोकन**—अनुसूची का प्रयोग करने के दौरान अवलोकन भी किया जा सकता है, जबकि प्रश्नावली में इसका अवसर नही रहता।

अनुसूची और प्रश्नावली में अन्तर के आधार पर किसी एक को दूसरे से श्रेष्ठ नहीं माना जा सकता। इनका सम्बन्ध अध्ययन-क्षेत्र, सूचनादाताओं की प्रकृति एवं उपयोग की भिन्नता से है और इन्हीं के आधार पर हमें यह तय करना होगा कि कौन-सी विधि को अपनाया जाय। भारत जैसे देश में जहां शिक्षा का अभाव और सांस्कृतिक भिन्नता बहुत है, अनुसूची का प्रयोग अधिक लाभप्रद है। विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग अध्ययनों में दोनों को ही उपयोगी पाया है। **रेमजे** ने यौन व्यवहारों के अध्ययन में अनुसूची को अधिक उपयोगी पाया। **फिंगर** ने यौन विश्वासों तथा कॉलेज छात्रों के व्यवहार के अध्ययन में प्रश्नावली एवं अनुसूची द्वारा समान रूप से उपयोगी सूचनाएं संकलित की। **एलिस** ने कॉलेज छात्राओं के प्रेम सम्बन्धों की जानकारी प्राप्त करने में प्रश्नावली को अधिक उपयुक्त पाया। **कैनन** तथा **लेजार्सफील्ड** ने साक्षात्कार व अनुसूची की तुलना में डाक-प्रेषित प्रश्नावली से अधिक अच्छे परिणाम प्राप्त किये।

अनुसूची के गुण (लाभ)
(MERITS OR ADVANTAGES OF SCHEDULE)

अनुसूची सामाजिक अनुसन्धान में संलग्न क्षेत्रीय कार्यकर्ताओ के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है। इसे सामाजिक अनुसन्धान में बहुत ही उपयोगी प्रविधि माना जाता है। इसका कारण इसकी निम्नांकित उपयोगिताएं, गुण अथवा लाभ हैं :

(1) **प्रामाणिक एवं विश्वसनीय सूचनाएं** (Valid and Reliable Informations)—अनुसूची में स्वयं अनुसन्धानकर्ता साक्षात्कार तथा अवलोकन के आधार पर वैध तथा विश्वसनीय सूचनाओं को संकलित करता है।

(2) **व्यक्तिगत सम्पर्क** (Personal Contact)—अनुसूची को भरने के लिए अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता से व्यक्तिगत व आमने-सामने के सम्पर्क में आता है। इससे सूचनादाता के मन में अपनत्व की भावना पैदा हो जाती है और वह तथ्यों की सही-सही जानकारी दे देता है। अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता के मन में अध्ययन से सम्बन्धित उत्पन्न भय, सन्देह और भ्रम को भी दूर कर देता है।

(3) **सूचनाएं लिखने की सुविधा** (Facility of Noting the data)—अनुसूची द्वारा संकलित तथ्य हमारे पास लिखित रूप में उपलब्ध रहते है, अतः हमें अपनी स्मरणशक्ति एवं कल्पना पर आश्रित नहीं रहना पड़ता। क्या प्रश्न पूछने है, यह अनुसूची में पहले से ही लिखा होता है, अतः किसी सूचना के छूट जाने या भूल जाने की सम्भावना भी नही रहती।

(4) **अवलोकन की सुविधा** (Facility of Observation)—अनुसूची में अनुसन्धानकर्ता को प्रश्नों का उत्तर भरने के साथ-साथ अवलोकन की सुविधा भी रहती है। अतः वह घटनाओं की वास्तविकता को समझ सकता है। इसमें अध्ययनकर्ता की अवलोकन शक्ति में भी वृद्धि होती है।

(5) **अधिकतम प्रत्युत्तर** (Maximum Response)—अनुसूची में चूंकि अनुसन्धानकर्ता स्वयं सूचनादाता के समक्ष उपस्थित होता है, अतः वह अधिकाधिक प्रत्युत्तर प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। वह सूचनादाता को सूचना देने के लिए प्रेरणा भी देता है।

(6) **स्पष्टीकरण सम्भव** (Clarification Possible)—अनुसूची में अध्ययनकर्ता का सूचनादाता से प्रत्यक्ष सम्पर्क होता है, अतः वह प्रश्नों की भाषा में आने वाली कठिनाई, अस्पष्टता, आदि को स्पष्ट कर देता तथा सूचनादाता की शंकाओं एवं जिज्ञासाओं का भी निवारण कर देता है। ऐसा करके वह अधिकतम सूचनाएं प्राप्त करने में सफल हो जाता है।

(7) **सभी वर्गों के लिए उपयोगी** (Useful for all Strata)—अनुसूची का प्रयोग समाज के सभी वर्गों, चाहे वे शिक्षित हों या अशिक्षित, के लिए किया जा सकता है, क्योंकि अनुसन्धानकर्ता अपनी उपस्थिति के कारण अशिक्षितों को भी प्रश्नों को समझाकर सूचनाएं संकलित कर लेता है।

(8) **निदर्शन सम्बन्धी दोषों का निवारण** (Removal of Sampling defects)—प्रश्नावली में तो अध्ययन के लिए समग्र में से केवल शिक्षित लोगों को ही चुना जाता है, अतः समग्र का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता। किन्तु अनुसूची में सभी प्रकार के लोगों का अध्ययन सम्भव है, अतः निदर्शन में समुचित प्रतिनिधित्व न होने का दोष नहीं आ पाता।

(9) **सांख्यिकीय विश्लेषण सरल** (Statistical analysis easier)—अनुसूची में प्रश्नों की क्रमबद्धता एवं सारणियां होने के कारण प्राप्त सूचनाओं का संख्यिकीय विश्लेषण सरलता से किया जा सकता है।

(10) **मानवीय तत्व की प्रधानता** (Prominence of Human Element)—अनुसूची में मानवीय तत्व प्रारम्भ से अन्त तक उपस्थित रहता है, अतः सूचना संकलन की प्रक्रिया रोचक, आकर्षक एवं सरस हो जाती है। अध्ययनकर्ता व सूचनादाता परस्पर सम्पर्क में आते हैं एवं एक-दूसरे से कुछ ग्रहण करते हैं और अनुसन्धान मानवीय अनुसन्धान बन जाता है।

(11) **दोषपूर्ण लिखावट से बचाव**—चूंकि अनुसूची में अनुसन्धानकर्ता स्वयं ही सूचनाओं को लेखबद्ध करता है, अतः वह दूसरों द्वारा लिखने पर आने वाले दोषों से बच जाता है तथा लिखित सामग्री को सरलता से समझ सकता है।

(12) **प्राथमिक तथ्यों का संकलन**—अनुसूची द्वारा समस्या के बारे में प्राथमिक तथ्यों का संकलन सम्भव है।

(13) **अनावश्यक तथ्यों से छुटकारा**—अनुसूची में ऐसे तथ्यों का संकलन नहीं किया जाता है, जिनका अनुसन्धान विषय से सम्बन्ध न हो।

(14) **साक्षात्कार एवं अवलोकन का लाभ**—अनुसूची में अवलोकन एवं साक्षात्कार दोनों विधियो का प्रयोग होने से इसमें दोनों विधियों के गुण पाये जाते हैं।

इस प्रकार अनुसूची अध्ययनकर्ता का मार्ग-दर्शन करती है व अनुसन्धान के क्षेत्रों का निर्धारण करने में सहायता देती है। इसके महत्व को प्रकट करते हुए **श्रीमती पी. वी. यंग** ने लिखा है, "अध्ययन के लिए अनुसूची एक पथ-प्रदर्शक, अध्ययन-क्षेत्र का निर्धारण करने वाला एक साधन, स्मरण शक्ति को बनाए रखने वाला उपकरण तथा तथ्यों को लेखबद्ध करने वाली एक सरल प्रविधि है।"[1]

1 "The Researcher makes the schedule a guide, a means of delimiting the scope of his memory... Tickler, a recording device." —P. V. Young, *op. cit.*, p. 181.

अनुसूची के दोष (सीमाएं)
(DEMERITS OR LIMITATIONS OF SCHEDULE)

अनेक गुणो के होने के उपरान्त भी अनुसूची की निम्नांकित सीमाएं हैं :

(1) **सार्वभौमिक प्रश्नों का अभाव** (Lack of Universal Questions)—अनुसूची ऐसे सार्वभौमिक प्रश्नो का निर्माण कठिन है जिन्हें सभी उत्तरदाता समान रूप से समझें औ उत्तर दें। प्रश्नो की रचना करते समय पर्याप्त सावधानी रखने के बावजूद भी ऐसे प्रश्नों का निर्माण सरल नही है जो सभी बौद्धिक, शैक्षणिक तथा सांस्कृतिक स्तर के लोगों के लिए समान रूप से प्रयुक्त हो सकें।

(2) **सम्पर्क की समस्या** (Problem of making Contacts)—आधुनिक जीवन इतना व्यस्त है कि सभी सूचनादाताओं से सम्पर्क कर पाना कठिन है। व्यस्तता के कारण अध्ययनकर्ता को सूचनादाता के पास सम्पर्क के लिए बार-बार जाना होता है, फिर यह भी सम्भव नही है कि एक ही बार के सम्पर्क में सारी सूचनाएं संकलित कर ली जाएं। ऐसी स्थिति में सूचनाएं अपूर्ण ही रह जाती है।

(3) **अधिक समय और धन की आवश्यकता** (More expensive and time Consuming)—अनुसूची का प्रयोग करने के लिए अध्ययनकर्ता को प्रत्येक उत्तरदाता से सम्पर्क करना पडता है जिसके लिए बहुत अधिक समय की आवश्यकता होती है, साथ ही कई अध्ययनकर्ताओ की भी आवश्यकता होती है जिनके प्रशिक्षण, वेतन, आदि पर बहुत अधिक धन व्यय करना पड़ता है। इस प्रकार समय एवं धन की दृष्टि से अध्ययन की यह एक महँगी प्रणाली है।

(4) **सीमित क्षेत्र में उपयोग** (Use in a Limited area)—अनुसूची का उपयोग केवल सीमित और छोटे क्षेत्र में ही हो सकता है। अधिक कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होने तथा अधिक समय और धन खर्च होने के कारण बड़े क्षेत्रों के अध्ययन के लिए अनुसूची विधि अनुपयोगी रहती है।

(5) **संगठनात्मक समस्याएं** (Organisational Problems)—अनुसूची द्वारा अनुसन्धान का संचालन जब बड़े पैमाने पर करना हो तो कई कार्यकर्ताओ की आवश्यकता होती है। इन कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने, उनका मार्ग-दर्शन करने, उनके द्वारा बनी हुई अनुसूची की जांच करने, आदि के लिए एक बड़े संगठन की आवश्यकता होती है जिसका संचालन करने में अनेक प्रशासन सम्बन्धी समस्याए आती है।

(6) **अनुसन्धानकर्ताओ की लापरवाही** (Negligence of Investigators)—कई बार अनुसन्धानकर्ता एवं परिगणक अध्ययन के प्रति लापरवाही बरतते हैं क्योंकि उनकी नियुक्ति अस्थायी तौर पर होती है। इसलिए वे अनुसन्धान कार्य में रुचि नहीं लेते और कई बार फर्जी तौर पर अनुसूचियों की खानापूर्ति कर देते हैं।

(7) **सूचनादाताओं का पक्षपातपूर्ण व्यवहार** (Bias in Informant's Behaviour)—अनुसूची मे अनुसन्धानकर्ता सूचना देने के लिए सूचनादाता को प्रेरित करता है, ऐसी स्थिति मे कई बार सूचनादाता वही उत्तर देता है जो अनुसन्धानकर्ता पसन्द करता है। कई बार अध्ययनकर्ता प्रश्नों के उत्तर लिखने में अपने विचारो का भी प्रभाव डालता है। अध्ययनकर्ता की भाषा तथा शैली के आधार पर ही सूचनादाता के व्यवहार में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

(8) **एक जोखिम भरी प्रविधि** (A risky Technique)—कई बार अनुसूची द्वारा अध्ययन जोखिमपूर्ण होता है। अनुसन्धानकर्ता का व्यवहार चाहे कितना ही विनम्र क्यों न हो, किन्तु कई बार भावात्मक तथा व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित तथ्यों के संकलन में सूचनादाता के विरोध और आक्रोश की सम्भावना रहती है, यहां तक कि कई बार वे मारपीट पर भी उतारू हो जाते हैं।

अनुसूची की उपर्युक्त सीमाओं के बावजूद भी सामाजिक अनुसन्धान तथा सर्वेक्षण में प्रामाणिक, विश्वसनीय तथा वैषयिक तथ्यों के संकलन में इसकी उपादेयता अद्वितीय है और यह प्रणाली सदैव ही महँगी नहीं कही जा सकती। इसकी सफलता, इसकी उपयुक्त रचना तथा अनुसन्धानकर्ता की कुशलता पर बहुत कुछ निर्भर करती है। वर्तमान में अनेक सरकारी तथा गैर-सरकारी अध्ययनों में इसका प्रयोग अधिकाधिक किया जाने लगा है।

अनुसूची का नमूना

कानपुर के औद्योगिक मजदूरों की आवासीय स्थिति का सर्वेक्षण करने हेतु निर्मित अनुसूची

(1) नाम .....

(2) पता .....

(3) आयु ..... (4) जाति ..... (5) धर्म .....

(6) शिक्षा का स्तर ..... (7) मासिक आय .....

(8) आप जिस कारखाने में काम करते हैं उसका नाम .....

(9) आपके साथ रहने वाले सदस्यों का विवरण .....

क्रम संख्या	नाम	कर्मचारी से सम्बन्ध	आयु	अविवाहित अथवा विवाहित
1				
2				
3				
4				
5				

(10) आपका मकान कच्चा है अथवा पक्का?

(11) आपका मकान निजी है या किराये का?

(12) यदि किराये का है तो आप मासिक कितना किराया देते हैं?

(13) आपका निवास कौनसी मंजिल पर है?

(14) आपके पास कितने कमरे हैं?

कमरों की संख्या	लम्बाई	चौड़ाई	क्षेत्रफल
1			
2			
3			

(15) क्या रसोईघर की अलग व्यवस्था है? हां/नहीं

(16) स्नान घर की व्यवस्था अलग/सम्मिलित/बिल्कुल नहीं

(17) पाखाने की व्यवस्था अलग/सम्मिलित/बिल्कुल नहीं

(18) नल की व्यवस्था अलग/सम्मिलित/बिल्कुल नहीं

(19) बिजली की व्यवस्था है या नहीं? है/नही है
(20) क्या आपके मकान में और भी परिवार साथ रहते हैं? हां/नहीं
(21) यदि हां तो उनके सदस्यों की कुल संख्या?
(22) क्या आपके पास ऐसे कमरे हैं जिनमें खिड़की एवं रोशनदान नहीं हैं?
(23) क्या आपके पास ऐसे कमरे है जिनमें सूर्य की रोशनी नहीं आती है?
(24) आप की गर्मियों में सोने की व्यवस्था क्या है
(अ) कमरे में (ब) छत पर (स) सड़क पर
(25) आप कब से इस मकान में रह रहे हैं ? माह ..... वर्ष .....
(26) आपका मकान आपके कारखाने से कितना दूर है?
(27) आप घर से कारखाना कैसे पहुंचते हैं?
(अ) पैदल (ब) साइकिल (स) बस (द) ट्रेन (द) अन्य कोई साधन
(28) क्या आपके कारखाने द्वारा श्रमिकों के लिए आवास-गृह की व्यवस्था है? हां/नहीं
(29) क्या यह व्यवस्था आपको भी दी गई? हां/नहीं
(30) यदि दी गई तो आपने उसे प्राप्त क्यों नहीं की? (कारण)
1.....2.....3.....4.....5.....
(31) आप अपने वर्तमान आवास से किन बातों से सन्तुष्ट हैं?
(32) आप अपने वर्तमान आवास से किन बातो को लेकर असन्तुष्ट हैं।

प्रश्न

1. एक अनुसूची के क्या लक्षण हैं?
2. तथ्य संग्रह विधि के रूप में अनुसूची के लाभ एवं सीमाओं की विवेचना कीजिए। (राजस्थान, 1990)
3. अनुसूची और प्रश्नावली में अन्तर बताइए। अन्तर्जातीय विवाह के प्रति विद्यार्थियों के मतों को जानने के लिए लगभग पन्द्रह प्रश्नों की एक प्रश्नावली तैयार कीजिए।
4. अनुसूची की परिभाषा दीजिए तथा तथ्यों के संग्रह में इसकी उपयोगिता एवं सीमाओं का उल्लेख कीजिए।
5. प्रश्नावली से आप क्या समझते हैं? प्रश्नावली व अनुसूची मे अन्तर स्पष्ट कीजिए।
6. अनुसूची की परिभाषा दीजिए। एक अनुसूची की रचना करते समय किन-किन आवश्यक विचारों को ध्यान में रखना चाहिए?
7. अनुसूची क्या है? अनुसूची के उद्देश्यों एवं प्रकारो का वर्णन कीजिए। (अजमेर, 1990)
8. उत्तम साक्षात्कार अनुसूची के आवश्यक गुणों एवं एक उत्तम साक्षात्कारकर्ता के गुणों का वर्णन कीजिए।
9. अनुसूची क्या है? यह प्रश्नावली से किस प्रकार भिन्न है? (अजमेर, 1995)
10. अनुसूची पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। (राजस्थान, 1993)
- प्रश्नावली एवं अनुसूची में अन्तर कीजिए। (राजस्थान, 1994)

(अजमेर, 1993, 99; राजस्थान, 1996, 97, 99)

लघु उत्तरीय प्रश्न

निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :
(1) अनुसूची की कोई दो परिभाषाएं।
(2) अनुसूची के कोई चार गुण बताइए।

(3) अनुसूची के कोई चार दोष बताइए।

(4) अनुसूची के प्रकार।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित वाक्यों मे रिक्त स्थानों की पूर्ति कोष्ठक में दिए गए शब्दों में से सही शब्द का चयन करके कीजिए :
   (i) अनुसूची के प्रश्नों को.....स्वयं भरता है। (अनुसन्धानकर्ता/उत्तरदाता)
   (ii) अनुसूची में प्रश्नावली की तुलना में.....खर्च लगता है। (कम/अधिक)
   (iii) अनुसूची द्वारा.....क्षेत्र का गहन अध्ययन किया जा सकता है। (सीमित/विस्तृत)
   (iv) अनुसूची के द्वारा सामाजिक घटनाओं का.....अध्ययन सम्भव है। (सूक्ष्म/गहन)
   (v) अनुसूची में अनुसन्धानकर्ता उत्तरदाता के.....सम्पर्क में आता है। (प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष)
2. निम्नांकित में से अनुसूची के गुण व दोषों को पृथक्-पृथक् छांटकर लिखिए :
   (i) अधिक समय एवं धन,
   (ii) सीमित क्षेत्र,
   (iii) विश्वसनीय सूचनाएं,
   (iv) व्यक्तिगत सम्पर्क,
   (v) मानवीय तत्व की प्रधानता,
   (vi) सार्वभौमिक प्रश्नों का अभाव,
   (vii) सम्पर्क की समस्या,
   (viii) सांख्यिकीय विश्लेषण सरल।

[उत्तर—1. (i) अनुसन्धानकर्ता, (ii) अधिक, (iii) सीमित, (iv) गहन, (v) प्रत्यक्ष,
2. गुण—iii, iv, v, viii, दोष—i, ii, vi, vii]

12

प्रश्नावली

[QUESTIONNAIRE]

सामाजिक अनुसन्धान में प्राथमिक तथ्यों के संकलन हेतु आजकल प्रश्नावली विधि का प्रयोग दिनोंदिन बढ़ रहा है। यह विधि अन्य विधियों की अपेक्षा सरल एवं सस्ती है। वर्तमान मे यातायात एवं सन्देश-वाहन के साधनों के विकास के कारण प्रश्नावली विधि द्वारा दूर-दराज क्षेत्रों में बसे लोगों का अध्ययन सरल हो गया है। जब सूचनादाता शिक्षित हो, समग्र, विशाल एवं विस्तृत हो तो इस विधि के द्वारा अध्ययन करना अधिक उपयोगी सिद्ध होता है। कई बार ऐसा होता है कि जिस विषय या समस्या का हम अध्ययन करना चाहते हैं, उससे सम्बन्धित लोग बहुत बड़े क्षेत्र में फैले हुए रहते है, जिनका अध्ययन अवलोकन या साक्षात्कार-विधि द्वारा करने पर बहुत अधिक समय एवं धन की आवश्यकता होती है और सूचनाएं भी शीघ्र संकलित नहीं की जा सकतीं। ऐसी स्थिति में समय, श्रम एवं धन की बचत करने तथा शीघ्र सूचनाएं प्राप्त करने के लिए प्रश्नावली-विधि का प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग विषय की प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने के लिए भी किया जाता है।

प्रश्नावली विषय-अथवा समस्या से सम्बन्धित अनेक प्रश्नो की एक सूची होती है, जिसे अध्ययनकर्ता सूचनादाताओं के पास डाक द्वारा भेजता है और सूचनादाता उसे स्वयं भरकर पुनः लौटाता है। चूंकि प्रश्नावली सूचनादाताओं के पास डाक द्वारा भेजी जाती है, अतः इसे 'डाक द्वारा प्रेषित प्रश्नावली' (Mailed questionnaire) भी कहते है। कई बार यह लोगो में वितरित भी की जा सकती है। वर्तमान में जनमत सर्वेक्षण, बाजार सर्वेक्षण तथा सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षणों में प्रश्नावली विधि का प्रयोग काफी होने लगा है।

प्रश्नावली का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Questionnaire)

विभिन्न विद्वानों ने प्रश्नावली को इस प्रकार से परिभाषित किया है :

पोप (Pope) के अनुसार, "एक प्रश्नावली को प्रश्नों के एक समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसका उत्तर सूचनादाता को बिना एक अनुसन्धानकर्ता अथवा प्रगणक की व्यक्तिगत सहायता के देना होता है।"[1]

[1] "A questionnaire may be defined as a set of questions to be answered by the informant without the personal aid of an investigator or enumerator."
—J. D. Pope, *Research Methods and Procedure in Agriculture and Economics*, p. 63.

बोगार्डस के अनुसार, "प्रश्नावली विभिन्न व्यक्तियों को उत्तर देने के लिए प्रेषित की गई प्रश्नों की एक सूची है।"[1]

गुडे तथा हाट के अनुसार "सामान्यतः प्रश्नावली शब्द से तात्पर्य प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के एक उपकरण से होता है, जिसमें एक प्रपत्र का प्रयोग किया जाता है जिसे उत्तरदाता स्वयं ही भरता है।"[2]

विल्सन गी के अनुसार, "प्रश्नावली बहुत बड़ी संख्या में लोगों से अथवा छोटे चुने हुए एक समूह से, जिसके सदस्य विस्तृत क्षेत्र मे फैले हुए हैं, सीमित मात्रा में सूचना प्राप्त करने की एक सुविधाजनक प्रणाली है।"[3]

सिन पाओ यंग के अनुसार, "अपने सरलतम रूप में प्रश्नावली प्रश्नों की एक ऐसी अनुसूची है जिसे कि निदर्शन (Sample) के रूप में चुने हुए व्यक्तियों के पास डाक द्वारा भेजा जाता है।"[4]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि **प्रश्नावली किसी भी अध्ययन-विषय से सम्बन्धित प्रश्नों की एक सूची होती है जिसे डाक द्वारा सूचनादाताओं के पास भेजा जाता है जिसे सूचनादाता स्वयं भरकर पुनः लौटाता है।**

प्रश्नावली की विशेषताएं (Characteristics of Questionnaire)·

प्रश्नावली की विशेषताओं के आधार पर इसे और अधिक स्पष्ट रूप में समझा जा सकता है। इसकी विशेषताएं निम्नांकित हैं :

(1) प्रश्नावली अध्ययन किए जाने वाले विषय से सम्बन्धित प्रश्नों की एक सूची होती है।

(2) प्रश्नावली को डाक द्वारा सूचनादाताओं के पास भेजा जाता है। कभी-कभी स्थानीय स्तर पर इसे वितरित भी कराया जा सकता है।

(3) प्रश्नावली को सूचनादाता स्वयं ही भरता है। इसके लिए वह किसी की सहायता नहीं लेता है।

(4) प्रश्नावली का प्रयोग केवल शिक्षित सूचनादाताओं के लिए ही किया जाता है क्योंकि अध्ययनकर्ता उसके समक्ष नहीं होता। इसलिए प्रश्नों को पढ़कर सूचनादाताओं को ही उनके उत्तर भरने होते हैं।

(5) प्रश्नावली प्राथमिक सूचना संकलित करने की एक अप्रत्यक्ष विधि है।

(6) प्रश्नावली का प्रयोग विशाल एवं विस्तृत क्षेत्र में फैले हुए सूचनादाताओं के लिए किया जाता है। प्रश्नावली में सरल और स्पष्ट भाषा का प्रयोग किया जाता है तथा प्रायः इसमें प्रेरणादायक प्रश्न होते है।

(7) प्रश्नावली को सूचनादाता भरकर प्रायः डाक द्वारा ही लौटाता है, किन्तु कभी-कभी स्थानीय लोगों से इसका संग्रह व्यक्तिगत स्तर पर भी कराया जा सकता है।

---

1 "A questionnaire is a list of questions to a number of persons for them to answer."
—E. Bogardus, *Sociology*, p. 549.

2 "In general, the word questionnaire refers to a device for securing answers to questions by using a form which the respondent fills in himself."
—Goode and Hatt, *Methods in Social Research*, p. 133.

3 "It constitutes a convenient method of obtaining a limited amount of informations from a large number of persons or from a small selected group which is widely scattered." —Wilson Gee, *Social Sciences Research Methods*, p. 314.

4 Hsin Pao Yang, *Fact Finding with Rural People*, pp. 51-52.

(8) प्रश्नावली को डाक द्वारा एक साथ अनेक सूचनादाताओं के पास भेजा जाता है। इसलिए प्रश्नावली के द्वारा सूचनाएं शीघ्र संकलित की जाती हैं।

(9) प्रश्नावली में अनुसन्धानकर्ता चूंकि सूचनादाता के समक्ष नहीं होता, इसलिए वे निःसकोच अनेक गुप्त और आन्तरिक सूचनाएं दे देते हैं।

प्रश्नावली के उद्देश्य (*Objects of Questionnaire*)

प्रश्नावली विधि के उद्देश्यों का उल्लेख करते हुए श्रीमती गॉर्डन केट लिखती हैं कि प्रश्नावली का निर्माण शुद्ध सम्प्रेषण और शुद्ध उत्तर के लिए किया जाता है। शुद्ध सम्प्रेषण तभी सम्भव है जब सूचनादाता अध्ययन के उद्देश्य को समझते हों तथा शुद्ध उत्तर भी तभी उपलब्ध हो सकते है, जब इच्छित सूचनाएं प्राप्त हों और उनसे सारणी बनाने तथा विषय का विश्लेषण करने मे सहायता मिलती हो। प्रश्नावली के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं :

(1) विस्तृत, विशाल, विविध एवं व्यापक रूप मे बिखरे हुए लोगों से सूचनाएं संकलित करना, (2) प्रामाणिक तथा विश्वसनीय सूचनाएं संकलित करना, (3) सूचनाओं का व्यवस्थित सकलन, (4) वैषयिक अध्ययन के लिए, (5) अनावश्यक तथ्यों को छोड़ना, (6) कम खर्च, (7) संख्यात्मक अनुमापन, (8) एक साथ तथा शीघ्र सूचनाओं का संकलन।

प्रश्नावली के प्रकार (Types of Questionnaire)

प्रश्नावली की रचना, विषय-वस्तु, प्रश्नों की प्रकृति, आदि के आधार पर प्रश्नावली को विभिन्न प्रकारों में विभाजित किया जाता है। किस प्रकार की प्रश्नावली का उपयोग कहां किया जाएगा, यह बहुत कुछ उत्तरदाताओं एवं क्षेत्र की विशेषताओं पर निर्भर करता है। लुण्डबर्ग, पी. वी. यंग, गुडे एवं हाट, सेल्टिज, जहोदा तथा उनके सहयोगियों ने प्रश्नावली के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख किया है। **लुण्डबर्ग**[1] ने दो प्रकार की प्रश्नावलियों—तथ्य सम्बन्धी एवं मनोवृत्ति सम्बन्धी का उल्लेख किया है। **पी. वी. यंग**[2] ने प्रश्नों की प्रकृति के आधार पर—बन्द एवं खुली प्रश्नावली तथा प्रश्नावली की संरचना के आधार पर—संरचित एव असंरचित प्रश्नावली की विवेचना की है। अन्य विद्वानों ने चित्रमय एवं मिश्रित प्रश्नावलियों का उल्लेख किया है। हम यहां प्रश्नावली के विविध प्रकारों की संक्षेप में विवेचना करेंगे।

(1) **तथ्य सम्बन्धी प्रश्नावली** (*Factual Questionnaire*)—इस प्रश्नावली का उपयोग किसी समूह की सामाजिक-आर्थिक दशाओं से सम्बन्धित तथ्यों का संग्रह करने के लिए किया जाता है। जब हम किसी व्यक्ति की आय, आयु, धर्म, जाति, शिक्षा, विवाह, व्यवसाय, पारिवारिक रचना, ऋणग्रस्तता, आदि के बारे मे सूचना संकलित करना चाहते हैं तो इस प्रकार की प्रश्नावली का प्रयोग किया जाता है।

(2) **मत एवं मनोवृत्ति सम्बन्धी प्रश्नावली** (*Questionnaire of opinion and Attitude*)—जब हम किसी विषय पर सूचनादाता की रुचि, राय, मत, विचारधारा, विश्वास एवं दृष्टिकोण जानना चाहते है तो इस प्रकार की प्रश्नावली का प्रयोग करते है। बाजार-सर्वेक्षण, जनमत संग्रह, विज्ञापन तथा टेलीविजन एवं रेडियो कार्यक्रमो के बारे में लोगों के विचार जानने के लिए इसी प्रकार की प्रश्नावलियो का निर्माण एवं प्रयोग किया जाता है।

(3) **संरचित प्रश्नावली** (*Structured Questionnaire*)—इस प्रकार की प्रश्नावली का निर्माण अनुसन्धान प्रारम्भ करने से पूर्व ही कर लिया जाता है। इसमें प्रश्नों की भाषा, शब्द, वाक्य, आदि पहले से ही तय कर लिये जाते है जिनमें अनुसन्धानकर्ता अथवा साक्षात्कारकर्ता

1 G. A. Lundberg, *Social Research*, p 181.
2 P V Young, *Scientific Social Survey and Research*, pp 177-80.

को अनुसन्धान के दौरान परिवर्तन करने की कोई छूट नही होती है। इसमें प्रश्नों का क्रम भी पूर्व निर्धारित होता है। इस प्रकार की प्रश्नावली का मुख्य उद्देश्य सुनिश्चित एवं समरूप उत्तर प्राप्त करना है। संरचित प्रश्नावली को परिभाषित करते हुए **श्रीमती पी. वी. यंग** लिखती हैं, "संरचित प्रश्नावली वह होती है जिसमें कि निश्चित, ठोस तथा पूर्व-निर्धारित प्रश्नों के अतिरिक्त ऐसे आवश्यक सीमित प्रश्न भी रहते है जो अपर्याप्त उत्तरों के स्पष्टीकरण करने या अधिक विस्तृत प्रत्युत्तर पाने के लिए आवश्यक होते है। प्रश्नों का प्रकार चाहे प्रतिबन्धित हो या अप्रतिबन्धित, महत्वपूर्ण बात तो यह है कि उन प्रश्नों को पहले से ही, न कि साक्षात्कार के समय, लिखित रूप में दे दिया जाता है।" जब उत्तरदाताओं द्वारा दिये गये उत्तर अपर्याप्त, अस्पष्ट एवं अपूर्ण होते हैं तो साक्षात्कारकर्ता को अतिरिक्त प्रश्नों को पूछने की छूट दे दी जाती है। इस प्रकार की प्रश्नावलियों का उपयोग उन क्षेत्रो में किया जाता है जहां औपचारिक अन्वेषण का संचालन करना हो, उनके आधार पर उपकल्पना का निर्माण करना हो, प्राथमिक तथ्यों का संकलन करना हो या संकलित तथ्यों की पुनर्परीक्षा करनी हो। अध्ययन क्षेत्र के विस्तृत होने पर भी इस प्रकार की प्रश्नावलियों का प्रयोग किया जाता है ताकि प्रश्नों के समान उत्तर प्राप्त किये जा सकें। इस प्रकार की प्रश्नावलियों के द्वारा सामाजिक-आर्थिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है। किसी विषय पर लोगों की राय जानने, प्रशासकीय नीति या परिवर्तन का अध्ययन करने, सामाजिक स्वास्थ्य, जनकल्याण की योजनाओं, लोगों के रहन-सहन की दशाओं तथा आय-व्यय, आदि के बारे में सूचना एकत्रित करने के लिए भी सरचित प्रश्नावलियों का प्रयोग किया जाता है।

(4) **असंरचित प्रश्नावली** (Unstructured Questionnaire)—असंरचित प्रश्नावली में पहले से प्रश्नों का निर्माण नहीं किया जाता, वरन् केवल उन विषयो एवं प्रसंगों का उल्लेख किया जाता है जिनके बारे में सूचनाएं सकलित करनी होती है। इस दृष्टि से असंरचित प्रश्नावली साक्षात्कार-पथ-प्रदर्शिका (Interview guide) के समान ही होती है। इसे स्पष्ट करते हुए **श्रीमती पी. वी. यंग** लिखती हैं, "असरंचित प्रश्नावलियां प्रायः साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका के रूप में लक्षित की जाती है जिनका उद्देश्य निश्चित विषय-वस्तु क्षेत्रों को रखना तथा शुद्धता भी होता है जिसके साक्षात्कार के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाने की आवश्यकता होती है। साक्षात्कारकर्ता सीमाओं मे रहते हुए आकार को व्यवस्थित करने तथा पूछताछ के समय के निर्धारित करने मे स्वतन्त्र रहता है।" प्रश्नावली मे साक्षात्कार नहीं होता है क्योंकि वे डाक द्वारा प्रेषित की जाती है। अतः असंरचित प्रश्नावली अनुसूची का ही एक रूप होती है। इस प्रकार की प्रश्नावली का उपयोग मनोविश्लेषणात्मक साक्षात्कारों तथा अनौपचारिक एवं गहन अध्ययनों के लिए किया जाता है। असंरचित प्रश्नावली का प्रमुख गुण इसका लचीलापन है अर्थात् इसमें अनुसन्धानकर्ता अनुसन्धान के तरीकों में परिवर्तन कर सकता है। सरचित प्रश्नावली में उत्तरदाता उत्तर देने मे बंधा होता है, जबकि असंरचित प्रश्नावली में उत्तरदाता खुलकर अपने को अभिव्यक्त करता है। सूचनादाता के विश्वासों, दृष्टिकोणों एवं विचारों को जानने के लिए इस प्रकार की प्रश्नावलियां अधिक उपयोगी होती है।

(5) **बन्द, सीमित या प्रतिबन्धित प्रश्नावली** (Closed Questionnaire)—इस प्रकार की प्रश्नावली मे प्रश्नों के सामने ही कुछ निश्चित वैकल्पिक उत्तर लिखे होते है और उत्तरदाता को उनमे से ही उत्तर छांटकर लिखने होते हैं। इस प्रकार ऐसी प्रश्नावलियों में प्रश्नों के उत्तर सीमित कर दिये जाते है। अतः उत्तरदाता को स्वतन्त्र राय देने की छूट

होती और न ही उत्तर देने के लिए उन्हें अधिक सोचना पड़ता है, वरन् उन्हें पूर्वनिर्धारित उत्तरों में से ही किसी एक को चुनकर उसके आगे निशान लगाना होता है। इस प्रकार की प्रश्नावली का प्रयोग श्रेणीबद्ध सूचनाएं प्राप्त करने के लिए किया जाता है। सिन पाओ यंग के अनुसार "प्रतिबन्धित प्रश्नावली में प्रायः पूछे गये प्रश्नों के मद के अनुसार उत्तर दिये जाते हैं।"[1] इस प्रकार की प्रश्नावली में उत्तर देने में सूचनादाता को सुविधा रहती है। उसे अधिकांशतः 'हां' या 'नहीं' मे ही उत्तर देने होते हैं तथा उत्तर देने की जटिलता से वह मुक्त हो जाता है। ऐसी प्रश्नावलियों के भरकर लौट आने की सम्भावनाएं भी अधिक रहती हैं। ऐसी प्रश्नावलियों के प्रश्नों के कुछ उदाहरण निम्नांकित हैं :

(1) क्या आप अनुसूचित जाति के छात्र हैं?
(2) क्या आप विधवा पुनर्विवाह के पक्ष में हैं? हां/नहीं
(3) आपके अपने अध्यापकों से किस प्रकार के सम्बन्ध हैं? हां/नहीं
(क) मधुर (ख) सामान्य (ग) तनावपूर्ण।

इस प्रकार की प्रश्नावली में [illegible]

की प्रश [illegible] ग रहती है।

[illegible] अपने विचारों को खुलकर प्रकट करने की स्वतन्त्रता होती [illegible]estionnaire)—इस प्रकार है। प्रश्नावली में प्रश्नों के सम्भावित उत्तर दिये हुए नहीं होते हैं, वरन् सूचनादाता से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपनी इच्छानुसार उत्तर दे। कई बार एक प्रश्न के कई सम्भावित उत्तर हो सकते हैं, जिन्हें प्राप्त करने के लिए ही ऐसे प्रश्नों का चयन किया जाता है। इन प्रश्नावलियों के प्रश्नों में काफी लचीलापन पाया जाता है, [illegible] ने शब्दो मे व्यक्त करता है। [illegible]

[illegible] प्रश्नावलियों का प्रयोग किया जाता है। इनमें प्रश्नों के सामने उत्तर देने के लिए कुछ स्थान खाली छोड़ दिया जाता है। ऐसी प्रश्नावलियों के प्रश्नों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :

(1) भारत में आतंकवाद के प्रमुख कारण क्या हैं?

(2) छात्र असंतोष को समाप्त करने के लिए आप क्या सुझाव देंगे?

(3) आपकी राय में वर्तमान शिक्षा-पद्धति में क्या-क्या सुधार किये जाने चाहिए?

(7) **चित्रमय प्रश्नावली** (Pictorial Questionnaire)—इस प्रकार की प्रश्नावली मे प्रश्नों के सम्भावित उत्तर चित्र द्वारा प्रकट किये जाते हैं और सूचनादाता अपने उत्तर का

1 "The closed form Questionnaire usually contains itemized answer to the questions being asked."
—Hsin Pao Yang, *op. cit*, p. 52.

चयन उन चित्रों में से ही करके उस पर निशान लगा देता है। चित्रों के कारण प्रश्नावली रोचक एवं आकर्षक बन जाती है जिसके कारण सूचनादाता उत्तर देने के लिए प्रेरित हो जाता है। आधुनिक युग में हर व्यक्ति अपने कार्य में व्यस्त है, उसके पास इतना समय नही है कि वह लम्बे-लम्बे प्रश्नों के उत्तर दे सके। ऐसी स्थिति में सूचनादाताओं से कम समय एवं प्रयत्न से सरलतापूर्वक उत्तर प्राप्त करने के लिए चित्रमय प्रश्नावलियों का प्रयोग किया जाता है। ऐसी प्रश्नावलियों की भाषा भी सामान्य आदमी की समझ में आने वाली होती है। बालकों की मनोवृत्तियों को जानने एवं गूंगे तथा निरक्षर लोगों के लिए ऐसी प्रश्नावलियां अधिक उपयोगी सिद्ध हुई हैं। इस प्रकार की प्रश्नावलियों के प्रश्नों के उदाहरण इस प्रकार हैं :

(1) आपके परिवार का आकार क्या है?

इसी प्रकार से यह जानने के लिए कि आप गांव अथवा नगर में से कहां रहना पसन्द करेंगे ? इसके उत्तर को जानने के लिए गांव एवं नगर के चित्र बना दिये जाते है। इस



प्रकार की प्रश्नावलियों के उत्तरों की जांच एवं वर्गीकरण सरलता से किया जा सकता है।

(8) **मिश्रित प्रश्नावली** (Mixed Questionnaire)—इस प्रकार की प्रश्नावली ऊपर वर्णित सभी प्रकार की प्रश्नावलियों की विशेषताएं लिए होती है। प्रमुखतः इसमें बन्द व खुली प्रश्नावली का मिश्रण होता है। अधिकांशतः प्रश्नावलियां इसी प्रकार की होती हैं। सामाजिक अनुसन्धान में आजकल इसी प्रकार की प्रश्नावलियों का उपयोग बढ़ता जा रहा है क्योंकि इनका निर्माण सुविधाजनक होता है तथा इनके द्वारा महत्वपूर्ण सूचनाएं सुगमता से संकलित कर ली जाती हैं। किसी भी सामाजिक तथ्य के बारे में किसी एक ही प्रकार के प्रश्नों द्वारा सूचनाएं ज्ञात करना सम्भव नही है, अतः आवश्यकतानुसार खुले एवं बन्द, चित्रमय या संरचित एवं असंरचित प्रश्नों का निर्माण कर लिया जाता है। ऐसी प्रश्नावलियां कम और अधिक शिक्षित दोनों के लिए ही उपयोगी होती हैं तथा स्पष्ट और सटीक उत्तर के साथ-साथ उत्तरदाता के स्वतन्त्र विचार जानने में भी सहायक होती है।

एक अच्छी प्रश्नावली की विशेषताएं
(CHARACTERISTICS OF A GOOD QUESTIONNAIRE)

ए. एल. बाउले[1] ने एक उत्तम प्रश्नावली की निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया है :

(1) तुलनात्मक दृष्टि से प्रश्नों की संख्या कम होनी चाहिए।

(2) जिन प्रश्नों के उत्तर 'हां' अथवा 'नही' में दिए जाते हैं, उन्हें सम्मिलित किया जाना चाहिए।

(3) प्रश्न सरल एवं शीघ्र बोधगम्य हों।

1 A. L. Bowley, *Elements of Statistics*, p. 18.

(4) प्रश्नों की रचना इस प्रकार की जाए कि उनका उत्तर देते समय पक्षपात से बचा जा सके।

(5) प्रश्न अशिष्टतापूर्ण, धृष्टतापूर्ण एवं परीक्षात्मक नहीं होने चाहिए।

(6) जहां तक सम्भव हो, प्रश्न पारस्परिक पुष्टि करने वाले होने चाहिए।

(7) प्रश्न इस प्रकार के हों जिनसे इच्छित सूचनाएं प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त हो सकें।

एगल बर्नर[1] ने प्रश्नावली का निर्माण करते समय निम्नांकित बातों को ध्यान में रखने की बात कही है :

(1) किस प्रकार की सूचनाएं संकलित करनी हैं, यह तय करने के लिए विषय की विस्तृत, व्याख्या की जाए।

(2) प्रश्नों का उत्तर लिखने के लिए आवश्यकतानुसार प्रत्येक प्रश्न के सामने रिक्त स्थान होना चाहिए।

(3) इस प्रकार के प्रश्न नहीं पूछने चाहिए जिनका उत्तर देने में सूचनादाता को कोई आपत्ति हो।

(4) प्रश्नों को तार्किक दृष्टि से व्यवस्थित किया जाना चाहिए।

(5) लम्बे-लम्बे प्रश्नों से बचा जाना चाहिए।

(6) प्रश्नावली यथासम्भव संक्षिप्त होनी चाहिए।

(7) प्रश्न सरल और सीधे हों जिन्हें उत्तरदाता आसानी से समझ सके।

(8) प्रश्नों की भाषा सरल व स्पष्ट होनी चाहिए।

(9) प्रश्न उत्तरदाता की भावनाओं को ठेस पहुंचाने वाले नहीं होने चाहिए।

(10) प्रश्नावली की रचना करते समय उसके भौतिक पक्ष पर भी ध्यान देना चाहिए अर्थात् प्रश्नावली का आकार बहुत अधिक छोटा या या बड़ा न हो, कागज का रंग आकर्षक हो, छपाई सुन्दर व स्पष्ट हो, आदि।

प्रश्नावली की रचना
(CONSTRUCTION OF A QUESTIONNAIRE)

प्रश्नावली द्वारा अनुसन्धान की सफलता बहुत कुछ उसकी रचना एवं निर्माण विधि पर निर्भर करती है। चूंकि प्रश्नावली के प्रश्नो का उत्तर सूचनादाता बिना अनुसन्धानकर्ता की सहायता के देता है, इसलिए प्रश्नावली के निर्माण में अधिक सावधानी व सतर्कता की आवश्यकता होती है। वर्गीकरण में सुविधा हो, इस दृष्टि से भी प्रश्नावली को सरल एवं स्पष्ट बनाया जाना चाहिए अन्यथा प्रश्नावली की उपयोगिता समाप्त हो सकती है। प्रश्नावली की रचना मे तीन बातों पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए :

(1) अध्ययन की समस्या (2) प्रश्नों की उपयुक्तता, प्रकृति एवं शब्दावली (3) प्रश्नावली की बाह्य आकृति अथवा भौतिक पक्ष।

हम यहां इन तीनों ही पक्षों पर विचार करेंगे :

I. अध्ययन की समस्या (The Problem of Study)

प्रश्नावली विधि द्वारा अध्ययन करने और प्रश्नों की रचना करने से पूर्व यह आवश्यक है कि (i) समस्या के विभिन्न पक्षों का विश्लेषण किया जाय ताकि यह स्पष्ट हो जाय कि समस्या के किन पक्षों से सम्बन्धित सूचनाएं प्राप्त करनी और प्रश्न बनाने हैं। ऐसा करने से समस्या

1 J. Eigelberner, *The Investigation of Business Problems*, pp. 153-154.

के किसी आवश्यक पक्ष के छूटने की सम्भावना नहीं रहेगी। साथ ही कम और अधिक महत्वपूर्ण पहलुओं के सम्बन्ध में कम और अधिक प्रश्नों का बंटवारा भी कर लिया जाता है। (ii) विषय के बारे में **अनुसन्धानकर्ता के पूर्व अनुभवों का प्रश्नो के निर्माण मे उपयोग करना चाहिए** जिससे कि सभी प्रश्नों के सम्मिलित होने की सम्भावना रहे। (iii) विषय से सम्बन्धित ***उपलब्ध साहित्य का भी प्रश्नों के निर्माण मे उपयोग किया जाना चाहिए।*** ***(iv) विषय के विद्वान एवं मित्रों का भी प्रश्नो के निर्माण में सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए।*** **(v) स्थानीय परिस्थितियों का ज्ञान रखने वाले लोगों का भी प्रश्नों के निर्माण में सहयोग लिया जाना चाहिए।** (vi) प्रश्नावली की रचना से पूर्व क्षेत्र तथा सूचनादाता के विस्तार को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। क्षेत्र बड़ा होने पर निदर्शन (Sample) की संख्या तय कर लेनी चाहिए। (vii) प्रश्नावली के निर्माण के समय **अध्ययन की इकाई को भी निश्चित एवं परिभाषित कर लेना चाहिए।** इस प्रकार प्रश्नावली के निर्माण से पूर्व समस्या के विभिन्न पक्षो के बारे में जानकारी प्राप्त कर उससे सम्बन्धित प्रश्न सम्पूर्ण प्रश्नावली में विखेर देने चाहिए।

II. प्रश्नों की उपयुक्तता, प्रकृति एवं शब्दावली (Suitability, Nature and Wording of Questions)

प्रश्नावली में किसी भी प्रश्न को सम्मिलित करने से पूर्व यह देखना चाहिए कि वह विषय के बारे में सूचना सकलित करने में कितना सहायक होगा। अनावश्यक प्रश्नो को सम्मिलित करने से समय, श्रम एवं धन का दुरुपयोग होता है। हमें प्रश्नों की आवश्यकता, प्रकृति, भाषा, सरलता, स्पष्टता एवं क्रम, आदि को भी प्रश्नावली के निर्माण के समय ध्यान में रखना चाहिए। प्रश्नों के निर्माण के समय निम्न बातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए :

(1) **प्रश्नों की स्पष्टता एवं विशिष्टता** (Clear and Specialised Questions)—क्योंकि प्रश्नावली को उत्तरदाता को बिना किसी प्रगणक की सहायता के स्वयं ही भरना होता है, *अतः प्रश्न स्पष्ट एवं सरल होने चाहिए जिन्हें उत्तरदाता उसी अर्थ में समझे जिस अर्थ में वे पूछे गये है।* प्रश्नों में विशिष्ट एवं विभागीय शब्दों का तथा उनके संक्षिप्त रूप का प्रयोग नही किया जाना चाहिए। अप्रचलित, भावात्मक, सापेक्षिक, दोषपूर्ण एवं बहुअर्थक शब्दों से बचा जाना चाहिए। तकनीकी शब्दावलियों का प्रयोग भी नहीं किया जाना चाहिए। इसी प्रकार से अस्पष्ट प्रश्न भी नहीं किये जाने चाहिए। उदाहरण के लिए, यह पूछना कि "क्या आपको अच्छा वेतन मिलता है?" इसके स्थान पर यह पूछा जाना चाहिए कि "आपको कितना वेतन मिलता है?" इस प्रकार प्रत्येक प्रश्न विशिष्टता लिए हुए होना चाहिए।

(2) **प्रश्नों की सरलता** (Simple Questions)—प्रश्नावली में सरल प्रश्नों को सम्मिलित किया जाना चाहिए ताकि सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति भी उन्हें समझ सके क्योंकि अनुसन्धानकर्ता प्रश्नो के उत्तर देने में सूचनादाता की सहायता के लिए उपस्थित नहीं होता है।

(3) **इकाइयों की स्पष्ट परिभाषा** (Clear Definition of Units)—सही उत्तर प्राप्त करने के लिए इकाइयों की स्पष्ट परिभाषा देना भी आवश्यक है। ऐसा न होने पर प्रत्येक उत्तरदाता इनका भिन्न-भिन्न अर्थ लगा सकता है और उनके उत्तर भी अलग-अलग हो सकते है। उदाहरण के लिए, यह प्रश्न करना कि "आपके परिवार मे प्रौढ़ व्यक्ति कितने है ?" इसके स्थान पर यह प्रश्न किया जाना चाहिए कि "आपके परिवार में अमुक आयु के व्यक्ति कितने है?"

(4) सही सूचना प्राप्त करने योग्य प्रश्न (Questions Stimulating True Informations)—उत्तम प्रश्न वे होते हैं जो सही एवं स्पष्ट सूचना प्राप्त करने मे सहायक होते हैं। प्रश्न ऐसे हों जिनसे कि व्यक्ति सही स्थिति को छिपा नहीं सके। उदाहरणार्थ, यह प्रश्न करना कि "तुम आधुनिक शिक्षा के विरुद्ध क्यों हो, अनुपयुक्त है। इसके स्थान पर यह पूछा जाना चाहिए कि "आधुनिक शिक्षा की कमियां क्या हैं?"

(5) संक्षिप्त एवं श्रेणीबद्ध उत्तर (Brief and Categorized Answers)—प्रश्नावली मे प्रश्न इस प्रकार के हों जिनका उत्तर संक्षिप्त एवं श्रेणीबद्ध रूप में प्राप्त किया जा सके। उदाहरण के लिए, व्यक्ति की वैवाहिक स्थिति को ज्ञात करने के लिए यह प्रश्न किया जा सकता है—"आपकी वैवाहिक स्थिति क्या है?" अविवाहित, विवाहित, परित्यक्त, तलाकशुदा, पुनः विवाहित, विधवा, विधुर, आदि और उत्तरदाता को इनमें से किसी एक के आगे निशान लगाना होता है। ऐसे प्रश्न पूरी तरह से श्रेणीबद्ध एवं समावेशी होते हैं जिनके उत्तर में कोई अस्पष्टता नहीं हो सकती।

(6) कम प्रश्न (Few Questions)—प्रश्नावली में प्रश्नों की संख्या कम होनी चाहिए। अधिक प्रश्नों वाली प्रश्नावलियों के भरकर लौट आने की सम्भावना कम होती है क्योंकि उन्हे भरने में उत्तरदाता ऊब महसूस करता है। लम्बी प्रश्नावलियों में समय, श्रम एवं धन भी अधिक खर्च होता है। अतः प्रश्नावली में केवल आवश्यक प्रश्न ही सम्मिलित किये जाने चाहिए, निरर्थक नही।

(7) गणना (Calculation)—प्रश्नावली में इस प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित किया जाना चाहिए जिनकी गणना, वर्गीकरण एवं सारणीयन सरलता से किया जा सके। अधिकांशतः प्रश्नों के उत्तर 'हा' या 'नहीं' में होने पर अध्ययन में वस्तुनिष्ठता (Objectivity) बनी रहती है।

(8) गुप्त सूचनाएं (Secret Informations)—प्रश्नावली में सूचनादाता से सम्बन्धित गुप्त सूचनाओं को जानने वाले प्रश्न सम्मिलित नही किये जाने चाहिए क्योंकि ऐसे प्रश्नो का उत्तर वह नहीं देना चाहेगा। उदाहरण के लिए, किसी व्यक्ति से उसके यौन सम्बन्धों एवं व्यापारिक रहस्यों के बारे में प्रश्न नहीं पूछे जाने चाहिए।

(9) अत्यधिक गहन सूचनाएं (Most Deep Informations)—प्रश्नावली में इस प्रकार के प्रश्नों को भी सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए जो व्यक्ति के बारे में गहन सूचना प्राप्त करने वाले हो। इससे व्यक्ति के नाराज होने की सम्भावना रहती है। उदाहरण के लिए, व्यक्ति से उसके पारिवारिक कलह, पत्नी से सम्बन्ध, रिश्वत, आदि के बारे में प्रश्न करने पर उसके क्रोधित होने की सम्भावना रहती है और ऐसी स्थिति में उत्तर पाने से वंचित रहना पड़ सकता है।

(10) पथ-प्रदर्शक प्रश्नों से बचाव (Avoid Leading Questions)—प्रश्नावली में ऐसे प्रश्नों से बचा जाना चाहिए जो स्वयं उत्तरों की ओर संकेत करते हो। जैसे, "क्या तुम शिक्षित हो? "क्या तुम बाल-विवाह के पक्ष में हो?" इन प्रश्नों के उत्तरों में पहले से ही सकारात्मक पक्ष मौजूद है जिनका उत्तरदाता कभी-कभी समर्थन कर देता है।

(11) तकनीकी शब्दों की व्याख्या (Explanation of Technical Words)—जहां तक सम्भव हो, प्रश्नावली में तकनीकी शब्दों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। यदि ऐसा करना आवश्यक हो तो उनकी स्पष्ट परिभाषा एवं व्याख्या दी जानी चाहिए। उदाहरण के

लिए, यदि हम गरीबी, बेकारी, अर्द्ध-बेकारी, बाल-अपराध, श्वेतवसन अपराध, आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं तो इनकी पृथक् से परिभाषा भी दी जानी चाहिए।

(12) **कल्पनात्मक प्रश्न** (Imaginary Questions)—प्रश्नावली में ऐसे प्रश्नों को सम्मिलित नहीं करना चाहिए, जिनका सम्बन्ध वास्तविकता से न होकर कल्पना से हो। जैसे "क्या तुम विश्व के धनाढ्य व्यक्ति बनना चाहते हो?"

(13) **दकियानूसी, भावात्मक एवं प्रभावशाली शब्दो से बचाव** (Avoid Stereotyped, Emotional and Infuluential Words)—प्रश्नावली में दकियानूसी, भावात्मक और प्रभावशाली शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। ऐसे शब्दों के प्रयोग से उत्तर में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है। उदाहरण के लिए, यदि यह पूछा जाए कि "क्या आप साम्यवादी है?" अथवा "क्या आप तानाशाही में विश्वास करते है।", "क्या आप प्रजातन्त्र विरोधी हैं"? ऐसे प्रश्नों के उत्तर सामान्यतः नकारात्मक ही होंगे क्योंकि प्रश्नों के सकारात्मक उत्तर देने पर व्यक्ति को दकियानूसी करार दिये जाने का भय रहता है।

(14) **व्यंग्यात्मक प्रश्नों से बचाव** (Avoid Satirical Questions)—प्रश्नावली में इस प्रकार के प्रश्न नही होने चाहिए जो सूचनादाता पर व्यंग्य करते हों। ऐसी स्थिति में प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करना सम्भव नहीं रहता।

(15) **पारस्परिक पुष्टि वाले प्रश्न** (Corroboarated Questions)—प्रश्नावली में ऐसे प्रश्नो को सम्मिलित करना चाहिए जो एक-दूसरे की पुष्टि करते हो। ऐसे प्रश्नों से सूचनादाता द्वारा दिए जाने वाले अशुद्ध उत्तरों का पता लग जाता है और उन्हें ठीक किया जा सकता है।

(नोट—प्रश्नों की अन्य विशेषताओं के लिए 'अनुसूची' वाले अध्याय का सहारा लें।)

III. प्रश्नावली का बाह्य अथवा भौतिक पक्ष (Physical Aspects of Questionnaire)

प्रश्नावली की सफलता केवल प्रश्नों की भाषा एवं शब्दों पर ही निर्भर नहीं करती, वरन् उसकी भौतिक बनावट पर भी निर्भर करती है। चूंकि प्रश्नावली भरते समय अनुसन्धानकर्ता उपस्थित नहीं होता है, अतः सूचनादाता का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रश्नावली की भौतिक बनावट जैसे उसका कागज, आकार, छपाई, रूपरंग, लम्बाई, आदि आकर्षक होनी चाहिए। प्रश्नावली के भौतिक पक्ष में निम्न बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए :

(1) **आकार** (Size)—सामान्यतः प्रश्नावली बनाने के लिए कागज का आकार 8" × 12" अथवा 9" × 11" का होना चाहिए जिन्हें आसानी से मोड़कर लम्बे लिफाफों में रखा जा सके, किन्तु वर्तमान में छोटे आकार की प्रश्नावली जो कि पोस्टकार्ड साइज में होती है, का प्रचलन भी बढ़ा है। कम पृष्ठों की प्रश्नावली होने पर उसका डाक व्यय भी कम लगता है तथा उसके भरकर लौट आने की सम्भावना भी अधिक रहती है। लम्बे आकार की प्रश्नावलियों को डाक द्वारा भेजने पर फटने का डर भी बना रहता है।

(2) **कागज** (Paper)—प्रश्नावली के लिए प्रयोग किये जाने वाला कागज भी कड़ा, चिकना, मजबूत एवं टिकाऊ होना चाहिए। खुरदरा एवं छिकने वाला कागज नहीं होना चाहिए। जहां तक हो कागज रंगीन तथा ध्यान आकर्षित करने वाला होना चाहिए। विभिन्न प्रकार के विषयों से सम्बन्धित प्रश्नावलियों में भिन्न-भिन्न रंगों के कागज का प्रयोग करने से उनकी छंटाई आसान हो जाती है। कागज पतला होने पर डाक व्यय भी कम लगता है।

(3) **छपाई** (Printing)—प्रश्नावलियों को छपाया जा सकता है अथवा साइक्लोस्टाइल कराया जा सकता है। छपाई स्पष्ट व शुद्ध होनी चाहिए ताकि उन्हें आसानी से पढ़ा जा सके। आकर्षक छपाई सूचनादाता पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालती है।

(4) **प्रश्नावली की लम्बाई** (Length of Questionnaire)—प्रश्नावली बहुत अधिक लम्बी भी नहीं होनी चाहिए जिसे भरने में उत्तरदाता ऊब और नीरसता महसूस करे। सामान्यतः आधे घण्टे में भरी जाने वाली प्रश्नावलियां उपयुक्त मानी जाती हैं।

(5) **हाशिया एवं जगह छोड़ना** (Margin and Spacing)—प्रश्नावली का निर्माण करते समय बाई ओर 3/8" एवं दायीं ओर 1/5" अथवा 1/6" हाशिए का छोड़ना आवश्यक है। इससे प्रश्नावली आकर्षक बन जाती और आवश्यकता पड़ने पर हाशिए में टिप्पणी भी अंकित की जा सकती है, इसमें कागज को पंच कर फाइल करने में भी सुविधा होती है। प्रश्नावली को छापते समय अक्षरों तथा प्रश्नों के बीच पर्याप्त जगह छोड़नी चाहिए ताकि उसे पढ़ने में सुविधा हो तथा मुक्त प्रश्नों के उत्तर लिखे जा सकें।

(6) **प्रसंगों (मदों) की व्यवस्था** (Arrangement of Items)—एक विषय से सम्बन्धित सभी प्रश्नों को एक साथ एक क्रम में लिखा जाना चाहिए और यदि प्रश्नों की संख्या अधिक हो तो उन्हें व्यवस्थित करके विभिन्न समूहों में बांट देना चाहिए। प्रश्नावली में शीर्षक-उपशीर्षक कॉलम तथा सारणियां, आदि सही क्रम से छपे होने चाहिए ताकि उनके सम्पादन में अधिक समय व धन नही लगाना पड़े।

(7) **प्रश्नावली का पूर्व परीक्षण** (Pretesting of Questionnaire)—प्रश्नावली का निर्माण करने के बाद उसका वास्तविक रूप में प्रयोग करने और डाक द्वारा सूचनादाताओ के पास भेजे जाने से पूर्व एक छोटे से निदर्शन क्षेत्र मे उसकी जांच कर लेनी चाहिए तावि प्रश्नावली में यदि किसी प्रकार की कोई त्रुटियां हैं तो उन्हें सुधारा जा सके। प्रश्नावली के निर्माण में चाहे कितनी ही सावधानी रखी गयी हो और चाहे कितने ही अनुभवी व्यक्ति एवं साहित्य का सहारा लिया गया हो फिर भी उसमें कमियों की सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता। अतः यह आवश्यक है कि प्रश्नावलियों की पूर्व-जांच कर ली जाय। इससे हमे यह ज्ञात हो जायेगा कि उत्तरदाता प्रश्नों को सही अर्थ में समझ सके है या नहीं, वे उनका क्या अर्थ लगाते है, प्रश्नावली की लम्बाई, विषय-वस्तु, भाषा-शैली में किस प्रकार के संशोधन की आवश्यकता है, आदि। कई बार प्रश्नावलियो के वितरण के बाद उनकी त्रुटियों का पता लगता है। अतः यह आवश्यक है कि पहले से ही उनकी जांच कर यह देख लेना चाहिए कि उनके निर्माण एवं शब्दावली में कोई कमी तो नहीं है। स्लेटो ने लिखा है, "संक्षेप में पूर्व-जांच की प्रणाली कार्य-विधि पर त्रुटियों को, इसके पहले कि वे न्यून मात्रा में विश्वसनीय एवं प्रामाणिक जवाबों एवं उत्तरों के कम अनुपात में आने के रूप में भारी दण्ड थोपे, निकालने का साधन उपलब्ध कराती है। पूर्व-जांच आवश्यक रूप से एक परीक्षण एवं त्रुटि .(trial and error) की प्रणाली है जिसमे सफल परीक्षणों की पुनरावृत्ति की जाती है तथा जब अन्तिम रूप से प्रश्नावली अन्तिम समूह को भेजी जाती है तो त्रुटियां निकल जाती हैं।"[1] पूर्व-परीक्षण करने पर जो कमियां हमें ज्ञात हों, उन्हें दूर करने के लिए प्रश्नावलियों में परिवर्तन एवं सशोधन करने चाहिए। यदि त्रुटियां बहुत अधिक हों तो प्रश्नावली का पुनः निर्माण करना चाहिए

पूर्व-परीक्षण की उपयोगिता एवं लाभ अग्राकित हैं :

1 R. P. Sletto, *American Sociological Review*, p. 200.

(1) पूर्व-परीक्षण से हमें ऐसे प्रश्नों का पता चल पायेगा जिनके उत्तर सूचनादाताओं को ज्ञात नहीं है और जिनके उत्तर में वे "पता नही", "मैं नहीं जानता", आदि वाक्य लिखते हैं। इस कमी को उपयुक्त प्रश्नों द्वारा दूर किया जा सकता है।

(2) इससे प्रश्नों के क्रम की कमी ज्ञात होती है।

(3) प्रश्न के उत्तरों में दिए हुए विकल्प यदि कम हैं तो उनका पता लग जाता है और आवश्यक विकल्प जोड़ दिये जाते हैं।

(4) ऐसे प्रश्नों का पता लग जाता है, जिनका उत्तर देना सूचनादाता उचित नहीं समझते और उत्तर के स्थान रिक्त ही छोड़ दिये जाते है।

(5) आवश्यकता से अधिक शर्तो अथवा अनावश्यक आलोचनाओं को उकसाने वाले प्रश्नों का पता चलता है।

(6) अनावश्यक एवं असम्बन्धित प्रश्न ज्ञात हो जाते है।

(7) इससे उत्तरदाता की क्षमता एवं उत्सुकता का बोध हो जाता है।

(8) प्रश्नावली की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता बढ़ जाती है।

(9) सारणीकरण की दृष्टि से उपयुक्त शीर्षक एवं तथ्य प्राप्त होते हैं।

(10) इसके फलस्वरूप प्रत्युत्तरों की संख्या मे वृद्धि होती है।

पूर्व-परीक्षण के लिए यह आवश्यक है कि (i) पहले प्रश्नावलियों को कम मात्रा में छपाया जाय (ii) जिस क्षेत्र का अध्ययन करना है, उसमें से एक छोटा निदर्शन-समूह चुनकर उसे ही पूर्व-परीक्षण के लिए प्रश्नावलियां भेजी जायं, (iii) पूर्व-परीक्षण वैयक्तिक साक्षात्कार के रूप में किया जाय, (iv) सही प्रत्युत्तर न देने वाले प्रश्नों में संशोधन किया जाय अथवा उन्हे छोड़ दिया जाय।

सहभागी पत्र (Accompanying Letter)

पूर्व-परीक्षण कर लेने एवं प्रश्नावली को अन्तिम रूप देने के बाद प्रश्नावलियों को सूचना संकलन हेतु डाक द्वारा भेजा जाता है। इनके साथ अनुसन्धान करने वाली संस्था अथवा व्यक्ति द्वारा एक पत्र भी भेजा जाता है जिसे सहगामी पत्र कहते हैं। इस पत्र में सूचनादाता को अनुसन्धान करने वाली संस्था का परिचय दिया जाता है, उसे अनुसन्धान का विषय व उसके उद्देश्य बताये जाते है तथा प्रश्नावली को एक निश्चित समय में शीघ्र भरकर लौटाने की प्रार्थना की जाती है। उत्तरदाता से कहा जाता है कि आपके सहयोग से ही अनुसन्धान कार्य पूर्ण हो पायेगा। पत्र टाइप किया हुआ, छपा हुआ या साइक्लोस्टाइल्ड हो सकता है। पत्र साफ-साफ छपा हुआ एवं आकर्षक कागज में हो जिससे कि सूचनादाता आकर्षित हो सके। पत्र ही सूचनादाता व अनुसन्धानकर्ता के बीच एक कड़ी का काम करता है, उन्हे एक दूसरे के निकट लाता है। पत्र का शीर्षक मोटे अक्षरों में हो जिसे पढ़कर सूचनादाता वस्तुस्थिति को समझ सके। पत्र की भाषा एवं शब्दावली का चयन सावधानीपूर्वक किया जाय जिसे पढ़कर उत्तरदाता स्वयं ही सूचना देने को तैयार हो जाय। पत्र में यह भी लिखा जाय कि आपके द्वारा दी गयी सूचनाएं गुप्त रखी जायेंगी, उनका दुरुपयोग नहीं होगा तथा सार्वजनिक रूप से उन्हे प्रकाशित नहीं किया जायेगा। पत्र के अन्त में उत्तरदाता के सहयोग के प्रति आभार प्रकट किया जाना चाहिए। पत्र छोटा, आकर्षक एवं प्रभावशाली होना चाहिए। शीघ्र जवाब पाने के लिए सहगामी पत्र के साथ टिकट सहित जवाबी लिफाफा भी भेजना जाना चाहिए। इसका उत्तरदाता पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है और वह प्रश्नावली भरकर लौटाने के महत्व को समझ पाता है।

प्रश्नावलियां भेजने में सावधानियां
(PRECAUTIONS IN DESPATCHING THE QUESTIONNAIRES)

सहगामी पत्र तैयार हो जाने के बाद प्रश्नावलियां सूचनादाता के पास डाक द्वारा भेज दी जाती है। प्रश्नावलिया भेजते समय निम्नाकित वातों को ध्यान में रखा जाना चाहिए : (i) यह जांच करले कि प्रश्नावली उत्तरदाता के सही पते पर भेजी जा रही हैं, (ii) सभी प्रश्नावलियां एक ही साथ भेजी जाएं ताकि वे भरकर पुनः एक ही साथ लौट सके, (iii) प्रश्नावलियों को ऐसे दिन भेजा जाए ताकि वे उत्तरदाता के पास रविवार से एक दो दिन पूर्व पहुंच जायं ताकि उत्तरदाता उन्हें अवकाश के समय में शान्ति और धैर्य से भरका लौटा सके, (iv) प्रश्नावली के साथ उत्तर भेजने के लिए पता लिखा हुआ एवं टिकट लगा लिफाफा भेजना चाहिए।

अनुमामी पत्र (Follow-up Letters)

कई बार प्रश्नावलियां उत्तरदाता द्वारा भरकर लौटाई नहीं जाती हैं। तब लगभग 15 दिन बाद एक और पत्र लिखकर उत्तरदाताओं को प्रश्नावली भेजने की याद दिलायी जाती है और उनसे प्रार्थना की जाती है। इसी पत्र को अनुगामी पत्र कहते है। **प्रो. लिण्डले** ने अनुगामी पत्र भेजने की समय सूची भी बतायी है :

(i) प्रथम अनुगामी पत्र 16 दिन पश्चात, (ii) द्वितीय अनुगामी पत्र प्रथम पत्र के एक सप्ताह बाद और साथ ही प्रश्नावली की एक प्रति और भी भेजी जानी चाहिए क्योंकि पहली प्रश्नावली के खो जाने अथवा खराब हो जाने के कारण भी कई बार उत्तरदाता सूचना नहीं दे पाता है, (iii) तृतीय अनुगामी पत्र द्वितीय पत्र के दो सप्ताह बाद भेजना चाहिए। फिर भी उत्तर प्राप्त न हो तो ऐसे सूचनादाता का नाम अध्ययन सूची से हटा दिया जाना चाहिए। कई बार तार एव टेलीफोन द्वारा भी उत्तरदाता को प्रश्नावली भरकर भेजने की अपील की जा सकती है।

प्रश्नावलियों की निरुत्तर प्रकृति (Non-response Nature of Questionnaire)

कई बार प्रश्नावलियां भेज देने के बाद कुछ तो शीघ्र ही लौटकर आ जाती हैं किन्तु कुछ का कोई प्रत्युत्तर प्राप्त नहीं होता है। उत्तर न मिलने के कारण इस प्रकार हैं :

(1) कई बार निदर्शन के रूप में ऐसी इकाइयां भी आ जाती हैं जो उस क्षेत्र में नही है, जो लोग अन्यत्र चले गये हों, मर गये हों, अथवा मकान व पता बदल गया हो, उनके भी प्रत्युत्तर प्राप्त नहीं होते है।
(2) सूचनादाता का लम्बे समय से घर से बाहर होने पर भी प्रत्युत्तर प्राप्त नही होता है।
(3) सूचनादाता के अत्यधिक व्यस्त होने पर वह प्रश्नावली भरना ही भूल सकता है।
(4) सूचनादाता प्रश्नावली भरने के प्रति उदासीन एवं अनिच्छुक हो सकता है।
(5) सूचनादाता को अध्ययन विषय के बारे में जानकारी नहीं हो।
(6) सूचनादाता कम शिक्षित हो।

अधिक प्रत्युत्तर प्राप्त करने के उपाय (Measures to fetch more Responses)

प्रश्नावलियां अधिक से अधिक भरकर पुनः लौट आये, इसके लिए अग्रांकित उपाय किये जाने चाहिए :

(1) प्रभावपूर्ण भाषा में सूचनादाताओं को सहयोग के लिए अपील की जाय।
(2) प्रश्नावली भरकर लौटाने वाले को कोई पुरस्कार अथवा पारिश्रमिक देने का आश्वासन दिया जाय।
(3) अनुगामी पत्रों द्वारा सूचनादाताओं को प्रश्नावली भरने के लिए पुनः स्मरण दिलाया जाय।
(4) प्रश्नावलियों को उत्तरदाता के सही पते पर पहुंचाया जाए।
(5) प्रश्नावलियों को उत्तरदाता के पास सही समय यानि कि छुट्टी के 1-2 दिन पूर्व पहुंचाया जाए।

प्रश्नावली की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता
(RELIABILITY AND VALIDITY OF QUESTIONNAIRE)

प्रश्नावली चाहे कितनी ही सावधानीपूर्वक बनाई गयी हो, फिर भी यह शंका बनी ही रहती है कि इसके द्वारा प्राप्त सूचनाएं विश्वसनीय एवं प्रामाणिक हैं या नही। इसका कारण यह है कि कई बार सूचनादाताओं द्वारा एक ही प्रश्न को भिन्न-भिन्न अर्थ में समझ लिया जाता है और ऐसी दशा में उनके उत्तर भी भिन्न-भिन्न होते हैं। यह भी सम्भव है कि प्रश्न के अर्थ को ही न समझा गया हो।

किसी भी प्रश्नावली को प्रामाणिक एवं विश्वसनीय तभी ठहराया जा सकता है, जबकि सूचनादाता प्रश्नों को उन्हीं अर्थों में समझें जिन अर्थों में उनकी रचना की गई है। प्रश्नावली की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता को ज्ञात करने के लिए निम्न उपाय किये जा सकते हैं :

(1) **पुनः प्रश्नावली भेजना** (Sending again the Questionnaire)—प्रश्नावली की विश्वसनीयता को ज्ञात करने का एक तरीका यह है कि हम कुछ समय बाद उन्हीं सूचनादाताओं के पास एक बार फिर प्रश्नावली को भेजें। यदि दोनों प्रश्नावलियों के उत्तरों में समानता हो तो प्रश्नावली विश्वसनीय मानी जायेगी और अन्तर होने पर अविश्वसनीय। किन्तु इस बीच सूचनादाता की सामाजिक एवं मानसिक परिस्थिति में भी कोई अन्तर नहीं आना चाहिए अन्यथा उत्तर भी भिन्न प्राप्त हो सकते हैं।

(2) **समान वर्ग का अध्ययन** (Study of Similar Group)—प्रश्नावली की विश्वसनीयता की परख के लिए उसी प्रश्नावली को समान विशेषताओं वाले किसी अन्य समूह के पास भी भरने के लिए भेजा जा सकता है। यदि दोनों से प्राप्त होने वाले उत्तरों में समानता हो तो प्रश्नावली विश्वसनीय है अन्यथा नहीं।

(3) **उप-निदर्शन का प्रयोग** (Use of Sub-sample)—प्रश्नावली की विश्वसनीयता की परख के लिए एक विधि यह है कि जिस बड़े समूह का हमने अध्ययन किया है, उसी मे से एक छोटा निदर्शन चुनकर उनके पास प्रश्नावली भेजी जाय। यदि दोनों के परिणामों में बहुत कुछ समानता हो तो प्रश्नावली को विश्वसनीय माना जा सकता है।

(4) **अन्य अनुसन्धान विधियों का प्रयोग** (Use of other Research Methods)—प्रश्नावली की विश्वसनीयता को ज्ञात करने के लिए साक्षात्कार, अनुसूची एवं अवलोकन, आदि विधियों द्वारा भी उन्हीं प्रश्नों के उत्तर ज्ञात किये जाएं। यदि अन्य विधियों से भी वही उत्तर प्राप्त होते हैं तो प्रश्नावली विश्वसनीय मानी जानी चाहिए।

(5) **सामान्य अनुभव** (Common Experience)—प्रश्नावली की विश्वसनीयता को ज्ञात करने का सबसे सरल तरीका यह है कि हम उन्हे अपने सामान्य ज्ञान के द्वारा परखें। यदि उत्तर सामान्य एवं प्रचलित ज्ञान के विपरीत है तो वे अविश्वसनीय मानी जायेगी।

प्रश्नावली विधि के गुण (महत्व)

आधुनिक समय में सामाजिक अनुसन्धानों में तथ्यों के संकलन हेतु प्रश्नावली विधि का प्रयोग दिनों-दिन बढ़ता ही जा रहा है। इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए विनान मी ने लिखा है, "यह व्यक्तियों के एक बड़े समूह अथवा अधिक बिखरे हुए व्यक्तियों के एक छोटे से चुने हुए समूह से कुछ सीमित सूचनाएं प्राप्त करने की एक सुगम विधि है।" कैथराइन गोर्डन कैण्ट ने भी लिखा है, "प्रश्नावली के द्वारा वस्तुपरक तथा परिमाणात्मक तथ्यों के साथ-साथ गुणात्मक प्रकृति की सूचनाओं के विकास की जानकारी को भी एकत्रित किया जा सकता है।" प्रश्नावली-विधि के गुण, लाभ, उपयोगिता अथवा महत्व को हम विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत इस प्रकार दर्शा सकते हैं :

(1) **विशाल जनसंख्या का अध्ययन (Study of Large Population)**—प्रश्नावली विधि का सबसे बड़ा गुण यह है कि इसके द्वारा हम दूर-दूर तक फैले हुए क्षेत्र एवं विशाल जनसंख्या का अध्ययन कम समय, धन एवं श्रम खर्च करके कर सकते हैं। अन्य विधियों द्वारा विशाल जनसंख्या के अध्ययन हेतु अधिक धन, समय और श्रम की आवश्यकता होती है। इसी उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए सिन पाओ यंग लिखते हैं, "प्रश्नावली एक विशाल एवं विस्तृत क्षेत्र में बिखरे हुए व्यक्तियों के समूह में से सूचनाएं संकलित करने की शीघ्रतम तथा सरलतम विधि प्रदान करती है।"

(2) **निम्नतम व्यय (Minimum Expenses)**—प्रश्नावली विधि अन्य विधियों की अपेक्षा अध्ययन की कम खर्चीली विधि है। कागज, छपाई तथा डाक-व्यय पर होने वाले अल्प खर्च में ही विशाल क्षेत्र का अध्ययन हो जाता है। क्षेत्रीय कार्यकर्ताओं की इस विधि में आवश्यकता न होने से उनके वेतन एवं भत्तों तथा संगठन सम्बन्धी व्यय की आवश्यकता ही नही होती।

(3) **न्यूनतम समय (Minimum Time)**—प्रश्नावलियों को छपवाकर एक साथ डाक द्वारा सभी सूचनादाताओं के पास भेज दिया जाता है जो शीघ्र ही भरकर पुनः लौटा दी जाती है। इसके विपरीत साक्षात्कार, अवलोकन तथा अनुसूची विधि में अध्ययनकर्ता को सूचनादाता से व्यक्तिगत सम्पर्क करना पड़ता है जिसके लिए अधिक समय की आवश्यकता होती है, यदि क्षेत्र विस्तृत हो तो समय की और अधिक आवश्यकता होती है जबकि प्रश्नावलियां एक ही साथ भेजी जाती हैं और कुछ समय में अधिकांश उत्तर सहित लौटा दी जाती हैं।

(4) **न्यूनतम श्रम (Minimum Labour)**—प्रश्नावली द्वारा अध्ययन करने के लिए हमे अधिक अध्ययनकर्ताओ की आवश्यकता नहीं होती। एक केन्द्रीय कार्यालय से ही प्रश्नावलियों को भेजा व प्राप्त किया जाता है। उनके वर्गीकरण, सारणीयन, निर्वचन, निष्कर्ष एवं प्रतिवेदन तैयार करने में भी अधिक लोगों की आवश्यकता नहीं होती।

(5) **पुनरावृत्ति सम्भव (Repetiuon Possible)**—कुछ अनुसन्धान इस प्रकार के होते है कि उनके लिए हमे थोड़े-थोडे समय बाद बार-बार सूचनाएं एकत्रित करनी होती हैं, तब यही विधि अधिक उपयोगी होती है। प्रश्नावली की अनेक प्रतियां छपवाकर रख ली जाती है जो समय-समय पर सूचनादाताओं के पास भेज दी जाती हैं।

(6) **सुविधाजनक (Convenient)**—प्रश्नावली-विधि सूचना संकलित करने की एक सरल एवं सुविधाजनक विधि है क्योंकि इसे सूचनादाता अपनी सुविधा एव रुचि के अनुसार समय मिलने पर भर सकता है। अनुसन्धानकर्ता को भी सूचनादाता से साक्षात्कार का समय निर्धारण करने की आवश्यकता नही होती।

(7) **स्वतन्त्र तथा प्रामाणिक सूचनाएं** (Free and Valid Informations)—चूंकि प्रश्नावली भरते समय अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता के समक्ष उपस्थित नहीं होता है, अतः वह खुलकर स्वतन्त्र रूप से अपने विचार व्यक्त करता है। फलस्वरूप प्रामाणिक सूचनाएं प्राप्त होती है। सूचनादाता पर अनुसन्धानकर्ता के उपस्थित होने पर जो प्रभाव पड़ता है तथा सूचना में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है, उससे भी इस विधि में बचाव हो जाता है। इस प्रकार प्रश्नावली द्वारा प्राप्त सूचनाएं विश्वसनीय, प्रामाणिक एवं पक्षपात-रहित होती हैं।

(8) **स्वयं-प्रशासित** (Self-Administered)—प्रश्नावली द्वारा सूचनाएं प्राप्त करने के लिए अनुसन्धानकर्ता को स्वयं क्षेत्र में उपस्थित नही होना पडता और न ही किसी प्रकार के संगठन तथा व्यवस्था की समस्या में उलझना पड़ता है। उसे अध्ययनकर्ताओं के चुनाव, प्रशिक्षण, संगठन एवं प्रशासन से मुक्ति मिल जाती है। डाक द्वारा भेजने के बाद प्रश्नावलियां भरकर स्वयं ही आ जाती है। इसलिए ही यह विधि स्वयं-प्रशासित एवं संगठित होती है।

(9) **सांख्यिकीय प्रयोग सम्भव** (Statistical Treatment Possible)—बोगार्डस ने लिखा है, "इस (प्रश्नावली) से प्रमापीकृत परिणाम प्राप्त होते हैं जिन्हें सारणीबद्ध तथा सांख्यिकीय रूप से प्रयोग में लाया जा सकता है।"[1] इस कथन से स्पष्ट है कि प्रश्नावली द्वारा प्राप्त सूचनाओं का वर्गीकरण, सारणीयन एवं श्रेणीबद्ध करना सरल है तथा परिणामो को प्राप्त करने के लिए उन पर सांख्यिकीय सूत्रों का प्रयोग किया जा सकता है।

(10) **तुलनात्मक अध्ययन** (Comparative Study)—प्रश्नावली विधि द्वारा विभिन्न अध्ययनकर्ताओं के परिणामों की परस्पर तुलना सरलता से की जा सकती है क्योंकि प्रश्नावली विधि में अनुसन्धान के समय अध्ययनकर्ता उपस्थित न होने से सूचनाएं सामान्यतः निष्पक्ष, समरूप एवं प्रामाणिक होती है जिनकी तुलना करना सम्भव है।

प्रश्नावली-विधि के दोष (सीमाएं)

प्रश्नावली विधि की अनेक उपयोगिताएं एवं लाभ होते हुए भी यह दोषों से पूरी तरह मुक्त नहीं है। इसकी कमियों को बताते हुए एफ. एल. विटनी ने लिखा है, "प्रश्नावली शायद सबसे दूषित प्रविधि है, क्योंकि इसमें आन्तरिक कमजोरियां मौजूद हैं।"[2] प्रश्नावली के प्रमुख दोष या सीमाएं निम्नांकित हैं :

(1) **अशिक्षितों के लिए अनुपयुक्त** (Inappropriate for Uneducated)—प्रश्नावली का प्रयोग केवल शिक्षित लोगों के लिए ही हो सकता है क्योंकि सूचनादाता को स्वयं उन्हें पढ़कर भरना होता है। हमारे देश में जहां अशिक्षा का प्रतिशत अधिक है, वहां इसका प्रयोग सीमित मात्रा में ही हो सकता है।

(2) **प्रत्युत्तर की समस्या** (Problem of Response)—प्रश्नावलियां बहुत कम संख्या में लौटकर आती हैं अथवा सूचनादाता उन्हें भरकर लौटाने में तत्परता नहीं बरतते हैं। इसका कारण यह है कि अधिकांश सूचनादाता लापरवाह, अनिच्छुक एवं आलसी होते हैं, कुछ सर्वेक्षण के उद्देश्य को नहीं समझ पाते, उनके पास समयाभाव होता है अथवा प्रश्नों का उत्तर देना नहीं जानते या व्यक्तिगत तथ्यों को स्वयं लिखना नहीं चाहते। ऐसी-स्थिति में बहुत कम प्रश्नावलियां ही पुनः प्राप्त होती है।

---

1 "It (Questionnaire) secures standardised results that can be tabulated and treated statistically." —E. S. Bogardus, *Sociology*, p. 549.

2 F. L. Whitney, *The Elements of Research*. p. 131.

(3) **अपूर्ण सूचनाएं (Incomplete Informations)**—कई बार प्रश्नावलियों में मुख्य प्रश्नो का उत्तर नही दिया जाता है। जब सूचनादाता प्रश्नों को नहीं समझ पाते हैं या गुप्त सूचनाएं नहीं देना चाहते है तो जान-बूझकर वे ऐसे प्रश्नों के उत्तरों को टाल जाते हैं अथवा लापरवाही एवं शीघ्रता से भरने पर प्रश्नों के छूट जाने की सम्भावना भी बनी रहती है। इस प्रकार प्रश्नावली-विधि द्वारा संकलित सूचनाएं अपर्याप्त एवं अपूर्ण होती हैं।

(4) **अस्वच्छ एवं अस्पष्ट लेख (Dirty and Illegible Writing)**—प्रश्नावलियों को सूचनादाता स्वयं भरते हैं और सभी लोगों का लेख सुन्दर नहीं होता। ऐसी स्थिति में प्राप्त उत्तरों को पढ़ना एवं समझना एक समस्या हो जाती है। उत्तरों में काट-छांट एवं पुनर्लेखन (Over-writing), गन्दे एवं घसीटमा लिखे अक्षर पढ़े नहीं जा सकते, अतः कई प्राप्त सूचनाएं उपयोगी नही हो पाती।

(5) **प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन असम्भव (Respresentative Sampling Impossible)**—प्रश्नावली विधि द्वारा अध्ययन के लिए चयनित निदर्शन क्षेत्र का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं करता है क्योंकि क्षेत्र में शिक्षित एवं अशिक्षित सभी प्रकार के लोग होते हैं, किन्तु प्रश्नावली का प्रयोग केवल शिक्षितों के लिए ही किया जा सकता है। अतः समग्र के सम्बन्ध में वैषयिक ढंग से सामान्यीकरण करना सम्भव नही हो पाता है।

(6) **भावात्मक प्रेरणा का अभाव (Lack of Emotional Stimulation)**—प्रश्नावली विधि में सूचनादाता एवं अनुसन्धानकर्ता में व्यक्तिगत एवं आमने-सामने का सम्पर्क नहीं हो पाता। अतः वे एक-दूसरे के विचारों को अच्छी तरह नहीं समझ सकते और न ही अनुसन्धानकर्ता सूचनादाता को प्रश्नावली भरने के लिए भावात्मक प्रेरणा ही दे सकता है। अतः यह एक औपचारिक विधि मात्र रह जाती है जिसके परिणामस्वरूप अपूर्ण एवं अपर्याप्त सूचनाएं प्राप्त होती हैं।

(7) **सार्वभौमिक प्रश्नों का निर्माण असम्भव (Impossibility of Uniform Questions)**—सूचनादाताओं के स्वभाव, विचारधारा, आदर्श, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि एवं शिक्षा के स्तर में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है। अतः ऐसी प्रश्नावली का निर्माण करना कठिन है जो सभी लोगों के लिए सार्थक एवं व्यावहारिक हो तथा जिसे समान रूप से सभी पर लागू किया जा सके। ऐसी स्थिति मे निष्कर्षों का भिन्न-भिन्न आना स्वाभाविक है।

(8) **गहन अध्ययन असम्भव (Deeper Study Impossible)**—प्रश्नावली द्वारा विषय का गहन अध्ययन नहीं किया जा सकता क्योंकि एक तो समय का अभाव होता है, दूसरा अनुसन्धानकर्ता की अनुपस्थिति के कारण खोद-खोदकर सूचनाएं नही पूछी जा सकती और न ही भावात्मक प्रेरणा दी जा सकती है। अतः इसके द्वारा केवल मोटी-मोटी बातें एवं सतही सूचनाएं ही एकत्रित की जा सकती हैं, गहन नहीं।

(9) **विश्वसनीयता का अभाव (Lack of Reliability)**—प्रश्नावली द्वारा प्राप्त सूचनाएं पूर्ण विश्वसनीय नही मानी जा सकतीं क्योंकि अनुसन्धानकर्ता की अनुपस्थिति के कारण कई बार सूचनादाता प्रश्नों को समझ ही नहीं पाते या उनका गलत अर्थ लगाते हैं, ऐसी स्थिति मे प्राप्त उत्तर प्रामाणिक एवं विश्वसनीय नहीं कहे जा सकते।

(10) **उत्तर लिखने में अनुसन्धानकर्ता की सहायता का अभाव (Lack of assistance of the investigator in answerng the Questions)**—प्रश्नावली विधि में सूचनादाता कई बार कुछ प्रश्नों को समझने में असमर्थ रहता है जिसे समझाने के लिए वहां अनुसन्धानकर्ता

नहीं होता है। ऐसी स्थिति में उन प्रश्नों के उत्तर या तो छोड़ दिये जाते हैं या गलत लिख दिये जाते हैं।

प्रश्नावली की कमियों का उल्लेख करते हुए **सीजर** ने लिखा है, "प्रश्नावली द्वारा प्राप्त उत्तरों से यह पता लगना असम्भव है कि कौनसा उत्तर सूचनादाता का लापरवाहीपूर्ण अनुमान है और कौनसा जान-बूझकर दी गई गलत सूचना।" **पार्टेन** ने लिखा है, "इसमें सन्देह नही कि सर्वोत्तम प्रश्नावली की अपेक्षा उत्तम साक्षात्कार के द्वारा अधिक गहन अध्ययन किया जा सकता है।" प्रश्नावली विधि की कुछ कमियां होने पर भी सीमित साधनों में विशाल क्षेत्र के अध्ययन हेतु इसका प्रयोग काफी किया जाता है। **एल्बर्ट एलिस** का मत है कि प्रेम तथा वैवाहिक सम्बन्धों के बारे में अध्ययनों में प्रश्नावली विधि साक्षात्कार की भांति ही सन्तोषप्रद रही है। **गुडे एवं हाट** ने भी लिखा है, "अनेक कमियों के होते हुए भी, स्वयं प्रशासित डाक प्रेषित प्रश्नावली अनुसन्धान में अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होती है।" यदि प्रश्नावली में प्रश्नों का निर्माण तथा निदर्शन का चुनाव उपयुक्त एवं समुचित रूप से किया जाय तो इसके द्वारा प्राप्त सूचनाएं निश्चय ही प्रामाणिक एवं विश्वसनीय होंगी।

प्रश्नावलियों के उदाहरण

किसी भी प्रश्नावली के दो प्रमुख भाग होते है, प्रथम भाग में सूचनादाता के बारे में प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त की जाती है, जैसे उसका नाम, पता, आयु, आय, शिक्षा, जाति, धर्म, व्यवसाय, आदि। द्वितीय भाग में अध्ययन समस्या के बारे में प्रश्न किये जाते हैं। हम यहां नमूने के लिए दो प्रश्नावलियां प्रस्तुत कर रहे हैं, एक अन्तर्जातीय विवाह पर एवं दूसरी बाल-अपराध पर।

अन्तरजातीय विवाह के अध्ययन हेतु प्रश्नावली

1. नाम .....
2. स्थायी पता .....
3. आयु .....
4. जाति .....
5. धर्म .....
6. शिक्षा .....
7. व्यवसाय .....
8. मासिक आय .....
9. वैवाहिक स्थिति अविवाहित/विवाहित/विधवा/विधुर/तलाकशुदा
10. आपके परिवार में कितने सदस्य हैं?

क्र सं.	नाम	सूचनादाता से सम्बन्ध	आयु	शिक्षा	आय

11. आपकी राय में विवाह क्या है?
    (अ) एक अटूट धार्मिक बन्धन (ब) सामाजिक समझौता (स) मैत्री सम्बन्ध।
12. आप किस प्रकार के विवाह के पक्ष में हैं?
    (अ) अपनी ही उप-जाति में (ब) अन्तर्जातीय

13. आप अपनी ही जाति में विवाह को उचित क्यों मानते हैं?

14 आप अन्तरजातीय विवाह को उचित क्यों मानते हैं?

15 आपकी राय मे विवाह के समय वर-वधू की आयु क्या होनी चाहिए?
वर की आयु ..... वधू की आयु .....

16 आपके मतानुसार वैवाहिक जीवन-साथी का चुनाव किनके द्वारा किया जाना चाहिए ?
(अ) माता-पिता तथा सम्बन्धियो द्वारा (ब) स्वयं लड़के-लड़कियों द्वारा
(स) माता-पिता एवं लड़के-लड़कियों द्वारा।

17 जीवन-साथी का चुनाव करते समय आप निम्नांकित में से किन विशेषताओं को महत्व देगे ? (अपनी रुचि वरीयता के आधार पर प्रकट कीजिए)
(अ) पारिवारिक स्थिति (ब) स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य (स) चरित्र (द) शिक्षा
(य) आयु (र) व्यवसाय (ल) आय (व) अन्य कोई

18. आप किस प्रकार के अन्तरजातीय विवाह के पक्ष में हैं ?
(अ) अपनी ही समान जातियों मे (ब) अपने से उच्च जातियों मे
(स) अस्पृश्य-जातियों के अतिरिक्त जातियों में (द) किसी भी जाति में

19. आप अन्तरजातीय विवाह किन परिस्थितियों में स्वीकार करेंगे?
माता-पिता की स्वीकृति मिलने पर/न मिलने पर भी

20. क्या आप जाति-व्यवस्था को समाप्त करने के पक्ष में हैं?
हां/नही

स्थान .....
दिनाक .....
उत्तरदाता के हस्ताक्षर

बाल-अपराधियों के अध्ययन हेतु प्रश्नावली

1. नाम .....
2. स्थायी पता .....
3. आयु .....
4. जाति .....
5. धर्म .....
6 शिक्षा .....
7. व्यवसाय .....
8. मासिक आय .....
9. वैवाहिक स्थिति
10. आपके परिवार का आकार क्या है?
अविवाहित/विवाहित/विधवा/विधुर/तलाकशुदा।

क्र सं.	नाम	सूचनादाता से सम्बन्ध	आयु	शिक्षा	आय

11. आप किस प्रकार के अपराध में पकडे गये हैं? .....
12. आपने अपराध करने की आदत सर्वप्रथम किससे ग्रहण की ?
    (अ) परिवार के सदस्यों से (ब) पड़ोसियो से (स) मित्रों से (द) फिल्मों से (य) उपन्यासों से (र) अन्य।
13. क्या आपके परिवार में किसी ने अपराध किया है? हां/नही
14. यदि हां तो किसने .....
15. आपके माता-पिता के आपसी सम्बन्ध कैसे है?
    (अ) मधुर (ब) सामान्य (स) तनावपूर्ण।
16. क्या परिवार में अन्य बच्चों की तुलना में आपके साथ पक्षपात किया जाता है? हां/नहीं
17. यदि हां तो किस प्रकार का? ....
18. परिवार में आप पर किस प्रकार का नियन्त्रण रखा जाता है?
    (अ) कठोर (ब) सामान्य (स) शिथिल।
19. क्या आपके परिवार की आय सभी सदस्यो के भरण-पोषण के लिए पर्याप्त है? हां/नहीं
20. यदि नहीं तो कमी को पूरा करने के लिए क्या तरीका अपनाया जाता है? .....
21. क्या आपके परिवार के सदस्यों के रहने के लिए पर्याप्त व्यवस्था है ? .....
22. आप मनोरंजन के लिए किन साधनों का उपयोग करते हैं ? .....
23. क्या आप मनोरंजन के प्रयुक्त साधन से सन्तुष्ट हैं? हां/नहीं
24. आपके स्कूल का वातावरण कैसा है?
    (अ) सन्तोषजनक (ब) बहुत अच्छा (स) खराब।
25. आप नगर के किस क्षेत्र में निवास करते हैं? .....
26. आपकी राय में बाल-अपराध को रोकने के लिए क्या उपाय अपनाये जाने चाहिए?

प्रश्न

1. अन्तर्जातीय विवाह के प्रति विद्यार्थियों के मतों को जानने के लिए लगभग पन्द्रह प्रश्नों की एक प्रश्नावली तैयार कीजिए।
2. प्रश्नावली की रचना करते समय आपको कौन-कौनसी बातों का ध्यान रखना चाहिए? प्रश्नावली पद्धति की सीमाएं बताइए। (राजस्थान, 1994)
3. प्रश्नावली से आप क्या समझते हैं? प्रश्नावली व अनुसूची में अन्तर स्पष्ट कीजिए। (राजस्थान, '1992, 96, 97)
4. प्रश्नावली एवं अनुसूची को परिभाषित कीजिए। इन दोनों में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
5. प्रश्नावली में उत्तर प्राप्त न होने की समस्या की विवेचना कीजिए। (अजमेर, 1997)

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए :
   (i) असंरचित प्रश्नावली।
   (ii) संरचित प्रश्नावली।
   (iii) सहगामी पत्र और अनुगामी पत्र।

(iv) प्रश्नावली का पूर्व-परीक्षण।
(v) प्रश्नावलियों के प्रकार।
(vi) प्रश्नावली और अनुसूची में अन्तर। (अजमेर, 1994)
(vii) बन्द प्रश्नावली। (अजमेर, 1990)
(viii) प्रश्नावली तकनीक के गुण। (अजमेर, 1993)
(ix) पूर्व-परीक्षण। (अजमेर, 1995)
(x) प्रश्नावली से उत्तर प्राप्त न होने की समस्याओं की व्याख्या कीजिए। (अजमेर, 1998)
(xi) प्रश्नावली की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता। (अजमेर, 1998)
(xii) प्रश्नावली का भौतिक पक्ष। (अजमेर, 1999)
(xiii) प्रश्नावली की सीमाएं।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित कथनो में से सत्य/असत्य कथन बताइए :
(i) प्रश्नावली में प्रश्नो के उत्तर उत्तरदाता स्वयं भरता है।
(ii) प्रश्नावलियां डाक द्वारा भेजी जाती है।
(iii) प्रश्नावली विधि अपेक्षतया एक खर्चीली विधि है।
(iv) प्रश्नावली का प्रयोग सीमित क्षेत्र के अध्ययन के लिए किया जाता है।
(v) प्रश्नावली का प्रयोग केवल अशिक्षितों के अध्ययन के लिए ही किया जाता है।
(vi) प्रश्नावली के साथ भेजे जाने वाले पत्र को सहगामी पत्र कहते हैं।
(vii) प्रश्नावली मे अनुसन्धानकर्ता उत्तरदाता को भावात्मक प्रेरणा दे सकता है।
(viii) प्रश्नावली में सूचना संकलन में अनुसूची की अपेक्षा कम समय लगता है।

2. निम्नांकित प्रश्नों के उत्तरों में चार विकल्प दिए गए हैं, सही विकल्प का चयन कीजिए :
(i) प्रश्नावली द्वारा किस प्रकार के तथ्य संकलित किए जाते हैं :
(अ) प्राथमिक (ब) द्वैतीयक (स) तृतीयक (द) उपर्युक्त सभी
(ii) प्रश्नावली सूचना संकलन की विधि है :
(अ) भावात्मक (ब) प्रत्यक्ष (स) अप्रत्यक्ष (द) खर्चीली
(iii) प्रश्नावली का प्रयोग किस प्रकार के उत्तरदाताओ के लिए किया जाता है :
(अ) ग्रामीण (ब) नगरीय (स) शिक्षित (द) अशिक्षित
(iv) प्रश्नावली को भरता है :
(अ) अनुसन्धानकर्ता (ब) उत्तरदाता (स) मित्र (द) इनमें से कोई भी
(v) बन्द प्रश्नावली में उत्तर के विकल्प होते है :
(अ) चित्रमय (ब) असीमित (स) सीमित (द) उपर्युक्त सभी प्रकार के

3. निम्नांकित पुस्तकों के लेखको के नाम बताइए :
(i) फैक्ट फाइन्डिंग विथ रूरल पीपुल, (ii) मेथड्स इन सोशियल रिसर्च, (iii) सोशियल रिसर्च, (iv) साइन्टिफिक सोशियल सर्वे एण्ड रिसर्च, (v) ऐलिमेन्ट्स ऑफ स्टेटिसटिक्स, (vi) द एलिमेन्ट्स ऑफ रिसर्च

[उत्तर—1. सत्य कथन—i, ii, vi, viii शेष कथन असत्य हैं।
2. (i) अ, (ii) स, (iii) स, (iv) ब, (v) स।
3 (i) सिन पाओ येग, (ii) गुडे एव हाट, (iii) जी. ए. लुण्डबर्ग, (iv) पी. वी. यंग, (v) ए. एल. बाउले, (vi) एफ. एल. विटने।]

13

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति (एकल अध्ययन पद्धति)

[CASE STUDY METHOD]

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति गुणात्मक पद्धति का ही एक रूप है जिसमें किसी व्यक्ति, संस्था या समुदाय के बारे में पूर्ण एवं गहन जानकारी प्राप्त की जाती है। वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग अति प्राचीन समय से ही किया जा रहा है। प्राचीन समय में इतिहासकार प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरुषों के जीवन वृत्तान्त एवं महत्वपूर्ण घटनाओं के उल्लेख के लिए करते थे। समाजशास्त्र में **वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति का प्रयोग सर्वप्रथम हरबर्ट स्पेन्सर ने किया था**, किन्तु व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक रूप में इसका प्रयोग करने का **श्रेय चार्ल्स लीप्ले** को है। लीप्ले ने फ्रांस में परिवारों के आय-व्यय के बजट के अध्ययन के लिए इसी विधि का सहारा लिया।

आधुनिक समय में वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति का प्रयोग मनोचिकित्सकों द्वारा मानसिक रोगियों, अपराधियों तथा उद्दण्ड एवं अनुशासनहीन युवकों के उपचार हेतु किया जाता है। समाज-वैज्ञानिकों ने इस विधि का प्रयोग समाज के प्रतिभाशाली व्यक्तियों, नेताओं, कलाकारों, लेखकों, कवियों, उपन्यासकारों एवं समाज-सुधारकों के सम्पूर्ण जीवन-वृत्तान्त का अध्ययन करने तथा सांस्कृतिक एवं सामाजिक समूहों; जैसे परिवार, राजनैतिक दल, गैंग, जनजाति तथा किसी संस्था जैसे अस्पताल, गिरजाघर, औद्योगिक संगठन, सरकारी विभाग एवं लघु समुदायों के अध्ययन में बहुत किया है। वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति में अध्ययन की जाने वाली इकाई के व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित गहनतम एवं गुणात्मक जानकारी प्राप्त की जाती है।

एम. ई. वाटसन के अनुसार जब हम किसी इकाई के विशेष पहलू अथवा उसके सम्पूर्ण क्षेत्र तथा सामाजिक अन्तर्सम्बन्धों को सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में रखकर उससे सम्बन्धित तथ्यों का संकलन करते हैं तो उसे वैयक्तिक अध्ययन कहते हैं। चूंकि इस विधि के द्वारा मानव व्यवहार का सूक्ष्म, गहन, विशिष्ट और विस्तृत विवरण प्राप्त किया जाता है, इसी कारण **बर्गेस** ने इस विधि को **सामाजिक सूक्ष्मदर्शक यन्त्र** (Social Microscope) कहा है। हम यहां वैयक्तिक पद्धति के विभिन्न पक्षों पर विचार करेंगे।

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति : अर्थ एवं परिभाषा (Case Study Method : Meaning and Definition)

विभिन्न विद्वानों ने वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति को इस प्रकार परिभाषित किया है :

बीसेन्ज और बीसेन्ज के अनुसार, "वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति गुणात्मक विश्लेषण का एक रूप है, जिसमे एक व्यक्ति, एक परिस्थिति या संस्था का सावधानीपूर्वक तथा पूर्ण विश्लेषण किया जाता है।"[1] **श्रीमती वी. पी. यंग** के शब्दों मे, "वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति किसी एक सामाजिक इकाई चाहे वह एक व्यक्ति, एक परिवार, एक संस्था, एक सांस्कृतिक समूह अथवा सम्पूर्ण समुदाय क्यो न हो, के जीवन की खोज तथा विश्लेषण की पद्धति है।"[2]

गिडिंग्ज के अनुसार, "अध्ययन किया जाने वाला वैयक्तिक विषय केवल एक व्यक्ति अथवा उसके जीवन की एक घटना अथवा विचारपूर्ण दृष्टि से एक राष्ट्र या इतिहास का एक युग भी हो सकता है।"[3]

ओडम तथा जोचर के अनुसार, "वैयक्तिक अध्ययन एक प्रविधि है जिसके द्वारा प्रत्येक वैयक्तिक कारक चाहे वह संस्था हो अथवा एक व्यक्ति या समूह के जीवन की पूर्ण घटना हो, का विश्लेषण उस समूह की किसी भी अन्य इकाई के सन्दर्भ में किया जाता है।"[4]

तिन पाओ यंग के शब्दों में, "वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति को किसी व्यक्ति के सूक्ष्म, गहन एव सम्पूर्ण अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें अन्वेषणकर्ता अपनी समस्त क्षमताओं एवं पद्धतियों का प्रयोग करता है या यह किसी व्यक्ति के सम्बन्ध मे पर्याप्त सूचनाओं का व्यवस्थित संकलन है ताकि यह जाना जा सके कि वह समाज की इकाई के रूप में किस तरह कार्य करता है।"[5]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि **वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत किसी एक सामाजिक इकाई से सम्बन्धित सभी पक्षों का व्यापक, सूक्ष्म तथा गहन अध्ययन किया जाता है।** अध्ययन की जाने वाली यह सामाजिक इकाई कोई भी व्यक्ति, समूह, संस्था, समुदाय, जाति, राष्ट्र, सांस्कृतिक-क्षेत्र अथवा इतिहास का एक युग भी हो सकता है।

वैयक्तिक अध्ययन की विशेषताएं (Characterstics of Case Study)

विभिन्न परिभाषाओं से वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की निम्नांकित विशेषताएं प्रकट होती है :

(1) अध्ययन की एक विशिष्ट इकाई (A Specific Unit of Study)—वैयक्तिक अध्ययन पद्धति मे अनुसन्धानकर्ता किसी एक विशिष्ट इकाई का अध्ययन करता है। यह इकाई कोई व्यक्ति, परिवार, समूह संस्था, समुदाय, जाति, उपजाति अथवा कोई एक विशिष्ट समस्या अथवा इतिहास का कोई एक युग भी हो सकता है। इस सन्दर्भ मे एक बात महत्वपूर्ण है कि अध्ययन की जाने वाली इकाई छोटी होने पर उसका अध्ययन गहन एवं सुविधापूर्वक किया जा सकता है।

---

1 "The Case study is a form of qualitatuve analysis involving the very careful and complete observation of a person, a situation or an institution."
—Biesanz and Biesanz, *Modern Society*, p 11.

2 "Case Study is a method of exploring and analysing the life of a social unit, be that unit a person, a family, an institution, a cultural group or even entire community."
—P V. Young, *Scientific Social Survey and Research*, p. 229

3 F. H. Giddings, *Scientific Study of Human Society*, p. 95.

4 H. Odum and K. Jocher, *An Introduction to Social Research*, p. 229.

5 H. P. Yang, *Foct Findings with Rural People*, p. 57.

(2) **गहन अध्ययन** (Intensive Study)—वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत इकाई के बारे में सूक्ष्म एवं गहन जानकारी प्राप्त की जाती है। सम्बन्धित इकाई का उसके भूतकाल से लेकर वर्तमान तक का काल-क्रम में अध्ययन किया जाता है। ऐसे अध्ययनों में इकाई का ऐतिहासिक अध्ययन होने के कारण समय भी अधिक लगता है और धन भी। गहन अध्ययन के लिए समस्या के सभी पक्षों एवं घटनाओं का सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है।

(3) **सम्पूर्ण अध्ययन** (Whole Study)—वैयक्तिक अध्ययन में किसी इकाई अथवा घटना के किसी एक पक्ष का नहीं, वरन् उसके समस्त पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। इसमें इकाई के समस्त जीवन को ही अध्ययन का केन्द्र बनाया जाता है। इसमें व्यक्ति या संस्था के सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, भौगोलिक एवं दार्शनिक सभी पक्षों का अध्ययन किया जाता है। **गुडे एवं हाट** ने भी लिखा है, "यह ऐसी विधि है जो किसी सामाजिक इकाई को सम्पूर्णता में देखती है।" **श्रीमती पी. वी. यंग** ने भी लिखा है, "इसमें वैयक्तिक तथ्यों को उनके सम्पूर्ण जीवन-चक्र के रूप मे संकलित किया जाता है।"

(4) **गुणात्मक अध्ययन** (Qualitative Study)—इस विधि में इकाई के सन्दर्भ में गुणात्मक तथ्यों का अध्ययन किया जाता है न कि संख्यात्मक का। दूसरे शब्दों मे इकाई के बारे में आंकड़ों और संख्या पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता, निष्कर्ष भी संख्याओं में प्रकट नहीं किये जाते। इसमें इकाई का जीवन-इतिहास और वर्णनात्मक उल्लेख तैयार किया जाता है। इसमें व्यक्ति के जीवन की घटना, प्रेरक तत्वों, आशाओं एवं आकांक्षाओं, आदि का अध्ययन किया जाता है जिन्हें संख्याओं में प्रकट नहीं किया जा सकता।

(5) **कारकों का अध्ययन** (Study of Casual Factors)—वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में किसी इकाई या समस्या को प्रभावित करने वाले कारकों एवं परिस्थितियों का पता लगाया जाता है। किसी ऐतिहासिक घटना के घटित होने के पीछे कौन-कौन से कारक उत्तरदायी रहे हैं, उनको ज्ञात किया जाता है। व्यक्ति के जीवन को एक विशिष्ट मोड़ देने में कौन से कारक प्रेरणादायक रहे हैं, उनका पता लगाना इस विधि की प्रमुख विशेषता है।

(6) **सम्पूर्ण पद्धतियों का प्रयोग** (Use of all Methods)—इस अध्ययन विधि में सम्पूर्ण अध्ययन पद्धतियों का सहारा लिया जाता है जिससे कि अध्ययन में गहनता आती है तथा अनुसन्धानकर्ता की कुशलता में भी वृद्धि होती है। **गुडे एवं हाट** लिखते हैं, "विभिन्न प्रकार के ऐतिहासिक तथ्यों को प्राप्त करने में वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के अन्तर्गत अध्ययनकर्ता संगठन के द्वारा प्रयोग में ली जाने वाली सभी प्रविधियों एवं साधनों जैसे गहन साक्षात्कार, प्रश्नावली, आत्म-इतिहास, प्रलेख अन्य व्यक्तियों के द्वारा व्यक्तिगत अध्ययन, पत्र, आदि का प्रयोग कर सकता है।"

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की आधारभूत मान्यताएं (Basic Assumptions of Case Study Method)

वैयक्तिक अध्ययन मे एक अथवा कुछ इकाइयों के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों को समग्र (universe) पर लागू किया जाता है अर्थात् विशेष अध्ययनों के आधार पर सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते हैं। इसका कारण है वैयक्तिक अध्ययन की कुछ आधारभूत मान्यताएं। ये मान्यताएं निम्नांकित हैं :

(1) **मानव व्यवहार की समानता** (Similarity of Human Behaviour)—वैयक्तिक अध्ययन की यह मान्यता है कि मानव व्यवहार में मौलिक एकता पायी जाती है।

में ऊपरी और वाह्य असमानताएं होने पर भी उनकी मूल प्रकृति, प्रवृत्तियों एवं प्रेरक शक्तियों मे समानता पायी जाती है। समान स्थितियों में सभी मनुष्यों का व्यवहार एक जैसा होता है। उद्विकासवादियों की भी मान्यता है कि मानव जाति में मानसिक समानता पायी जाती है। इसी आधार पर वैयक्तिक अध्ययन द्वारा निकाले गये निष्कर्ष सभी पर लागू किये जाते हैं।

(2) **सामाजिक घटनाओं की जटिलता** (Complexity of Social Phenomena)—सामाजिक जीवन की घटनाएं जटिल होती हैं और मानव के परिवर्तनशील स्वभाव के कारण उन्हे समझना कठिन है। मानव व्यवहार के अमूर्त होने के कारण उसे ज्ञात करना एक कठिन कार्य है। किन्तु मानव व्यवहार की जटिलता का अध्ययन वैयक्तिक अध्ययन विधि द्वारा किया जा सकता है। इस दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण विधि है।

(3) **समय तत्व का प्रभाव** (Influence of time Factor)—मानवीय व्यवहार तथा किसी घटना के अध्ययन में समय भी एक महत्वपूर्ण तत्व है। समाज में जो कुछ भी आज घटित हो रहा है, वह भूतकाल की अनेक घटनाओं एवं प्रभावों का प्रतिफल है। किसी भी घटना या परिस्थिति के पीछे अतीत का इतिहास छिपा होता है। अत: किसी घटना को समझ के लिए उसके पूर्व की घटनाओं एवं इतिहासों को जानना आवश्यक है। वैयक्तिक अध्ययन में किसी घटना को काल-क्रम में कार्य-कारण सम्बन्धो के आधार पर देखा जाता है। उदाहरण के लिए, किसी व्यक्ति के अपराधी, डाकू, नेता, अभिनेता, सामाजिक कार्यकर्ता वनने में समय-समय पर किन कारकों का प्रभाव पड़ा है, इसे ज्ञात किया जाता है।

(4) **परिस्थितियों की पुनरावृत्ति** (Repetuon of Conditions)—मानव व्यवहार परिस्थितियों से प्रभावित होता है। एक ही परिस्थिति वार-वार घटित होती है और एक इकाई के सम्पूर्ण अध्ययन द्वारा यह ज्ञात किया जा सकता है कि मनुष्य एक ही परिस्थिति में किस प्रकार का व्यवहार करता है। एक ही परिस्थिति अन्य लोगों के जीवन में भी वार-बार आ सकती है। अत: उसके प्रभाव का अनुमान एक ही इकाई का सूक्ष्म एवं गहन अध्ययन करके लगाया जा सकता है।

(5) **सम्पूर्ण अध्ययन** (Whole Study)—वैयक्तिक अध्ययन पद्धति में किसी एक इकाई अथवा घटना के किसी एक पक्ष का नही वरन् उससे सम्बन्धित सभी पक्षों का अध्ययन किया जाता है। ऐसे अध्ययन में यद्यपि समय अधिक लगता है, किन्तु जीवन की सम्पूर्णता में ही वास्तविक अध्ययन सम्भव हो पाता है।

वैयक्तिक अध्ययन के प्रकार (Types of Case Study)

अध्ययन की प्रकृति के आधार पर वैयक्तिक अध्ययन को निम्नांकित दो श्रेणियों मे विभक्त किया जा सकता है :

(1) **व्यक्ति का वैयक्तिक अध्ययन** (Case study of an Individual)—इस प्रकार के अध्ययन में एक व्यक्ति के बारे में समस्त सूचनाएं एकत्रित की जाती हैं। इसमें उसके जीवन का प्रारम्भ से लेकर अब तक के जीवन के इतिहास का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार के अध्ययन में उन सभी घटनाओं, परिस्थितियों, एवं पृष्ठभूमि की जानकारी प्राप्त की जाती है जिन्होने व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इस विधि में व्यक्ति के परिवार में उसके सदस्यों, पड़ोस, मित्र-मण्डली, पत्र, डायरी, आत्मकथा, लेख, संस्मरण, जीवन-इतिहास, आदि स्रोतों से जानकारी प्राप्त की जाती है। इस प्रकार इस विधि में व्यक्ति के सम्पूर्ण सामाजिक जीवन तथा पृष्ठभूमि एवं प्रभावक कारकों का अध्ययन कर निष्कर्ष निकाले जाते है।

(2) **समुदाय का वैयक्तिक अध्ययन** (Case study of a Community)—इसके अन्तर्गत किसी समूह, संस्था, जाति या समुदाय का एक इकाई के रूप में अध्ययन किया जाता है। श्रीमती यंग का भी मत है कि वैयक्तिक अध्ययन में सम्पूर्ण समुदाय की खोज की जाती है। इस प्रकार के अध्ययन में बौद्धिक कुशलता, अनुभव एवं सतर्कता की आवश्यकता होती है। एक समुदाय का वैयक्तिक अध्ययन उसकी आन्तरिक स्थिति का पूर्ण रूप से अध्ययन हेतु सामग्री संकलन की व्यवस्थित पद्धति है। इसके लिए उन्ही साधनों का प्रयोग किया जाता है जो साधन एक व्यक्ति के वैयक्तिक अध्ययन के लिए प्रयुक्त किये जाते है।

वैयक्तिक अध्ययन की प्रक्रिया (प्रणाली)
(PROCEDURE OF CASE STUDY)

वैयक्तिक अध्ययन एक सुनियोजित एवं व्यवस्थित अध्ययन है। इसमें अध्ययन की जाने वाली इकाई के बारे में सूक्ष्म, गहन एवं विस्तृत जानकारी प्राप्त की जाती है। इस विधि से अध्ययन करने के लिए निम्नलिखित चरणों (प्रक्रिया) से गुजरना पड़ता है :

(1) **समस्या का विवरण** (Statement of the Problem)—इस पद्धति के अन्तर्गत सर्वप्रथम समस्या के प्रत्येक पक्ष की स्पष्ट व्याख्या की जाती है, उसके बारे में भूत एवं वर्तमान की समस्त सूचनाओं का संकलन किया जाता है। समस्या के बारे में जिन पक्षों की व्याख्या करनी होती है, उनका पहले से ही निर्धारण कर लिया जाता है। समस्या का वर्णन और उसकी व्याख्या इस विधि का प्रथम सोपान है। इस चरण में निम्नांकित बातों पर विशेष ध्यान दिया जाता है—

(i) **अध्ययन समस्या का चयन** (Selection of Cases)—इसके अन्तर्गत सर्वप्रथम यह तय किया जाता है कि किन व्यक्तिगत विषयों पर अध्ययन किया जाएगा। ये व्यक्तिगत विषय तीन प्रकार के हो सकते है (अ) साधारण, (ब) विशेष, तथा (स) असाधारण।

(ii) **इकाइयों के प्रकार एवं संख्या का निर्धारण** (Determination of types and number of Units)—अध्ययन विषय के चयन के बाद अध्ययन के लिए इकाइयों की संख्या एवं उनके प्रकारों को तय किया जाता है। यह भी तय किया जाता है कि अध्ययन की इकाई व्यक्ति, परिवार, समूह, संस्था अथवा समुदाय में से क्या होगी और इनकी कितनी संख्या होगी।

(iii) **विश्लेषण का क्षेत्र** (Scope of Analysis)—इकाइयों की संख्या निर्धारित करने के बाद यह तय किया जाता है कि समस्या के किन-किन पक्षों का अध्ययन किया जाएगा। इसके अन्तर्गत इकाई को प्रभावित करने वाले कारकों और उनसे प्रभावित होने वाले तत्वों का भी विश्लेषण किया जाता है।

(2) **घटनाओं का काल-क्रम**—समस्या की विवेचना के बाद विभिन्न घटनाओं के घटित [illegible] या [illegible] को समझा जाता है।

(3) **निर्धारक कारक** (Determinant Factors)—वैयक्तिक अध्ययन में उन कारकों का भी अध्ययन किया जाता है जो किसी घटना के घटित होने के लिए उत्तरदायी रहे हैं। ये कारक दो प्रकार के होते हैं :

(i) **प्रमुख कारक**—ये वे कारक हैं जो किसी घटना के घटित होने के लिए मूल रूप से उत्तरदायी रहे है। उदाहरण के लिए, व्यक्ति को अपराधी बनाने के लिए उसके साथियों का योगदान अथवा गरीबी प्रमुख कारक हो सकता है।

(ii) **सहायक कारक**—ये वे कारक हैं जो प्रमुख कारकों की सहायता करते हैं। उदाहरण के लिए, व्यक्ति को अपराधी बनाने मे गरीबी के अतिरिक्त पुलिस का अत्याचार, माता-पिता का उपेक्षापूर्ण व्यवहार एवं मानसिक तनाव, आदि सहायक कारक के रूप में कार्य कर सकते है।

(4) **विश्लेषण एवं निष्कर्ष** (Analysis and Conclusion)—वैयक्तिक अध्ययन की पद्धति का अन्तिम चरण संकलित तथ्यों एवं सूचनाओं के आधार पर घटना का विश्लेषण करना और निष्कर्ष निकालना है। निष्कर्षों के आधार पर ही सामान्यीकरण किया जाता है। विश्लेषण के दौरान घटना के बारे में कार्य-कारण सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। इसमे तथ्यों का वर्गीकरण, संकेतीकरण एवं सारणीयन किया जाता है। साथ ही समस्या का निदान और उपचार भी प्रस्तुत किया जाता है। इसमें अध्ययनकर्ता द्वारा अध्ययन की कमियों एवं भविष्य की सम्भावनाओं का भी उल्लेख किया जाना चाहिए।

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के यन्त्र एवं प्रविधियां (Tools and Techniques of Case Study Method)

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के द्वारा किसी एक सामाजिक इकाई का गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है। इसके लिए सूचनाओं के संकलन हेतु अनेक यन्त्रों एवं प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है, इनमें से प्रमुख हैं—डायरियां, पत्र, जीवन-इतिहास तथा प्रलेख। हम यहां इन सभी का संक्षिप्त में उल्लेख करेंगे।

(1) **डायरी** (Diaries)—कई व्यक्तियों को अपने जीवन की दैनिक घटनाओं को डायरी मे लिखने की आदत होती है। डायरियों से हमें लोगों के जीवन की गोपनीय बातों की जानकारी मिलती है, साथ ही व्यक्ति के जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का काल-क्रम के अनुसार विवेचन प्राप्त होता है। डायरी से हमें प्रमुख घटनाओं का वर्णन, आय-व्यय के आंकड़े, महत्वपूर्ण पते एवं विभिन्न विषयों पर व्यक्ति के विचार, आदि ज्ञात होते हैं। ये व्यक्ति के व्यक्तिगत अनुभवों को भी प्रकट करते है। साथ ही इनसे व्यक्ति के सामाजिक सम्पर्क का ब्यौरा भी मिलता है। डायरियों द्वारा हमें जो जानकारी प्राप्त होती है, उसे हम साक्षात्कार एवं अन्य विधियों द्वारा भी ज्ञात नही कर सकते। इस प्रकार डायरियां व्यक्ति के जीवन के वास्तविक तथ्यों को भी उजागर करती है। इनके द्वारा व्यक्ति की भावनाओ, गोपनीय तथ्यों, किसी विषय के बारे मे प्रतिक्रियाओं, संकल्पों, मनोवृत्तियों, सफलताओं तथा विफलताओं की भी जानकारी मिलती है।

(2) **पत्र** (Letters)—पत्रों के माध्यम से व्यक्ति अपनी भावनाओं एवं विचारों का आदान-प्रदान करते है। पत्र कई बार व्यक्ति के एक विषय पर उसके दृष्टिकोण का चित्रण करते है। पत्रों के माध्यम से एक व्यक्ति के दूसरे व्यक्ति के साथ सम्बन्धों का ज्ञान होता है। पत्रो के अन्तर्गत व्यक्ति के जीवन की अन्तरंग सामग्री भी उपलब्ध होती है जो कुछ निश्चित तथ्यों पर प्रकाश डालती है। पत्रों में जीवन की कुछ वास्तविक घटनाएं भी लिखी जाती हैं। पंडित नेहरू ने श्रीमती इन्दिरा गांधी को पत्रों के माध्यम से ही भारत और विश्व इतिहास की अनेक घटनाओं का ज्ञान कराया था। ये पत्र पहले "पिता के पत्र पुत्री के नाम" और बाद में "विश्व इतिहास की एक झलक" शीर्षक से पुस्तकों के रूप में प्रकाशित हुए। पत्रों

के माध्यम से हम व्यक्ति के मनोभावों, मित्रता, शत्रुता, प्रेम, घृणा, आशा, निराशा, जीवन के मूल्य, तनाव, विश्वास और महत्वाकांक्षाओं को ज्ञात कर सकते हैं। महापुरुषों के पत्र उनकी मृत्यु के पश्चात् भी प्राचीन संग्रहालयों में उपलब्ध होते हैं। यदि हम व्यक्ति के जीवन के बारे में वास्तविक एवं महत्वपूर्ण अनुभवों एवं विचारों को जानना चाहते हैं तो उसके द्वारा लिखे हुए पत्र एक महत्वपूर्ण साधन है। जीवन की कटु अनुभूतियों एवं मधुर स्मृतियों की वास्तविक एवं विश्वसनीय जानकारी हमें पत्रों के माध्यम से ही मिल सकती है।

(3) **जीवन-इतिहास** (Life History)—वैयक्तिक अध्ययन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण सूचना स्रोत, जीवन-इतिहास है। इसके अन्तर्गत जीवन से सम्बन्धित लिखित तथ्य होते हैं जिनमें घटनाओं की शृंखला, उनका समूहों तथा सांस्कृतिक मूल्यों के साथ सम्बन्ध ज्ञात होता है। इसमें व्यक्ति स्वयं अपनी भाषा में अपने जीवन की घटनाओं तथा अनुभवों का वर्णन करता है। इसमें जीवन के विकास का ऐतिहासिक वर्णन मिलता है। जीवन-इतिहास को परिभाषित करते हुए **जॉन मेज** ने लिखा है, "जीवन-इतिहास का तात्पर्य विस्तृत आत्मकथा से है, परन्तु व्यावहारिक अर्थ में इसके अन्तर्गत किसी भी जीवनी सम्बन्धी सामग्री को सम्मिलित किया जा सकता है।" एक जीवन-इतिहास में प्रधानतया निम्न बातों पर प्रकाश डाला जाता है :

(i) पारिवारिक पृष्ठभूमि,
(ii) वे पारिवारिक दशाएं व घटनाएं जिन्होंने व्यक्ति के जीवन को प्रभावित एवं परिवर्तित किया,
(iii) परिस्थितियों के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रिया का विश्लेषण,
(iv) जीवन की महत्वपूर्ण घटनाएं जिन्होंने व्यक्ति को प्रेरणा एवं प्रोत्साहन दिया अथवा व्यक्ति के जीवन में निराशा उत्पन्न की,
(v) सम्पूर्ण जीवन के अनुभव,
(vi) प्रभावशाली व्यक्ति,
(vii) व्यक्ति की मनोवृत्तियां तथा आशाएं, तथा
(viii) तत्कालीन परिस्थिति के अनुसार भविष्य के प्रति व्यक्ति की धारणा।

डोलार्ड सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को ज्ञात करने के लिए जीवन-इतिहास को महत्वपूर्ण मानते हैं। इस प्रकार जीवन-इतिहास अपने जीवन की घटनाओं के प्रति स्वयं व्यक्ति का एक ऐच्छिक वर्णन है। वैयक्तिक अध्ययन में जीवन-इतिहास को लेखबद्ध एवं विश्लेषित किया जाता है। इनके द्वारा सामाजिक व्यवहारों के बारे में पर्याप्त जानकारी मिल सकती है।

(4) **प्रलेख** (Documents)—डायरी, पत्र तथा जीवन-इतिहास के अतिरिक्त वैयक्तिक विषयों के अध्ययन में कुछ अन्य स्रोतों जैसे व्यक्तिगत प्रलेखों, आदि का भी उपयोग किया जाता है। इसमें आत्मकथाएं, स्कूल व कालेज के रिकार्ड, वंशावली, पुस्तकों, पत्रिकाओं, सरकारी तथा गैर-सरकारी विज्ञप्तियों, साहित्यिक सामग्रियों, भूत एवं वर्तमान से सम्बन्धित अनुसन्धान-प्रतिवेदनों, आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। आलपोर्ट ने इसके बारे में लिखा है, "ये (व्यक्तिगत प्रलेख) आत्म प्रदर्शन करने वाले ऐसे तथ्य हैं जो इच्छापूर्वक अथवा अनिच्छापूर्वक लेखक के मानसिक जीवन की संरचना, गत्यात्मकता एवं कार्य करने के बारे में प्रत्यक्ष सूचनाएं देते हैं।" इनके द्वारा व्यक्ति के जीवन दर्शन, सामाजिक सम्बन्धों एवं व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है।

व्यक्तिगत प्रलेखों के अतिरिक्त कुछ अन्य स्रोतों से भी वैयक्तिक अध्ययन-विषय के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। ये स्रोत द्वैतीयक स्रोत कहलाते हैं। इनके अन्तर्गत सरकारी रिकॉर्ड, पुलिस तथा न्यायालय के रिकॉर्ड, जनगणना रिकार्ड, बीमा कार्ड, आयकर रिकॉर्ड, प्रकाशित साहित्य, मित्रों एवं सम्बन्धियों से साक्षात्कार एवं अवलोकन, आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त संस्मरण, केस से सम्बन्धित वंशावली, फोटोग्राफ एलबम, नक्शे, चार्ट, प्रमाणपत्र, समाचार-पत्रों में छपी खबरें, आदि भी व्यक्ति के बारे में महत्वपूर्ण सूचना स्रोत हैं।

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के गुण (महत्व) [Merits (Importance) of Case study-method]

वर्तमान में सामाजिक अनुसन्धान में वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति का प्रयोग अधिक होने लगा है। किसी प्रश्नावली को तैयार करने से पूर्व तथा मुख्य साक्षात्कार के संचालन से पूर्व अनुसन्धानकर्ता अनेक व्यक्तिगत मामलों की जानकारी प्राप्त करना उपयोगी मानते हैं। **लुण्डबर्ग** वैयक्तिक अध्ययन पद्धति को वैज्ञानिक पद्धति की सहायक व्यवस्था मानते हैं। वे लिखते हैं, "वैयक्तिक पद्धति स्वयं में बिल्कुल एक वैज्ञानिक पद्धति नहीं है वरन् वैज्ञानिक कार्य-प्रणाली में एक सोपान है।"[1] वर्तमान में मनोचिकित्सा-विज्ञान का विकास वैयक्तिक अध्ययनों तथा उनके सफल उपचारो के कारण ही हुआ है। चिकित्सा विज्ञान में रोग के निदान की आधारभूत विधि वैयक्तिक अध्ययन ही है। समाजशास्त्र, सामाजिक सेवा कार्य, मानवशास्त्र, मनोविज्ञान, शिक्षाशास्त्र एवं अर्थशास्त्र के क्षेत्र में तो इस विधि का प्रयोग दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है। विचलित व्यवहार एवं समस्यात्मक व्यवहारों की जानकारी के लिए तो यह सर्वोत्तम विधि है। **गोफमेन** तो इस विधि को समाज विज्ञान की एकमात्र गहन एवं विश्वसनीय विधि मानते हैं। हम यहां वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति के लाभों, उपयोगिता, गुणों तथा महत्व का उल्लेख करेंगे।

(1) **सूक्ष्म अध्ययन** (Microscopic Study)—इस विधि के द्वारा किसी भी इकाई का गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन किया जा सकता है। इसलिए ही **बर्गेस** इसे '**सामाजिक सूक्ष्मदर्शक यन्त्र**' कहते है। इसके द्वारा समस्या के सामान्य तथा विशिष्ट सभी पक्षों का अध्ययन किया जा सकता है। **कूले** लिखते है, "वैयक्तिक अध्ययन विधि से हमारा बोध-ज्ञान विकसित होता है तथा यह जीवन के प्रति स्पष्ट अन्तर्दृष्टि प्रदान करती है। यह व्यवहार का अध्ययन अप्रत्यक्ष एवं अमूर्त रूप से नहीं वरन् प्रत्यक्ष रूप से करती है।"[2]

(2) **उपकल्पनाओं का स्रोत** (Source of Hypothesis)—इस विधि के द्वारा जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं, उनसे महत्वपूर्ण उपकल्पनाओं का निर्माण किया जा सकता है। परिस्थितियों एवं व्यक्तियों की प्रकृति की जानकारी प्राप्त कर सामान्यीकरण किया जाता है जो नवीन उपकल्पनाओं को जन्म देते है। **गुडे** एवं **हाट** लिखते हैं, "यह प्रायः सत्य होता है कि वैयक्तिक अध्ययन के द्वारा प्रदान की गयी अन्तर्दृष्टि की गहराई से बाद में वृहत् स्तर पर आयोजित अध्ययनों के लिए लाभप्रद उपकल्पनाएं निकल सकेंगी।"[3]

(3) **अनुसन्धान के प्रारम्भिक स्तर में उपयोग** (Use in early exploratory Stage)—किसी बड़े अध्ययन को प्रारम्भ करने से पूर्व प्रारम्भिक स्तर पर कुछ वैयक्तिक

1 G. A. Lundberg, Case Work and the Statistical Method, *Social Forces*, p. 61
2 C. H. Colley, Quoted by P. V. Young, *op. cit.*, p. 229
3 Goode and Hatt, *op. cit.*, p. 338.

इकाइयों की जानकारी प्राप्त कर लेना आगे अनुसन्धान की दृष्टि से उपयोगी होता है। इससे अनेक प्रकट और अप्रकट तथ्यों की जानकारी प्राप्त हो जाती है। कुछ विद्वान इसे 'तथ्य संकलन की एकल विधि' भी कहते हैं। वैयक्तिक अध्ययनों से हमें इकाइयों की प्रकृति एवं समग्र के निर्धारण में भी सहायता मिलती है।

(4) **महत्वपूर्ण अध्ययन यन्त्रों के निर्माण में सहायक** (Useful for preparing important study Tools)—वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के द्वारा जो उपकल्पनाएं निर्मित की जाती हैं, उनसे कई महत्वपूर्ण यन्त्रों के निर्माण में सहायता मिलती है। प्रश्नावली, अनुसूची तथा साक्षात्कार पथ-प्रदर्शिका के निर्माण के पूर्व वैयक्तिक अध्ययन कर लेना उपयोगी होता है। इससे अध्ययनकर्ता को यह विश्वास हो जाता है कि उसने समस्त उपयोगी एवं सम्बन्धित सामग्री को अध्ययन यन्त्रो में सम्मिलित कर लिया है।

(5) **वैयक्तिक मनोवृत्तियों की जानकारी** (Knowledge about Personal Attitudes)—वैयक्तिक अध्ययनों के द्वारा हमे व्यक्ति के विचारों, मूल्यों, मनोवृत्तियों, व्यवहारों एवं धारणाओं के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। ऐसी जानकारी व्यक्ति की सामान्य प्रकृति को समझने के लिए आवश्यक है।

(6) **सामग्री की पूर्णता** (Complete Material)—वैयक्तिक अध्ययन इस दृष्टि से भी उपयोगी है कि इसके द्वारा इकाई के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त की जाती है तथा इसके द्वारा जो सामग्री संकलित की जाती है, वह किसी अन्य विधि द्वारा नहीं की जा सकती।

(7) **घटनाओं की निरन्तर तस्वीर** (Continuous Picture of Events)—वैयक्तिक अध्ययन में किसी व्यक्ति अथवा घटना की काल-क्रम के अनुसार निरन्तरता बताई जाती है। समयानुसार उसमें आने वाले उतार-चढ़ाव एवं परिवर्तनों की क्रमबद्ध तस्वीर इस विधि द्वारा खींची जा सकती है। समाज में चलने वाली दीर्घकालीन प्रक्रियाओं को भी इस विधि के द्वारा जान पाना सरल है। इस प्रणाली के द्वारा वैयक्तिक घटना या स्थिति की भूतकालीन अवस्था का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। भूतकालीन क्रम को समझे बिना किसी भी समाज का अध्ययन अधूरा ही रहेगा।

(8) **तुलना एवं वर्गीकरण का आधार** (Basis of Comparison and Classification)—वैयक्तिक अध्ययनों के द्वारा इकाइयों के गुणों की जानकारी प्राप्त हो जाती है। अतः समूह विशेष के अध्ययन हेतु उसे उपयुक्त वर्गों में विभक्त किया जा सकता है, जिससे विभिन्न इकाइयों एवं वर्गों में तुलना करना तथा विरोधी इकाइयों को ज्ञात करना सरल हो जाता है।

(9) **सामान्यीकरण का अधार** (Basis of Generalization)—यह विधि सामान्यीकरण का सफल आधार प्रदान करती है। विभिन्न इकाइयों के गहन, सूक्ष्म एवं विस्तृत अध्ययन के आधार पर सामान्यीकरण प्राप्त किये जाते हैं, जिन्हें समग्र पर लागू किया जा सकता है।

(10) **नये अनुभवों का ज्ञान** (Knowledge of new Experiences)—गुडे एवं हाट का मत है, "अधिकांश सर्वेक्षण कार्य की सीमा निश्चित होने के कारण वास्तव में अनुसन्धानकर्ता विश्लेषण स्तर पर विस्तृत अनुभव प्राप्त करता है जब प्रश्नों के अर्थों की गहरी छान-बीन की जाती है।" वैयक्तिक अध्ययन में अनुसन्धानकर्ता को व्यक्ति की मनोवृत्तियों, मूल्यों, विचारों और विश्वासों तथा उन्हें प्रोत्साहित एवं परिवर्तित करने वाले कारकों की जानकारी प्राप्त होती है जो अध्ययनकर्ता के अनुभव को व्यापक बना देती है।

शोधकर्ता का परिपक्व अनुभव भावी अनुसन्धानों के सफल संचालन की गारन्टी प्रदान करता है।

(11) जीवन के प्रभाविक कारकों का अध्ययन (S... Life)—वैयक्तिक अध्ययन ...

... ...ता है। वैज्ञानिक अध्ययन के लि... घटना को कार्य-कारण के सन्दर्भ में देखें।

(12) दीर्घ प्रक्रियाओं का अध्ययन (Study of Long Processes)—गुडे एवं हाट का मत है कि "व्यक्तिगत प्रलेखों के द्वारा प्रक्रियाओं का ... वैयक्तिक अध्ययन में हम सक्षि... के ... ...ों ... ...

... ...कारी प्राप्त करने का सर्वाधिक उपयोगी तरीका वैयक्तिक अध्ययन ही है।

(13) विभिन्न विधियों का प्रयोग (Use of Various Techniques)—गुडे एवं हाट लिखते हैं, "विभिन्न प्रकार की सूचनाएं प्राप्त करने में वैयक्तिक अध्ययन के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता, संगठन के द्वारा प्रयोग की जाने वाली प्रविधियों एवं साधनों, उदाहरणस्वरूप गहन साक्षात्कार, प्रश्नावलियों, आत्म-कथा, प्रलेख, अन्य व्यक्तियों के द्वारा अध्ययन-प्रति तथा पत्रादि, का प्रयोग कर सकता है।"

(14) व्यक्तित्वों का अध्ययन (Study of Personalities)—वैयक्तिक अध्ययन व्यक्तियों के जीवन सम्बन्धी भूतकालीन एवं वर्तमान स्थितियों की जानकारी प्राप्त की ज... है। व्यक्ति के बौद्धिक एवं सांस्कृतिक स्तरों, उसकी क्षमताओं, व्यवहारों, स्वभावों एवं चा... का ज्ञान प्राप्त करके उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को समझाने में यह विधि सहायक है।

(15) मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में सहायक (Helpful in Psychological Studies)—वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति के द्वारा मनोवैज्ञानिक अध्ययन करना उपयोगी सिद्ध हुआ है निदानात्मक मनोविज्ञान, औद्योगिक मनोविज्ञान, मनोविकृति-विज्ञान, आदि से सम्बन्धित समस्याओं के अध्ययन में यह विधि अत्यधिक उपयोगी समझी जाती है।

चिकित्सा विज्ञान में भी इस विधि का प्रयोग किया जाता है। मूलतः यह विधि चिकित्सा विज्ञान में ही प्रयुक्त की जाती थी, जिसमें चिकित्सक रोगी की आरम्भ से अब तक की शारीरिक स्थिति एवं स्वास्थ्य की जानकारी प्राप्त कर रोग का निदान ढूंढ़ता है। वैयक्तिक अध्ययन पद्धति द्वारा प्रशासकों को भी अपने प्रशासन के सन्दर्भ में उपयोगी सूचनाएं प्राप्त होती हैं।

वैयक्तिक अध्ययन द्वारा साख्यिकीय तथ्यों को सही परिप्रेक्ष्य में रखा जाता है। व्यक्तियों के गुणों से सम्बन्धित अनुसन्धान में भी इस विधि का प्रयोग किया जाता है और वैज्ञानिक तथा व्यवस्थित जानकारी हेतु साख्यिकीय प्रयोग भी किए जाने लगे हैं। इस प्रकार विभिन्न दृष्टिकोणों से वैयक्तिक अध्ययन सामाजिक अनुसन्धानों मे अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

वैयक्तिक अध्ययन विधि के दोष (सीमाएं) [Limitations (Demerits) of Case Study Method]

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के जहां कई लाभ, गुण और उपयोग हैं, वहीं यह दोषों से भी मुक्त नही है। कई विद्वान तो इसे अध्ययन की वैज्ञानिक विधि भी स्वीकार नही करते।

लुण्डबर्ग का मत है कि वैयक्तिक अध्ययन पद्धति अपने आप में कोई वैज्ञानिक विधि नही है वरन् वैज्ञानिक कार्यविधि का एक प्रथम चरण मात्र है। **प्रो. रीडबेन** ने इस विधि पर प्रहार करते हुए लिखा है कि यह विधि अवैयक्तिक, सार्वभौमिक नैतिकता-रहित, व्यावहारिकता-रहित तथा पुनरावृत्तिमूलक घटनाओं को उपलब्ध नहीं करा सकती है। हम यहाँ वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति के दोषों तथा सीमाओं का उल्लेख करेगे।

(1) **अवैज्ञानिक विधि** (Un-scientific Method)—इस विधि में कुछ इकाइयों के अध्ययन के आधार पर ही निष्कर्ष निकाले जाते है और उन्हें समग्र पर लागू किया जाता है। साथ ही इसमें सूचना-संकलन की प्रक्रिया भी संगठित और नियमित नही होती। इसमें व्यक्ति के जीवन सम्बन्धी सूचनाओं का सत्यापन और प्रमापीकरण भी सम्भव नही है, अतः इसे अवैज्ञानिक पद्धति कहा जाता है। इसमें प्राप्त सामग्री का परीक्षण एवं पुनर्परीक्षण भी सम्भव नहीं है।

(2) **दोषपूर्ण सामान्यीकरण** (Wrong Generalizations)—वैयक्तिक अध्ययन पद्धति द्वारा कुछ इकाइयों के बारे में सामग्री तो काफी प्राप्त कर ली जाती है, किन्तु इन थोड़े से अध्ययनों के आधार पर प्राप्त सामान्यीकरणों को समग्र पर लागू करना अनुसन्धान के मौलिक सिद्धान्त के विरुद्ध है। इसका एक कारण यह भी है कि थोड़ी-सी इकाइयो को विशाल क्षेत्र के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता, अतः वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति द्वारा प्राप्त सामान्यीकरण सीमित और अवैज्ञानिक कहे जा सकते हैं।

(3) **सीमित अध्ययन** (Limited Study)—वैयक्तिक अध्ययन में केवल कुछ इकाइयों का चयन करके अध्ययन किया जाता है, इसलिए इस विधि के द्वारा विस्तृत क्षेत्र का अध्ययन सम्भव नहीं है। जीवन इतिहास केवल सीमित इकाइयों का ही ज्ञात किया जा सकता है। समग्र की प्रत्येक इकाई का गहन अध्ययन करने में यह विधि सर्वथा अनुपयुक्त है।

(4) **अत्यधिक खर्चीली एवं समय लेने वाली विधि** (Most Expensive and Time Consuming Method)—वैयक्तिक अध्ययन प्रणाली अत्यधिक खर्चीली और समय लेने वाली पद्धति है, क्योंकि इसमें किसी भी इकाई का गहन अध्ययन करने के लिए उससे सम्बन्धित जीवन-इतिहास, आत्मकथा, डायरी, पत्र एवं साक्षात्कार, आदि द्वारा सूचना एकत्रित करने में काफी समय की आवश्यकता होती है। **गुडे तथा हाट** का मत है कि मामले एकत्रित करने में समय लगता है तथा पूर्णता के साथ अध्ययन करने को तत्पर लोगों को ढूंढ़ना भी कठिन होता है। बड़े क्षेत्र में इस विधि द्वारा अध्ययन करने में बहुत बड़ी धनराशि की भी आवश्यकता होती है।

(5) **निदर्शन का अभाव** (Lack of Sampling)—इस विधि में निदर्शन का प्रयोग नही किया जाता, संख्या कम होने से इकाइयों का उद्देश्यपूर्ण चयन किया जाता है। **गुडे तथा हाट** लिखते हैं, "अनुसन्धानकर्ता को सामान्यतः यह विश्वास होता है कि इकाइयों का चयन प्रतिनिधित्वपूर्ण है, उसे यह भी विश्वास होता है कि निदर्शन पद्धति के अभाव में पक्षपात का प्रश्न ही नहीं उठता है।"

(6) **दोषपूर्ण रिकॉर्ड** (Defective Records)—वैयक्तिक विषयों में प्राप्त सामग्री को विश्वसनीय नही कहा जा सकता क्योंकि कई बार रिकॉर्ड अपूर्ण एवं त्रुटिपूर्ण होते हैं और यदि वे असावधानीपूर्वक लिखे गए हैं तब तो वे यथार्थ स्थिति के विपरीत जानकारी देते हैं। उदाहरणार्थ, पुलिस के रिकॉर्ड में एक व्यक्ति को अपराधी दर्ज किया गया है, किन्तु वास्तविक जीवन में वह एक सच्चा व्यक्ति है। उपयुक्त गवाह के अभाव मे तथा धन की कमी एवं

रिश्वत न दे पाने के कारण यदि उसे जेल में रहना पड़ता है तो इसका यह तात्पर्य नहीं है कि वह वास्तव में अपराधी है।

(7) **दोषपूर्ण जीवन-इतिहास** (Defective Life-histories)—चूंकि जीवन-इतिहास स्वरचित होता है, अतः इसमें घटनाओं का उल्लेख अलंकारिक भाषा में किया जाता है। कई बार व्यक्ति काल्पनिक घटनाओं का भी उल्लेख कर देता है तथा सामाजिक मर्यादा के विपरीत पाये जाने वाले तथ्यों का उल्लेख नहीं करता। ऐसी स्थिति में जीवन-इतिहास यथार्थ सूचनाएं नही दे पाते।

(8) **अध्ययनकर्ता का अधिक आत्मविश्वास** (Over-confidence of Researcher)—वैयक्तिक अध्ययनकर्ता को यह भ्रम हो जाता है कि उसे सभी बातों की पूर्ण जानकारी है। इसलिए उसके द्वारा संकलित गलत तथ्य भी उसे सही प्रतीत होते हैं। ऐसी स्थिति में वह अनुसन्धान द्वारा प्राप्त तथ्यों पर अत्यधिक विश्वास कर लेता है और उनकी पुनर्परीक्षा न नहीं करता है। इससे अनुसन्धान में गलत सामग्रियों का समावेश हो जाता है। गुडे एव हाट लिखते हैं, "अनुसन्धानकर्ता मे अपने निष्कर्ष के प्रति अधिक विश्वास पैदा हो जाता है, जिसके कारण वह अनुसन्धान प्रारूप के आधारभूत सिद्धान्तों की अवहेलना करने के लोभ से नही बच सकता है।"

(9) **अनुसन्धानकर्ता का पक्षपात** (Bias of Investigator)—इस विधि का एक प्र दोष यह है कि इसमे अध्ययनकर्ता के पक्षपात की सम्भावना रहती है। लम्बे समय त इकाइयों के सम्पर्क में रहने के कारण अध्ययनकर्ता उनसे प्रभावित होता है और स्वयं उन्हें प्रभावित करता है। ऐसी स्थिति में वास्तविक तथ्यों को भावात्मक लगाव के कारण तोड-मरोड़कर भी प्रस्तुत किया जाता है। परिणामस्वरूप प्राप्त निष्कर्ष अवैज्ञानिक एवं पक्षपातपूर्ण हो जाते हैं।

(10) **सामग्री की विश्वसनीयता की जांच असम्भव** (Impossibility of the test of Reliability of data)—इस प्रणाली का एक दोष यह है कि इसके द्वारा प्राप्त तथ्यों की विश्वसनीयता की जांच करना सम्भव नहीं है। कई तथ्यों के बारे में स्वयं व्यक्ति के अतिरि अन्य लोगों को जानकारी नही होती और न ही इकाइयों की तुलना किन्हीं अन्य इकाइय से ही की जा सकती है।

उपर्युक्त कमियो के अतिरिक्त कई बार उन प्रलेखों, पत्रों, डायरियों एवं जीवन-इतिहास को प्राप्त करना भी कठिन होता है जो व्यक्ति के बारे में पूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। इस विधि के द्वारा सामाजिक व्यवहार के बारे में आवश्यक सामग्री का संकलन सरल नही है।

वैयक्तिक अध्ययन विधि तथा सांख्यिकीय एवं सर्वेक्षण विधियां (Case Study Method and Statistical and Survey Methods)

सामाजिक घटना पर वैयक्तिक अध्ययन एवं सांख्यिकी तथा सर्वेक्षण विधिया भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से विचार करती हैं। वैयक्तिक अध्ययन में सामाजिक घटनाओं के कारकों, उनके पारस्परिक सम्बन्धों एवं क्रम को ज्ञात किया जाता है जबकि सर्वेक्षण में सीमित कारकों के अध्ययन द्वारा घटनाओं की आवृत्ति, प्रवृत्ति एवं स्वरूप को ज्ञात किया जाता है। इन विधियों में निम्नांकित अन्तर हैं :

(1) वैयक्तिक अध्ययन विधि गुणात्मक एवं वर्णनात्मक है, इसमें अनुसन्धान के तथ्यों को संख्या में प्रकट नहीं किया जाता है जबकि सर्वेक्षण एवं साख्यिकी विधियां संख्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक होती हैं जिनके निष्कर्ष संख्या में प्रकट किए जा सकते हैं।

(2) वैयक्तिक अध्ययन विधि एक इकाई का गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन करती है, अतः यह सूक्ष्मदर्शी विधि है जबकि सर्वेक्षण विधि एवं सांख्यिकी में समस्या से सम्बन्धित विस्तृत क्षेत्र में तथ्यों का संकलन किया जाता है, अतः यह वृहद्-विधि (Macroscopic Method) है।

(3) सांख्यिकी एवं सर्वेक्षण विधि में अनेक इकाइयों में से निदर्शन द्वारा अध्ययन हेतु कुछ इकाइयो का चयन किया जाता है जबकि वैयक्तिक अध्ययन विधि में निदर्शन विधि का प्रयोग नहीं होता है।

(4) वैयक्तिक अध्ययन विधि में घटना और इकाइयों को भूतकाल और ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखा जाता है जबकि सर्वेक्षण एवं सांख्यिकी विधि में घटनाओ का वर्तमान सन्दर्भ में अध्ययन किया जाता है।

(5) वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के निष्कर्ष, सामान्य ज्ञान एवं तर्क पर आधारित होते है, जबकि सांख्यिकी एवं सर्वेक्षण के निष्कर्ष गणितीय आधार पर होते है।

(6) वैयक्तिक अध्ययन पद्धति मे भावात्मक प्रभाव अधिक होता है, अत. उसमें निश्चितता कम पायी जाती है जबकि साख्यिकी तथा सर्वेक्षण पद्धति सख्यात्मक होने के कारण अधिक निश्चित होती है और उसके निष्कर्ष साख्यिकीय नियमो पर आधारित होते हैं।

इन दोनो विधियों में अन्तर होने के बावजूद भी ये दोनो परस्पर एक-दूसरे की पूरक है। सर्वेक्षण विधि द्वारा निकाले गए निष्कर्षों की सत्यता की परख कुछ इकाइयों के गहन अध्ययन द्वारा की जा सकती है। दूसरी ओर एक इकाई के जीवन-इतिहास के तथ्यों का मूल्यांकन विशाल क्षेत्र के सर्वेक्षण से प्राप्त निष्कर्षो द्वारा किया जा सकता है। **श्रीमती पी. वी. यंग** ने लिखा है, "सांख्यिकीय एवं वैयक्तिक अध्ययन पद्धति अधिकांशतः एक-दूसरे की सहायक हैं क्योंकि इनमें से प्रत्येक पद्धति एक ही सामाजिक स्थिति को विभिन्न दृष्टिकोणो से देखती है तथा उस स्थिति में प्रभाव डालने वाले सामाजिक कारको पर पृथक रूप से बल देती है।" इसी सन्दर्भ में **गुडे** एवं **हाट** ने भी लिखा है, "सांख्यिकीय शास्त्री और वैयक्तिक कार्यकर्ता अपनी प्रविधियों की श्रेष्ठता के प्रति लडने की बजाय एक-दूसरे से ऋणी के रूप में लाभ उठा सकते है।"

वैयक्तिक अध्ययन विधि के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि इस विधि की सहायता से किसी इकाई का गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है। **प्रो. रीड बेन** ने लिखा है कि विस्तृत रूप मे जीवन-इतिहास के अध्ययन द्वारा हमें कुछ लाभप्रद उपकल्पनाएं और साथ ही कुछ ऐसे तथ्य जो उपकल्पनाओं की परीक्षा कर सकें, प्राप्त होते है जिनके बिना सामान्य नियमो पर आधारित सामाजिक विज्ञान अत्यधिक प्रतिबन्धित हो जाएगा। वर्तमान में सामाजिक विज्ञानो के अध्ययन में यह एक उपयोगी पद्धति है।

प्रश्न

1. वैयक्तिक अध्ययन से आप क्या समझते है? इसके गुण व दोषों की विवेचना कीजिए। **(राजस्थान, 1992; अजमेर, 1998, 99)**
2. वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति को परिभाषित कीजिए। वैयक्तिक अध्ययन-पद्धति का किस तरह प्रयोग किया जाता है?
3. सर्वेक्षण पद्धति तथा वैयक्तिक पद्धति मे क्या अन्तर है? सामाजिक अनुसन्धान में इनकी उपयोगिता का तुलनात्मक मूल्याकन कीजिए।
4. सामाजिक अनुसन्धान मे एकल अध्ययन-पद्धति के महत्व की विवेचना कीजिए।
5. टिप्पणी लिखिये : (i) वैयक्तिक अध्ययन (ii)वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का महत्व।

6 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति क्या है? वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की उपयोगिता का वर्णन कीजिए। (अजमेर, 1996)

7 वैयक्तिक (एकल) अध्ययन क्या है? सामाजिक अनुसन्धान की पद्धति के रूप मे वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के उपयोग और सीमाओं का वर्णन कीजिए। (राजस्थान, 1997)

8 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति क्या है? सामाजिक अनुसन्धान में इसकी आवश्यकता का मूल्यांकन कीजिए। (अजमेर, 2000)

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक अनुसन्धान मे वाद (वैयक्तिक) अध्ययन पद्धति के महत्व के बारे मे चर्चा कीजिए।

2 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की सीमाएं समझाइए। (अजमेर, 1999)

3 संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए : (1) वैयक्तिक अध्ययन के तन्त्र (2) जीवन इतिहास (3) प्रलेख (4) वैयक्तिक अध्ययन विधि एवं सांख्यिकीय विधि मे अन्तर। (अजमेर, 2000)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1 निम्नांकित कथनो में से सत्य और असत्य कथन छांटिए :

(i) वैयक्तिक अध्ययन मे एक व्यक्ति, परिवार, समूह अथवा समुदाय का गहन एवं सू अध्ययन किया जाता है।

(ii) वैयक्तिक अध्ययन में एक इकाई का मात्रात्मक (Quantitative) अध्ययन किया जाता है

(iii) वैयक्तिक अध्ययन मे एक इकाई का केवल आंशिक अध्ययन ही किया जाता है।

(iv) वैयक्तिक अध्ययन मे किसी व्यक्ति का अध्ययन किया जाता है, परिवार या समूह का नही।

(v) वैयक्तिक अध्ययन विधि एक खर्चीली एवं समय लेने वाली विधि है।

(vi) जीवन-इतिहास का प्रयोग वैयक्तिक अध्ययन के लिए किया जाता है।

(vii) डायरी किसी वैयक्तिक अध्ययन का आधार नही हो सकती।

(viii) वैयक्तिक अध्ययन विधि से गुणात्मक अध्ययन सम्भव है।

2 निम्नांकित वाक्यों मे कोष्ठक में दिए गए विकल्पो में से सही विकल्प का चयन कीजिए :

(i) वैयक्तिक अध्ययन मे ..... तथ्यो का अध्ययन किया जाता है। (गुणात्मक/सख्यात्मक)

(ii) वैयक्तिक अध्ययन में इकाई के ..... पक्ष का अध्ययन किया जाता है। (एक/समस्त)

(iii) वैयक्तिक अध्ययन में ..... का अध्ययन किया जाता है। (एक विशिष्ट इकाई/अनेक इकाइयो)

(iv) वैयक्तिक अध्ययन मे अनेक प्रविधियो एव विधियों का प्रयोग ..... । (नही किया जाता है/किया जाता है)

निम्नांकित विद्वानो की किसी एक पुस्तक का नाम लिखिए :

(i) पी. वी. यग, (ii) गुडे एव हाट, (iii) सिन पाओ यंग, (iv) सेल्टिज, जहोडा एवं अन्य

[उत्तर—1. सत्य कथन—i, v, vi, viii शेष सभी कथन असत्य है।

2. (i) गुणात्मक, (ii) समस्त, (iii) एक विशिष्ट इकाई, (iv) किया जाता है।

3. (i) साइन्टिफिक सोशियल सर्वे एण्ड रिसर्च, (ii) मैथड्स इन सोशियल रिसर्च, (iii) केस्ट फाइन्डिंग्स विथ रूरल पीपुल (iv) रिसर्च मैथड्स इन सोशियल रिलेशन्स।]

14

निदर्शन-पद्धति (प्रतिचयन विधि)

[SAMPLING METHOD]

निदर्शन[1] (Sample) सामाजिक अनुसन्धान एव सर्वेक्षण की आधारशिला है। किसी भी प्रकार का अध्ययन करने से पूर्व अनुसन्धानकर्ता को यह तय करना होता है कि वह समूह के सभी सदस्यो से सम्पर्क स्थापित करके तथ्यो का संकलन करेगा अथवा उनमे से कुछ सदस्यो को प्रतिनिधि के रूप में चुनकर उनका अध्ययन करेगा। इस प्रकार क्षेत्र से अनुसन्धान सम्बन्धी आंकड़े दो प्रकार से एकत्रित किए जा सकते है . (1) संगणना विधि द्वारा, तथा (2) निदर्शन विधि द्वारा।

संगणना विधि (Census Method) मे अनुसन्धानकर्ता समग्र (Universe) अर्थात् सम्पूर्ण क्षेत्र का अध्ययन करता है। वह उस क्षेत्र की प्रत्येक इकाई अथवा प्रत्येक सदस्य से सम्पर्क स्थापित कर जानकारी प्राप्त करता है। हमारे देश मे प्रति दस वर्ष बाद की जाने वाली जनगणना मे इसी विधि का प्रयोग किया जाता है।

सामाजिक अनुसन्धान मे अध्ययन का दूसरा तरीका यह है कि समग्र मे से कुछ इकाइयो को प्रतिनिधि के रूप मे चुन लिया जाता है और उनके सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी प्राप्त की जाती है, इसे **निदर्शन विधि** (Sampling Method) कहा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हम ब्यावर महाविद्यालय के छात्रो के पजाब समस्या पर विचार जानना चाहते है तो सगणना विधि में हमें महाविद्यालय के सभी छात्रों से सम्पर्क स्थापित कर सूचनाएं संकलित करनी होंगी, जबकि निदर्शन पद्धति में कुछ छात्रो को प्रतिनिधि के रूप मे चुनकर उन्ही का अध्ययन किया जायेगा। निदर्शन पद्धति का उल्लेख करने से पूर्व यहां सगणना पद्धति पर विचार कर लेना उपयुक्त रहेगा।

संगणना पद्धति (Census Method)

सगणना पद्धति अध्ययन की वह विधि है जिसके अन्तर्गत समग्र अथवा क्षेत्र की सभी इकाइयो का अध्ययन कर सूचनाएं संकलित की जाती है। अनुसन्धान एव सर्वेक्षण के प्रारम्भिक वर्षो में सगणना पद्धति द्वारा ही अध्ययन किया जाता था। आज भी जिन विषयो के बारे मे पूर्ण शुद्धता की आवश्यकता होती है, वहां संगणना विधि का ही उपयोग किया जाता है। इसका सबसे अधिक उपयोग जनगणना मे होता है, जिसमें प्रत्येक परिवार के पास जाकर सम्बन्धित सूचनाएं एकत्रित की जाती है किन्तु वर्तमान मे सामाजिक अनुसन्धान मे संगणना विधि का प्रयोग बहुत ही कम होता है।

---

1 'Sample' शब्द का हिन्दी रूपान्तरण, निदर्शन, प्रतिदर्श या प्रतिचयन तीनो ही रूपो मे किया जाता है।

संगणना विधि की उपयोगिता एवं गुण (Utility and Merits of Census Method)

संगणना विधि का उपयोग ऐसे अनुसन्धानों के लिए किया जाता है—(i) जिनका क्षेत्र सीमित हो, (ii) जिनमें विविध गुणों वाली इकाइयां हों, (iii) जब प्रत्येक इकाई का अध्ययन करना आवश्यक हो, (iv) जहां परिशुद्धता की अत्यधिक मात्रा अपेक्षित हो, तथा (v) जब अनुसन्धानकर्ता के साधन पर्याप्त हों।

संगणना विधि के **प्रमुख गुण** इस प्रकार है :

(1) संगणना अनुसन्धान द्वारा प्राप्त तथ्य एवं सूचनाएं अधिक विश्वसनीय और परिशुद्ध होती हैं क्योंकि इसमें क्षेत्र की सभी इकाइयों का अध्ययन किया जाता है।

(2) संगणना विधि में प्रत्येक इकाई के बारे मे विस्तृत जानकारी प्राप्त की जाती है। फलस्वरूप समस्या से सम्बन्धित कोई भी पक्ष छूटता नहीं है।

(3) जब क्षेत्र की इकाइयों में अनेक विविधताएं एवं विभिन्नताएं हों तब संगणना पद्धति ही अध्ययन की एक मात्र उपयुक्त विधि है।

संगणना विधि की सीमाएं (Limitations of Census Method)

संगणना विधि की अपनी कुछ सीमाएं हैं, इसलिए ही इसका उपयोग सभी अनुसन्धानों मे नही किया जाता और उसके स्थान पर निदर्शन पद्धति का उपयोग किया जाता है। वे सीमाएं इस प्रकार है :

(1) **विशाल क्षेत्र**—जब अनुसन्धान का क्षेत्र विशाल एवं विस्तृत हो तो क्षेत्र की प्रत्येक इकाई से सम्पर्क स्थापित करना सम्भव नहीं हो सकता है, ऐसी स्थिति मे संगणना के स्थान पर निदर्शन पद्धति का उपयोग किया जाता है।

(2) **खर्चीली विधि**—संगणना पद्धति से अध्ययन करने में अधिक धन की आवश्यकता होती है। इसीलिए इसका प्रयोग अधिकांशतः सरकार द्वारा जनगणना, आदि के लिए ही किया जाता है।

(3) **अधिक समय की आवश्यकता**—संगणना विधि में सभी इकाइयों से सम्पर्क करना आवश्यक होता है, जिसके लिए अधिक समय की आवश्यकता होती है। अतः कम समय में अध्ययन के लिए यह विधि उपयुक्त नहीं है।

(4) **व्यापक संगठन एवं श्रम की आवश्यकता**—[illegible]

का उपयोग किया जाता है।

(5) **अनुसन्धान की प्रकृति एवं उद्देश्य**—यदि किसी अनुसन्धान में इकाइयों में बहुत अधिक सजातीयता हो तथा निदर्शन विधि द्वारा प्राप्त निष्कर्षों में बहुत अधिक अन्तर न हो तब भी संगणना विधि का उपयोग अनुपयुक्त प्रतीत होता है।

निदर्शन-पद्धति (Sampling Method)

है। नि[illegible]

विधि का [illegible] प्रयोग करते हैं। गृहणियां चावल पके हैं या नहीं, यह जानने के लिए कुछ चावलों का परीक्षण करके देखती हैं। इसी प्रकार से बाजार से गेहूं, चावल एवं दाल, आदि खरीदते समय बोरियों में से मुट्ठी भर दाने लेकर उनकी जांच करते हैं, अथवा आम खरीदते

समय टोकरे में से एक दो आम चखकर सभी आमों के बारे में निर्णय लेते है। केवल एक बूंद रक्त की परीक्षा कर डाक्टर रोगी के रक्त के बारे में निष्कर्ष निकाल लेता है। व्यापारी लोग गुड़, शक्कर, मिर्च, धनियां, रुई, कपड़ा एवं हजारों चीजों की परख के लिए ढेर मे से कुछ नमूना लेकर निष्कर्ष निकालते हैं और इस निष्कर्ष को सारे ढेर पर लागू करते हैं। इस प्रकार निदर्शन का प्रयोग दैनिक जीवन में आम आदमी द्वारा व्यापक रूप से किया जाता है।

स्टीफन का मत है कि नियमित जनगणनाओं का आयोजन करने से पूर्व सदैव ही निदर्शन का प्रयोग किया जाता रहा है। सन् 1900 से पूर्व सामाजिक अनुसन्धान में निदर्शन का प्रयोग बहुत ही कम हुआ है। **बाउले** ने लन्दन में सर्वप्रथम घरो का अध्ययन करने के लिए दैव निदर्शन पद्धति का प्रयोग किया था। आज तो अनुसन्धान एवं सर्वेक्षण में निदर्शन का प्रयोग एक आवश्यक चरण बन गया है।

निदर्शन की परिभाषा एवं अर्थ

विभिन्न विद्वानों ने निदर्शन को इस प्रकार से परिभाषित किया है :

(1) **गुडे तथा हाट** के अनुसार, "एक निदर्शन जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट होता है, कि एक विस्तृत समूह का एक लघुत्तर प्रतिनिधि है।"[1]

(2) **पी. वी. यंग** के अनुसार, "एक सांख्यिकीय निदर्शन सम्पूर्ण समूह अथवा योग का एक लघुकृत आकार का चित्र है जिससे कि निदर्शन लिया गया है।"[2]

(3) **बोगार्डस** के शब्दों में, "निदर्शन एक पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार इकाइयो के एक समूह में से निश्चित प्रतिशत का चयन है।"[3]

(4) **सिम्पसन तथा काफ्का** के अनुसार, "एक निदर्शन समग्र का वह अंश है जिसका चयन हम अनुसन्धान के उद्देश्य के लिए करते हैं।"[4]

(5) **सिन पाओ येग** के अनुसार "एक साख्यिकीय निदर्शन सम्पूर्ण समूह का प्रतिनिधिक अंश है।"[5]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि **निदर्शन बहुत बड़े समूह का एक छोटा प्रतिनिधि होता है जिसमें समूह के समस्त लक्षण विद्यमान होते हैं।** प्रतिनिधि इकाइयों के अध्ययन द्वारा प्राप्त निष्कर्षों को समस्त समग्र अथवा समूह पर लागू किया जाता है।

निदर्शन के आधार (Bases of Sampling)

प्रश्न यह उठता है कि निदर्शन में थोड़ी-सी इकाइयों को बहुत बड़े समूह का प्रतिनिधि कैसे मान लिया जाता है, इसके मूल आधार निम्नांकित हैं :

(1) **समग्र की सजातीयता** (Homogeneity of Universe)—ऊपरी तौर पर हमें व्यक्तियो एवं तथ्यों में बहुत अधिक असमानताएं दिखाई देती है, यहां तक कि कारखाने में बनने वाली कोई दो वस्तुएं भी पूर्णतया समान नही होती और दो जुड़वां भाई भी समान

1 "A ...

2

3

4 "A sample is that part of the universe which we select for the purpose investigation." —Simpson and Kafka, *Statistics*, p.

5 Hsin Pao Yang, *Fact Finding with Rural People*, p. 35

नही होते, फिर भी यदि हम ध्यानपूर्वक विचार करें या देखें तो ज्ञात होगा कि ऊपरी पर दिखाई देने वाली इस विविधता में भी अन्तर्निहित एकता अथवा समानता है। उदाहरण के लिए, सभी मनुष्यो की शारीरिक बनावट में ऊपरी तौर पर अनेक विभिन्नताएं दृष्टिगोचर होती है, फिर भी शारीरिक दृष्टि से उनमें कई समानताएं विद्यमान है। यही कारण है कि निदर्शन को समग्र का प्रतिनिधि मान लिया जाता है। इस सन्दर्भ में लुण्डबर्ग ने लिखा है, "यदि तथ्यो मे अत्यधिक एकरूपता पाई जाती है अर्थात् सम्पूर्ण तथ्यों की विभिन्न इकाईयों मे अन्तर बहुत कम है तो सम्पूर्ण में से कुछ या कोई इकाई समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करेगी।"[1] इस प्रकार निदर्शन-विधि इस मान्यता पर आधारित है कि विविधताओं में भी समानताएं अन्तर्निहित होती हैं, जिन्हें सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में खोजा जा सकता है।

(2) **प्रतिनिधित्वपूर्ण चुनाव की सम्भावना** (Possibility of Representative Selection)—निदर्शन इस मान्यता पर आधारित है कि सम्पूर्ण समूह में से थोड़ी-सी इकाइयों का चयन इस प्रकार किया जा सकता है कि वे समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकें, किन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि निदर्शन की इकाइयो में वे सभी विशेषताएं हों जो मूल समग्र मे हो।

(3) **उचित परिशुद्धता** (Adequate Accuracy)—कोई भी निदर्शन शत-प्रतिशत रूप से समग्र का प्रतिनिधित्व नही कर सकता फिर भी पर्याप्त मात्रा मे परिशुद्धता प्राप्त की जा सकती है। हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि निदर्शन में इकाइयों की संख्या पर्याप्त हो, ताकि वह प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सके और उनके अध्ययन से निकाले गये निष्कर्ष वास्तविक स्थिति का सही चित्रण कर सकें।

एक प्रतिनिधित्वपूर्ण (श्रेष्ठ) निदर्शन की आवश्यक विशेषताएं (ESSENTIAL CHARACTERISTICS OF A REPRESENTATIVE SAMPLE)

निदर्शन द्वारा सामाजिक घटनाओ के बारे मे हमारे निष्कर्ष कितने यथार्थ एवं वैज्ञानिक होगे, यह बात निर्भर करती है—हमारे निदर्शन की उत्तमता एवं समग्र की प्रतिनिधित्वपूर्णता पर। अत. अध्ययन की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि हमारे निदर्शन मे निम्नांकित विशेषताओ का समावेश हो।

(1) **समग्र का प्रतिनिधित्व** (Representation of Universe)—एक श्रेष्ठ निदर्शन की सर्वप्रथम विशेषता यह है कि वह समग्र का प्रतिनिधित्व करे। ऐसा तभी सम्भव हो सकता है, जब समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन मे सम्मिलित होने का समान अवसर प्राप्त हो। लुण्डबर्ग का मत है कि प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन दो बातो पर निर्भर करता है : (i) अध्ययन तथ्यों में कितनी मात्रा में समानता पायी जाती है, तथा (ii) निदर्शन के चुनाव में किस प्रणाली को अपनाया गया है। श्रेष्ठ निदर्शन प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि समग्र की इकाइयो मे एकरूपता लायी जाय तथा निदर्शन का चुनाव इस प्रकार किया जाय कि प्रत्येक इकाई को निदर्शन मे चुने जाने की स्वतन्त्रता एव समान अवसर प्राप्त हो।

(2) **पर्याप्त आकार** (Adequate Size)—श्रेष्ठ निदर्शन के लिए यह आवश्यक है कि निदर्शन की इकाइयो की सख्या पर्याप्त हो। निदर्शन मे जितनी अधिक इकाइयां होंगी, परिणामो मे उतनी ही अधिक परिशुद्धता आने की सम्भावना रहेगी, यद्यपि सदैव ही यह आवश्यक नही है कि निदर्शन का आकार निदर्शन के प्रतिनिधित्वपूर्ण होने की गारण्टी देता हो। फिर

[1] G. A. Lundberg, *Social Research*, p. 135.

भी यदि हमे दस हजार छात्रों का अध्ययन करना हो और उनमें से केवल दस छात्रों को ही हम प्रतिनिधि निदर्शन के रूप में चुनते हैं तो यह अपेक्षा नही की जा सकती कि वे सभी छात्रों की विशेषताओं का उचित प्रतिनिधित्व करेंगे। निदर्शन का आकार ही नही, वरन् उसके चुनाव का तरीका भी उपयुक्त होना चाहिए। इस सन्दर्भ मे **पी. वी. यंग** ने लिखा है, "निदर्शन का आकार उसकी प्रतिनिधित्वता का आवश्यक बीमा नही है। सापेक्षिक रूप में उचित प्रकार से चुने गये छोटे निदर्शन अनुपयुक्त तरीकों से चुने हुए बड़े निदर्शनो की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय हो सकते हैं।"

(3) **निष्पक्षता** (Free from Bias)—एक श्रेष्ठ निदर्शन को पक्षपात एव मिथ्या-सुझाव से स्वतन्त्र होना चाहिए अन्यथा वह प्रतिनिधित्वपूर्ण होने का दावा नही कर सकता। निदर्शन का चुनाव करते समय इस बात का ध्यान रहे कि वह अनुसन्धानकर्ता की रुचि, स्वार्थ, सुविधा एवं स्वेच्छा पर आधारित न हो, न ही उसमे पूर्व-धारणा या अनुसन्धानकर्ता की असावधानी का कोई प्रभाव हो।

(4) **साधनों के अनुरूप** (According to Resources)—एक प्रतिनिधित्व पूर्ण निदर्शन वह है जो अनुसन्धानकर्ता के पास उपलब्ध साधनों के अनुरूप हो। साधनो को ध्यान में रखकर ही निदर्शन की संख्या, प्रकार और चुनाव-विधि का निश्चय किया जाना चाहिए। साधनो के अनुरूप निदर्शन न होने पर उसमें पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

(5) **उद्देश्यों के अनुरूप** (According to the Aims)—एक श्रेष्ठ निदर्शन वह है जो अनुसन्धान के उद्देश्यों के अनुकूल हो। उदाहरण के लिए, यदि हम ब्यावर नगर के बीड़ी श्रमिकों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना चाहते हैं और हमारे निदर्शन मे हमने ऐसे श्रमिकों का चयन किया है जो बीडी बाधने का कार्य नही करते हैं तो हमारा निदर्शन व्यर्थ हो जायेगा। अतः उत्तम निदर्शन के लिए यह आवश्यक है कि वह अनुसन्धान उद्देश्य के अनुरूप हो।

(6) **सामान्य ज्ञान तथा तर्क पर आधारित** (Based on General Knowledge and Logic)—एक उत्तम निदर्शन वह है जो सामान्य ज्ञान एवं तर्क पर आधारित हो। निदर्शन को तर्क की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए। केवल सूत्रों और नियमों का अन्धानुकरण करने से ही आदर्श निदर्शन का चुनाव नही किया जा सकता। नियमो एव सूत्रों के साथ-साथ निदर्शन के चुनाव मे अनुसन्धानकर्ता को तर्क एवं सामान्य ज्ञान का भी प्रयोग करना चाहिए।

(7) **व्यावहारिक अनुभवों पर आधारित** (Based on Practical Experiences)—एक उत्तम निदर्शन का चयन करने के लिए हमें अन्य अनुभवी अध्ययनकर्ताओं के अनुभवों का भी उपयोग करना चाहिए। यदि जिस क्षेत्र का हम अध्ययन कर रहे हैं, उसका पूर्व मे भी किसी ने अध्ययन किया है तो उससे सम्पर्क कर उसके अनुभवों का लाभ उठाना चाहिए। इसी प्रकार से इसी प्रकृति के यदि कोई अन्य अनुसन्धान किये गये हों तो उनके प्रतिवेदनों एवं निदर्शन-आधारों का लाभ भी उठाया जा सकता है।

(8) **स्वतन्त्रता** (Independence)—समग्र की सभी इकाइयां आपस में स्वतन्त्र होनी चाहिए अर्थात् निदर्शन में किसी इकाई का सम्मिलित होना किसी अन्य इकाई के सम्मिलित होने पर निर्भर न हो। दूसरे शब्दों में समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुने जाने का स्वतन्त्र एवं समान अवसर प्राप्त होना चाहिए।

पार्टेन ने एक श्रेष्ठ निदर्शन की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखा है, "**एक सर्वेक्षण में वह निदर्शन उत्तम होता है जो कुशलता, प्रतिनिधित्व, विश्वसनीयता तथा लोच की**

आवश्यकताओं की पूर्ति करता हो। अनावश्यक व्यय बचाने की दृष्टि से निदर्शन को पर्याप्त छोटा होना चाहिए तथा असह्य त्रुटि को दूर करने के लिए इसे पर्याप्त बड़ा भी होना चाहिए।[1]

निदर्शन चुनाव प्रणाली (विधि) (Procedure of Sample Selection, निदर्शन का चुनाव भी उत्तम निदर्शन का एक पक्ष है। यह एक तकनीकी प्रक्रिया है जिसके लिए अनुभवी एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। निदर्शन के चुनाव में हमे निम्नांकित प्रक्रिया से गुजरना होता है :

(1) **समग्र का निर्धारण** (Determination of Universe)—**जिस समूह या क्षेत्र से निदर्शन का चुनाव किया जाता है, उसे समग्र कहते हैं।** निदर्शन निकालने का सर्वप्रथम चरण है—समग्र को तय करना। समग्र दो प्रकार के हो सकते है—**निश्चित और अनिश्चित।** निश्चित समग्र की इकाइयो की संख्या एवं गांव तथा नगर की जनसंख्या एवं भौगोलिक सीमा तय होती है। उदाहरण के लिए, एक महाविद्यालय के छात्रों की संख्या एवं गांव तथा नगर की जनसख्या और भौगोलिक सीमा निश्चित होती है। ऐसे समग्र में इकाइयों को हम निश्चित रूप से जान सकते है लेकिन कई बार समग्र की इकाइयां अनिश्चित होती हैं। उदाहरण के लिए, लक्स साबुन का प्रयोग करने वाले एव सरिता नामक पत्रिका के पाठकों की सख्या अनिश्चित है। अनिश्चित समग्र की भौगोलिक सीमा भी नही होती। ऐसे समग्र की अनिश्चितता का कारण इसकी निरन्तर परिवर्तनशीलता है। अत: निदर्शन के चुनाव से पूर्व हमें समग्र का निर्धारण कर लेना चाहिए। हमारा समग्र कोई भी भौगोलिक इकाई, गांव, नगर, संस्था, समुदाय एवं सामाजिक घटना हो सकता है।

(2) **निदर्शन की इकाई का निर्धारण** (Determination of Sampling Unit)—समग्र के निर्धारण के बाद दूसरा चरण निदर्शन की इकाइयों को तय करना है। हमें यह तय करना होता है कि हमारे निदर्शन की इकाई क्या होगी? यह इकाई व्यक्ति, संस्था, परिवार, समूह, व्यवसाय और निवास क्षेत्र, आदि कुछ भी हो सकती है। निदर्शन की इकाइया चार प्रकार की होती है

(i) भौगोलिक इकाई, जैसे—एक राज्य, जिला, नगर, गांव एवं वार्ड, आदि।
(ii) भवन सम्बन्धी इकाई—जैसे परिवार, स्कूल, क्लब, चर्च एवं समिति, आदि।
(iii) समूह सम्बन्धी इकाई—जैसे परिवार, स्कूल, क्लब, चर्च एवं समिति, आदि।
(iv) व्यक्तिगत इकाई—जैसे व्यक्ति, स्त्री, पुरुष, श्रमिक, छात्र, अध्यापक एवं कृषक, आदि।

इकाई सदैव स्पष्ट, भ्रमरहित, निश्चित एवं विषय के अनुरूप होनी चाहिए अध्ययनकर्ता को आसानी से उपलब्ध हो जाय।

(3) **स्रोत सूची** (Source List)—वह सूची जिसमें समग्र की समस्त इकाइयों के नाम होते हैं, स्रोत सूची कहलाती है। यह स्रोत सूची तैयार भी मिल सकती है और तैयार करायी भी जा सकती है। **पार्टेन** ने स्रोत-सूची प्राप्त करने के कई ठिकानों का उल्लेख किया है—जैसे जनगणना रिपोर्ट, टेलीफोन डायरेक्ट्री, वेतन-वितरण सूची एवं करदाता, विद्यार्थियो, अध्यापको, मकान मालिको की सूचियां विभिन्न दफ्तरो से प्राप्त की जा सकती हैं। एक अच्छी स्रोत सूची के लिए यह आवश्यक है कि वह पूर्ण, नवीनतम, वैध, विश्वसनीय, विषयानुरूप एव सरलता से प्राप्त की जाने वाली होनी चाहिए।

[1] Mildred Parten, *Survey, Polls and Samples*, p. 293.

(4) **निदर्शन का आकार निर्धारण** (Determination of Sample Size)—निदर्शन प्रक्रिया का चौथा चरण निदर्शन के आकार का निर्धारण है। निदर्शन का आकार बहुत छोटा या बहुत बड़ा नहीं, वरन् समग्र की संख्या एवं प्रकृति के अनुरूप उपयुक्त होना चाहिए। निदर्शन के आकार का परिशुद्धता की मात्रा, समय, लागत तथा संगठन से सीधा सम्बन्ध है। निदर्शन का आकार क्या हो, यह कई बातों पर निर्भर करता है, जैसे समग्र की सजातीयता एवं विषमता, अध्ययन की प्रकृति, अध्ययन की विधि, वर्गों की संख्या, समय एवं धन की उपलब्धि, परिशुद्धता की मात्रा, विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता, आदि।

(5) **निदर्शन पद्धति का चुनाव** (Selection of Sampling Method)—निदर्शन प्रक्रिया का अन्तिम चरण समग्र से निदर्शन निकालने की विधि का चयन करना है। निदर्शन पद्धति का चुनाव अध्ययन की समस्या, समग्र की प्रकृति, धन, समय एवं कार्यकर्ताओं की उपलब्धि एवं साधनों पर निर्भर करता है। निदर्शन पद्धति ऐसी हो जिसका प्रयोग आसानी से किया जा सके तथा निदर्शन निकालने में पक्षपात भी न आए। दैवनिदर्शन, सविचार निदर्शन, स्तरित अथवा निर्दिष्टांश निदर्शन विधियों में से किस विधि का चुनाव किया जायेगा, यह निर्णय अनुसन्धानकर्ता को अपनी सूझबूझ एवं अनुसन्धान संबंधी अपने अनुभव के आधार पर लेना होता है।

निदर्शन प्रणाली के गुण (महत्व)
[MERITS (IMPORTANCE) OF SAMPLING METHOD]

आधुनिक समय में निदर्शन पद्धति का प्रयोग दिनों-दिन बढ़ता ही जा रहा है। वर्तमान समय में संगणना अनुसन्धान बहुत ही असुविधाजनक है, क्योंकि इसमें समय, धन तथा श्रम अधिक मात्रा में चाहिए तथा विशाल क्षेत्र के अध्ययन में यह विधि अनुपयुक्त है। इस सन्दर्भ में **ए. सी. रोजेण्डोर** लिखते है, "यदि सावधानी से चयन किया जाय तो निदर्शन पर्याप्त सस्ता ही नहीं रहता, वरन् ऐसे परिणाम देता है जो बिल्कुल सत्य होते हैं तथा कभी-कभी तो संगणना के परिणामों से भी अधिक सत्य होते है। अतः सावधानीपूर्वक चयन किया गया निदर्शन वास्तव में त्रुटिपूर्ण नियोजित एवं क्रियान्वित संगणना से श्रेष्ठतर रहता है।" **प्रो. रोनाल्ड फिशर** के शब्दों में, "विभ्रमों के गणितीय सिद्धान्त पर आधारित होने के कारण निदर्शन में सूक्ष्मता व परिशुद्धता की धारणा प्रारम्भ से ही प्रधान रहती है।" निदर्शन के गुणों का उल्लेख करते हुए **गुडे एवं हाट** लिखते हैं, "निदर्शन वैज्ञानिक कार्यकर्ता के समय की बचत करके कार्य को अधिक वैज्ञानिक रूप प्रदान करता है। किसी एक दृष्टिकोण से एकत्रित सामग्री के विश्लेषण पर अधिक घण्टे व्यय करने की अपेक्षा वह समय को विभिन्न दृष्टिकोणों से परीक्षा करने में प्रयोग कर सकता है। दूसरे शब्दों में, वह थोड़े मामलो का गहन अध्ययन कर सकता है।" हम अब यहां निदर्शन पद्धति के गुणो (महत्व) का उल्लेख करेंगे :

(1) **समय की बचत** (Saving of Time)—निदर्शन प्रणाली में समग्र में से कुछ इकाइयो का चयन करके उनका अध्ययन किया जाता है, इसलिए इसमें समय की बड़ी बचत होती है। समय की बचत एवं शीघ्र निर्णय आधुनिक युग की मांग है जिसे निदर्शन द्वारा ही पूरा किया जा सकता है।

(2) **धन की बचत** (Saving of Money)—निदर्शन में कम इकाइयों का अध्ययन किया जाता है, अतः इससे धन की पर्याप्त बचत होती है। सामान्यतः सभी लोगों के आर्थिक साधन सीमित होते है। इसलिए सरकारी अध्ययनो के अतिरिक्त धनाभाव में अनुसन्धान का

संचालन एक कठिन कार्य है। निदर्शन में संगणना विधि की तुलना में स्टेशनरी, फार्म्स कार्यकर्ताओं के वेतन, यात्रा भत्ता, आदि पर कम खर्च करना पड़ता है।

(3) **श्रम की बचत (Saving of Labour)**—चूकि निदर्शन में कम इकाइयों का अध्ययन करना पडता है, अत: अधिक श्रम एवं कार्यकर्ताओं की आवश्यकता नहीं होती। इस प्रकार निदर्शन श्रम की बचत को प्रोत्साहन देता है।

(4) **गहन अध्ययन (Intensive Study)**—संगणना विधि में क्षेत्र विस्तृत एवं इकाइयां बिखरी हुई होती है, अत: उनके बारे में मोटी-मोटी बातें ही ज्ञात की जा सकती है। निदर्शन मे अपेक्षाकृत कम इकाइयों का अध्ययन किया जाता है, अत: उनके बारे में सूक्ष्म, विस्तृत एव गहन जानकारी प्राप्त करना सम्भव है।

(5) **परिणामो की परिशुद्धता (Accuracy of Results)**—निदर्शन मे अध्ययनकर्ता का ध्यान कुछ निश्चित इकाइयो पर ही केन्द्रित होता है, अत: उनसे प्राप्त निष्कर्ष अधिक यथा एवं परिशुद्ध होते हैं। यदि निदर्शन का चुनाव सही तरीके से किया गया है तो कई बार इसके निष्कर्ष संगणना-पद्धति के निष्कर्षों से भी अधिक परिशुद्ध होते हैं।

(6) **तथ्यों की पुनर्परीक्षा (Rechecking of Data)**—किसी भी अनुसन्धान मे प्राप्त निष्कर्षों की विश्वसनीयता को ज्ञात करने के लिए उनकी पुनर्परीक्षा की जाती है। चूकि निदर्शन मे कम इकाइयों का अध्ययन किया जाता है, अत: पुन: जांच के लिए उनमे से कुछ इकाइयों का चयन कर अध्ययन करना सरल होता है।

(7) **प्रशासनिक सुविधा (Administrative Convenience)**—निदर्शन में इकाइयो की संख्या कम होने के कारण प्रबन्ध एवं प्रशासन के आयोजन एवं संगठन मे सुविधा रहती है। एक ओर तो अनुसन्धान में कम कार्यकर्ताओं को नियुक्त करना पड़ता है, अत: उन पर नियन्त्रण रखना भी आसान होता है और दूसरी ओर सूचनाए संकलित करने से सम्बन्धित परेशानी भी कम हो जाती है, जिससे अनुसन्धान का संगठन सरल हो जाता है।

(8) **निदर्शन की अनिवार्यता (Essential use of Sampling)**—कई बार सामाजिक अनुसन्धान मे निदर्शन विधि का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है। उदाहरण के लिए, जब भौगोलिक दृष्टि से क्षेत्र बहुत दूर-दूर तक फैला हो, क्षेत्र में इकाइयों की सख्या बहुत अधिक हो, प्रत्येक इकाई से सम्पर्क करना असम्भव हो तथा समग्र का पता लगाना कठिन हो तो ऐसी स्थिति मे अध्ययन के लिए निदर्शन पद्धति ही एकमात्र पद्धति रह जाती है जो अध्ययन को सफल बना सकती है।

निदर्शन प्रणाली के दोष (सीमाएं)
[DEMERITS (LIMITATIONS) OF SAMPLING METHOD]

निदर्शन प्रणाली के जहां कई गुण, लाभ एव उपयोग हैं, वहीं यह दोषों से भी मुक्त नही है। इसके प्रमुख दोष या सीमाएं निम्नांकित है :

(1) **अभिनति (पक्षपात) की सम्भावना (Possibility of Bias)**—निदर्शन विधि का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें पक्षपात की सम्भावना बनी रहती है। ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं रह जाता है। निदर्शन का चुनाव करते समय किसी न किसी रूप में अध्ययनकर्ता का प्रभाव एवं पक्षपात आ ही जाता है। तब निदर्शन द्वारा प्राप्त निष्कर्ष विश्वसनीय एवं प्रामाणिक नहीं रह जाते हैं।

(2) **प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन के चुनाव में कठिनाई (Difficulty in Selecting Representative Samples)**—निदर्शन तभी उपयुक्त होता है जब वह समग्र का प्रतिनिधित्व

करे, किन्तु प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चयन स्वयं एक कठिनाई है। जब क्षेत्र मे अनेक विविधताएं हों और अनुसन्धान का विषय जटिल हो तब तो प्रतिनिधि निदर्शन का चुनाव और भी अधिक कठिन होता है।

(3) **विशेष ज्ञान की आवश्यकता** (Need of Special Knowledge)—चूकि निदर्शन का चयन करना एक तकनीकी प्रक्रिया है, अतः प्रत्येक व्यक्ति से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह उत्तम निदर्शन का चयन कर पायेगा। इसके लिए अध्ययनकर्ता का प्रशिक्षित एवं अनुभवी होना आवश्यक है। निदर्शन निकालने के लिए पर्याप्त सूझबूझ, अन्तर्दृष्टि, निदर्शन के सिद्धान्तों, उसकी कमियों एवं सीमाओं का ज्ञान होना आवश्यक है। इनके अभाव में अनुसन्धानकर्ता भयंकर त्रुटियां कर सकता है।

(4) **निदर्शन पर कायम रहने की कठिनाई** (Difficulty in Sticking to Sample)—निदर्शन में इकाइयों की संख्या कम होती है फिर भी चुनी गई इकाइयों पर कायम रहना कई बार बहुत कठिन होता। उदाहरण के लिए, जब निदर्शन में ऐसी इकाइयों का चयन हो जाता है जो दूर-दूर बिखरी हुई हों, उनसे सम्पर्क करना कठिन हो तो ऐसी स्थिति में उन लोगों के स्थान पर अन्य लोगों का चयन करना पडता है। इस परिवर्तन में निदर्शन में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

(5) **निदर्शन की असम्भावना** (Impossibity of Sampling)—जिस प्रकार से कई अध्ययनों में संगणना-पद्धति का प्रयोग असम्भव होता है, उसी प्रकार से कहीं-कहीं निदर्शन पद्धति को काम में लेना भी असम्भव होता है। उदाहरण के लिए, जब समग्र बहुत छोटा हो, उसमे अनेक विविधताएं हों और सजातीयता का अभाव हो, जब शुद्धता की शत-प्रतिशत आवश्यकता हो और प्रत्येक इकाई अध्ययन की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण हो तो ऐसी स्थिति में निदर्शन विधि अनुपयुक्त होती है और उसके स्थान पर सगणना विधि का ही प्रयोग करना पड़ता है।

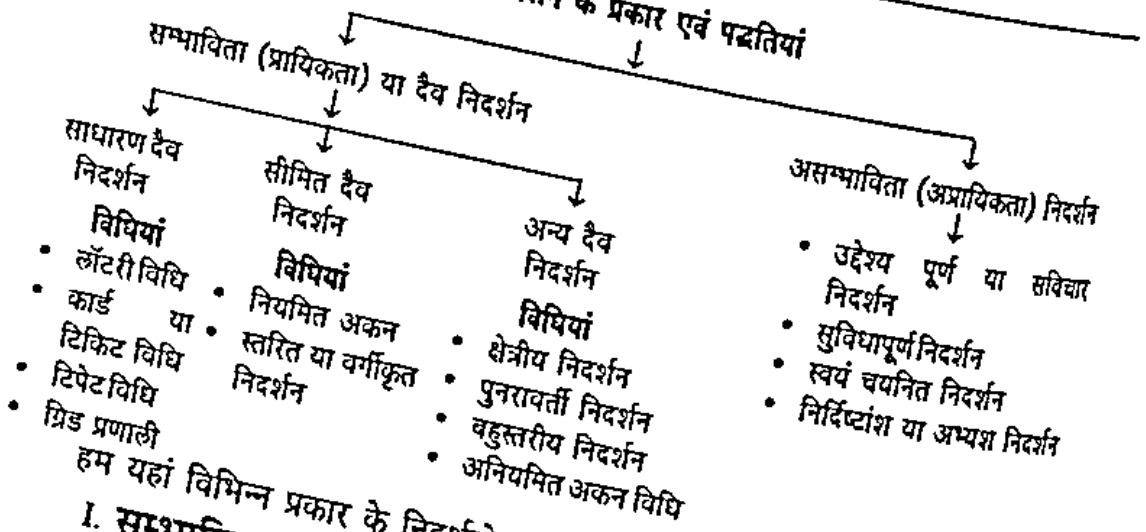
उपर्युक्त सीमाओं के बावजूद भी निदर्शन के महत्व से इन्कार नही किया जा सकता। मूल बात यह है कि निदर्शन का चयन उचित मात्रा मे उचित रीति से किया जाय।

निदर्शन के प्रकार
(TYPES OF SAMPLING)

विभिन्न साख्यिकीविदों एवं समाज-वैज्ञानिकों ने निदर्शन के अनेक प्रकारों का उल्लेख किया है। हम अपने अध्ययन में निदर्शन के किस प्रकार का चयन करेंगे, यह समग्र की प्रकृति, समय, धन, श्रम एवं अनुभव की उपलब्धता, आदि कई बातों पर निर्भर है। निदर्शन के चुनाव की पद्धतियों अथवा प्रकार में दैव निदर्शन, सविचार निदर्शन, वर्गीकृत निदर्शन, बहुस्तरीय निदर्शन, क्षेत्रीय निदर्शन, सुविधाजनक निदर्शन, स्वयं निर्वाचित निदर्शन, आदि प्रमुख हैं।

जहोदा तथा गुडे एवं हाट, आदि विद्वानों ने निदर्शन को उसके चुने जाने के ढंग के आधार पर मुख्य रूप से दो भागों मे विभक्त किया है : (1) सम्भावित (प्रायिकता) निदर्शन (Probability Sampling) तथा (2) असम्भाविता (अप्रायिकता) निदर्शन (Non-Probability Sampling)। इन दोनों ही प्रकार के निदर्शनों को पुनः कई उप-भागों मे बांटा गया है। इस विभाजन को हम अग्र प्रकार प्रकट कर सकते है :

निदर्शन के प्रकार एवं पद्धतियां



हम यहां विभिन्न प्रकार के निदर्शनो की विवेचना करेगे।

I. सम्भाविता (सम्भवना), प्रायिकता अथवा दैव निदर्शन (PROBABILITY OR RANDOM SAMPLING)

सम्भाविता या दैव निदर्शन वह निदर्शन है जिसमें समग्र की प्रत्येक इकाई के चु जाने के समान अवसर होते हैं। इसमे समग्र की इकाइयों के व्यक्तिगत महत्व को समाप्त क उसके स्थान पर 'सम्भावना' (Possibility) को प्रतिष्ठित कर दिया जाता है, जिसमें समग्र की सभी इकाइयो के निदर्शन में चुने जाने की समान सम्भावना होती है। निदर्शन में आने के लिए प्रत्येक इकाई को स्वतन्त्रता प्रदान कर दी जाती है। जहोदा के अनुसार, "सम्भाविता निदर्शन की अनिवार्य विशेषता यह है कि कोई भी जनसंख्या की प्रत्येक इकाई के लिए निदर्शन मे सम्मिलित होने की सम्भावना की गणना कर सकता है।"[1] इस विधि मे निदर्शन का चुनाव ऐसी पद्धतियों के द्वारा किया जाता है जिसमें अवसर मौजूद होता है। यही नहीं वल्कि इसमे साख्यिकीय आधार पर गणना करके यह भी ज्ञात किया जा सकता है कि कौन-सी इकाई के निदर्शन मे चुने जाने की सम्भावना है। इस विधि में अनुसन्धानकर्ता का झुकाव किसी इकाई विशेष के चुनाव की तरफ नही होता, वरन् चुनाव की सम्पूर्ण प्रक्रिया दैव एवं सयोग पर छोड़ दी जाती है। इसलिए ही इसे दैव निदर्शन कहते हैं। जहोदा ने सम्भावित निदर्शन या दैव निदर्शन के चुनाव की तीन विधियों का उल्लेख किया है : (i) सरल दैव निदर्शन, (ii) सीमित या स्तरीकृत दैव निदर्शन, तथा (iii) बहुस्तरीय या अन्य दैव निदर्शन। हम यहां इन तीनों का ही उल्लेख करेगे।

(i) सरल दैव निदर्शन (Simple Random Sampling)

निदर्शन की यही विधि सर्वाधिक प्रचलित है। इस विधि का महत्व इस दृष्टि से भी है कि सम्भावित निदर्शन की अन्य विधियां भी निदर्शन के अन्तिम चुनाव में इसी विधि का प्रयोग करती है। इस विधि को विभिन्न विद्वानो ने इस प्रकार से परिभाषित किया है : जहोदा एवं अन्य के अनुसार, "एक सरल दैव निदर्शन का चुनाव ऐसी प्रक्रिया से किया जाता है जो न केवल समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में आने का समान अवसर

1 "The essential characteristic of probability sampling is that one can specify for each element of the population the probability that it will be included in the sample."
—Selltiz, Jahoda and others, *Research Methods in Social Relations*, 1965, p. 514.

देती है वरन् इच्छित मात्रा में तत्वों के प्रत्येक सम्भावित समन्वय का समान रूप से चुनाव करती है।"[1]

पार्टेन के अनुसार, "दैव निदर्शन विधि का उपयोग उस समय माना जाता है जब चुनाव की विधि ऐसी हो कि समग्र की प्रत्येक इकाई तथा तत्व के चुने जाने का समान अवसर हो।"

हार्पर के अनुसार, "एक दैव निदर्शन वह निदर्शन है जिसका चयन इस प्रकार हुआ हो कि समग्र की प्रत्येक इकाई को सम्मिलित होने का समान अवसर प्राप्त हुआ हो।"[2]

गुडे एवं हाट के अनुसार, "दैव निदर्शन मे समग्र की इकाइयों को इस प्रकार क्रमबद्ध किया जाता है कि चयन प्रक्रिया उस समग्र की प्रत्येक इकाई को चुनाव की समान सम्भावना प्रदान करती है।"[3]

यूल तथा केण्डल के अनुसार, "जब समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में सम्मिलित होने के समान अवसर हों तब समग्र से इकाई का चयन दैव निदर्शन है।"[4]

फ्रैंकपेटस के शब्दो में, "दैव निदर्शन वही होगा जिसमे समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में सम्मिलित होने का समान अवसर हो।"[5]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि दैव निदर्शन असावधानीपूर्ण, अव्यवस्थित तथा लापरवाहीपूर्ण एवं आकस्मिक नहीं होता।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर दैव निदर्शन की निम्न विशेषताएं प्रकट होती है :

(1) दैव निदर्शन में समग्र की प्रत्येक इकाई के निदर्शन में चुने जाने का समान अवसर होता है। उदाहरण के लिए, लॉटरी विधि में किसी भी इकाई को चुनने की सम्भावना होती है।

(2) दैव निदर्शन में प्रत्येक इकाई का चुनाव स्वतन्त्र रूप से होता है अर्थात् एक इकाई का चुनाव दूसरी इकाई के चुनाव को प्रभावित नहीं करता है।

(3) इस विधि द्वारा चुने गये निदर्शन मे विश्वसनीयता का गुण पाया जाता है। इसका तात्पर्य है कि निदर्शन का चुनाव करने वाले के बदल जाने या एक से अधिक बार निदर्शन का चयन करने पर भी हम उन्हीं निष्कर्षों पर पहुंचेंगे जिन पर पहली बार निदर्शन प्राप्त करने के बाद पहुंचे थे।

(4) दैव निदर्शन द्वारा चुने गये निदर्शन प्रतिनिध्यात्मक होते है। इसके दो अर्थ हैं **प्रथम**, इस विधि द्वारा चुने गये निदर्शन में गुण एवं लक्षण वही होते हैं जो समग्र में होते है अर्थात् वह समग्र का प्रतिरूप होता है, **द्वितीय**, इस विधि द्वारा चुने गये निदर्शन के अध्ययन के आधार पर-जो परिणाम प्राप्त किये जाते है, वे परिणाम उस निदर्शन के लिए ही सही नहीं होते वरन् वे समग्र के लिए भी सही होते हैं।

---

1 "A simple random sample is selected by a process that not only gives each element in the population an equal change being included in the sample, but also makes the selection of each possible combination of the desired number of cases equally, likely"
—*Ibid*, pp. 521-22.

2 "A random sample is a sample selected in such a way that every item in the population has an equal chance of being included." —*W M. Harper*

3 " the units of the universe must be so arranged that the selection process gives equal probability of selection to every unit in that universe "

4 G. Udny Yule a

5 Frankyates, *S*
1953.

आवश्यक दशाएं (Essential Conditions)

पार्टेन ने दैव निदर्शन का उपयोग करते समय निम्नांकित बातों को ध्यान मे रखना आवश्यक बताया है

(i) समग्र की इकाइयां स्पष्ट होनी चाहिए एवं उनकी सूची तैयार की जानी चाहिए, (ii) इकाइयो का आकार लगभग समान हो, (iii) प्रत्येक इकाई एक-दूसरे से स्वतन्त्र हो, (iv) निदर्शन चयन की विधि स्वतन्त्र होनी चाहिए, (v) अध्ययनकर्ता की प्रत्येक इकाई तक पहुच सुलभ होनी चाहिए, (vii) चुनी हुई इकाई को न तो छोड़ा जाना चाहिए और न ही उसका प्रतिस्थापन करना चाहिए।

सरल दैव निदर्शन चुनने की प्रविधियां (Techniques of Selecting Simple Random Sample)

सरल दैव निदर्शन विधि के अनुसार निदर्शन निकालने की अनेक प्रविधियां है, उनमें से कुछ अधिक प्रचलित विधियां ये है—लॉटरी विधि, कार्ड विधि, टिपेट विधि, ग्रिड विधि, आदि। हम यहा इन सभी का उल्लेख करेगे।

(1) लॉटरी विधि (Lottery Method)—इस विधि में समग्र की सभी इकाइयों के नाम अथवा नम्बर कागज के छोटे-छोटे टुकड़ों पर लिखकर उन्हे मोड़ लिया जाता है। इन सभी कागज की चिटों को किसी वर्तन, बॉक्स या झोले में डाल कर अच्छी तरह से हिला दिया जाता है ताकि वे भली-भांति मिल जाये। इसके बाद निष्पक्ष व्यक्ति द्वारा अथवा स्वयं आखे बन्द करके उतने ही कागज या चिट निकाल लिए जाते है जितनी इकाइया निदर्शन मे सम्मिलित करनी है। इस प्रकार जो इकाइया दैवयोग से चुनाव में आ जाती हैं, उनका अध्ययन किया जाता है। राज्य सरकार द्वारा लॉटरी में पुरस्कार निकालने के लिए यही विधि काम मे ली जाती है।

(2) कार्ड या टिकिट विधि (Card or Ticket Method)—कार्ड प्रणाली लॉटरी विधि का ही परिवर्तित रूप है। इसमें समग्र की सभी इकाइयो के नाम, नम्बर अथवा कोई प्रतीक एक ही रंग, आकार और मोटाई के कार्डो अथवा टिकटों पर अकित कर दिये जाते है। इन कार्डो को एक ड्रम मे डालकर खूब हिलाया जाता है और एक कार्ड निकाल लिया जाता है। इसके बाद फिर ड्रम को हिलाया जाता है और दूसरा कार्ड निकाला जाता है। इस प्रकार यह क्रिया उतनी ही बार की जाती है जितने कार्ड हमें निकालने है। इस विधि से जो कार्ड निकाले जाते है, उनसे सम्बन्धित इकाइयों का अध्ययन किया जाता है। लॉटरी विधि एवं कार्ड प्रणाली में मूल अन्तर यह है कि लॉटरी में आंखें बन्द करके, चिटें निकाली जाती है जबकि इस विधि मे आंखे खुली रखकर कार्ड निकाले जाते है। इस विधि का उपयोग, करते समय यह सावधानी रखनी चाहिए कि सभी कार्डो का आकार, रग-रूप और मोटाई एक जैसी हो अन्यथा उनके चयन मे पक्षपात आ सकता है।

(3) टिपेट विधि (Tippet Method)—**प्रो. टिपेट** ने चार अंको वाली 10,400 संख्याओं की एक सूची बनाई और इन संख्याओं को बिना किसी क्रम के कई पृष्ठों पर लिख दिया। इनमे से कुछ सख्याएँ इस प्रकार है :

2952	6641	3992	9792	7979	5911	3170	5624
4167	9524	1545	1396	7203	5356	1300	2693
2370	7483	3408	2762	3563	1089	6913	7691
0560	5246	1112	6107	6008	8126	4433	8776
2754	9143	1405	9025	7002	6111	8816	6446

टिपेट संख्याओं से निदर्शन चुनने का तरीका इस प्रकार है—माना कि हमें 500 छात्रों मे से 30 छात्रों का एक निदर्शन निकालना है तो पहले हम सभी 500 छात्रों के नाम को क्रमवार लिख लेगे फिर टिपेट संख्या की पुस्तक का कोई एक पृष्ठ खोलकर उसमें से प्रथम 30 संख्याओं को नोट कर समग्र में से उन्हीं संख्याओं को अध्ययन के लिए चुन लेगे। यदि समग्र की कुल इकाइयों की संख्या कम है तथा प्रथम तीस संख्याओ में कुछ सख्याएँ अधिकतम क्रम संख्या से अधिक है तो उन्हें छोड़ दिया जायेगा और उनके स्थान पर उनके आगे वाली संख्याएं ले ली जाएंगी। टिपेट की संख्याएं अधिक वैज्ञानिक मानी जाती है और उनका उपयोग भी बहुत होता है। यह विधि अधिक शुद्ध है।

(4) **ग्रिड प्रणाली** (Grid System)—इस विधि का उपयोग भौगोलिक क्षेत्र के चुनाव के लिए किया जाता है। यदि किसी नगर, प्रदेश या क्षेत्र में से कुछ इकाइयों का चयन करना हो तो पहले उस क्षेत्र का नक्शा तैयार किया जाता है। इस नक्शे पर ग्रिड प्लेट को रखा जाता है। यह ग्रिड प्लेट सेल्युलायड अथवा किसी पारदर्शक पदार्थ से बनी होती है। इस प्लेट मे वर्गाकार खाने बने रहते हैं जिन पर नम्बर लिखे होते है। यह पहले से ही तय कर लिया जाता है कि निदर्शन में कितनी इकाइयों का चयन करना है, उतनी ही वर्गो को पहले से काट लिया जाता है। ग्रिड को मानचित्र पर रखकर जितने कटे हुए भागों पर मानचित्र का क्षेत्र आता है उन पर निशान लगा दिया जाता है और उन्हें ही निदर्शन का क्षेत्र मानकर अध्ययन किया जाता है।

दैव निदर्शन प्रणाली के गुण (Merits of Random Sampling)

दैव निदर्शन प्रणाली के प्रमुख गुण या लाभ निम्नांकित हैं :

(i) इस विधि मे प्रत्येक इकाई के चुने जाने के समान अवसर होते है, अतः यह विधि प्रतिनिधित्वपूर्ण है तथा इसमें समग्र की अधिकाधिक विशेषताएं विद्यमान होती हैं।

(ii) यह विधि एक वैज्ञानिक विधि है जैसा कि **एकॉफ** कहते हैं, "दैव निदर्शन एक प्रकार से समस्त वैज्ञानिक निदर्शन का आधार है।"

(iii) यह निदर्शन की सबसे सरल विधि है, इसमें जटिल अथवा गूढ सिद्धान्तों का पालन नहीं करना पड़ता है।

(iv) इस विधि में निष्पक्षता का गुण मौजूद है और निदर्शन के चुनाव मे किसी को भी प्राथमिकता नहीं दी जाती है। अतः इसमें पक्षपात आने की सम्भावना नहीं रहती है।

(v) इस विधि में समय, धन और श्रम की भी पर्याप्त बचत होती है, अतः यह विधि मितव्ययितापूर्ण है।

(vi) इस विधि में इकाइयो के चयन में यदि किसी प्रकार की कोई त्रुटि या अशुद्धता रह गई हो तो उसका पता लगाना सरल है।

दैव निदर्शन प्रणाली के दोष (सीमाएं) (Demerits or Limitations of Random Sampling)

दैव निदर्शन प्रणाली के निम्नांकित दोष है :

(i) इस विधि में समग्र की सूची होना आवश्यक है, किन्तु कई बार यह सूची उपलब्ध नही हो पाती तब इस विधि द्वारा निदर्शन ग्रहण करना सम्भव नही होता है।

(ii) यदि समग्र बहुत छोटा हो अथवा कुछ इकाइयां इतनी महत्वपूर्ण हों कि उनका निदर्शन में समावेश अनिवार्य हो तो ऐसी स्थिति में दैव निदर्शन उपयुक्त नहीं होता।

(iii) जब समग्र में बहुत अधिक विविधताएं हों और सजातीयता का अभाव हो तब भी यह विधि उपयुक्त नहीं होती।

(iv) जब समग्र का विस्तार बहुत अधिक हो और इकाइयां दूर-दूर तक फैली हों तब भी उनसे सम्पर्क करना कठिन होता है।

(v) दैव निदर्शन में विकल्प की सम्भावना नहीं होती, विकल्प के लिए इकाइयों में परिवर्तन करना होता है। ऐसी स्थिति में दैव निदर्शन अवैज्ञानिक और पक्षपातपूर्ण हो जाता है।

इन कमियों अथवा दोषों के बावजूद भी दैव निदर्शन प्रणाली के कुछ गुण हैं जिनके कारण इस विधि का बहुत अधिक उपयोग होता है। इस सन्दर्भ में या-लून-चाऊ ने लिखा है, "दैव निदर्शन निश्चित रूप से एक क्षम्य प्रणाली है, यदि समग्र विशाल न हो तथा यदि निदर्शन इकाइयों का चुनाव सम्बन्धित रूप से सरल व कम खर्चीला हो तो यह उन विशाल समग्रों के लिए व्यावहारिक प्रणाली है जिनके तत्वों का केन्द्रीयकरण एक छोटे क्षेत्र में ही हो।"[1]

(2) सीमित दैव निदर्शन (Restricted Random Sample)

सीमित दैव निदर्शन में इकाइयों का चुनाव स्वतन्त्र या अनियमित रूप से नहीं होता है जैसा सरल दैव निदर्शन में होता है। इस विधि द्वारा निदर्शन लेने से पूर्व समग्र की सभी इकाइयों को पहले क्रमबद्ध कर लिया जाता है, फिर उन्हें कुछ वर्गों या श्रेणियों में बांट दिया जाता है। उसके बाद उसमें से निदर्शन का चुनाव किया जाता है। सीमित दैव निदर्शन को दो भागों में बांटा गया है, अतः उनके प्रकार भी दो तरह के हैं—(i) नियमित अंकन विधि, (ii) स्तरित या वर्गीकृत दैव निदर्शन विधि।

(i) नियमित अंकन विधि (Regular Marking Method)

इस विधि में पहले समग्र की सभी इकाइयों को किसी विशेष ढंग, काल अथवा स्थान, आदि के अनुसार व्यवस्थित कर लिया जाता है। इसके बाद यह निश्चय कर लिया जाता है कि समग्र में से हमें कितनी इकाइयों का चयन निदर्शन हेतु करना है। साथ ही एक इकाई से दूसरी इकाई के बीच की संख्यात्मक दूरी को भी तय कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हमें सौ विद्यार्थियों में से दस विद्यार्थियों का चयन करना है तो पहला, दसवां, बीसवां, तीसवां और इसी क्रम में दस विद्यार्थियों का चयन किया जाएगा। इसी प्रकार से काल, स्थान एवं परिस्थिति के अनुसार भी समग्र की इकाइयों को व्यवस्थित करके उनमें से निदर्शन का चुनाव कर लिया जाता है। इस प्रणाली में पक्षपात की कोई सम्भावना नहीं होती।

(ii) स्तरित या वर्गीकृत निदर्शन विधि (Stratified Sampling Method)

यह विधि दैव निदर्शन और सविचार निदर्शन का मिश्रित रूप है, अतः इसे मिश्रित निदर्शन भी कहते हैं। इस विधि का प्रयोग दैव निदर्शन और सविचार निदर्शन दोनों के लाभों को एक साथ प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इसमें सर्वप्रथम समग्र को विचारपूर्वक कई सजातीय वर्गों में विभाजित कर दिया जाता है और उसके बाद प्रत्येक वर्ग में से निश्चित

1 Ya-Lun Chou, *Applied Business Economics Statistics*, p 364.

संख्या में दैव निदर्शन विधि से इकाइयों का चुनाव किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हमे अजमेर या जयपुर नगर में जाति व्यवस्था का अध्ययन करना है तो पहले हम सम्पूर्ण नगर को विभिन्न जातियों में बांट देगे और उसके पश्चात् प्रत्येक जाति या समूह मे से दैव निदर्शन विधि से निश्चित मात्रा में इकाइयों का चयन करेंगे।

इस विधि का प्रयोग उसी समय किया जाता है जब समग्र की सभी इकाइयां सजातीय न हो। जिन इकाइयों के समान लक्षण हों, उन्हे एक वर्ग के अन्तर्गत रख लिया जाता है। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ग में से निश्चित मात्रा मे निदर्शन चुन लिया जाता है। **स्तरित निदर्शन विधि का प्रयोग करते समय हमे निम्नांकित सावधानियां बरतनी चाहिए :**

(i) समग्र की सभी विशेषताओं को ज्ञात करके उसे उनके आधार पर विभिन्न स्तरों में वर्गीकृत कर लिया जाय।

(ii) प्रत्येक स्तर का आकार इतना बड़ा अवश्य हो जिसमे से निदर्शन हेतु इकाइयो का चयन किया जा सके।

(iii) विभिन्न स्तरों (वर्गो) में पूर्णरूपेण सजातीयता हो अर्थात् प्रत्येक वर्ग मे आने वाली इकाइयों में एकरूपता हो तथा एक वर्ग समग्र के एक ही गुण का प्रतिनिधित्व करे।

(iv) विभिन्न स्तरो या वर्गो में से इकाइयों का चुनाव उसी अनुपात में किया जाय जिस अनुपात मे उनकी संख्या समग्र में है।

(v) वर्ग स्पष्ट तथा सुनिश्चित होने चाहिए ताकि प्रत्येक इकाई किसी न किसी वर्ग में आ जाय और कोई भी इकाई एक से अधिक वर्गो मे न आए।

(vi) वर्गो का निर्माण अध्ययन विषय की प्रकृति के अनुरूप हो।

स्तरित निदर्शन के प्रकार (Types of Stratified Sampling)

स्तरित निदर्शन के प्रमुख तीन प्रकार है :

(1) **आनुपातिक स्तरित निदर्शन** (Proportionate Stratified Sampling)—इस विधि के अनुसार प्रत्येक वर्ग मे से निदर्शन हेतु उतनी ही इकाइयों का चयन किया जाता है जिस अनुपात में वर्ग की कुल इकाइयां समग्र में हैं।

(2) **असमानुपातिक स्तरित निदर्शन** (Disproportionate Stratified Sampling)—इस विधि मे प्रत्येक वर्ग में से समान संख्या मे इकाइया चुनी जाती है। इस बात का ध्यान नही रखा जाता है कि उनका समग्र में क्या अनुपात है।

(3) **भारयुक्त स्तरित निदर्शन** (Stratified Weighted Sampling)—इस विधि मे उपर्युक्त दोनों विधियों का मिश्रण पाया जाता है। इस विधि में पहले प्रत्येक वर्ग मे से समान संख्याओं का चुनाव किया जाता है, उसके बाद अधिक संख्या वाले वर्गो की इकाइयों को अधिक भार प्रदान करके उनका प्रभाव बढ़ा दिया जाता है। यह भार उसी अनुपात में प्रदान किया जाता है, जिस अनुपात मे वर्ग की इकाइया समग्र मे होती है।

स्तरित निदर्शन के गुण (Merits of Stratified Sampling)

स्तरित निदर्शन विधि के निम्नाकित गुण हैं :

(i) इस विधि के द्वारा निदर्शन निकालने वाले को निदर्शन के चुनाव में अधिक नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है। इसमें समग्र के प्रत्येक वर्ग की इकाइयो को निदर्शन में स्थान प्राप्त हो जाता है और किसी वर्ग के छूटने की सम्भावना नही रहती। दैव निदर्शन में यद्यपि प्रत्येक इकाई

के चुने जाने की सम्भावना रहती है, किन्तु फिर भी कई बार महत्वपूर्ण वर्ग छूट भी जाते है, जबकि स्तरित निदर्शन में ऐसा नहीं होता है।

(ii) यदि वर्गीकरण उचित [illegible] इकाइयो का चुनाव हो सकता है, [illegible] पर्याप्त मात्रा मे चुना जाना आवश्यक है।

(iii) इस विधि मे इकाइयो का प्रतिस्थापन बहुत ही सरल है। यदि प्रारम्भिक निदर्शन मे चुनी हुई किसी इकाई से सम्पर्क स्थापित नहीं किया जा सकता हो तो उसके स्थान पर उसी वर्ग में से दूसरी इकाई चुन ली जाती है। इस परिवर्तन से निदर्शन के प्रतिनिधित्वपूर्ण होने या न होने पर कोई असर नहीं पड़ता।

हो सकती है। दैव निदर्शन में इकाइयां बिखरी होने के कारण इकाइयों के चुनाव में इस प्रकार का नियन्त्रण नहीं रहता।

स्तरित निदर्शन के दोष (*Demerits of Stratified Sampling*)

इस विधि के दोष निम्नांकित हैं :

(i) यदि वर्गो का निर्माण उचित प्रकार से नहीं किया गया है तो निदर्शन के चुनने मे पक्षपात आने की सम्भावना रहती है। ऐसा भी हो सकता है कि कुछ वर्गों में से अधिक इकाइयों का चुनाव कर लिया जाय और कुछ में से कम का। ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह पाता है।

(ii) प्रतिनिधित्वपूर्ण होने के लिए निदर्शन का सानुपातिक होना आवश्यक है, किन्तु भिन्न-भिन्न वर्गो के आकार में यदि बहुत अधिक भिन्नता है तो उनमें समानुपात का गुण लाना कठिन होता है। साथ ही चुनाव करने वाले व्यक्ति की व्यक्तिगत रुचि का भी निदर्शन के चुनाव पर प्रभाव पड़ता है।

(iii) यदि वर्गो से इकाइयों का चुनाव असमानुपातिक आधार पर किया गया है तो बाद मे भार का प्रयोग करना पडता है। भार प्रदान करते समय व्यक्ति का पक्षपात भी आ सकता है तथा अनुचित भार प्रदान करने पर इकाइयां प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं रह जाती हैं।

(iv) स्तरित निदर्शन में एक गुण रखने वाली इकाइयों का एक वर्ग बनाया जाता है, किन्तु किसी इकाई में एकाधिक गुण होने पर कठिनाई आती है कि उसे किस वर्ग मे रखा जाय।

(3) **अन्य दैव निदर्शन** (*Other Random Samples*)

दैव निदर्शन की कुछ अन्य विधियों के आधार पर दैव निदर्शन के प्रकार निम्न हैं :

(i) बहुस्तरीय निदर्शन, (ii) पुनरावृत्ति निदर्शन, (iii) क्षेत्रीय निदर्शन, (iv) अनियमित अंकन विधि।

(i) **बहुस्तरीय निदर्शन** (*Multi-stage Sampling*)

इस विधि का प्रयोग बहुत बड़े क्षेत्र से निदर्शन निकालने के लिए किया जाता है। चूकि इस विधि मे निदर्शन का चुनाव कई स्तरों से गुजरने के बाद किया जाता है, इसलिए इसे बहुस्तरीय निदर्शन कहा जाता है इस विधि से यदि हम किसी बडे नगर का अध्ययन करना चाहते हैं तो उसके लिए हमें अग्रांकित स्तरों से गुजरना होगा :

(1) सम्पूर्ण नगर को कई क्षेत्रों या वार्डो में बांटा जायेगा। ये क्षेत्र क्षेत्रफल की दृष्टि से एवं निवासियों की दृष्टि से समान होने चाहिए।
(2) प्रत्येक क्षेत्र में से कुछ गृह-समूहों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जाय।
(3) प्रत्येक गृह-समूह में से कुछ परिवारो का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जाय।
(4) प्रत्येक परिवार में से एक व्यक्ति को अध्ययन के लिए चुना जाय।

इस प्रकार इस विधि में अन्तिम चुनाव कई चरणों में जाकर होता है। इस विधि मे

ते ही अधिकाधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त किया जा सकता है।

(ii) **पुनरावृत्ति निदर्शन** (Repeated Sampling)

कई वार ऐसा भी होता है कि पहली वार में चयनित निदर्शन से वांछित एवं आवश्यक परिणाम प्राप्त नही होते हैं, ऐसी स्थिति में निदर्शन कार्य एक से अधिक वार किया जाता है। इसलिए इसे पुनरावृत्ति निदर्शन कहते है। अनेक निदर्शन होने के कारण इसे बहु निदर्शन (Multiple Sample) भी कहते हैं। इस विधि का प्रयोग करने का प्रमुख कारण सम्भावित त्रुटियों को दूर करना है।

(iii) **क्षेत्रीय निदर्शन** (Area Sampling)

इस विधि में समग्र को पहले छोटे-छोटे क्षेत्रों मे विभाजित करते है, तत्पश्चात् सम्पूर्ण क्षेत्र का ही अध्ययन किया जाता है। चूंकि इसमे इकाइयों के एक समूह का अध्ययन किया जाता है, इसलिए इसे संभाग निदर्शन (Cluster Sampling) भी कहते हैं। इसे स्पष्ट करते हुए **मोजर** एवं **कालटन** लिखते है, "जब इकाइयों के सम्पूर्ण समूह को ही निदर्शन के रूप मे चुन लिया जाता है, तब यह चयन प्रक्रिया 'संभाग निदर्शन' कहलाती है।" क्षेत्रीय निदर्शन का उपयोग कृषि क्षेत्रों के अध्ययन के लिए विशेष रूप से किया जाता है। अपराधी क्षेत्र एवं जनसंख्या अध्ययनों के लिए भी इस विधि का प्रयोग किया जाता है।

(iv) **अनियमित अंकन प्रणाली** (Irregular Marking Method)

इस विधि से निदर्शन का चुनाव करने के लिए भी पहले समग्र की समस्त इकाइयो की सूची बना ली जाती है तथा प्रथम और अन्तिम अक को छोड़कर शेष इकाइयों की सूची में से निर्धारित मात्रा में अनियमित ढंग से इकाइयों पर निशान लगा दिया जाता है। उदाहरण के लिए, सौ छात्रों मे से दस छात्रो का निदर्शन लेने के लिए पहले हम इन सभी के नामों की एक सूची तैयार करेंगे। तत्पश्चात एक से दस, दस से बीस, बीस से तीस और इसी प्रकार से अन्य वर्गो में भी प्रत्येक वर्ग में से किसी भी एक इकाई पर सही का निशान लगा देंगे और इस प्रकार कुल दस इकाइयों का चयन कर लिया जायेगा। इस विधि में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

II. असम्भाविता (अप्रायिकता) निदर्शन
(NON-PROBABILITY SAMPLING)

असम्भाविता निदर्शन सम्भाविता निदर्शन के विपरीत होते है। इसमें सम्भावना एवं संयोग का कोई महत्व नहीं होता है। इसलिए ही इसे असम्भाविता निदर्शन कहते है। इसमे निदर्शन की इकाइयों का चयन अनुसन्धानकर्ता की इच्छा पर निर्भर करता है। इसमें न तो

के चुने जाने की सम्भावना रहती है, किन्तु फिर भी कई बार महत्वपूर्ण वर्ग छूट भी जाते है, जबकि स्तरित निदर्शन मे ऐसा नही होता है।

(ii) यदि वर्गीकरण उचित प्रकार से किया गया है तो थोड़ी इकाइयों से ही प्रतिनिधि इकाइयों का चुनाव हो सकता है, जबकि दैव निदर्शन में प्रतिनिधित्वता के लिए इकाइयों का पर्याप्त मात्रा मे चुना जाना आवश्यक है।

(iii) इस विधि मे इकाइयों का प्रतिस्थापन बहुत ही सरल है। यदि प्रारम्भिक निदर्शन मे चुनी हुई किसी इकाई से सम्पर्क स्थापित नहीं किया जा सकता हो तो उसके स्थान पर उसी वर्ग में से दूसरी इकाई चुन ली जाती है। इस परिवर्तन से निदर्शन के प्रतिनिधित्वपूर्ण होने या न होने पर कोई असर नही पड़ता।

(iv) वर्गीकरण द्वारा निदर्शन का चुनाव इस प्रकार से किया जा सकता है कि निदर्शन की अधिकाश इकाइयां भौगोलिक दृष्टि से केन्द्रित हों। ऐसे अध्ययन में धन व समय की बचत हो सकती है। दैव निदर्शन मे इकाइयां बिखरी होने के कारण इकाइयों के चुनाव मे इस प्रकार का नियन्त्रण नही रहता।

स्तरित निदर्शन के दोष (Demerits of Stratified Sampling)

इस विधि के दोष निम्नांकित हैं :

(i) यदि वर्गों का निर्माण उचित प्रकार से नहीं किया गया है तो निदर्शन के चुनने मे पक्षपात आने की सम्भावना रहती है। ऐसा भी हो सकता है कि कुछ वर्गों में से अधिक इकाइयो का चुनाव कर लिया जाय और कुछ में से कम का। ऐसी स्थिति मे निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह पाता है।

(ii) प्रतिनिधित्वपूर्ण होने के लिए निदर्शन का सानुपातिक होना आवश्यक है, किन्तु भिन्न-भिन्न वर्गों के आकार मे यदि बहुत अधिक भिन्नता है तो उनमें समानुपात का गुण लाना कठिन होता है। साथ ही चुनाव करने वाले व्यक्ति की व्यक्तिगत रुचि का भी निदर्शन के चुनाव पर प्रभाव पड़ता है।

(iii) यदि वर्गों से इकाइयो का चुनाव असमानुपातिक आधार पर किया गया है तो बाद में भार का प्रयोग करना पड़ता है। भार प्रदान करते समय व्यक्ति का पक्षपात भी आ सकता है तथा अनुचित भार प्रदान करने पर इकाइयां प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं रह जाती हैं।

(iv) स्तरित निदर्शन में एक गुण रखने वाली इकाइयों का एक वर्ग बनाया जाता है, किन्तु किसी इकाई मे एकाधिक गुण होने पर कठिनाई आती है कि उसे किस वर्ग में रखा जाय।

(3) **अन्य दैव निदर्शन** (Other Random Samples)

दैव निदर्शन की कुछ अन्य विधियो के आधार पर दैव निदर्शन के प्रकार निम्न है : (i) बहुस्तरीय निदर्शन, (ii) पुनरावृत्ति निदर्शन, (iii) क्षेत्रीय निदर्शन, (iv) अनियमित अकन विधि।

(i) **बहुस्तरीय निदर्शन** (Multi-stage Sampling)

इस विधि का प्रयोग बहुत बडे क्षेत्र से निदर्शन निकालने के लिए किया जाता है। चूंकि इस विधि में निदर्शन का चुनाव कई स्तरो से गुजरने के बाद किया जाता है, इसलिए इसे बहुस्तरीय निदर्शन कहा जाता है इस विधि से यदि हम किसी बड़े नगर का अध्ययन करना चाहते है तो उसके लिए हमे अग्राकित स्तरों से गुजरना होगा :

(1) सम्पूर्ण नगर को कई क्षेत्रों या वार्डों में बांटा जायेगा। ये क्षेत्र क्षेत्रफल की दृष्टि से एवं निवासियों की दृष्टि से समान होने चाहिए।
(2) प्रत्येक क्षेत्र में से कुछ गृह-समूहों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जाय।
(3) प्रत्येक गृह-समूह में से कुछ परिवारों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जाय।
(4) प्रत्येक परिवार मे से एक व्यक्ति को अध्ययन के लिए चुना जाय।

से ही अधिकाधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त किया जा सकता है।

(ii) **पुनरावृत्ति निदर्शन** (Repeated Sampling)

कई बार ऐसा भी होता है कि पहली बार मे चयनित निदर्शन से वांछित एवं आवश्यक परिणाम प्राप्त नहीं होते हैं, ऐसी स्थिति में निदर्शन कार्य एक से अधिक बार किया जाता है। इसलिए इसे पुनरावृत्ति निदर्शन कहते हैं। अनेक निदर्शन होने के कारण इसे बहु निदर्शन (Multiple Sample) भी कहते हैं। इस विधि का प्रयोग करने का प्रमुख कारण सम्भावित त्रुटियो को दूर करना है।

(iii) **क्षेत्रीय निदर्शन** (Area Sampling)

इस विधि में समग्र को पहले छोटे-छोटे क्षेत्रो में विभाजित करते है, तत्पश्चात् सम्पूर्ण क्षेत्र का ही अध्ययन किया जाता है। चूंकि इसमें इकाइयों के एक समूह का अध्ययन किया जाता है, इसलिए इसे सभाग निदर्शन (Cluster Sampling) भी कहते है। इसे स्पष्ट करते हुए **मोजर** एवं **कालटन** लिखते हैं, "जब इकाइयों के सम्पूर्ण समूह को ही निदर्शन के रूप मे चुन लिया जाता है, तब यह चयन प्रक्रिया 'सभाग निदर्शन' कहलाती है।" क्षेत्रीय निदर्शन का उपयोग कृषि क्षेत्रों के अध्ययन के लिए विशेष रूप से किया जाता है। अपराधी क्षेत्र एवं जनसख्या अध्ययनों के लिए भी इस विधि का प्रयोग किया जाता है।

(iv) **अनियमित अंकन प्रणाली** (Irregular Marking Method)

इस विधि से निदर्शन का चुनाव करने के लिए भी पहले समग्र की समस्त इकाइयों की सूची बना ली जाती है तथा प्रथम और अन्तिम अंक को छोड़कर शेष इकाइयों की सूची में से निर्धारित मात्रा में अनियमित ढंग से इकाइयों पर निशान लगा दिया जाता है। उदाहरण के लिए, सौ छात्रों मे से दस छात्रों का निदर्शन लेने के लिए पहले हम इन सभी के नामों की एक सूची तैयार करेंगे। तत्पश्चात एक से दस, दस से बीस, बीस से तीस और इसी प्रकार से अन्य वर्गो में भी प्रत्येक वर्ग में से किसी भी एक इकाई पर सही का निशान लगा देगे और इस प्रकार कुल दस इकाइयो का चयन कर लिया जायेगा। इस विधि मे पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

II. असम्भाविता (अप्रायिकता) निदर्शन
(NON-PROBABILITY SAMPLING)

असम्भाविता निदर्शन सम्भाविता निदर्शन के विपरीत होते है। इसमें सम्भावना एवं । इसमे न तो

के चुने जाने की सम्भावना रहती है, किन्तु फिर भी कई बार महत्वपूर्ण वर्ग छूट भी जाते है, जबकि स्तरित निदर्शन मे ऐसा नहीं होता है।

(ii) यदि वर्गीकरण उचित प्रकार से किया गया है तो थोड़ी इकाइयों से ही प्रतिनिधि इकाइयों का चुनाव हो सकता है, जबकि दैव निदर्शन में प्रतिनिधित्वता के लिए इकाइयो का पर्याप्त मात्रा मे चुना जाना आवश्यक है।

(iii) इस विधि मे इकाइयों का प्रतिस्थापन बहुत ही सरल है। यदि प्रारम्भिक निदर्शन मे चुनी हुई किसी इकाई से सम्पर्क स्थापित नही किया जा सकता हो तो उसके स्थान पर उसी वर्ग में से दूसरी इकाई चुन ली जाती है। इस परिवर्तन से निदर्शन के प्रतिनिधित्वपूर्ण होने या न होने पर कोई असर नही पड़ता।

(iv) वर्गीकरण द्वारा निदर्शन का चुनाव इस प्रकार से किया जा सकता है कि निदर्शन की अधिकांश इकाइयां भौगोलिक दृष्टि से केन्द्रित हों। ऐसे अध्ययन में धन व समय की बचत हो सकती है। दैव निदर्शन मे इकाइयां बिखरी होने के कारण इकाइयों के चुनाव में इस प्रकार का नियन्त्रण नही रहता।

स्तरित निदर्शन के दोष (Dements of Stratified Sampling)

इस विधि के दोष निम्नांकित है :

(i) यदि वर्गो का निर्माण उचित प्रकार से नहीं किया गया है तो निदर्शन के चुनने मे पक्षपात आने की सम्भावना रहती है। ऐसा भी हो सकता है कि कुछ वर्गों में से अधिक इकाइयो का चुनाव कर लिया जाय और कुछ मे से कम का। ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह पाता है।

(ii) प्रतिनिधित्वपूर्ण होने के लिए निदर्शन का सानुपातिक होना आवश्यक है, किन्तु भिन्न-भिन्न वर्गो के आकार में यदि बहुत अधिक भिन्नता है तो उनमें समानुपात का गुण लाना कठिन होता है। साथ ही चुनाव करने वाले व्यक्ति की व्यक्तिगत रुचि का भी निदर्शन के चुनाव पर प्रभाव पड़ता है।

(iii) यदि वर्गो से इकाइयो का चुनाव असमानुपातिक आधार पर किया गया है तो बाद में भार का प्रयोग करना पड़ता है। भार प्रदान करते समय व्यक्ति का पक्षपात भी आ सकता है तथा अनुचित भार प्रदान करने पर इकाइया प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह जाती है।

(iv) स्तरित निदर्शन मे एक गुण रखने वाली इकाइयों का एक वर्ग बनाया जाता है, किन्तु किसी इकाई मे एकाधिक गुण होने पर कठिनाई आती है कि उसे किस वर्ग में रखा जाय।

(3) **अन्य दैव निदर्शन** (Other Random Samples)

दैव निदर्शन की कुछ अन्य विधियों के आधार पर दैव निदर्शन के प्रकार निम्न है :

(i) बहुस्तरीय निदर्शन, (ii) पुनरावृत्ति निदर्शन, (iii) क्षेत्रीय निदर्शन, (iv) अनियमित अकन विधि।

(i) **बहुस्तरीय निदर्शन** (Multi-stage Sampling)

इस विधि का प्रयोग बहुत बडे क्षेत्र से निदर्शन निकालने के लिए किया जाता है। चूकि इस विधि में निदर्शन का चुनाव कई स्तरों से गुजरने के बाद किया जाता है, इसलिए इसे बहुस्तरीय निदर्शन कहा जाता है इस विधि से यदि हम किसी बडे नगर का अध्ययन करना चाहते है तो उसके लिए हमे अग्राकित स्तरों से गुजरना होगा :

(1) सम्पूर्ण नगर को कई क्षेत्रों या वार्डों मे बांटा जायेगा। ये क्षेत्र क्षेत्रफल की दृष्टि से एवं निवासियों की दृष्टि से समान होने चाहिए।
(2) प्रत्येक क्षेत्र में से कुछ गृह-समूहों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जाय।
(3) प्रत्येक गृह-समूह में से कुछ परिवारों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जाय।
(4) प्रत्येक परिवार में से एक व्यक्ति को अध्ययन के लिए चुना जाय।

इस प्रकार इस विधि में अन्तिम चुनाव कई चरणो में जाकर होता है। इस विधि में स्तरित निदर्शन विधि एवं दैव निदर्शन विधि दोनों का प्रयोग किया जाता है। यदि सावधानीपूर्वक इसका प्रयोग किया जाय तो इसमें दोनों के लाभ प्राप्त हो सकते है तथा कम से कम इकाइयो से ही अधिकाधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त किया जा सकता है।

(ii) **पुनरावृत्ति निदर्शन** (Repeated Sampling)

कई बार ऐसा भी होता है कि पहली बार में चयनित निदर्शन से वांछित एव आवश्यक परिणाम प्राप्त नहीं होते हैं, ऐसी स्थिति में निदर्शन कार्य एक से अधिक बार किया जाता है। इसलिए इसे पुनरावृत्ति निदर्शन कहते है। अनेक निदर्शन होने के कारण इसे बहु निदर्शन (Multiple Sample) भी कहते हैं। इस विधि का प्रयोग करने का प्रमुख कारण सम्भावित त्रुटियों को दूर करना है।

(iii) **क्षेत्रीय निदर्शन** (Area Sampling)

इस विधि में समग्र को पहले छोटे-छोटे क्षेत्रों में विभाजित करते है, तत्पश्चात् सम्पूर्ण क्षेत्र का ही अध्ययन किया जाता है। चूंकि इसमें इकाइयों के एक समूह का अध्ययन किया जाता है, इसलिए इसे संभाग निदर्शन (Cluster Sampling) भी कहते है। इसे स्पष्ट करते हुए **मोजर** एवं **कालटन** लिखते है, "जब इकाइयों के सम्पूर्ण समूह को ही निदर्शन के रूप मे चुन लिया जाता है, तब यह चयन प्रक्रिया 'संभाग निदर्शन' कहलाती है।" क्षेत्रीय निदर्शन का उपयोग कृषि क्षेत्रों के अध्ययन के लिए विशेष रूप से किया जाता है। अपराधी क्षेत्र एवं जनसख्या अध्ययनों के लिए भी इस विधि का प्रयोग किया जाता है।

(iv) **अनियमित अंकन प्रणाली** (Irregular Marking Method)

इस विधि से निदर्शन का चुनाव करने के लिए भी पहले समग्र की समस्त इकाइयों की सूची बना ली जाती है तथा प्रथम और अन्तिम अंक को छोड़कर शेष इकाइयों की सूची में से निर्धारित मात्रा में अनियमित ढंग से इकाइयो पर निशान लगा दिया जाता है। उदाहरण के लिए, सौ छात्रों में से दस छात्रों का निदर्शन लेने के लिए पहले हम इन सभी के नामों की एक सूची तैयार करेगे। तत्पश्चात एक से दस, दस से बीस, बीस से तीस और इसी प्रकार से अन्य वर्गो में भी प्रत्येक वर्ग में से किसी भी एक इकाई पर सही का निशान लगा देगे और इस प्रकार कुल दस इकाइयो का चयन कर लिया जायेगा। इस विधि में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

II. असम्भाविता (अप्रायिकता) निदर्शन
(NON-PROBABILITY SAMPLING)

प्रत्येक इकाई के निदर्शन में सम्मिलित होने के और न उसके चुने जाने की ही सम्भावना होती है। इसमें तो अध्ययनकर्ता उन इकाइयों का चुनाव करता है जो अध्ययनकर्ता विषय या समस्या के उद्देश्यो एवं सुविधा के अनुरूप हों। इसके प्रमुख प्रकारों में सविच निदर्शन, सुविधापूर्ण निदर्शन, स्वयं चयनित निदर्शन एवं निर्दिष्टांश या अभ्यंश निदर्शन आदि प्रमुख है।

(1) उद्देश्यपूर्ण या सविचार निदर्शन विधि (Purposive Sampling Method)

जब अनुसन्धानकर्ता जानबूझकर किसी विशिष्ट उद्देश्य से समग्र में से अध्ययन हेतु कुछ इकाइयो का चुनाव करता है तो उसे उद्देश्यपूर्ण अथवा सविचार निदर्शन कहते हैं। इस प्रकार के चुनाव मे चुनने वाले की इच्छा, उसका निर्णय तथा उद्देश्य ही प्रधान होता है, आकस्मिकता पर कुछ भी नही छोड़ा जाता। इस विधि का मुख्य आधार यह है कि अनुसन्धानकर्ता पहले से ही समग्र की इकाइयो के बारे में जानकारी रखता है। **एल्डोफ जैन्सन** के शब्दो मे, "सविचार निदर्शन से तात्पर्य इकाइयों के समूह को इस प्रकार चुनने से है कि चुने हुए वर्ग मिलकर जहां तक हो सके, वही औसत अथवा अनुपात प्रदान करें जो समग्र मे है।"[1]

जहोदा तथा **कुक** के शब्दों मे, "उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के पीछे यह आधारभूत मान्यता होती है कि उचित निर्णय तथा उपयुक्त कुशलता के साथ व्यक्ति निदर्शन में सम्मिलित करने हेतु उन मामलो को चुन सकता है तथा इस प्रकार ऐसे निदर्शनो का विकास कर सकता है जो उसकी आवश्यकताओ के अनुसार सन्तोषजनक है।"[2] इस प्रकार सविचार अथवा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन में अनुसन्धानकर्ता अपने उद्देश्य को ध्यान मे रखते हुए उन्ही इकाइयो का चयन करता है जो क्षेत्र का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करती हों।

सविचार निदर्शन की विशेषताएं (लक्षण) (Characteristics of Purposive Sampling)

(i) इसमें अनुसन्धानकर्ता समग्र की प्रकृति, गुणो तथा इकाइयो की विशेषताओं से पू परिचित होता है, अतः वह यह जानता है कि किन इकाइयों को चुनना अध्ययन की दृ से लाभप्रद रहेगा।

(ii) सविचार निदर्शन मे निदर्शनों का चुनाव इस तरह से किया जाता है कि वे अध्ययन के उद्देश्यो की पूर्ति करें।

(iii) इस प्रकार के निदर्शन में चूकि अनुसन्धानकर्ता अपनी इच्छानुसार निदर्शनों का चुनाव करता है, अतः पक्षपात की सम्भावना अधिक रहती है।

सविचार निदर्शन के गुण (Merits of Purposive Sampling)

(i) यह अध्ययन पद्धति कम खर्चीली है क्योकि इसमे निदर्शन का आकार बहुत छोटा होता है।

(ii) इस विधि मे निदर्शन का आकार बहुत छोटा किन्तु अपेक्षाकृत अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है।

---

1 Adolph Jonson, *Report on the Representative Method in Statistics.*

2 "The basic assumption behind the purposive sampling is that with good judgement and an appropriate strategy, one can hand pick the cases to be included in the sample and thus develops sample that are satisfactory in relation to one's need"
—Jahoda and Cook, *op. cit*, p 520.

(iii) यह विधि ऐसे अनुसन्धानों में विशेष रूप से उपयोगी होती है जिनमे समग्र की कुछ इकाइयों का चुना जाना विशेष रूप से उपयोगी होता है। उदाहरण के लिए, यदि हम भारत में लोहा और इस्पात उद्योग का सर्वेक्षण करना चाहते हैं तो हमें टाटा लौह इस्पात कम्पनी का अवश्य अध्ययन करना होगा। यदि इसके स्थान पर हम दैव निदर्शन विधि अपनाते हैं तो टाटा कम्पनी का चुनाव हो भी सकता है और नही भी।

(iv) यह विधि पूर्वगामी अध्ययनों मे विशेष लाभदायक है।

सविचार निदर्शन के दोष (Demerits of Purposive Sampling)

सविचार निदर्शन के जहां कई गुण हैं, वही यह दोषो से भी मुक्त नहीं है। **पार्टेन** लिखते हैं, "समस्त संख्याशास्त्रियों को सविचार निदर्शन के पक्ष में एक शब्द भी नहीं कहना है।" **ने मैन** (Ney Man) ने इस विधि को 'बेकार' (Useless) कहा है। **स्नेडकोर** ने इस प्रणाली के निम्नांकित दोषों का उल्लेख किया है :

(1) इस विधि के अध्ययनकर्ता को समग्र का पहले से ज्ञान होना चाहिए जो सदैव सम्भव नहीं होता।

(2) इसमें इकाइयों के चुनाव में पक्षपात आने की पूरी-पूरी सम्भावना बनी रहती है, अतः परिणाम अवैज्ञानिक और अशुद्ध हो जाते हैं।

(3) निदर्शन की अशुद्धता का पता लगाने की मान्यताएं प्रचलित हैं, उनमें से एक भी इस विधि में नहीं पायी जाती।

(4) इस प्रणाली द्वारा निष्कर्षों की परिशुद्धता की मात्रा बहुत कम होती है।

(5) इसमें इकाइयों के चुनाव में न्यायपूर्ण निर्णय की अपेक्षा व्यक्तिगत सुझाव का अधिक महत्व होता है।

(6) इसके आधार पर सम्पूर्ण समग्र की विशेषताओ को नहीं समझा जा सकता।

(ii) सुविधापूर्ण निदर्शन (Convenience Sampling)

जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है कि इसमें निदर्शन का चुनाव अध्ययनकर्ता की सुविधानुसार किया जाता है। अनुसन्धानकर्ता निदर्शन का चुनाव करने से पूर्व समग्र, धन, श्रम, इकाइयों से सम्पर्क करने की सुविधा, स्रोत सूची (Source list) की उपलब्धता, आदि बातों को ध्यान में रखता है। इसे अनियमित आकस्मिक अवसरवादी तथा लापरवाही पूर्ण

पूर्णतया स्पष्ट न हो, (ii) जब निदर्शन की इकाइयां स्पष्ट न हो तथा (iii) जब स्रोत सूची अप्राप्य हो। यह विधि सरल, कम खर्च वाली, गहन अध्ययन एवं यथार्थ निदर्शन की सम्भावना के गुण से युक्त है।

(iii) स्वयं चयनित निर्वाचित निदर्शन (Self Selected Sampling)

कई बार निदर्शन का चुनाव नहीं किया जाता वरन् सम्बन्धित व्यक्ति स्वयं ही निदर्शन मे सम्मिलित होने का प्रस्ताव करता है। इसलिए ही इसे स्वयं चयनित निदर्शन कहते हैं। उदाहरण के लिए, कोई साबुन कम्पनी यह जानना चाहती है कि उसके साबुन को कितने लोगो ने पसन्द किया है तो रेडियो, टेलीविजन एवं समाचार-पत्रों द्वारा इसकी घोषणा करवा दी जाती कि लोग अमुक साबुन के बारे में अपनी राय अमुक पते पर भेजें। कई बार

समाचार-पत्रों मे प्रश्नावली प्रकाशित करा दी जाती है जिसे इच्छुक व्यक्ति भरकर सम्बन्धित संस्था या व्यक्ति को भेजते है।

(iv) **निर्दिष्टांश अथवा अभ्यंश निदर्शन** (Quota Sampling)

यह वर्गीय निदर्शन का ही एक रूप है। इसमें सर्वप्रथम समग्र को कई वर्गों में विभाजित किया जाता है। फिर प्रत्येक वर्ग मे से चुनी जाने वाली इकाइयों की संख्या तय कर ली जाती है। इस निश्चित संख्या को ही निर्दिष्टांश कहते हैं। इसके बाद अनुसन्धानकर्ता प्रत्येक वर्ग मे से निर्धारित मात्रा मे अपनी इच्छानुसार इकाइयों का चुनाव कर लेता है। **जहोदा तथा कुक** के अनुसार, "निर्दिष्टांश निदर्शन का प्राथमिक लक्ष्य ऐसे निदर्शन का चयन करना है जो ऐसे समग्र का लघु रूप है जिसका सामान्यीकरण किया है, अतः इसे समग्र का प्रतिनिधित्व करने वाला कहा गया है।" उदाहरण के लिए, एक महाविद्यालय के छात्रों का इस विधि से अध्ययन करने के लिए पहले सभी छात्रो को कला, विज्ञान और वाणिज्य संकायो में विभाजित कर दिया जाता है, उसके बाद प्रत्येक संकाय से 50-50 छात्रों का चयन अध्ययनकर्ता अपनी इच्छानुसार कर लेता है। चूकि इस विधि में अध्ययनकर्ता को इकाइयों के चुनाव की स्वतन्त्रता होती है, अतः चुनाव के समय पक्षपात की सम्भावना रहती है। इस सन्दर्भ में **फ्रेंकयेट्स** ने लिखा है, "इस विधि में पक्षपात की हर समय सम्भावना बनी रहती है। अत. उन अनुसन्धानो में जिनमें पूर्ण पक्षपात रहित निष्कर्षों की अपेक्षा की जाती हो, निर्दिष्टांश विधि को अनुसन्धान की एक उपयोगी विधि के रूप मे प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिए।" **मोजर** कहते हैं कि यह विधि देखने में सरल है, किन्तु अध्ययनकर्ताओं पर कठोर नियन्त्रण लागू करती है। फिर भी यह विधि धन और समय की दृष्टि से कम खर्चीली है।

निर्दिष्टांश निदर्शन के चरण—(i) अध्ययन किए जाने वाले समग्र को पहले **कुछ विशेषताओ के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है,** (ii) समग्र की ज्ञात, मान्य या अनुमानित रचना के **अनुपात का निर्धारण किया जाता है।** (iii) उत्तरदाताओं के **अभ्यंश** (Quota) **का निर्धारण** किया जाता है, (iv) अभ्यंश में से दिये गये आधारों पर स्वेच्छा से **इकाइयों का चयन** कर उनका अध्ययन किया जाता है।

निर्दिष्टांश निदर्शन के गुण—(1) इससे आर्थिक बचत होती है, (2) इसमें इकाइयो का प्रशासन सरल है, (3) इसमें क्षेत्रीय कार्यों की गति तेज होती है तथा (4) अभ्यंश के लिए निदर्शन के ढांचे की आवश्यकता नहीं होती।

निर्दिष्टांश निदर्शन की सीमाएं (दोष)—(1) इसमें समग्र की सभी विशेषताओं का समानुपातिक अभ्यंश तय नहीं हो सकता, (2) अध्ययनकर्ता अपनी सुविधा से इकाइयों का चुनाव करता है, अतः यह अवैज्ञानिक है, (3) इसमें समग्र का वास्तविक प्रतिनिधित्व नही हो पाता, (4) त्रुटियो की गणना सम्भव नहीं हो पाती, (5) इसमें अभ्यंश निदर्शन पर उचित रूप से नियन्त्रण नहीं हो पाता।

सम्भाविता एवं असम्भाविता निदर्शन में अन्तर (Distinction between Probability and non-Probability Sampling)

सम्भाविता (दैव) निदर्शन एवं असम्भाविता या अन्य प्रकार के निदर्शन से निम्न रूपों में भिन्न है :

(1) सम्भाविता (दैव) निदर्शन की सभी विधियो में निदर्शन के चुनाव के समय समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन मे आने का समान अवसर मिलता है तथा सभी इकाइयों के निदर्शन में सम्मिलित होने की गणना की जा सकती है जबकि असम्भाविता निदर्शन मे

चूकि सभी इकाइयों को निदर्शन में सम्मिलित होने का अवसर नही मिलता है, अतः किसी इकाई के निदर्शन में सम्मिलित होने की सम्भावना क्या है इसकी गणना का प्रश्न ही नही उठता।

(2) सम्भाविता निदर्शन से चुनी गई इकाइयां विश्वसनीय मानी जा सकती है। यदि एक ही अनुसन्धानकर्ता एक से अधिक वार उसी समग्र में से निदर्शन निकाले या अलग-अलग अनुसन्धानकर्ता उसी समग्र में से निदर्शन का चुनाव करे तो वे सभी निदर्शन लगभग एक समान होते हैं, अर्थात् उनमें कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है। इसके विपरीत असम्भाविता निदर्शन द्वारा इस तरह की विश्वसनीयता प्राप्त नहीं की जा सकती है क्योंकि इसमें इकाइयों का चयन मूलतः अनुसन्धानकर्ता की इच्छा पर निर्भर करता है। जैसे सविचार निदर्शन में अनुसन्धानकर्ता निदर्शन की इकाइयों का चयन अपनी मर्जी से ही करता है तो स्वयं चयनित निदर्शन में इकाइयां अपनी इच्छा से अध्ययन में सम्मिलित होती हैं।

(3) सम्भाविता निदर्शन द्वारा चुनी गई इकाइयां समग्र की प्रतिनिधि मानी जा सकती हैं, अर्थात् उन इकाइयों की तुलना यदि शेष समग्र से की जाय तो हम पायेगे कि उन दोनों वर्गो में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। इसी कारण ऐसे निदर्शन के अध्ययन के आधार पर जो परिणाम प्राप्त किये जाते हैं उन्हें समग्र पर लागू किया जा सकता है, जबकि असम्भाविता निदर्शन से प्राप्त परिणाम उस निदर्शन तक ही सही होते है, उन्हे समग्र पर लागू नहीं किया जा सकता।

(4) चूंकि सम्भाविता निदर्शन अनुसन्धानकर्ता की इच्छा से पूर्णतः परे होते है, अतः ऐसे सामाजिक अनुसन्धान जिनका सम्बन्ध सिद्धान्तो के निर्माण, सिद्धान्तों के पुनर्परीक्षण, उपकल्पनाओं के परीक्षण, आदि से होता है, में सम्भाविता निदर्शन का ही उपयोग किया जाता है एवं किसी भी दशा में इस प्रकार के अध्ययनों में असम्भाविता निदर्शन का उपयोग नही किया जा सकता है।

(5) सम्भाविता निदर्शन में इकाइयों का चुनाव निष्पक्षता से होता है, अतः यह वैज्ञानिक है, जबकि असम्भाविता निदर्शन में इकाइयों के चुनाव में पक्षपात की पूरी-पूरी सम्भावना होने से वह वैज्ञानिक नहीं है।

(6) सम्भाविता निदर्शन में महत्वपूर्ण इकाइयों का निदर्शन में चुनाव होगा ही यह नही कहा जा सकता, वे छूट भी सकती हैं, जबकि असम्भाविता निदर्शन में महत्वपूर्ण इकाइयों को निदर्शन में आवश्यक रूप से सम्मिलित किया जाता है।

(7) सम्भाविता निदर्शन में विकल्प की सम्भावना नहीं होती, विकल्प के लिए इकाइयों में परिवर्तन करना होता है। ऐसी स्थिति में सम्भाविता निदर्शन अवैज्ञानिक एवं पक्षपातपूर्ण हो जाता है जबकि असम्भाविता निदर्शन में विकल्प का चयन एवं प्रतिस्थापन अपेक्षतया सरल होता है।

निदर्शन की समस्याएं (Problems of Sampling)

निदर्शन के चयन में अनुसन्धानकर्ता को तीन प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है—(i) निदर्शन के आकार की समस्या, (ii) अभिनत निदर्शन की समस्या, तथा (iii) निदर्शन की विश्वसनीयता की समस्या। हम यहां इन तीनों ही समस्याओं का उल्लेख करेंगे।

(I) **निदर्शन के आकार की समस्या** (Problem of the size of the Sampling)

निदर्शन की सबसे बड़ी समस्या उसके उचित आकार की है। यदि निदर्शन बड़े आकार का है तो उसके अध्ययन में अधिक समय, धन और श्रम खर्च होगा और यदि निदर्शन बहुत छोटा है तो उसके प्रतिनिधित्वपूर्ण एव विश्वसनीय होने में सन्देह रहेगा। अतः निदर्शन का आकार समुचित प्रकार का होना चाहिए। सामान्यतः निदर्शन का आकार 3 प्रतिशत से 5 प्रतिशत तक होना चाहिए। निदर्शन के आकार को कई बातें प्रभावित करती है, वे इस प्रकार है .

(1) **समग्र की प्रकृति**—यदि समग्र की इकाइयां पर्याप्त सजातीय हों तो छोटा निदर्शन भी पर्याप्त, प्रतिनिधित्वपूर्ण एव विश्वसनीय हो सकता है, किन्तु यदि समग्र में विषमताएं अधिक है तो निदर्शन बड़े आकार का होना चाहिए।

(2) **वर्गों की संख्या**—यदि समग्र में विभिन्न प्रकार के वर्गो मे अधिक भिन्नताएं हों तो हमे प्रत्येक वर्ग मे से निदर्शन का आकार बड़ा लेना होगा और यदि वर्गो में पर्याप्त समानता हो तो छोटा निदर्शन ही पर्याप्त होगा।

(3) **अध्ययन की प्रकृति**—यदि हमें गहन अध्ययन करना हो तो छोटा निदर्शन लेना होगा, लेकिन विस्तृत और सामान्य प्रकृति के अध्ययन के लिए बड़ा निदर्शन लिया जा सकता है।

(4) **उपलब्ध साधन**—यदि हमारे पास पर्याप्त मात्रा मे समय, धन, शक्ति और कार्यकर्ता है तो निदर्शन का आकार बडा लिया जा सकता है। यदि साधनों की कमी है तो निदर्शन का आकार छोटा लेना होगा।

(5) **परिशुद्धता की मात्रा**—सामान्यतः ऐसा माना जाता है कि बड़ा निदर्शन अधिक परिशुद्ध और प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है, किन्तु यदि सही तरीके से चुनाव किया जाता है तो छोटा निदर्शन भी विश्वसनीय एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण हो सकता है।

(6) **अध्ययन प्रणाली**—यदि हम प्रश्नावली द्वारा किसी क्षेत्र का अध्ययन करते है तो निदर्शन का आकार बडा भी हो सकता है, किन्तु इसके स्थान पर यदि हम अनुसूची, साक्षात्कार, अथवा वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग करते है तो निदर्शन का आकार छोटा होना चाहिए क्योंकि इसमे समय, धन व श्रम अधिक खर्च होता है।

(7) **निदर्शन के प्रकार**—निदर्शन के प्रकार पर भी उसका आकार निर्भर करता है। दैव निदर्शन मे निदर्शन का आकार बड़ा होना चाहिए, ताकि विभिन्न गुणो वाली अधिकाधिक इकाइयों का चुनाव हो सके, इसके विपरीत वर्गीय तथा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन में छोटा आकार ही पर्याप्त होता है।

(8) **इकाइयो का वितरण**—यदि समग्र की इकाइया विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र मे फैली हुई हे तो समय, धन व श्रम की दृष्टि से छोटा निदर्शन उपयुक्त होगा और यदि समग्र भौगोलिक दृष्टि से छोटा है तो निदर्शन बड़ा लिया जा सकता है।

वास्तव में निदर्शन के आकार के लिए कोई निश्चित नियम, प्रतिशत या कोई सख्या नही है। अनेक परिस्थितियां निदर्शन के आकार को प्रभावित करती है। इस सन्दर्भ में पार्टेन ने उचित ही लिखा है, "अनावश्यक खर्चे से बचने के लिए निदर्शन काफी छोटा और असहनीय अशुद्धि से बचने के लिए पर्याप्त बड़ा होना चाहिए।"

(II) अभिनत निदर्शन की समस्या (Problem of Biased Sample)

एक श्रेष्ठ निदर्शन के लिए आवश्यक है कि वह प्रतिनिधित्वपूर्ण, निष्पक्ष और मिथ्या झुकाव से रहित हो, ऐसा न होने पर वह निदर्शन अभिनतिपूर्ण निदर्शन कहा जाता है। एक निदर्शन मे अभिनति निम्नलिखित कारणों से आ सकती है :

(i) **छोटा आकार**—यदि निदर्शन का आकार छोटा है तो उसमें समग्र की कई महत्वपूर्ण इकाइयों के छूट जाने की सम्भावना रहती है, तब वह निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नही रह जाता है।

(ii) **सविचार निदर्शन**—इस प्रकार के निदर्शन में अध्ययनकर्ता अपनी इच्छानुसार इकाइयो का चयन करता है। इसमें वह ऐसी ही इकाइयों का चुनाव कर सकता है जिनसे सम्पर्क करना सरल हो। वह असुविधाजनक और कठिनाई से मिलने वाली इकाइयों को छोड़ देता है। ऐसी स्थिति मे निदर्शन अभिनतिपूर्ण होता है।

(iii) **दोषपूर्ण वर्गीकरण**—यदि वर्गीय निदर्शन में ऐसे वर्गो का चुनाव कर लिया जाता है जो अस्पष्ट, असमान और अनुपयुक्त हों तब भी अभिनति आ सकती है। इसी तरह से यदि वर्ग में असमान संख्या वाली इकाइयों मे से समान संख्या में इकाइयां चुन ली जाती हैं तब भी वह असन्तुलित और दोषपूर्ण हो जाता है।

(iv) **अपूर्ण स्रोत सूची**—यदि स्रोत सूची जिसमें समग्र की समस्त इकाइयां लिखी होती है, अपूर्ण, पुरानी, अनुपयुक्त अथवा अधूरी है, तब भी निदर्शन का चुनाव प्रतिनिधित्वपूर्ण नही होगा। यह स्थिति भी निदर्शन को अभिनतिपूर्ण बनाती है।

(v) **इकाइयों का अनुचित त्याग या प्रतिस्थापन**—कई बार निदर्शन में चुने गए व्यक्तियो से सम्पर्क करना कठिन होता है या वे सहयोग देने से इन्कार करते हैं, तब उन्हे छोड़ दिया जाता है या उनके स्थान पर दूसरी इकाइयो को चुन लिया जाता है। दोनों ही स्थितियों मे निदर्शन मे पक्षपात की सम्भावना रहती है।

(vi) **कार्यकर्ताओ द्वारा चुनाव**—कई बार कार्यकर्ताओं को यह अनुमति दे दी जाती है कि वे निदर्शन की इकाइयों का चुनाव अपनी इच्छानुसार करे। ऐसी स्थिति में भी चयन में पक्षपात आ सकता है।

(vii) **सुविधापूर्ण निदर्शन विधि**—जब अध्ययनकर्ता को यह स्वतन्त्रता दे दी जाती है कि वह अपनी सुविधानुसार निदर्शन का चुनाव कर ले तब वह अन्य बातों की अपेक्षा अपनी सुविधा को अधिक महत्व देता है। ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नहीं रह जाता है।

(viii) **त्रुटिपूर्ण दैव निदर्शन**—दैव निदर्शन विधि द्वारा इकाइयों के चयन में भी पक्षपात की सम्भावना रहती है, उदाहरण के लिए, यदि चिटें या गोलियां जिनका उपयोग दैव निदर्शन के लिए किया जाता है, छोटी-बड़ी अथवा विभिन्न रंगों की है अथवा उन्हे पूरी तरह से हिलाया या मिलाया नहीं गया है तब भी बड़ी चिटों और ऊपर पड़ी चिटों के चुने जाने की सम्भावना अधिक रहेगी। इस स्थिति में भी निदर्शन पक्षपातपूर्ण हो जाता है।

(ix) **अध्ययन विषय की प्रकृति**—कई बार अध्ययन विषय जटिल, असमान, विविधतापूर्ण, परिवर्तनशील, एकदम नया अथवा बिखरा हुआ हो तो ऐसी स्थिति में निदर्शन के चुनाव में हम उन्हीं इकाइयों को चुनते हैं जो सुविधापूर्ण हों। यह स्थिति भी निदर्शन को पक्षपातपूर्ण बना देती है।

विभिन्न प्रकार से आने वाली अभिनति (Bias) को दूर करने के लिए निम्नांकित उपाय अपनाए जा सकते हैं—(1) अनुसन्धानकर्ता को अनुभव, कुशलता और योग्यता प्राप्त होनी

चाहिए। (2) उसे अध्ययन समस्या का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। (3) निदर्शन विधि विषय एवं उद्देश्य के अनुरूप होनी चाहिए। (4) निदर्शन का आकार पर्याप्त होना चाहिए। (5) अध्ययन वैज्ञानिक और पक्षपातरहित होना चाहिए।

(III) निदर्शन की विश्वसनीयता की समस्या (Problem of Reliability of Sample)

निदर्शन का चुनाव कर लेने के बाद यह प्रश्न उठता है कि जिन इकाइयों का चुनाव किया गया है, वे विश्वसनीय हैं अथवा नहीं। विश्वसनीयता से तात्पर्य है कि वे समग्र का कितना प्रतिनिधित्व करती है और क्या उनके लक्षण समग्र के लक्षण माने जा सकते है तथा निदर्शन इकाइयों के अध्ययन के निष्कर्षो को किस सीमा तक समग्र पर लागू किया जा सकता है। एक विश्वसनीय निदर्शन में निम्नांकित गुण होने चाहिए—(i) उसका आकार पर्याप्त हो, (ii) उसका चुनाव उपयुक्त विधि से हो, (iii) समग्र का वर्ग विभाजन इकाइयों की समानता एवं सजातीयता के आधार पर किया जाय, (iv) त्रुटि माप योग्य हो।

निदर्शन की विश्वसनीयता की परख
(TEST OF RELIABILITY OF SAMPLE)

चुने हुए निदर्शनो की विश्वसनीयता को परखने के लिए निम्नांकित उपाय अपनाए जा सकते है :

(1) **समान्तर निदर्शन** (Parallel Sampling)—इस विधि में समग्र से किसी अन्य विधि द्वारा दूसरा निदर्शन चुन लिया जाता है और दोनों ही निदर्शनों के सांख्यिकी मापो, मूल्यों, विचरण, आवृत्ति एवं वंटन, आदि की तुलना की जाती है। यदि दोनों में पर्याप्त सीमा तक समानता है तो निदर्शन विश्वसनीय माना जाता है। समानता का अर्थ एकदम समानता से नही, वरन् पर्याप्त मात्रा में समानता से है।

(2) **समग्र से तुलना** (Comparison with Universe)—कभी-कभी समग्र की बहुत-सी विशेषताओं जैसे लिंग, अनुपात, आयु, आदि का वितरण ज्ञात होता है। यदि इस प्रकार की माप का पता हो तो निदर्शन की इकाइयों की उनसे तुलना की जाती है और दोनों में पर्याप्त समानता होने पर निदर्शन विश्वसनीय माना जाता है।

(3) **निदर्शन का निदर्शन** (Sampling from Sampling)—निदर्शन की विश्वसनीयता की परख का एक तरीका यह है कि चुने हुए निदर्शन में से कुछ इकाइयों का चुनाव दैव निदर्शन द्वारा किया जाता है और उनकी तुलना मूल निदर्शन से की जाती है। यदि इस उपनिदर्शन में मूल निदर्शन के गुण हैं तो निदर्शन को विश्वसनीय माना जाता है।

(4) **महत्व परीक्षण** (Significance tests)—**मोजर** ने निदर्शन की विश्वसनीयता की जांच के लिए प्रमाप त्रुटि (Standard error) के आधार पर निदर्शनों के महत्व का परीक्षण करने का सुझाव दिया है।

(5) **अध्ययन परिणामों की तुलना** (Comparison of Findings)—किसी एक विधि द्वारा निकाले गये निदर्शनों के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षो की तुलना किसी दूसरी विधि द्वारा चयनित निदर्शनों के अध्ययन के निष्कर्षो से की जाती है इससे भी हमें मूल निदर्शन के विश्वसनीय होने का पता लग सकता है।

(6) **सर्वेक्षण की पुनरावृत्ति** (Repetition of Survey)—यद्यपि यह एक कठिन कार्य है, फिर भी सम्भव हो तो लगभग मिलते-जुलते सर्वेक्षणों की पुनरावृत्ति करके उनमे लिए गये निदर्शनों की तुलना करके विश्वसनीयता की जांच की जा सकती है।

प्रश्न

1. समाजशास्त्रीय अनुसन्धान में प्रतिनिधि निदर्शन के चुनाव की प्रणालियो का उल्लेख कीजिए। (अजमेर, 1993)
2. एक प्रतिनिधिक निदर्शन की विशेषताएं बताइए। दैव निदर्शन की व्याख्या कीजिए तथा इसकी पद्धतियां बताइए।
3 प्रतिचयन (निदर्शन) विधि से आप क्या समझते हैं? स्तरित तथा क्षेत्र प्रतिचयन विधियों की विवेचना कीजिए।
4 निदर्शन की परिभाषा दीजिए तथा उपयुक्त उदाहरण सहित इसके विभिन्न प्रकारों को समझाइए। (राजस्थान, 1993, अजमेर, 2000)
5. 'निदर्शन' को परिभाषित कीजिए। दैव निदर्शन के लिए प्रयुक्त विभिन्न विधियों का वर्णन कीजिए। (अजमेर, 2000)
6. दैव निदर्शन प्रणाली को परिभाषित कीजिए। स्तरीय दैव निदर्शन की प्रणालियों को सविस्तार समझाइए। (राजस्थान, 1996)
7 निदर्शन से आपका क्या अभिप्राय है? एक अच्छे निदर्शन की क्या आवश्यकताएं है? (राजस्थान, 1994, अजमेर, 1998, 2000)
8. निदर्शन से आपका क्या अभिप्राय है ? दैव निदर्शन एवं क्षेत्रीय निदर्शन विधियों का वर्णन कीजिए। (अजमेर, 1990)
9. निदर्शन पद्धति क्या है? दैव निदर्शन के विभिन्न प्रकारों को समझाइए। (अजमेर, 1994)
10 निदर्शन विधि के गुणों एवं कमियो की विवेचना कीजिए। (अजमेर, 1995)
11. सम्भाविता निदर्शन (दैव निदर्शन) क्या है? सम्भाविता निदर्शन के प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिए। (अजमेर, 1996)
12. सम्भाविता निदर्शन (दैव निदर्शन) एवं असम्भाविता निदर्शन में अन्तर बताइए। (अजमेर, 1997)
13. दैव निदर्शन क्या है? इसके चयन की विधियो, गुण और दोषों का विवेचन कीजिए। (राजस्थान, 1996)
14. स्तरीकृत निदर्शन को परिभाषित कीजिए। इसके गुण और दोषो का विवेचन कीजिए। (राजस्थान, 1997)
15. निदर्शन क्या है? सम्भाविता निदर्शन के विभिन्न प्रकारो का उल्लेख कीजिए। (राजस्थान, 1998)
16. दैव निदर्शन क्या है? उन कारको का उल्लेख कीजिए जो दैव निदर्शन की प्रतिनिधित्वपूर्ण विशेषता को प्रभावित करते है। (राजस्थान, 1999)

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(1) सगणना पद्धति, (2) निदर्शन, (3) दैव निदर्शन, (4) टिपेट विधि, (5) ग्रिड प्रणाली, (6) स्तरित निदर्शन, (7) निर्दिष्टांश निदर्शन (Quota Sampling), (8) सुविधाजनक निदर्शन, (9) दैव निदर्शन की प्रमुख विधियां, (10) दैव निदर्शन के गुण, (11) निदर्शन पद्धति के कोई चार दोष बताइए, (12) निदर्शन पद्धति के कोई चार गुण बताइए, (13) निदर्शन की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता।

(14) उद्देश्यपूर्ण निदर्शन (अजमेर, 1999)

(15) एक प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन की आवश्यक विशेषताएं समझाइए। (अजमेर, 2000)

(3) **तुलना में सुविधा**—सारणीयन में विभिन्न तथ्यों को अलग-अलग शीर्षकों में वर्गीकृत किया जाता है, इससे परस्पर उनकी तुलना करने, निष्कर्ष निकालने एवं व्याख्या करने मे सुविधा रहती है।

(4) **संक्षिप्तीकरण**—सारणीयन का उद्देश्य तथ्यों के समूह को छोटे रूप में प्रदर्शित करना है। यह गागर मे सागर भर देने के समान है। **पी. वी. यंग** लिखती हैं कि सारणियां साख्यिकी की संकेत-लिपि (Short-hand) होती है।

सारणीयन के लाभ (Advantages of Tabulation)

सारणीयन के गुण अथवा लाभ निम्नांकित है :

(1) **समय एवं स्थान की बचत**—सारणी में तथ्यों को संक्षेप में कम से कम स्थान मे प्रस्तुत किया जा सकता है, इससे स्थान व कागज की तो बचत होती ही है, साथ ही पढ़ने वाले को एक ही निगाह से सभी सूचनाओं की जानकारी मिल जाती है और बहुत कम समय में ही वह सभी तथ्यों को समझ सकता है।

(2) **सूचनाओं का स्पष्ट चित्रण**—सारणीयन मे जटिल आकडों के समूह को सरल, स्पष्ट एव क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है, इससे उन्हें समझना बहुत सरल हो जाता है। **प्रोफेसर बाउले** के अनुसार, "सारणीयन के पश्चात् अत्यन्त विभिन्नतापूर्वक जटिल समूह के स्थान पर हमे उसकी निश्चित रूपरेखा प्राप्त हो जाती है।"

(3) **तथ्यों का व्यवस्थित क्रम**—सारणीयन मे सूचनाओं को किस प्रकार क्रमबद्ध रूप से रखा जाएगा, यह तय कर लिया जाता है। इसमें तथ्यों को शीर्षकों तथा उप-शीर्षकों के अन्तर्गत व्यवस्थित रूप से रखा जाता है। इससे किसी भी सूचना को ढूंढ़ने मे आसानी रहती है तथा समय की बर्बादी नही होती।

(4) **याद रखने की सुविधा**—चूंकि सारणीयन में जटिल तथ्यों को सरल रूप में प्रस्तुत किया जाता है, उनमें एक क्रम होता है, अतः उन्हें याद रखना भी सरल होता है।

(5) **तुलना करने की सुविधा**—सारणीयन में विभिन्न प्रकार के तथ्यों को एक साथ सारणीवद्ध करके पास-पास एवं आमने-सामने रख दिया जाता है, जिससे कि उनकी पारस्परिक तुलना करना और उनके बारे मे मोटा अनुमान लगाना आसान हो जाता है।

(6) **तथ्यो की सरलता से विवेचना**—अनुसन्धान में प्राप्त तथ्यों की अनेक सांख्यिकीय क्रियाए करनी पडती है, जैसे उनका माध्य, विचलन, सहसम्बन्ध, आदि ज्ञात किए जाते है। इन सभी के लिए सारणी द्वारा तथ्यों को प्रस्तुत करना लाभप्रद होता है।

सारणीयन की सीमाएं (Limitations of Tabulation)

सारणीयन में जहां कई लाभ है, वहीं यह दोषो से भी मुक्त नही है। इसकी प्रमुख सीमाएं इस प्रकार हैं :

(1) **केवल संख्यात्मक सूचनाएं**—सारणी मे केवल सख्यात्मक सूचनाओं का ही प्रदर्शन किया जा सकता है, गुणात्मक सूचनाओं का नही। सामाजिक अनुसन्धान में अधिकांश सूचनाएं गुणात्मक प्रकृति की होती है, जिन्हे सारणियों मे व्यक्त करना कठिन है।

(2) **विशेष ज्ञान की आवश्यकता**—सारणियो को समझने के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है, जिसकी अपेक्षा सामान्य आदमी से नहीं की जा सकती। इन्हे बनाने और समझने के लिए गणितीय ज्ञान एवं रुचि आवश्यक है। अतः इनका प्रयोग उच्च शिक्षित व्यक्तियों के लिए ही हो सकता है।

(3) **अरुचिकर तथा नीरस**—सामान्यतः आंकड़े अरुचिकर एवं नीरस होते है। सारणी में आंकड़ों की भरमार होती है, जिन्हें समझने के लिए मन और बुद्धि पर जोर डालना पड़ता है। अतः सारणियां अनाकर्षक, उबाने वाली एवं नीरस होती हैं।

(4) **सम्पूर्ण परिशुद्धता असम्भव**—सारणीयन में दिखायी गई सूचनाएं पूरी तरह स्वतन्त्र नहीं होतीं, क्योंकि उन्हें सापेक्षित रूप से विभिन्न मदों (items) के अन्तर्गत दिखाया जाता है। ऐसा करते समय कभी-कभी उन्हें असंगत एवं गलत रूप में भी प्रदर्शित किया जाता है। कभी-कभी महत्वपूर्ण सूचनाओं को प्राथमिकता नहीं दी जाती है। अतः सारणियां पूर्णतः परिशुद्ध नही हो पाती है।

एक उत्तम सारणी के लक्षण (अनिवार्यताएं)
(ESSENTIALS OF A GOOD TABLE)

एक श्रेष्ठ सारणी का निर्माण करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :

(1) **आकर्षक**—एक उत्तम सारणी को आकर्षक होना चाहिए। इसके लिए उसकी आकृति तथा बनावट, विभिन्न खानों का अनुपात, संख्याओ को लिखने का ढंग, लिखावट एवं स्वच्छता इन सभी पर ध्यान दिया जाना चाहिए। यह सब कुछ निर्माता की कलाप्रियता पर निर्भर करता है।

(2) **समुचित आकार**—सारणी का आकार कागज के आकार के अनुरूप होना चाहिए। बहुत बड़ी सारणी होने पर उसे मोड़कर रखना पड़ेगा और अधिक मोड़ आने पर असुविधा तो होती ही है। साथ ही मोड़ के स्थानों से सारणी के फट जाने का डर भी रहता है। अतः सारणी छोटी और अधिक जानकारी प्रदान करने वाली होनी चाहिए।

(3) **तुलना की सुविधा**—सारणी में तथ्यो का प्रदर्शन इस प्रकार से करना चाहिए कि उनकी पारस्परिक तुलना करना सम्भव हो, क्योंकि सारणी का एक प्रमुख उद्देश्य तथ्यों की तुलना करना भी है।

(4) **स्पष्टता तथा सुगमता**—सारणियों का निर्माण इस प्रकार से किया जाना चाहिए कि वह साधारण व्यक्ति के लिए भी बोधगम्य हो तथा वांछित सूचनाओं को आसानी से ढूंढ़ा जा सके। सूचनाओं के लिखने में किसी प्रकार की भ्रान्ति या सन्देह नहीं होना चाहिए।

(5) **उद्देश्य के अनुकूल**—यदि सारणी किसी विशेष उद्देश्य के लिए तैयार की जा रही है तो ऐसी सूचनाएं दी जानी चाहिए जो अपेक्षित हों। अनावश्यक सूचनाएं जटिलता को बढ़ाती हैं, साथ ही इस बात का भी ध्यान रहे कि महत्वपूर्ण सूचनाएं छूट न जाएं।

(6) **वैज्ञानिक विधि से निर्मित**—सारणी के निर्माणकर्ता को सारणीयन के नियमों से परिचित होना चाहिए, यदि सूचनाएं बिना किसी क्रम के असम्बद्ध रूप से लिख दी जाती हैं तो सारणी का उद्देश्य पूरा नही होता और उसकी विवेचना के कार्य में सफलता नही मिल पाती। अतः सारणी के निर्माण का आधार वैज्ञानिक होना चाहिए।

इस सन्दर्भ में **डा. बॉर्डिंगटन** का सुझाव है कि किसी भी स्थिति में एक सारणी में बहुत अधिक विवरण नही देने चाहिए। **डब्ल्यू. आई. किंग** का भी मत है कि सारणी यदि बड़ी होती है तो वह आंखों के लिए भ्रामक हो जाती है तथा उसकी पंक्तियों एवं खानो को समझना कठिन हो जाता है। शीर्षकों की अधिकता से समंकों की प्रवृत्तियों तथा मुख्य तथ्यों पर उचित बल देने मे रोक लग जाती है।

सारणी का ढांचा (अंग) (Structure of a Table)

हार्पर का मत है कि सारणी की रचना करना एक कला है। केवल पंक्तियो तथा खानो का बना लेना मात्र ही पर्याप्त नहीं होता है। सारणी के निर्माण के लिए विशेष अनुभव, ज्ञान, प्रशिक्षण, योग्यता, विवेक एवं कुशलता की आवश्यकता होती है। एक सारणी का निर्माण करते समय निम्नांकित नियमों को ध्यान में रखा जाना चाहिए :

(1) **सारणी का शीर्षक**—प्रत्येक सारणी की संख्या लिखनी चाहिए, ताकि सूचना को ढूंढने और सन्दर्भ देने में सुविधा रहे। इसके बाद स्पष्ट एवं संक्षेप में सारणी का मुख्य शीर्षक (Heading) दिया जाना चाहिए। शीर्षक मे विषय, समय, क्षेत्र एवं वर्गीकरण के आधार, आदि का उल्लेख किया जाना चाहिए।

(2) **उप-शीर्षक**—सारणी मे दो प्रकार के खाने होते है : खड़े खाने तथा आड़े खाने। खडे और आड़े खानों पर भी उप-शीर्षक दिए जाने चाहिए। खड़े खानों के स्तम्भों के शीर्षको को **'केप्सन'** (*Caption*) तथा आड़े खानो के शीर्षकों को **'स्टब'** (Stub) कहते है। ये उप-शीर्षक सक्षिप्त एवं स्पष्ट होने चाहिए।

(3) **रेखाएं**—विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को अलग-अलग खानों में दर्शाने के लिए उन्हे रेखाओ द्वारा अलग-अलग किया जाता है। खानों की महत्ता के अनुसार रेखाओं को भी मोटा एवं पतला बनाया जाता है।

(4) **तुलना**—सारणी को निर्मित करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि जिन आकड़ों की तुलना की जानी है, वे पास-पास दिखाये जायं।

(5) **योग**—सारणियों के अन्त में योग तथा कुल योग दिखाये जाने चाहिए। धनराशियों से सम्बन्धित सारणियों में योग एवं कुल योग अवश्य दिखाने चाहिए।

(6) **सामग्री संग्रह के स्रोत**—सारणियों में दिखायी जाने वाली सूचनाएं कहां से संकलित की गई है, इसका उल्लेख करना भी आवश्यक है। स्रोत का उल्लेख करने से सूचनाए विश्वसनीय बन जाती हैं।

(7) **टिप्पणियां**—सूचनाओं से सम्बन्धित स्पष्टीकरण देने, शब्द की व्याख्या करने अथव किसी शब्द को विशेष अर्थों में प्रयोग किए जाने, पूरक एव सन्दर्भ सूचना देने, आदि के लिए सारणी के नीचे टिप्पणी दी जानी चाहिए। ऐसी टिप्पणियां सारणियों, तथ्यो एवं निष्कर्षों को समझने की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है।

(8) **संकेताक्षर**—जब कभी सारणियों में संकेताक्षर देना आवश्यक हो जाय तो टिप्पणियो अथवा पाद-चिह्न (Foot-note) में उन्हें स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए।

(9) **अन्य बातें**—सारणियो के निर्माण मे यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि उद्देश्यो के अनुसार आवश्यक और महत्वपूर्ण तथ्यों को अलग-अलग पदो में विभाजित कर दिया जाय, उनके महत्व के अनुसार उन्हे अलग-अलग अक्षरो, चिह्नों एवं अन्तरालों में प्रकट किया जाए। पदों में क्रमबद्धता हो तथा वे घटते एवं बढते क्रम को दर्शाने वाले हों। महत्वपूर्ण पदों के नीचे रेखा भी खीची जा सकती है।

सारणी बनाना भी एक तकनीकी कार्य है जिसे प्रशिक्षित एवं अनुभवी व्यक्ति ही बना सकता है। इस सन्दर्भ में **जरोम हैरी** लिखते है, "एक श्रेष्ठ सारणी का निर्माण करने के लिए एक सख्याशास्त्री को इस बात की स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए कि उसे कौनसे तथ्यों को प्रदर्शित करना है, किन विशेषताओं को महत्व देना है तथा कौन-कौनसी बातों पर विशेष बल देना है। साथ ही उसे सारणी की यान्त्रिक तकनीक की जानकारी भी होनी चाहिए।"

सारणियों के प्रकार (Types of Tables)

सारणियों को उनके उद्देश्य एवं प्रकृति के आधार पर विभिन्न भागो में बांटा जाता है। उद्देश्य के आधार पर सारणियां दो प्रकार की होती है—(i) सामान्य, (ii) विशिष्ट। प्रकृति के आधार पर भी सारणियों को सरल एवं जटिल दो भागों में बांटा जाता है। हम यहां सारणी के विभिन्न वर्गीकरणों (प्रकारों) का उल्लेख करेगे :

I. उद्देश्य के आधार पर (On the Basis of Purpose)

(1) सामान्य सारणियां (General Tables)—इस प्रकार की सारणियों में विविध प्रकार की सूचनाओं को दर्शाया जाता है जिसमें एक ही साथ अनेक आवश्यक सूचनाओं को प्रकट किया जाता है। इस प्रकार की सारणियों को मूल सारणी, सन्दर्भ सारणी एवं प्राथमिक सारणी भी कहा जाता है। उदाहरण के लिए, जनगणना रिपोर्ट मे दी जाने वाली सारणियां इसी प्रकार की होती है।

(2) विशिष्ट सारणियां (Specific Tables)—इस प्रकार की सारणियों के अन्तर्गत किसी एक विशिष्ट समस्या या विषय से सम्बन्धित तथ्यों का प्रदर्शन किया जाता है। इनमें एक ही विषय से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की सूचनाएं दर्शायी जाती है। इन सारणियों को विषय सारणी, सारांश सारणी या विश्लेशण सारणी भी कहते है। ये सारणियां सामान्य सारणियों के आधार पर तथ्यों को विषयानुरूप वर्गीकृत करके भी बनायी जाती है।

II. प्रकृति के आधार पर (On the Basis of Nature)

(1) सरल सारणी (Simple Table)—इस प्रकार की सारणियों में केवल एक प्रकार के तथ्यों को या एक प्रकार के गुणों को दर्शाया जाता है। ऐसी सारणी को एक गुणीय सारणी भी कहते हैं। इनमें पदों के मूल्य (Size of the items), उनकी आवृत्तियां (Frequencies), आदि को दर्शाया जाता है। सरल या एक गुणीय सारणी का उदाहरण इस प्रकार है :

1991 के अनुसार भारत की जनसंख्या

राज्य	जनसंख्या
योग	

(2) जटिल सारणी (Complex Table)—इस प्रकार की सारणियों मे विविध प्रकार की सूचनाओं को एक ही साथ दर्शाया जाता है, इसलिए इन्हें बहुगुणीय सारणियां भी कहते है। इनकी रचना कठिन एवं रूप जटिल होने के कारण इनके निर्माण में विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है। इनमें खाने, पंक्तियां एवं उपशीर्षक भी कई होते हैं। सारणी में कितने प्रकार के गुणों का समावेश किया गया है, इस आधार पर उन्हें द्वि-गुणीय, त्रि-गुणीय एवं बहुगुणीय सारणियों के रूप में विभाजित किया जाता है। इसके विभिन्न प्रकारों की हम यहां विवेचना करेंगे :

(i) द्विगुणी सारणी (Bivariate Table)—इस प्रकार की सारणी में दो गुणों का प्रदर्शन एवं तुलना की जाती है तथा एक ही सारणी से दो प्रकार के उत्तर ज्ञात किए जा सकते हैं। द्विगुणी सारणी का उदाहरण इस प्रकार है :

लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) सारणीयन के उद्देश्य (अजमेर, 1998)
(2) सारणीयन के प्रकार (अजमेर, 1998)
(3) सारणीयन की सीमाए वताइए। (अजमेर, 1998, 99)
(4) सारणीयन के लाभ (अजमेर, 1998)
(5) वहुगुणीय सारणी को समझाइए (अजमेर, 2000)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1 निम्नाकित मे से सत्य और असत्य कथन छाटिए :
(i) जव तथ्यो को कॉलमो व कतारों में प्रस्तुत किया जाता है तो उसे सारणीयन कहते हैं।
(ii) जव सारणियो में केवल एक गुण को दर्शाया जाता है तो उसे सामान्य सारणी कहते हैं।
(iii) जटिल सारणियो मे विविध प्रकार की सूचनाओ को दर्शाया जाता है।
(iv) जव सारणी मे दो गुणों का प्रदर्शन एव तुलना की जाती है तो उसे विशिष्ट सारणी कहते है।
(v) सारणियो मे केवल संख्यात्मक सूचनाएं ही होती है।
(vi) सारणिया रुचिकर एवं सरस होती है।

2 निम्नाकित वाक्यों मे रिक्त स्थानों की पूर्ति कोष्ठक मे दिए गए शब्दो मे से चयन करके दीजिए :
(i) जव तथ्यो को स्तम्भो एवं पक्तियों मे क्रमवद्ध करके प्रकट किया जाता है तो उसे .. . ... कहते है। (चित्रमय प्रदर्शन/सारणीयन)
(ii) सारणिया होती है .....। (सरस/नीरस)
(iii) एक ही गुण की तुलना करने वाली सारणी को कहते है .....।
(सरल सारणी/जटिल सारणी)
(iv) विविध प्रकार के तथ्यो को प्रकट करने के लिए ..... . सारणी का प्रयोग किया जाता है। (त्रिगुण/बहुगुण)
(v) सारणी मे ... . सूचनाएं दर्शायी जाती है। (गुणात्मक/सख्यात्मक)

[उत्तर—1. सत्य कथन—i, iii, v,
2. (i) सारणीयन, (ii) नीरस (iii) सरल प्रणाली, (iv) बहुगुण, (v) सख्यात्मक।]

16

तथ्यों का प्रदर्शन : द्विविमा एवं बहुविमा चित्र

[PRESENTATION OF DATA : BIVARIATE AND MULTIVARIATE DIAGRAMS]

सामाजिक अनुसन्धान एवं सर्वेक्षण हेतु संकलित तथ्यों को सांख्यिकी के माध्यम से सूक्ष्म और बोधगम्य बना लिया जाता है। तथ्यों का वर्गीकरण एवं सारणीयन कर लिया जाता है, उन्हें तुलना योग्य बना लिया जाता है। तत्पश्चात् इन तथ्यों का विश्लेषण एवं व्याख्या की जाती है, निष्कर्ष निकाले जाते हैं एवं सामान्यीकरण किए जाते हैं। इन निष्कर्षों एवं सामान्यीकरणो को संख्याओं के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। ये संख्याएं अनुसन्धान एवं सर्वेक्षणों के निष्कर्षो से लोगों को परिचित कराती हैं, परन्तु यहां हमें यह भी ध्यान में रखना है कि संख्याएं, आंकड़े या सारणियां सामान्यतः नीरस एवं अरुचिकर होते हैं। लोग इन्हे देखकर यद्यपि वास्तविकता को समझ तो सकते है, किसी परिवर्तित स्थिति को जान तो सकते हैं, परन्तु ये सब व्यक्ति के मस्तिष्क पर बोझ डालते है, उसके मस्तिष्क को थका देते हैं, उसमें ऊब पैदा करते हैं। परिणाम यह होता है कि किसी अनुसन्धान के अन्तर्गत प्राप्त निष्कर्षों को उनके अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हुए भी लोग उन्हें सरलता से नही समझ पाते है क्योंकि आंकड़ों एवं सारणियो में सामान्यतः लोगों की रुचि नहीं होती है। यदि इन्हीं तथ्यो या निष्कर्षो का चित्रमय प्रदर्शन (Diagrammatic Representation) किया जाय, चित्रों के रूप में इन्हें लोगों के सामने रखा जाय तो वे इन्हें सुगमता से समझ सकेंगे, इनकी तुलना भी आसानी से की जा सकेगी।

यहां उदाहरण की सहायता से उपर्युक्त बात को समझाया जा रहा है। यदि कुछ देशो के जनसंख्या सम्बन्धी आंकड़े प्रस्तुत किए जायें तो लोग उन्हे आसानी से याद नही रख पायेगे, परन्तु यदि उन देशों की जनसंख्या को छोटे-बडे चित्रों के रूप में व्यक्त किया जाय तो लोग सुगमता से यह समझ सकेंगे कि किस देश की जनसख्या सर्वाधिक है, और किस देश की सबसे कम है एव तुलनात्मक दृष्टि से कौन-सा देश कितना बड़ा या छोटा है। चित्रमय प्रदर्शन से वे इस बात को आसानी से याद भी रख सकेंगे। एक अन्य उदाहरण द्वारा भी हम इस बात को सरलता से समझ सकते है। यदि भारत की पिछले 100 वर्षो की जनसंख्या को सारणी के रूप मे दिखाया जाय तो लोग यह तो समझ जायेंगे कि किस-किस वर्ष में यहां की जनसंख्या कितनी थी, परन्तु इससे जनसंख्या के घटने-बढने की प्रवृत्ति को वे

सुगमता से ज्ञात नही कर सकेंगे। यदि विभिन्न वर्षों में जनसंख्या को बिन्दुरेखीय चित्र (Graph) के रूप मे चित्रित किया जाय तो लोग विभिन्न वर्षों में जनसंख्या के घटने-बढने की प्रवृत्ति को आसानी से समझ सकेंगे। यह चित्र आकर्षक एवं बोधगम्य होने के साथ-साथ आंकड़ों की ऊब से लोगों को छुटकारा भी दिलाएगा।

आंकड़ो या शब्दों के माध्यम से जो बात लोगों तक सुगमता से नहीं पहुंचायी जा सकती, वही बात चित्रमय प्रदर्शन से उत्तमता के साथ उन तक पहुंचायी जा सकती है। **'काल्विन स्मिद'**[1] ने चित्रमय प्रदर्शन के महत्व पर प्रकाश डालते हुए बताया है, "रेखाचित्र एवं चार्ट सांख्यिकीय तथ्यों के बहुत बड़े ढेर को स्पष्ट एवं बोधगम्य बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। सारणी के रूप में व्यक्त की गयी लम्बी संख्याओं को मस्तिष्क में याद रखना और उन्हें समझना मुश्किल है। ठीक ढंग से बनाये गये चित्र एवं रेखाचित्र तथ्यों को संक्षिप्त, तार्किक एवं सरल रूप में व्यक्त करके हमारे मस्तिष्क के भार को हल्का कर देते है। चित्र नवीन एवं महत्वपूर्ण सम्बन्धों को प्रदर्शित करके नवीन तथ्यो का पता लगाने एवं प्राक्कल्पनाओ के विकास में काफी योग देते हैं।" इन्हीं सब कारणों से सामाजिक अनुसन्धान एवं सर्वेक्षण के क्षेत्र मे चित्रमय प्रदर्शन का महत्व एवं उपयोगिता दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है।

चित्रमय प्रदर्शन के उद्देश्य एवं उपयोगिता (Objects and Utility of Diagrammatic Representation)

चित्रों के उद्देश्यों एवं उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए **मोरोने** ने लिखा है, "किसी जटिल स्थिति के प्रतिमान एवं स्वरूप को देखने में चित्र हमारी मदद करते है। जिस प्रकार एक मानचित्र एक विशाल देश की विस्तृत सीमाओं का एक विहंगम दृश्य हमारे सामने प्रस्तुत करता है, उसी प्रकार चित्र संख्यात्मक एवं जटिल तथ्यों के सम्पूर्ण अर्थ को एक ही दृष्टि मे समझने में काफी सहायक होते है।.....चित्र हमारे सोचने के पूर्व ही अपनी अर्थपूर्ण छाप छोड़ देते है।" मोरोने के इस कथन से चित्रमय प्रदर्शन का महत्व स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है। सांख्यिकीय तथ्यों या संख्यात्मक आंकडों को चित्रों के रूप में प्रदर्शित करने के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं :

(i) चित्रमय प्रदर्शन का एक मुख्य उद्देश्य आंकड़ो को सरल एवं बोधगम्य बनाना है। लोग नीरस एव जटिल आंकड़ों मे कोई रुचि नही लेते, अतः उन्हे सामान्य जनता तक पहुचाने के लिए उन्हे चित्रों के माध्यम से आकर्षक रूप में प्रस्तुत करना आवश्यक है।

(ii) एक अन्य उद्देश्य विभिन्न तथ्यों की तुलनात्मक प्रकृति को स्पष्टतः समझना है।

(iii) चित्रमय प्रदर्शन का एक उद्देश्य अध्ययन के निष्कर्षो को लोगों तक पहुचाना है, विभिन्न बातो का जनता में प्रचार करना है।

(iv) चित्रों का एक उद्देश्य अनुसन्धान-कार्य को सुगम बनाना है।

(v) चित्र-निर्माण का एक उद्देश्य किसी समस्या या स्थिति के घटने-बढ़ने की प्रवृत्ति को प्रभावपूर्ण ढंग से व्यक्त करना है।

1 C. E Schmid, 'Graphic Representation', Quoted by P. V. Young in *'Scientific Social Survey and Research*, p 387.

वर्तमान में सरकारी एवं गैर-सरकारी क्षेत्रों में चित्रों के माध्यम से तथ्यों को सरल, आकर्षक एवं बोधगम्य बना कर जनता तक पहुंचाने की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ती जा रही है। पंचवर्षीय योजनाओं मे विभिन्न मदों पर व्यय दिखाने, योजना की उपलब्धियां दिखाने, वार्षिक बजट में आय-व्यय को प्रकट करने, आय के स्रोतों और विभिन्न मदो पर व्यय को दिखाने, जनसंख्या सम्बन्धी आंकड़ों एवं मूल्य सूचकांक (Index Number), आदि को व्यक्त करने के लिए वर्तमान में चित्रों का काफी उपयोग किया जाने लगा है। चुनाव के अवसर पर राजनीतिक दल विभिन्न प्रकार के चित्रों की सहायता से अपनी सफलताओ की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करते हैं। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि शब्दों में लिखी और संख्यात्मक रूप से व्यक्त की गयी बातों को समझने में मस्तिष्क पर काफी जोर पड़ता है, जबकि चित्रो के माध्यम से वे ही बातें आकर्षक रूप में लोगो के दिल और दिमाग में सुगमता से बैठायी जा सकती हैं। इसी उद्देश्य से चित्रों की रचना की जाती है।

चित्रमय प्रदर्शन की उपयोगिता (लाभ) निम्नलिखित है :

(1) **आकर्षक एवं प्रभावशाली** (Attractive and Effective)—साधारण व्यक्ति भी चित्रों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। ये तथ्यों को आकर्षक एवं प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करते हैं। परिणामस्वरूप ये मस्तिष्क पर अमिट छाप अंकित करते हैं। मनोवैज्ञानिकों की मान्यता है कि चित्रों में स्वाभाविक रूप से व्यक्तियो को अपनी ओर आकर्षित करने की अपूर्व शक्ति होती है जो उन्हें उनमें व्यक्त विशेषताओ को समझने को प्रेरित करती है। चित्र व्यक्ति के दिल और दिमाग पर गहरा प्रभाव डालते हैं। यही कारण है कि विज्ञापनों में चित्रों का प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है।

(2) **सरल एवं अधिक बोधगम्य** (Easy and More Understandable)—सांख्यिकीय तथ्य या आंकड़े सामान्यतः नीरस एवं जटिल होते हैं। ऐसे तथ्य भी चित्रों की सहायता से इतने सरल प्रतीत होते है कि उन्हे सुगमता से समझा जा सकता है। जनसंख्या-वृद्धि, अपराध एवं बाल-अपराध सम्बन्धी आंकड़ों, आय-व्यय सम्बन्धी तथ्यों एवं विभिन्न अनुसन्धानों के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों को चित्रों के माध्यम से सरलता से लोग समझ पाते हैं। **बोडिंग्टन** ने ठीक ही लिखा है, "ठीक प्रकार से बनाया गया एक चित्र आंखों और मस्तिष्क दोनों को प्रभावित करता है, क्योंकि चित्र उन व्यक्तियों के लिए भी व्यावहारिक, स्पष्ट एवं सरलता से समझने योग्य होता है जो चित्र-प्रदर्शन की पद्धति से अपरिचित होते हैं।"[1] इस सम्बन्ध में **श्रीमती पी. वी. यंग** ने लिखा है, "चित्र साख्यिकीय तथ्यों के बहुत बड़े ढेर को स्पष्ट एवं बोधगम्य बनाने में काफी महत्वपूर्ण होते हैं।"[2]

(3) **तुलना मे आसानी** (Easiness in Comparison)—चित्रमय प्रदर्शन की विशेष उपयोगिता यह है कि इसके द्वारा दो या दो से अधिक तथ्यों की तुलना बहुत आसान हो जाती है। संख्या या शब्दो द्वारा विवरण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन काफी कठिन एवं श्रम-साध्य होते है। अतः चित्रों की सहायता से तथ्यो की तुलनात्मक ढग से सरलता से समझा जा सकता है। उदाहरणार्थ, एक शिक्षण-संस्था मे विभिन्न वर्षों में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं की संख्या का अनुपात और उनकी शैक्षणिक योग्यता की तुलना चित्रों के माध्यम से प्रभावशाली ढंग से सुगमतापूर्वक की जा सकती है।

1 Boddington, *Statistics and its Application to Commerce*, p 140.
2 P. V. Young, *op. cit.*, p. 388.

(4) **तात्कालिक दशाओ की जानकारी** (Knowledge of Immediate Affairs)—विस्तारपूर्वक अध्ययन किए बिना किसी भी तात्कालिक विषय, दशा या समस्या को भली-भांति नही समझा जा सकता, परन्तु यदि इनसे सम्बन्धित नवीनतम जानकारी को चित्रों के रूप में प्रदर्शित किया जाय तो किसी भी दशा या समस्या को आसानी से समझा जा सकता है। चित्रो के द्वारा नवीन प्रवृत्तियों, जैसे—जनसंख्या के घटने-बढने की प्रवृत्ति, अपराधी प्रवृत्ति, मद्यपानता की स्थिति, आदि को कम समय में सुगमतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है।

(5) **समय एवं श्रम की बचत** (Saving of Time and Labour)—चित्रों से तथ्यो के लक्षणों व अन्तर्निहित गुणों का सुगमता से पता चल जाता है। चित्रों के माध्यम से किसी भी स्थिति, दशा, समस्या या घटना से सम्बन्धित निष्कर्षो को बहुत ही कम समय में बिना किसी विशेष परिश्रम के आसानी से समझा जा सकता है। इनकी सहायता से बिना किसी विशेष श्रम के यथार्थ को तुरन्त समझा जा सकता है। जटिल आंकड़ो, लम्बी सारणियों एवं वाक्यो को देख-पढ़कर निष्कर्ष निकालने में काफी समय और श्रम लगता है। चित्र उन्हे देखने-समझने वालो के समय की काफी बचत करते है। किसी भी रोगी के तापमान का बिन्दुरेखीय चित्र (ग्राफ) देखकर डॉक्टर तुरन्त रोगी की स्थिति में होने वाले परिवर्तन को जान लेता है। **बाउले** ने ठीक ही लिखा है, "चित्र आंखों के लिए सहायक ही नही होते, बल्कि ये समय बचाने के साधन भी होते है।"

(6) **याद रखने में सुविधाजनक** (Convenient for Memory)—चित्र आकर्षक एवं रुचिपूर्ण होने के कारण मन और मस्तिष्क पर शीघ्र प्रभाव डालते है। इसके विपरीत, आंकड़े एवं सारणियां नीरस होते हैं तथा इन्हे याद रखना बहुत कठिन है, परन्तु जब इन्हे चित्रो के माध्यम से व्यक्त किया जाता है तो इन्हे सुगमतापूर्वक याद रखा जा सकता है। उदाहरण के रूप में, एक वृत्त चित्र (Circle Diagram) द्वारा यह दर्शाया जाय कि सरकार के बजट मे से कितनी-कितनी राशि किस-किस मद पर खर्च की जाती है तो चित्र को देखकर यह एक-दम पता चल जाएगा कि किस मद पर सर्वाधिक राशि और किस पर कम राशि खर्च की जाती है। चित्र द्वारा व्यक्त की गयी इस बात को याद रखना आसान है।

(7) **अनुसन्धान मे उपयोगी** (Helpful in Research)—अनुसन्धान-कार्य को सरलतापूर्वक आगे बढ़ाने मे चित्र काफी उपयोगी प्रमाणित हुए है। क्षेत्रीय-कार्य के संगठन एवं सफलतापूर्वक संचालन मे चित्रो की काफी आवश्यकता पड़ती है। अनुसन्धानकर्ता को क्षेत्र की भौगोलिक विशेषताओं का पता चित्रों द्वारा ही चलता है। **श्रीमती पी. वी. यंग** के अनुसार, "नवीन तथ्यों की खोज और प्राक्कल्पनाओ के विकास में चित्र अधिक उपयोगी हो सकते हैं।" अनुसन्धान से, सम्बन्धित तथ्य या सूचनाएं एकत्रित करने मे चित्र काफी सहायक होते है।

(8) **प्रभावपूर्ण प्रचार में सहायक** (Helpful in Effective Propaganda)—चित्र अधिक रुचिकर एव बोधगम्य होते हैं, अतः इनका प्रभाव सामान्य जनता पर अधिक होता है। यही कारण है कि ये प्रचार कार्य में काफी उपयोगी है। प्रचारकर्ता चाहे व्यापारी हो या उद्योगपति, राजनीतिक दल हो या सरकार, चित्रमय प्रदर्शन से अपने व्यापार, उत्पादन कार्यक्रमों तथा योजनाओं की उपलब्धियों का प्रचार-प्रसार प्रभावपूर्ण ढंग से कर सकते हैं। सामाजिक अनुसन्धान से प्राप्त निष्कर्षो को व्यावहारिक जीवन में उपयोगी बनाने मे भी चित्रमय प्रदर्शन का काफी योग है, जैसे—जनसंख्या-वृद्धि को रोकने से सम्बन्धित उपाय, राष्ट्रीय एकता से सम्बन्धित तथ्य, आदि।

(9) **पूर्वानुमान में सहायक** (Helpful in Prediction)—चित्रों की एक उपयोगिता यह है कि इनकी सहायता से घटना-विशेष या स्थिति-विशेष में होने वाले परिवर्तनों को तुलनात्मक रूप में दर्शाया जा सकता है। यदि किसी समस्या या घटना से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों का प्रदर्शन चित्र के माध्यम से समय श्रेणियों (Time-series) के अनुसार किया जाय तो इससे भविष्य में होने वाले परिवर्तनों का सुगमता से अनुमान लगाया जा सकता है। उदाहरण के रूप में, यदि बाल-अपराध की घटनाओं को समय-श्रेणियों के अन्तर्गत चित्र द्वारा प्रदर्शित किया जाय तो भविष्य में बाल अपराध की दर के घटने या बढ़ने का संकेत आसानी से मिल सकता है।

(10) **मनोरंजन एवं बहुउद्देश्यीय** (Entertaining and Multi-purposive)—चित्रों का एक लाभ यह है कि ये नेत्रों को प्रिय लगते हैं, लोग सहज ही इनकी ओर आकर्षित होते हैं, ये मानसिक थकान को दूर करने में योग देते हैं, ये मनोरंजन प्रदान करते हैं, इनके माध्यम से ज्ञान सरलतम रूप में लोगों तक पहुंच पाता है। चित्रों के माध्यम से अनेक तथ्य एक ही बार में स्पष्ट हो जाते हैं। एक दृष्टि मात्र डालने से ही चित्र अपने पीछे छिपे अर्थ को लोगों तक पहुंचा देते हैं।

चित्रमय-प्रदर्शन की सीमाएं (Limitations of Diagrammatic Representation)

चित्रमय प्रदर्शन के उपर्युक्त गुणों के साथ उसकी कुछ सीमाएं भी हैं। **मोरोने** ने चित्रों के सावधानीपूर्वक अध्ययन पर विशेष बल दिया है। आपके अनुसार असावधान व्यक्ति सरलता से मूर्ख बन सकता है, क्योंकि चित्रमय प्रदर्शन सरल, स्पष्ट और लुभाने वाला होता है। चित्रमय प्रदर्शन की सीमाएं निम्नांकित हैं, इन सीमाओं को ध्यान में रखकर ही चित्रों का प्रयोग किया जाना चाहिए :

(1) **परिशुद्धता का अभाव** (Lack of Accuracy)—आंकड़ों या सारणियों के रूप में दर्शाये गये विशुद्ध माप का यथार्थ बोध चित्रों द्वारा नहीं हो पाता है। इसका कारण यह है कि आंकड़ों या सारणियों में तो अंकों के मूल्यों को दशमलव तक दर्शाया जा सकता है जो चित्रों मे सामान्यतः सम्भव नहीं है। उदाहरण के रूप में, किसी तथ्य को व्यक्त करने हेतु जब हम संख्याओं का प्रयोग करते है तो यह संख्या 10.29, 11.02, 11.25, आदि कुछ भी हो सकती है। चित्र द्वारा इतनी विशुद्धता के साथ इन संख्याओं को चित्रित नहीं किया जा सकता। स्पष्ट है कि चित्रों द्वारा पूर्णतः यथार्थ संख्यात्मक बोध सम्भव नहीं है।

(2) **सूक्ष्म अन्तर को दर्शाना कठिन** (Difficult to Present Minute Difference)—चित्रों द्वारा ऐसे तथ्यों या संख्याओं को प्रदर्शित करना कठिन है जिनमें या तो अन्तर बहुत ज्यादा है या बहुत कम है। उदाहरण के रूप में, 5 एवं 5,000 की संख्या को व्यक्त करने वाले तथ्यों को और 200 तथा 202 के सूक्ष्म अन्तर को प्रकट करने वाले तथ्यों को चाहे कोई भी पैमाना या माप क्यों न अपना लिया जाए, आसानी से चित्रों द्वारा प्रदर्शित नहीं किया जा सकता।

(3) **विस्तृत विश्लेषण कठिन** (Exhaustive Analysis Difficult)—चित्र किसी तथ्य या घटना या विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत नहीं कर सकते, वे तो अति संक्षिप्त रूप मे उसे व्यक्त कर सकते हैं। चित्रों को देखकर मोटे तौर पर कुछ अनुमान मात्र ही लगाये जा सकते है। इनके द्वारा गहन एवं सूक्ष्म निष्कर्षों को व्यक्त करना सम्भव नहीं है।

(4) **समरूप तथ्यों का प्रदर्शन ही सम्भव** (Possibility of Presentation of Homogeneous

घटनाओं को ही चित्रों के द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। विविधतापूर्ण सामग्री या तथ्यों को चित्रों के माध्यम से तुलनात्मक रूप में व्यक्त नहीं किया जा सकता। तात्पर्य यह है कि अलग-अलग विशेषताओं वाले तथ्यों की चित्रों के माध्यम से तुलना करना सम्भव नहीं है।

(5) **तुलनात्मक तथ्यों का प्रदर्शन ही सम्भव** (Possibility of Presentation of Comparative Data only)—ऐसे तथ्यों को ही चित्रों के द्वारा दर्शाया जा सकता है जो परस्पर तुलना करने योग्य हों। सामाजिक अनुसन्धान में कई तथ्य ऐसे भी होते हैं जो तुलना योग्य नहीं होते। उन्हें तो शब्दों के माध्यम से ही विश्लेषण द्वारा समझना सम्भव है। इस प्रकार के तथ्यों या निष्कर्षों को चित्र के माध्यम से व्यक्त नहीं किया जा सकता।

(6) **अभिनति की सम्भावना** (Possibility of Bias)—चित्रों द्वारा तथ्यों के प्रदर्शन हेतु कुशलता, विवेक एवं कलात्मक अभिरुचि का होना नितान्त आवश्यक है। कभी-कभी चित्रों के माध्यम से कलाकार कला को तो अभिव्यक्त कर देता है, परन्तु व्यक्तिगत अभिनति (पक्षपात) के कारण वह तथ्यों का सही एवं यथार्थ चित्रण नहीं कर पाता। ऐसी स्थिति में चित्र की वस्तुनिष्ठता समाप्त हो जाती है।

चित्रमय प्रदर्शन की उपर्युक्त सीमाओं का यह तात्पर्य नहीं है कि अनुसन्धान में चित्रों का प्रयोग ही नहीं किया जाना चाहिए। आवश्यकता इस बात की है कि चित्रों की रचना सावधानीपूर्वक पूर्ण वस्तुनिष्ठता के साथ की जानी चाहिए। चित्र अनुसन्धान के निष्कर्षों को प्रभावपूर्ण बनाने में योग देते हैं, उन्हें लोगों तक पहुंचाने में मदद करते हैं।

चित्र-रचना के नियम
(RULES FOR CONSTRUCTING DIAGRAMS)

चित्रमय प्रदर्शन सरल एवं स्पष्ट होना चाहिए। चित्र-रचना एक कला है। **श्रीमती पी. बी. यंग** का कहना है कि चित्र किस उद्देश्य से बनाये जा रहे है, इनके द्वारा किन विशेष तथ्यों को प्रकाश में लाना है, अध्ययनकर्ता के पास कितना समय है, देखने वाले व्यक्तियों का शैक्षणिक-स्तर क्या है, चित्र का मनोवैज्ञानिक प्रभाव क्या होगा तथा किस प्रकार के चित्रों द्वारा शुद्ध एवं स्पष्ट रूप से तथ्यों का प्रदर्शन सम्भव है। ये प्रश्न चित्र के स्वरूप निर्धारण में महत्वपूर्ण माने जा सकते है। अन्यत्र **श्रीमती यंग** ने लिखा है, "असावधानीपूर्वक बनाये गये चित्र न केवल अच्छे प्रतिवेदन को गम्भीर रूप से सस्ता बना देते हैं, अपितु तथ्यों को भी विकृत रूप में प्रस्तुत कर देते हैं।" **कान्विन स्मिद** ने लिखा है, "सभी सामाजिक घटिया ही नहीं बना देते, बल्कि उसे भ्रामक या विकृत भी कर देते हैं।"[1]

चित्र-रचना में व्यावहारिक पहलू अधिक महत्वपूर्ण है। चित्रों की रचना में निम्नांकित सामान्य नियमों को ध्यान में रखना आवश्यक है :

(1) **आकर्षक प्रदर्शन** (Attractive Presentation)—चित्रों का एक प्रमुख उद्देश्य तथ्यों का आकर्षक के रूप में प्रस्तुतीकरण है। इस हेतु चित्र-रचना करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए कि चित्र नेत्रों को प्रिय लगने वाले होने चाहिए, उनमें कलात्मकता का पुट होना चाहिए। इस हेतु उनमें सुन्दर रंगों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

1 C. F. Schmid, op. cit., p. 387.

(2) **आकार** (Size)—चित्र बनाते समय कागज के आकार का ध्यान रखा जाना चाहिए। चित्र न तो बहुत छोटे और न बहुत बड़े होने चाहिए अन्यथा न तो वे तथ्यों का ठीक से प्रतिनिधित्व कर पायेगे और न ही आकर्षक लगेंगे।

(3) **माप (पैमाना)** (Scale)—चित्र में प्रयोग में लाया जाने वाला माप उपयुक्त होना चाहिए ताकि चित्र न तो बहुत छोटा और न ही बहुत बड़ा बने। चित्र हेतु माप ऐसा लिया जाना चाहिए कि तथ्यो की महत्वपूर्ण विशेषताएं चित्र को एक बार देखने से ही ज्ञात हो जाएं।

(4) **ज्यामितीय शुद्धता** (Geometrical Accuracy)—चित्रमय प्रदर्शन की सच्ची सार्थकता इस बात में निहित है कि चित्र ऐसे होने चाहिए कि वे तथ्यों का वास्तविक प्रतिनिधित्व कर सकें। चित्र बनाने में जिस माप (पैमाने) का निर्धारण किया गया है, उस माप पर दृढ़ता से अमल किया जाना चाहिए। चित्र को आकर्षक बनाने के लिए माप को किसी भी दशा में बदला नहीं जाना चाहिए।

(5) **स्पष्ट विभाजन** (Distinctive Division)—विभिन्न प्रकार के तथ्यों का चित्र में भली-भांति स्पष्ट विभाजन होना चाहिए, चित्र में प्रत्येक उपभाग सुस्पष्ट व सुनिश्चित होना चाहिए। अलग-अलग तथ्यों को दर्शाने के लिए विभिन्न रंगों या चिह्नों (संकेतों) का प्रयोग किया जाना चाहिए। विभिन्न संकेतो के बीच स्पष्ट अन्तर होना चाहिए ताकि अनावश्यक भ्रान्तियों से बचा जा सके।

(6) **शीर्षक** (Caption)—प्रत्येक चित्र के ऊपर मोटे अक्षरों में एक शीर्षक दिया जाना चाहिए। यह शीर्षक तथ्यों या आंकड़ों के केन्द्रीय भाव या मूलभूत विशेषता को व्यक्त करने वाला होना चाहिए।

(7) **संकेत** (Index)—चित्र के प्रत्येक भाग, उपभाग, प्रयुक्त रंग, चिह्न, आदि का विवरण चित्र के नीचे संकेत के रूप में अवश्य दिया जाना चाहिए। इसी को देखकर दर्शक चित्र को भली-भांति समझ सकेंगे।

चित्र बनाने में जो माप (पैमाना) काम में लिया गया है, उसका स्पष्ट अंकन चित्र के ऊपर एक तरफ किया जाना चाहिए।

(8) **शब्दो तथा संख्याओं का कम से कम प्रयोग** (Minimum use of Words and Figures)—चित्र रचना का उद्देश्य आंकड़ों एवं शब्दों-वाक्यों के बोझ को हलका करना है। इस दृष्टि से आवश्यक है कि चित्र स्वयं ही अपने आप में स्पष्ट और अपना अर्थ प्रकट करने वाले होने चाहिए। इस दृष्टि से यह आवश्यक है कि चित्रों में शब्दों एवं आंकड़ों या संख्याओं का झमेला कम-से-कम हो।

(9) **वास्तविक अभिव्यक्ति** (Accurate Presentation)—तथ्यों को उनके वास्तविक रूप में प्रकट करना चित्रमय प्रदर्शन का प्रमुख प्रयोजन है। चित्र में प्रदर्शित तथ्यों को दर्शक उसी रूप में समझ सकें, जिस रूप में उन्हे चित्रित किया गया है, यही उसकी सार्थकता है। चित्र के माध्यम से अभिव्यक्ति इस प्रकार से होनी चाहिए कि प्रघटना के जिस पक्ष पर विशेष बल देने का प्रयास किया गया है, उसी पक्ष पर दर्शक का ध्यान केन्द्रित हो।

(10) **उपयुक्त चुनाव** (Suitable Selection)—चित्र के प्रकार अनेक है और एक ही प्रकार के आंकड़ों या तथ्यों को कई प्रकार के चित्रों के माध्यम से दर्शाया जा सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि अध्ययनकर्ता अपने विवेक को काम में लेता हुआ सही निर्णय करे कि किस प्रकार की सामग्री को व्यक्त करने के लिए कौनसा चित्र सर्वोत्तम रहेगा।

(11) मितव्ययिता (Economy)—चित्र-रचना करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि चित्रों पर बहुत ज्यादा खर्चा नही हो जाए। प्रतिवेदन में ऐसे और इतने चित्रो को नहीं दिया जाना चाहिए जो सम्पूर्ण अनुसन्धान के खर्चे को आवश्यकता से अधिक बढ़ा दें। अतः अनुसन्धान-बजट की सीमा को ध्यान में रखकर ही चित्रों पर खर्चा किया जाना चाहिए।

चित्रों के प्रकार
(TYPES OF DIAGRAMS)

विभिन्न सूचनाओं एवं तथ्यों को कई प्रकार के चित्रो द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। किस प्रकार के चित्र द्वारा किन तथ्यों को प्रकट किया जाएगा, यह इस बात पर निर्भर है कि उनकी संख्या, प्रकृति, आकार एवं अध्ययन के उद्देश्य क्या है ? विभिन्न प्रकार के चित्रों को हम निम्नांकित श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं :

(I) **एक विमा चित्र** (One Dimensional Diagrams)

(1) रेखा चित्र (Line diagram),

(2) सरल दण्ड चित्र (Simple bar diagram),

(3) विपुल या बहुदण्ड चित्र (Multiple bar diagram),

(4) अन्तर्विभक्त दण्ड चित्र (Sub-divided bar diagram),

(5) प्रतिशत दण्ड चित्र (Percentage bar diagram),

(6) विचलन दण्ड चित्र (Deviation bar diagram),

(7) सरकन या द्विमुखी दण्ड चित्र (Sliding bar diagram),

(8) स्तूप या पिरामिड चित्र (Pyramid diagram),

(9) युग्म-दिशात्मक दण्ड चित्र (Duo-directional bar diagram)।

(II) **द्विविमा चित्र या क्षेत्र चित्र** (Two Dimensional or Area Diagrams)

(1) आयत चित्र (Rectangle diagram),

(2) वर्ग चित्र (Square diagram),

(3) वृत्त चित्र (Circle diagram)।

(III) **त्रिविमा चित्र** (Three Dimensional Diagrams)

(1) घन चित्र (Cube diagram),

(2) बेलन चित्र (Cylinder diagram),

(3) ग्लोब चित्र (Globe diagram)।

(IV) **तस्वीर या चित्र लेख** (Pictogram)

(V) **मानचित्र** (Maps)

(I) एक विमा चित्र
(ONE DIMENSIONAL DIAGRAMS)

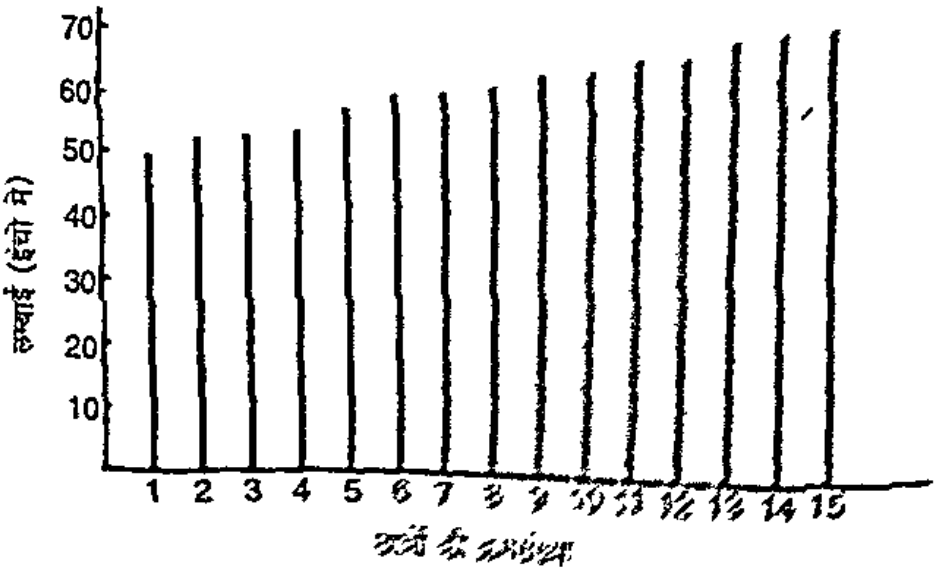
एक विमा चित्रों में तथ्यों का प्रदर्शन करने के लिए केवल एक माप—लम्बाई का उपयोग किया जाता है। उनमें मोटाई या चौड़ाई भी हो सकती है, किन्तु उसका उपयोग

केवल चित्रों को सुन्दर एवं आकर्षक बनाने के लिए ही किया जाता है। एक विमा चित्र बनाने के लिए रेखाओं या दण्डों का उपयोग किया जाता है। ये दण्ड आड़े या खड़े बनाये जा सकते हैं। सभी दण्डों की चौड़ाई और मोटाई एक जैसी होती है। एक विमा चित्रों का उपयोग वहां किया जाता है जहां सबसे छोटे और सबसे बड़े माप में 1 : 10 से अधिक अन्तर न हो। एक विमा चित्रों के प्रमुख प्रकार निम्नांकित हैं :

(1) **रेखा चित्र** (Line Diagram)—इसमें तथ्यों का प्रस्तुतीकरण खड़ी या आड़ी रेखाओं द्वारा किया जाता है। रेखाओं की लम्बाई तुलनात्मक माप को प्रकट करती है। इस प्रकार के चित्रों का उपयोग वहीं किया जाता है जहां इकाइयों की संख्या बहुत अधिक हो। रेखाओं के बीच में दूरी समान रखी जाती है। रेखाचित्र का उदाहरण इस प्रकार है :

उदाहरण—ब्यावर महाविद्यालय के एम. ए. समाजशास्त्र के 15 छात्रों की लम्बाई निम्न प्रकार से है, इसे उपयुक्त चित्र द्वारा प्रस्तुत कीजिए :

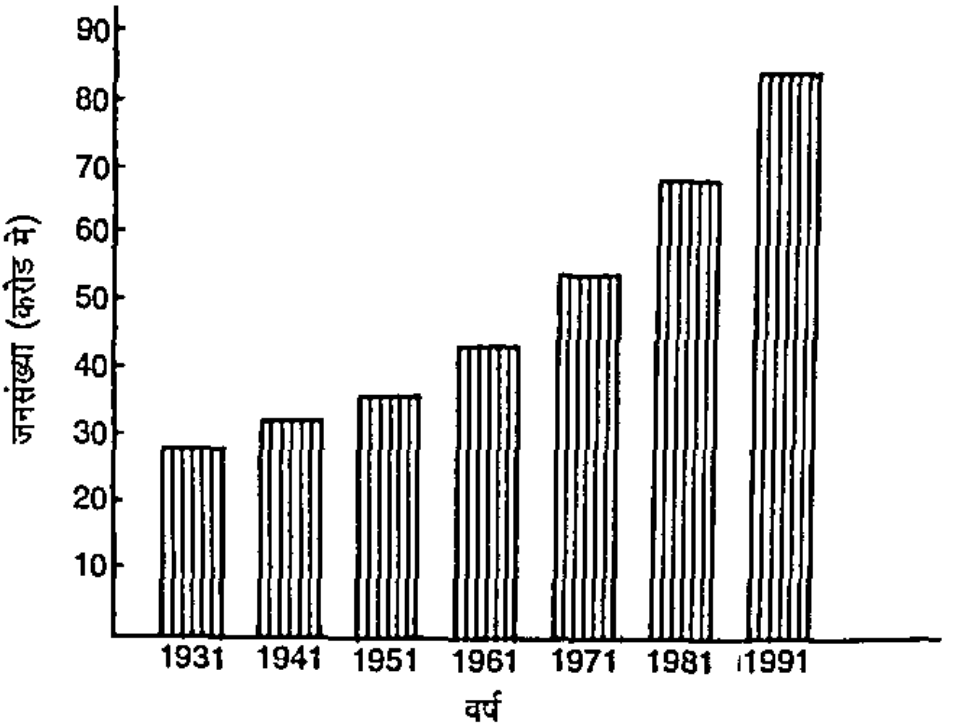
छात्रों की क्रम सं.	1	2	3	4	5	6	7	8
लम्बाई इन्चों में	50,	53,	53,	54,	57,	59,	59	60
	9	10	11	12	13	14	15	
	62,	63,	65,	65,	68,	70,	71	



(2) **सरल दण्ड चित्र** (Simple Bar Diagram)—इसमें भी रेखाचित्रों का, किन्तु इनमें इकाइयों को [illegible] भी होती है जिससे ये दिखने में [illegible] प्रत्येक दण्ड की चौड़ाई समान होती है। [illegible] रंग अथवा डिजायन भर देते [illegible] है, किन्तु खड़े दण्डों से तुलना [illegible] की तुलना करने के लिए [illegible]

उदाहरण—निम्नांकित आंकड़ों से भारत की [illegible]

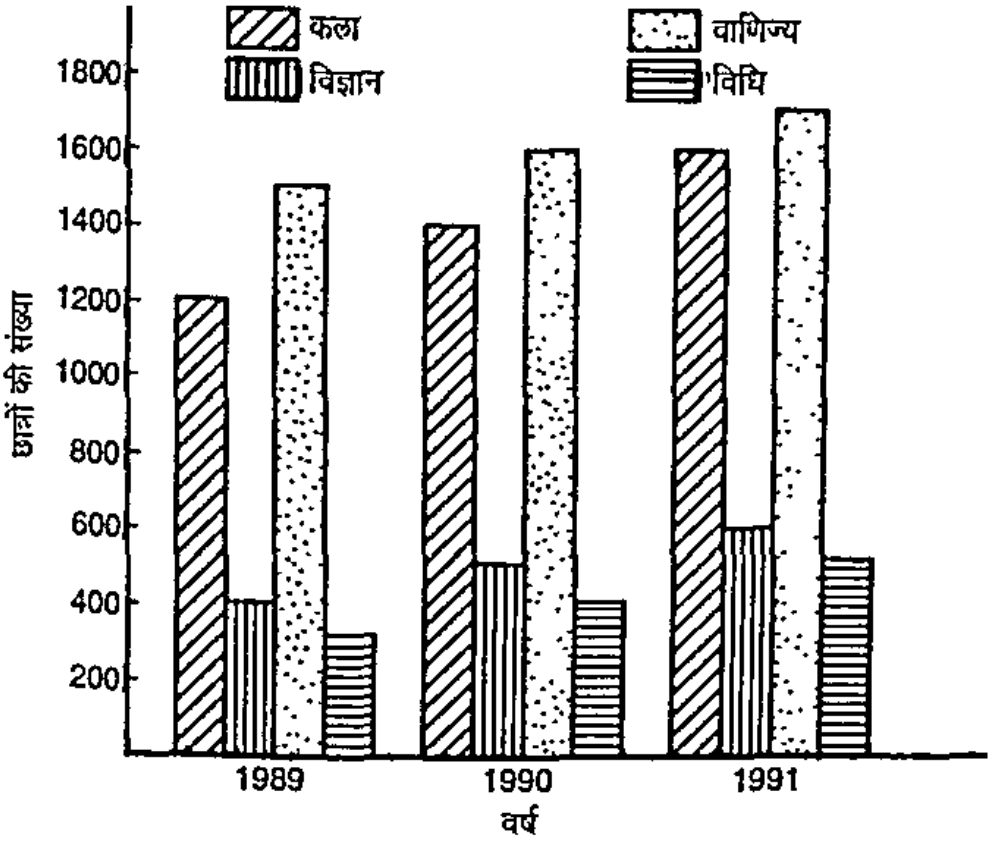
वर्ष	1931	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
जनसंख्या (करोड़ में)	27.89	31.86	36.39	43.92	[illegible]



(3) **विपुल या बहुदण्ड चित्र** (Multiple Bar Diagram)—सरल दण्डों द्वारा तो एक ही प्रकार के तथ्यों की तुलना की जा सकती है, किन्तु जब कई प्रकार के तथ्यों की एक साथ तुलना करनी हो तो विपुल या बहुगुणी दण्डों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के चित्रों में जितने प्रकार के तथ्यों की तुलना करनी होती है, उतनी संख्या में दण्डों को एक साथ मिलाकर बनाया जाता है। यदि दो तथ्यों की तुलना करनी हो तो दो दण्ड, तीन तथ्यों की तुलना करनी हो तो तीन दण्ड एक साथ बनाए जाते है। उदाहरण के लिए, भारत में विभिन्न वर्षो मे स्त्री-पुरुषों की संख्या की तुलना को इस प्रकार के दण्डों द्वारा दिखाया जा सकता है। एक प्रकार के तथ्यों को एक ही रंग या डिजायन द्वारा दिखाया जाता है।

उदाहरण—एक महाविद्यालय की विभिन्न संकायों की विभिन्न वर्षो में छात्रो को विपुल दण्ड द्वारा इस प्रकार दिखाया जा सकता है :

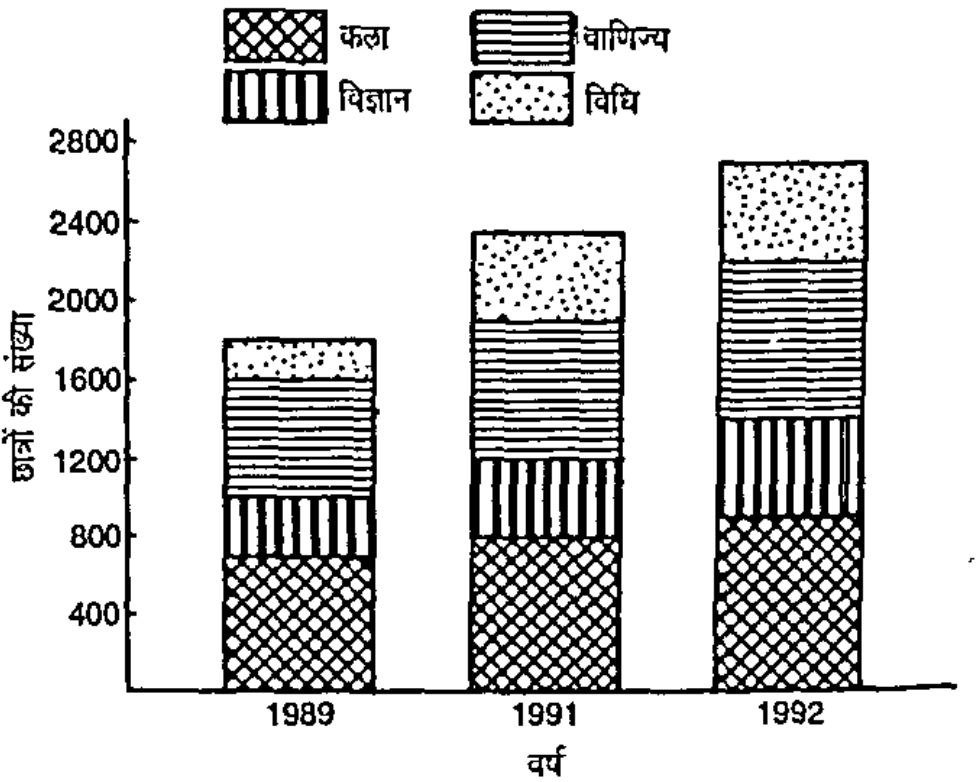
संकाय	विभिन्न वर्षों में छात्रों की संख्या		
	1989	1990	1991
कला	1200	1400	1600
विज्ञान	400	500	600
वाणिज्य	1500	1600	1700
विधि	300	400	500



(4) **अन्तर्विभक्त दण्ड चित्र** (Sub-divided Bar Diagram)—इस प्रकार के चित्रों का उपयोग भी वहीं किया जाता है जहां विपुल दण्डों का किया जाता है। इस प्रकार के दण्डों में आंकड़ों का योग तथा उनके विभिन्न विभागों का प्रदर्शन किया जाता है। इसमें एक ही दण्ड के अन्दर विभिन्न गुणों को दर्शाने के लिए उसी दण्ड को उपविभागों में बांट दिया जाता है।

उदाहरण—एक महाविद्यालय में विभिन्न वर्षों में विभिन्न संकायो में छात्रों की संख्या को अन्तर्विभक्त दण्डों द्वारा प्रदर्शित कीजिए :

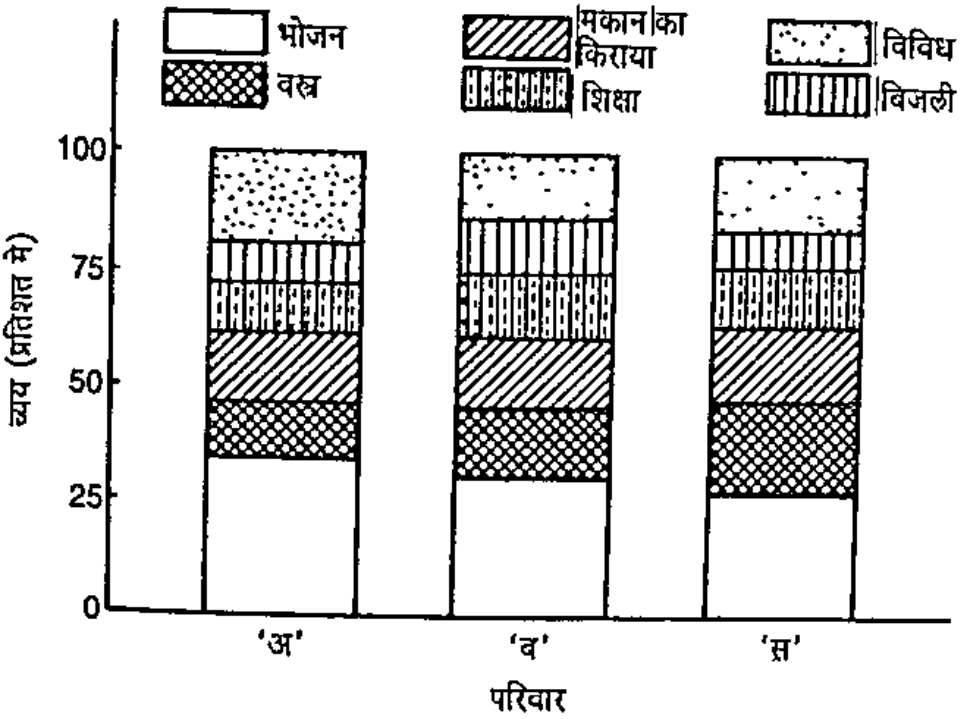
वर्ष	कला	विज्ञान	वाणिज्य	विधि	योग
1989	700	300	600	200	1,900
1990	800	400	700	450	2,350
1991	900	500	800	500	2,700



(5) **प्रतिशत दण्ड चित्र** (Percentage Bar Diagram)—ये भी एक प्रकार के अन्तर्विभक्त दण्ड होते हैं, किन्तु अन्तर केवल इतना है कि अन्तर्विभक्त दण्डों के माप को कुल योग में दिखाया जाता है, जबकि प्रतिशत दण्डों में प्रतिशत के रूप में अर्थात् सूचनाओं को प्रतिशत के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। इस प्रकार के दण्डों में कुल माप को सौ के बराबर मान लिया जाता है तथा प्रत्येक उपविभाग को उसी के अनुसार प्रतिशत में बदल दिया जाता है। इस प्रकार के सभी दण्डों की लम्बाई बराबर होती है, अतः इस प्रकार के दण्डों से कुल माप में होने वाले परिवर्तन को नहीं दिखाया जा सकता, वरन् केवल उपविभागों के अनुपात की ही तुलना की जा सकती है। इसे हम उदाहरण द्वारा इस प्रकार व्यक्त कर सकते है।

उदाहरण—निम्नलिखित सारणी में अ, ब और स तीन परिवारों के मासिक व्यय का विवरण दिया गया है, इसे प्रतिशत दण्ड चित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए :

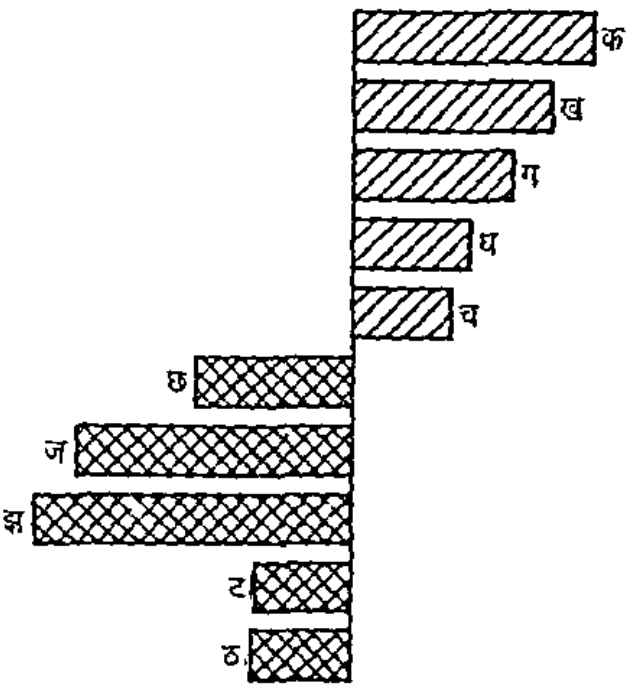
व्यय की मद	परिवार 'अ'	परिवार 'ब'	परिवार 'स'
भोजन	500	600	700
वस्त्र	200	300	500
मकान किराया	200	300	400
शिक्षा	200	300	300
बिजली	100	200	200
विविध	300	300	400
योग	1,500	2,000	2,500



(6) **विचलन दण्ड चित्र** (Deviation Bar Diagram)—इस प्रकार के दण्ड चित्रों का उपयोग उस समय किया जाता है जब विभिन्न तथ्यो के विचलन को प्रदर्शित करना हो। धनात्मक तथा ऋणात्मक विचलन मूल्यों को क्रमशः आधार रेखा के ऊपर तथा नीचे प्रदर्शित किया जाता है। ऐसे चित्र बनाने के लिए पहले एक मध्य रेखा खड़े रूप मे खीची जाती है और उसे शून्य मान लिया जाता है। इस रेखा के एक तरफ धनात्मक मूल्य (+) तथा दूसरी ओर ऋणात्मक मूल्य (—) दिखाया जाता है। मध्य रेखा खीच लेने के बाद विभिन्न तथ्यों को दण्ड द्वारा दाएं या बाएं उनकी प्रकृति के अनुसार दिखाया जाता है। इसे हम एक उदाहरण द्वारा प्रकट कर सकते है।

उदाहरण—विभिन्न विश्वविद्यालयों में दो वर्षो में छात्रो की संख्या में आने वाले अन्तर को विचलन दण्ड द्वारा प्रदर्शित कीजिए।

विश्वविद्यालय	विद्यार्थियों की संख्या (हजारो मे)		अन्तर
	1990	1991	
क	40	52	+12
ख	36	46	+10
ग	32	40	+8
घ	30	36	+6
च	44	49	+5
छ	52	44	–8
ज	54	40	–14
झ	60	44	–16
ट	50	45	–5
ठ	45	40	–5

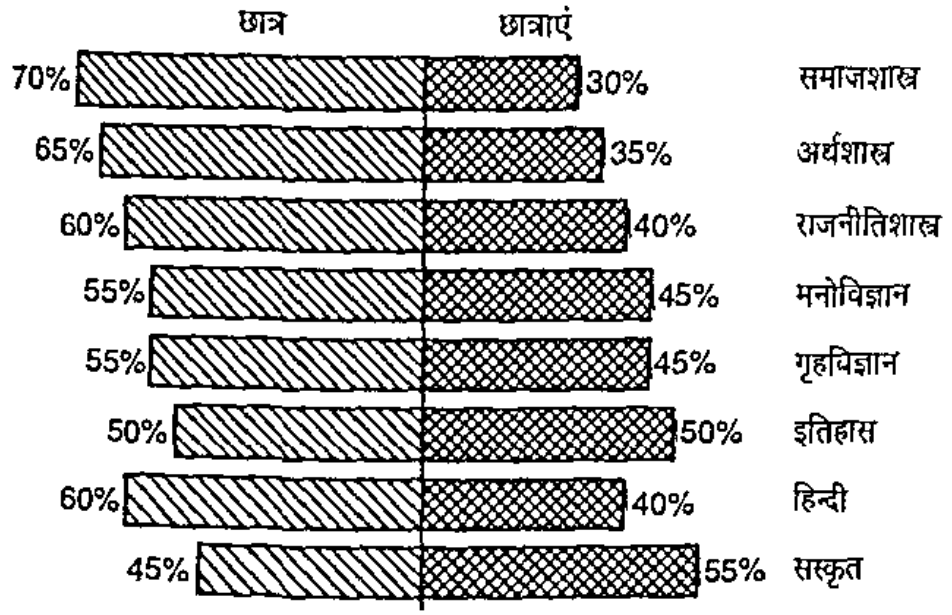


(7) **सरकन या द्विमुखी दण्ड चित्र** (*Sliding Bar Diagram*)—इस प्रकार के दण्ड उस समय प्रयुक्त होते है जब किसी तथ्य के उपविभाग में होने वाले परिवर्तन के अनुपात को प्रकट करना हो। इसमें समस्त माप को दो भागों में बांट दिया जाता है और उन्हें प्रतिशत के रूप में दिखाया जाता है। इस प्रकार के दण्ड चित्रों को बनाने के लिए सबसे पहले माप को प्रतिशत मे बदल दिया जाता है, फिर एक सीधी रेखा माध्य मूल्य को प्रकट करने के लिए खीची जाती है। इसमें एक पक्ष माध्य रेखा के एक ओर तथा दूसरा पक्ष माध्य रेखा के दूसरी ओर दिखाया जाता है। दोनों ओर मिलाकर सभी दण्डों की लम्बाई बराबर होती है। इन दण्डों को देखने से ऐसा लगता है जैसे प्रत्येक दण्ड को अनुपात में परिवर्तन के साथ-साथ इधर-उधर सरकाया गया हो। इसे हम एक उदाहरण द्वारा यहा प्रकट करेंगे।

उदाहरण—राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर में कला संकाय के विभिन्न विषयो में उत्तीर्ण विद्यार्थियो का प्रतिशत निम्न प्रकार है, इसे सरकन दण्ड द्वारा प्रदर्शित कीजिए :

विषय	उत्तीर्ण विद्यार्थियों का प्रतिशत	
	छात्र	छात्राएं
समाजशास्त्र	70	30
अर्थशास्त्र	65	35
राजनीति शास्त्र	60	40
मनोविज्ञान	55	45
गृह विज्ञान	55	45

इतिहास	50	50
हिन्दी	60	40
संस्कृत	45	55

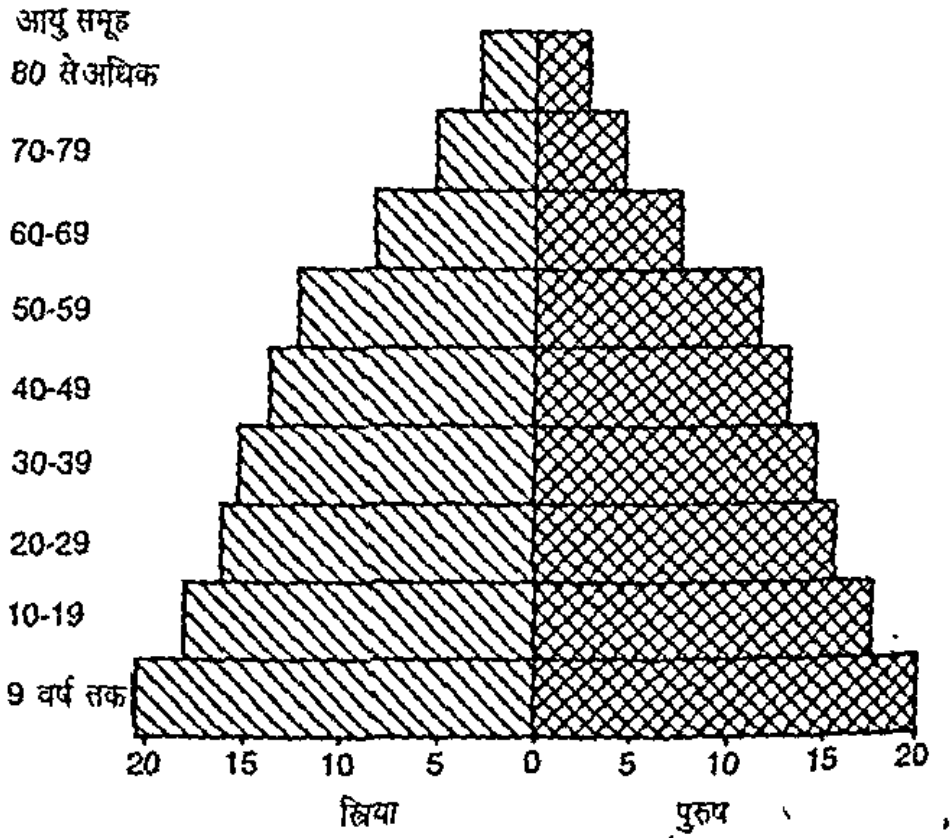


(8) **स्तूप या पिरामिड चित्र** (Pyramid Diagram)—स्तूप दण्ड चित्रो का प्रयोग प्रमुखतः विभिन्न आयु-वर्गो में स्त्री-पुरुषो की संख्या को प्रदर्शित करने के लिए किया जाता है। चित्र को स्तूप का आकार देने के लिए कम आयु के लोगों को नीचे की ओर तथा अधिक आयु के लोगों को क्रमशः ऊपर की ओर दिखाते है। स्तूप मे एक खडी रेखा आधार प्रकट करती है। इस रेखा के एक ओर पुरुषों को तथा दूसरी ओर स्त्रियों को आड़े दण्डों द्वारा दिखाया जाता है। यह एक सामान्य बात है कि सभी समाजों में कम आयु के लोगों की संख्या अधिक और अधिक आयु के लोगों की संख्या कम होती है, अतः नीचे के दण्ड बड़े और ऊपर के दण्ड छोटे होते जाते है। इसके फलस्वरूप चित्र की आकृति एक स्तूप जैसी बन जाती है। इसे हम एक उदाहरण द्वारा प्रकट कर सकते है।

उदाहरण—विभिन्न आयु-समूहों के अनुसार एक नगर में स्त्री-पुरुषो की जनसंख्या नीचे सारणी में दी गई है। स्तूप चित्र द्वारा इसका प्रदर्शन कीजिए :

आयु-समूह	पुरुष	स्त्रियां	योग (हजारों में)
9 वर्ष तक	20.5	20	40.5
10—19	18	17.5	35.5
20—29	16	15 5	31.5
30—39	15	14.5	29.5
40—49	13.5	13	26.5
50—59	12	11.5	23.5
60—69	8	7 5	15.5

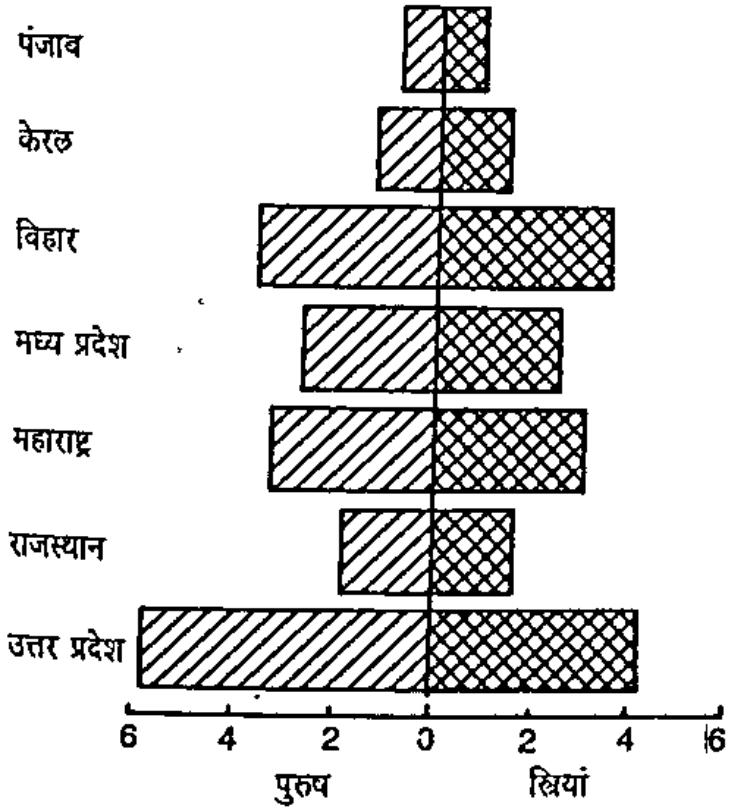
70—79	5	4.5	9.5
80 से अधिक	3	2.5	5.5



(9) **युग्म दिशात्मक दण्डचित्र** (Duo-directional Bar Diagram)—इस प्रकार के दण्ड चित्रों का उपयोग तथ्यो की दो विशेषताओं को दर्शाने के लिए किया जाता है। ऐसे चित्र बनाने के लिए पहले एक आधार रेखा खींची जाती है, उस पर एक मध्य रेखा खींची जाती है। मध्य रेखा के दोनों ओर दण्ड बनाये जाते हैं जिनका पैमाना आधार रेखा पर अंकित होता है। इसे हम एक उदाहरण द्वारा प्रकट करेंगे।

उदाहरण—निम्नांकित तालिका में कुछ राज्यों मे स्त्री-पुरुषों की संख्या दी गई है। इन तथ्यों को युग्म दिशात्मक (द्वि-दिशात्मक) दण्ड चित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए :

राज्य	व्यक्ति (करोडो मे)	
	पुरुष	स्त्रियां
उत्तर प्रदेश	5 88	5.20
राजस्थान	1.78	1.64
महाराष्ट्र	3 24	3 03
मध्य प्रदेश	2 68	2.52
बिहार	3.59	3.39
केरल	1.25	1.29
पंजाब	.89	.78



(II) द्विविमा चित्र
(TWO DIMENSIONAL OR BIVARIATE DIAGRAMS)

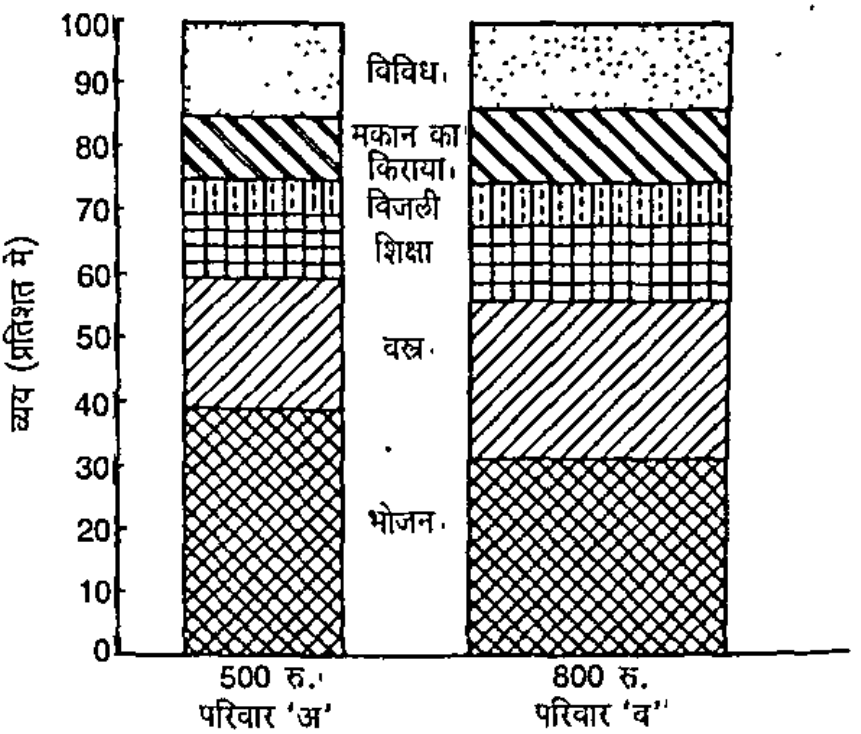
एक विमा चित्रों में केवल लम्बाई का ही प्रयोग किया जाता है, चौड़ाई या मोटाई का नहीं, किन्तु कुछ परिस्थितियों में इसके द्वारा वांछित उद्देश्यो की पूर्ति नहीं हो पाती। ऐसी स्थिति में चित्रों की ऊंचाई के साथ-साथ मोटाई भी दिखाई जाती है। इसमें तुलना के लिए क्षेत्रफल का उपयोग किया जाता है। इसलिए इन्हे क्षेत्र-चित्र भी कहते है। द्विविमा चित्रों का प्रयोग प्रायः वहां किया जाता है जहां छोटी तथा बड़ी इकाई के बीच 1 : 10 से अधिक अनुपात हो। ऐसे चित्रो को दण्ड चित्रों के रूप में बनाना कठिन होता है। द्विविमा चित्रों के विभिन्न प्रकार निम्नांकित है :

(1) **आयत चित्र** (Rectangular Diagram)—इसका उपयोग प्रायः प्रतिशत परिवर्तनों को प्रकट करने के लिए किया जाता है। अतः ये प्रतिशत दण्डों से बहुत कुछ साम्यता रखते है। इसमें लम्बाई और चौड़ाई दोनों ही का प्रदर्शन किया जाता है। आयतों की लम्बाई को 100 के बराबर माना जाता है तथा चौड़ाई मे अनुपात के अनुसार अन्तर दिखाया जाता है। इसका उदाहरण इस प्रकार है :

उदाहरण—दो परिवारों के मासिक व्यय को आयत चित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए :

व्यय की मदें	परिवार 'अ'	परिवार 'ब'
भोजन	200	250
वस्त्र	100	200
शिक्षा	50	100
बिजली	25	50

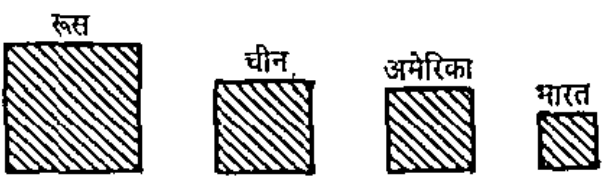
मकान किराया	50	100
विविध	75	100
योग	500	800



(2) **वर्ग चित्र** (Square Diagram)—जब सबसे छोटी और सबसे बड़ी इकाई में 1 100 अथवा इससे भी अधिक अन्तर हो तो उसे दण्ड चित्र द्वारा प्रदर्शित नहीं किया जा सकता। इसलिए ऐसी इकाइयो का प्रदर्शन वर्ग चित्रों द्वारा किया जाता है। ऐसे चित्र बनाने के लिए सख्या का वर्गमूल निकाला जाता है। इस प्रकार के चित्रो में उनकी लम्बाई और चौड़ाई बराबर होती है।

उदाहरण—नीचे सारणी में विभिन्न देशों का क्षेत्रफल दिया गया है, उसे वर्ग चित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए :

देश	क्षेत्रफल (करोड एकड मे)	वर्गमूल
रूस	590 4	24.3
चीन	320 5	17.9
अमेरिका	190 5	13.8
भारत	81 3	.9

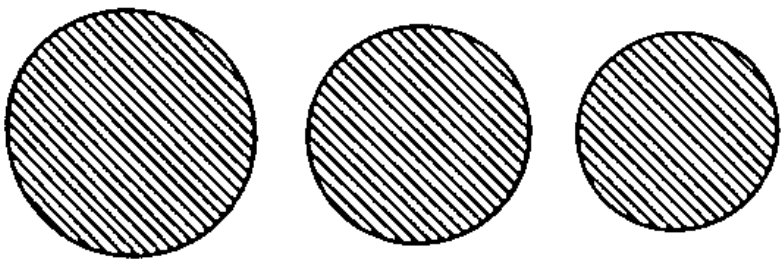


(3) वृत्तचित्र (Circle Diagram)—इनमे भी तुलना का आधार क्षेत्रफल होता है तथा इनका उपयोग भी उन सभी स्थानों पर किया जा सकता है जहां वर्ग चित्र का होता है। इनमें भी पहले संख्या का वर्गमूल निकाला जाता है। फिर उसी अनुपात में अर्ध-व्यास (Radius) मानकर वृत्त बनाये जाते हैं। इन्हें पाई चित्र (Pie-diagram) भी कहते है। वृत्त चित्र दो प्रकार के होते हैं (i) साधारण वृत्त चित्र (Simple circle) तथा (ii) उप-विभाजित (Sub-divided circle) या अन्तर्विभक्त चित्र।

साधारण वृत्तो का निर्माण करने के लिए प्रत्येक प्रकार के आकड़ो का वर्गमूल निकाल कर वृत्त का व्यास तय कर लिया जाता है। व्यास को आधा करके अर्ध-व्यास के आधार पर परकार की सहायता से वृत्त बनाये जाते है। उप-विभाजित वृत्त मे सभी मदों का योग करने 360 के बराबर मान लिया जाता है। फिर प्रत्येक मद का अनुपात निकाल कर कोण बनाये जाते हैं। दोनों के उदाहरण इस प्रकार है :

उदाहरण 1—1981 की जनगणना के अनुसार तीन राज्यो में अनुसूचित जनजातियो की संख्या नीचे सारणी में दी गई है। इसे साधारण वृत्त चित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए .

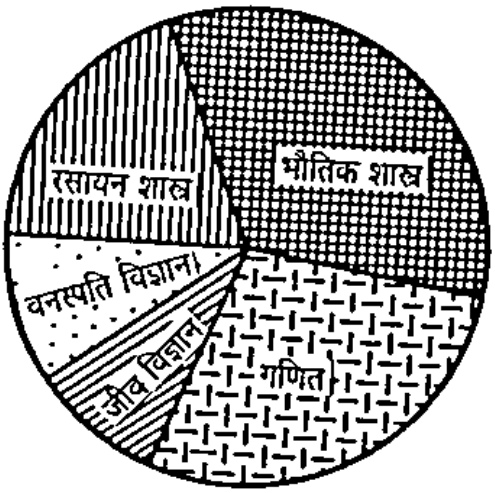
राज्य	अनुसूचित जनजातियों की संख्या (लाखो मे)	वर्गमूल
विहार	58 10	7 62
गुजरात	48.48	6 96
राजस्थान	41 83	6 46



विहार गुजरात राजस्थान

उदाहरण 2—निम्नलिखित सारणी में विभिन्न विषयो के छात्रों की संख्या दी गई है जिसे उपविभाजित वृत्तचित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए :

विषय	विद्यार्थियों की संख्या	अंश
रसायनशास्त्र	1,900	68.4
भौतिकशास्त्र	3,500	126 0
गणित	2,800	100 8
जीव विज्ञान	800	28.8
वनस्पति विज्ञान	1,000	36 0
योग	10,000	360.0

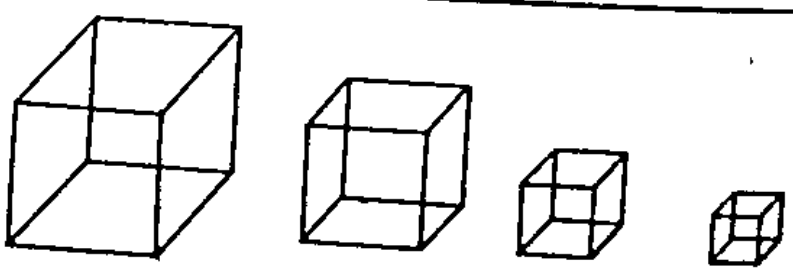


(III) त्रिविमा चित्र
(THREE DIMENSIONAL OR MULTIVARIATE DIAGRAMS)

जब सबसे छोटी और सबसे बड़ी इकाई के बीच 1 : 100 से भी अधिक अन्तर हो तो क्षेत्र-चित्रों द्वारा उन्हें प्रदर्शित करना कठिन होता है। ऐसी स्थिति में त्रिविमा चित्रो का उपयोग किया जाता है जिनमें लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई तीनों माप दिखाये जाते हैं तथा आयतन (Volume) के आधार पर तुलना की जाती है। त्रिविमा चित्रों मे घन, ब्लाक, बेलन अथवा ग्लोब चित्र बनाये जा सकते है। घन बनाने के लिए आंकड़ों का घनमूल निकालकर उसी अनुपात में घन की एक भुजा का माप तय किया जाता है। इसे हम उदाहरण द्वारा इस प्रकार प्रकट कर सकते है :

उदाहरण—विभिन्न विश्वविद्यालयों में डिग्री छात्रों की संख्या नीचे सारणी में दी गई है, इसे घन-चित्र (cube diagram) द्वारा प्रदर्शित कीजिए :

विश्वविद्यालय	छात्रों की संख्या	घनमूल	घन की भुजा (सेमी. में)
क	64,000	40	4
ख	27,000	30	3
ग	8,000	20	2
घ	1,000	10	1



IV. चित्रलेख (Pictogram)—इसमें तथ्यों को आकार एवं संख्या के द्वारा प्रकट किया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हमें राष्ट्रीय आय को प्रदर्शित करना है तो सिक्कों के चित्र बनाएंगे और जनसंख्या बतानी है तो स्त्री-पुरुषों के चित्रलेखों के प्रयोग का श्रेय

वियना निवासी **डॉ. ऑटो न्यूरेथ** को है। चित्रलेखों द्वारा राष्ट्रीय आय, जनसंख्या, उत्पादन, कारखानों एवं सैनिक साज-सामान, आदि का प्रदर्शन किया जाता है।

V. मानचित्र (Maps)—भौगोलिक तथ्यो, जैसे-नदी, झील, पहाड़ तथा सामाजिक तथ्यों, जैसे-स्कूल, डाकखाना, मन्दिर, गांव एवं नगर, आदि को प्रकट करने के लिए मानचित्रो का प्रयोग किया जाता है। किसी देश या प्रान्त जनघनत्व, वर्षा, फसलों एवं भौगोलिक आकृतियों का प्रदर्शन मानचित्रों द्वारा आकर्षक ढंग से किया जा सकता है।

प्रश्न

1. चित्रों द्वारा तथ्यों के प्रस्तुतीकरण के लाभ एवं हानियों की विवेचना कीजिए।
2. तथ्यों के प्रदर्शन हेतु अपनाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के चित्रों का संक्षेप मे उल्लेख कीजिए।
3. एकविमा एवं द्वि-विमा चित्रों का उदाहरण सहित उल्लेख कीजिए।
4. चित्र-रचना के नियमों का उल्लेख कीजिए तथा इसके प्रमुख उद्देश्य बताइये।

लघु उत्तरीय प्रश्न

निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(1) चित्रमय प्रदर्शन के लाभ बताइए, (2) चित्रमय प्रदर्शन की सीमाएं बताइए, (3) रेखाचित्र, (4) सरल दण्ड, (5) प्रतिशत दण्ड, (6) विचलन दण्ड, (7) आयत चित्र, (8) वृत्त चित्र।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कोष्ठक में दिए गए शब्दों में से सही शब्द का चयन करके कीजिए :
   (i) विभिन्न आयु-वर्गों में स्त्री-पुरुषों की संख्या को प्रदर्शित करने के लिए उपयुक्त चित्र.....है। (पिरामिड चित्र/वृत्त चित्र)
   (ii) एक ही प्रकृति के तथ्यों की विभिन्न वर्षों में तुलना के लिए उपयुक्त चित्र.....है। (सरल दण्ड/सरकन दण्ड)
   (iii) विभिन्न वर्षों में कई प्रकार के तथ्यों की तुलना के लिए उपयुक्त चित्र.....है। (प्रतिशत दण्ड/बहुदण्ड)
   (iv) सरकन दण्ड.....चित्र है। (एक विमा/द्विविमा)
   (v) वर्ग चित्र.....के अन्तर्गत आता है। (द्विविमा/बहुविमा)
   (vi) घन चित्र.....चित्र का उदाहरण है। (द्विविमा/बहुविमा)
2. निम्नांकित में से सत्य/असत्य कथन छांटिए :
   (i) रेखाचित्र मे तथ्यों का प्रदर्शन खड़ी या आड़ी रेखा मे किया जाता है।
   (ii) कई प्रकार के तथ्यो की एक साथ तुलना करने के लिए सरल दण्ड का प्रयोग किया जाता है।
   (iii) द्विविमा चित्रों में केवल लम्बाई या केवल चौड़ाई का प्रयोग किया जाता है।
   (iv) वर्ग चित्रों में लम्बाई व चौड़ाई समान होती है।
   (v) तथ्यों का चित्रमय प्रदर्शन अनुसन्धान की दृष्टि से उपयोगी नहीं होता है।
   (vi) चित्रमय प्रदर्शन में तथ्यों का पूर्वानुमान नही लगाया जा सकता।
   (vii) वृत्त चित्र में तथ्यों की तुलना का आधार क्षेत्रफल होता है।
   (viii) त्रिविमा चित्रों में लम्बाई, चौड़ाई एवं क्षेत्रफल दिखाया जाता है।

[उत्तर—1. (i) पिरामिड, (ii) सरल दण्ड, (iii) बहुदण्ड, (iv) एक विमा, (v) द्विविमा, (vi) बहुविमा।
2. सत्य कथन—i, iv, vii, शेष कथन असत्य हैं।]

17

सांख्यिकीय माध्य : समान्तर माध्य, भूयिष्ठक (बहुलक) तथा मध्यका

[STATISTICAL AVERAGES : MEAN, MODE & MEDIAN]

मानवीय ज्ञान के विकास में आज संख्याओं का योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण बनता जा रहा है। अब सामाजिक तथ्यों के विश्लेषण और विवेचन मे भी सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। निष्कर्षो को वैज्ञानिक बनाने, निदर्शन को प्राप्त करने, प्रयोग प्रारूप का निर्माण करने, परिकल्पना का परीक्षण करने तथा आंकड़ों की केन्द्रीय प्रवृत्ति को ज्ञात करने के लिए वर्तमान में सांख्यिकी को सबसे महत्वपूर्ण आधार के रूप में देखा जाता है।

सांख्यिकी का सबसे अधिक उपयोग विभिन्न तथ्यों में विद्यमान केन्द्रीय प्रवृत्ति को ज्ञात करने के लिए किया जाता है। सामाजिक अनुसन्धान के दौरान जो सांख्यिकीय तथ्य एकत्रित किये जाते हैं, उनका वर्गीकरण तथा सारणीयन करने के बाद संक्षिप्तीकरण करने एवं उन्हे बोधगम्य बनाने का प्रयास किया जाता है ताकि उनके आधार पर निष्कर्ष निकाले जा सके। किन्तु वर्गीकरण तथा सारणीयन करने के बाद भी तथ्यो की जटिलता को कम करने तथा उन्हें तुलनीय बनाने के लिए हमें सभी समंकों मे से एक ऐसा अंक मालूम करना होता है जो कि सभी समको का उचित प्रतिनिधित्व कर सके। ऐसे मूल्य को ही 'माध्य प्रवृत्ति' (Central tendency) कहते है। उदाहरणार्थ, किसी परीक्षा में पांच छात्रों को क्रमशः 8, 9, 7, 11, 10 अंक प्राप्त होते हैं। देखने पर पांचो छात्रो की योग्यता भिन्न-भिन्न है। परन्तु ध्यान से देखा जाय तो मालूम होता है कि 9 एक ऐसा अंक है जो पूरे समूह या पांचों छात्रों का प्रतिनिधित्व करने वाला है। इसलिए हम 9 को उपर्युक्त पांचों प्राप्तांकों की माध्य-प्रवृत्ति कहेगे।

सांख्यिकीय शब्दावली (Statistical Terminology)

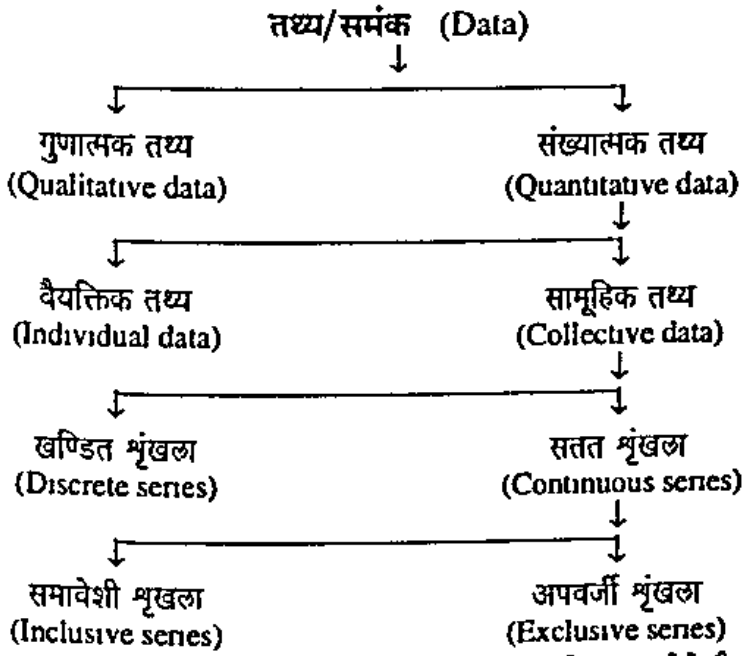
सांख्यिकी को समझने के लिए इसमें प्रयुक्त होने वाले शब्दो की जानकारी आवश्यक है। इसमे प्रयुक्त होने वाले शब्द जैसे समक या तथ्य, गुणात्मक तथ्य, संख्यात्मक तथ्य, वैयक्तिक तथ्य (श्रेणी), सामूहिक तथ्य (श्रेणी), खडित शृंखला, सतत शृंखला, समावेशी शृंखला, अपवर्जी शृंखला, वर्ग सीमा, वर्ग विस्तार, आरोही क्रम, अवरोही क्रम, पद मूल्य आदि। इन शब्दों को समझे बिना हम सांख्यिकी माध्य ज्ञात नहीं कर सकते। अतः इन सभी का यहां उल्लेख आवश्यक है।

समंक/तथ्य (Data)—**होरेस सेक्राइस्ट** के अनुसार, "समंक से हमारा अभिप्राय तथ्यों के ऐसे समूहों से है जो अनेक कारणों से पर्याप्त सीमा तक प्रभावित होते हैं, जो संख्याओं में व्यक्त किये जाते हैं, एक यथोचित शुद्धता के आधार पर गणना एवं अनुमानित किये जाते हो, किसी पूर्व निर्धारित उद्देश्य हेतु व्यवस्थित ढंग से संग्रहित किये जाते हैं और जिन्हें एक दूसरे से सम्बन्धित रूप में प्रस्तुत किया जाता है।"

उपरोक्त परिभाषा में संमकों की निम्न विशेषताएं प्रकट होती हैं :

(i) समंक तथ्यों के समूह होते है।
(ii) समंक संख्या रूप में व्यक्त होते है।
(iii) समंक अनेक कारणों से पर्याप्त सीमा तक प्रभावित होते हैं।
(iv) समंक गणना या अनुमान द्वारा एकत्रित किये जाते हैं।
(v) समंकों के संग्रहण में यथोचित शुद्धता होनी चाहिए।
(vi) समंक पूर्व निश्चित उद्देश्य के लिए संग्रहित किये जाते है।
(vii) समंकों का सग्रहण व्यवस्थित ढंग से होना चाहिए।
(viii) समंक परस्पर सम्बन्धित होने चाहिए।

समको/तथ्यों को गुणात्मक व संख्यात्मक तथ्यों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है जिसे निम्न प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है :



गुणात्मक तथ्य (Qualitative data)—गुणात्मक तथ्य वे तथ्य होते है जो कुछ लक्षणों को प्रदर्शित करते हैं, कुछ विशेषताओं की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करते है तथा जो अंको या संख्याओ के माध्यम से प्रकट नही किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए परिवार की प्रकृति, वैवाहिक स्थिति जाति, धर्म, व्यवसाय, आदि।

संख्यात्मक तथ्य (Quantitative data)—संख्यात्मक तथ्य वे तथ्य होते हैं जो हमेशा अंको या संख्याओं के माध्यम से प्रकट किये जाते हैं; जैसे परिवार में सदस्यों की सख्या, मासिक आय, आयु, आदि। संख्यात्मक तथ्य दो प्रकार के होते हैं : वैयक्तिक तथ्य और सामूहिक तथ्य।

(i) **वैयक्तिक तथ्य/श्रेणी** (Individual data/Series)—प्रत्येक इकाई से प्राप्त तथ्यों को जब अलग-अलग रूप से अर्थात् जिस रूप में प्राप्त होते है, ठीक उसी रूप में प्रदर्शित किया जाता है तो ऐसे तथ्य वैयक्तिक तथ्य कहलाते हैं। इसमें ऐसे समंकों को सम्मिलित किया जाता है जो व्यक्ति, समय व स्थान विशेष से सम्बन्ध रखते हों; जैसे प्रश्न में क्रम संख्या, रोल नम्बर, नाम व समय की इकाई, आदि। लेकिन संख्या में बहुत अधिक होने पर वैयक्तिक तथ्य विश्लेषण के योग्य नही होते हैं, अतः वैयक्तिक तथ्यों को विश्लेषण योग्य बनाने के लिए उन्हें सामूहिक तथ्यों में बदल दिया जाता है।

सामूहिक तथ्य/श्रेणी (Collective data/Series)—वैयक्तिक तथ्यों को विश्लेषण योग्य बनाने के लिए सामूहिक तथ्यों में परिवर्तित कर दिया जाता है, सामूहिक तथ्य वे तथ्य होते हैं जो उन वैयक्तिक तथ्यों के प्रतिनिधि तथ्य होते हैं या उन वैयक्तिक तथ्यों की समस्त विशेषताओं को अपने में समाहित किये रहते है। सामूहिक तथ्य दो प्रकार के होते हैं : खण्डित शृंखला और सतत शृंखला।

(i) **खण्डित शृंखला/श्रेणी** (Discreat Series)—खण्डित श्रेणी में मूल्य विभिन्न खण्डो के रूप मे प्रस्तुत किये जाते है, अर्थात् यदि प्रारम्भिक अवस्था वाले समंकों में दोहराव विद्यमान है तो उन्हें बार-बार लिखने के स्थान पर एक ही बार लिख दिया जाता है। एक बार लिखना उस मूल्य को खण्ड रूप में प्रस्तुत करता है, साथ ही वह मूल्य जितनी बार आता है उसे आवृत्ति रूप में लिख दिया जाता है। 5 अंक पाने वाले 14 छात्र हैं तो मूल्य रूप में 5 एवं आवृत्ति रूप में 14 लिख दिया जाता है।

(ii) **अखण्डित या सतत शृंखला** (Continuous Series)—जब श्रेणी विभिन्न वर्गों के रूप मे दे रखी हो अर्थात् समंक विभिन्न वर्गों, मध्य बिन्दु व केन्द्रीय आकार में दिये हों या मूल्य 'से कम', 'से अधिक' या 'तक' रूप में दिये हों तो वह संचयी आवृत्ति वाली सतत श्रेणी कहलाएगी।

सतत शृंखलाएं दो प्रकार की होती हैं—समावेशी शृंखला और अपवर्जी शृंखला

(अ) **समावेशी शृंखलाएं** (Inclusive Series)—समावेशी शृंखलाएं वे शृंखलाएं होती हैं जिनमें प्रत्येक वर्ग की ऊपरी सीमा की संख्या को उसी वर्ग में सम्मिलित किया जाता है। जैसे :

10—14 Included
15—19
20—24
25—29
30—34

उपर्युक्त श्रेणी में अंक 14 को 10-14 वर्ग में, अंक 19 को 15-19 वर्ग में और इसी प्रकार से 24, 29, 34 को अपने-अपने वर्गों में ही सम्मिलित किया जायेगा।

(ब) **अपवर्जी शृंखलाएं** (Exclusive Series)—अपवर्जी शृंखलाएं वे शृंखलाएं होती हैं जिनमें एक वर्ग की ऊपरी सीमा की संख्याएं उसी वर्ग का भाग नहीं होती हैं वरन् उससे अगले वर्ग का भाग होती हैं जैसे :

10—15 Excluded
Included 15—20

20—25

25—30

30—35

उपर्युक्त श्रेणी में संख्या 15 को 10-15 वर्ग में सम्मिलित न कर 15-20 वाले वर्ग में गिना जायेगा। 10-15 वर्ग में केवल 10 से लेकर 14 तक की संख्याओं को ही सम्मिलित किया जायेगा। यही बात संख्या 20, 25 व 30 पर भी लागू होती है।

आरोही क्रम (Ascending order)—जब मूल्य बढ़ते हुए क्रम में हो तो श्रेणी आरोही क्रम वाली होती है। जैसे : 70, 60, 35, 0, – 10, – 20। व्यक्तिगत श्रेणी के रूप में एवं सतत् शृखला के रूप मे आरोही श्रेणी निम्न प्रकार की हो सकती है :

10—20

20—30

30—40

40—50

अवरोही क्रम (Descending order)—जब मूल्य घटते हुए क्रम में हो तो श्रेणी अवरोही क्रम वाली कहलाती है। जैसे : 10, 0, 15, 50, 100, आदि व्यक्तिगत श्रेणी रूप में एवं सतत् शृंखला के रूप में अवरोही श्रेणी निम्न प्रकार की हो सकती है :

100—90

90—80

80—70

70—60

वर्ग सीमा (Class Limit)—प्रत्येक वर्ग की दो सीमाएं होती हैं—एक निचली सीमा एवं दूसरी ऊपरी सीमा। सांख्यिकी भाषा में नीचे की सीमा को सूत्र में L_1 से तथा ऊपर की सीमा को L_2 द्वारा व्यक्त किया जाता है। उदाहरण :

10—15

16—20

21—25

26—30

इन वर्गों में 10, 16, 21 व 26 वर्ग की नीचे की सीमा एवं 15, 20, 25 एवं 30 वर्ग की ऊपरी सीमाएं हैं।

वर्ग आवृत्ति (Class Frequency)—प्रत्येक वर्ग में आने वाली मदों को उस वर्ग की वर्ग आवृत्ति कहते हैं। साख्यिकी भाषा में इसे f द्वारा व्यक्त करते हैं/उदाहरण—

वर्ग	आवृत्ति (f)
10—15	5
15—20	8
20—25	9
25—30	6

वर्ग विस्तार (Class Interval)—प्रत्येक वर्ग की ऊपरी सीमा में से निचली सीमा घटाकर वर्ग विस्तार ज्ञात किया जाता है। वर्ग विस्तार को *i* द्वारा व्यक्त किया जाता है। उदाहरण

$$i = L_2 - L_1$$

संचयी आवृत्ति (Cumulative Frequency)—आवृत्तियों का क्रमवार जोड़ संचयी आवृत्ति कहलाता है। इसे *cf* द्वारा व्यक्त करते है। उदाहरण—

मजदूरों की आय	आवृत्ति (*f*)	संचयी आवृत्ति (*cf*)
500	18	18
600	21	39
700	28	67
800	30	97

सांख्यिकीय शब्दावली को समझ लेने के बाद अब हम यहां माध्य एवं उनके प्रकारो का विस्तार से उल्लेख करेंगे।

माध्य का अर्थ
(MEANING OF AVERAGE)

दी हुई संमक माला में ऐसा मूल्य जो सम्पूर्ण समकों का प्रतिनिधित्व करता है, साख्यिकीय माध्य कहलाता है।

प्रो. एलहान्स के अनुसार, "यह स्पष्ट है कि एक ऐसी सख्या जिसका प्रयोग सम्पूर्ण श्रेणियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए किया जाता है, वह श्रेणी में न तो न्यूनतम मूल्य रखती है और न ही उच्चतम मूल्य, अपितु वह मूल्य तो इन दोनों सीमाओं के बीच का एक मूल्य होता है जहां श्रेणियों की अधिकांश इकाइयां एकत्रित हो जाती है। ऐसे अक केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप अथवा माध्य कहलाते है।"[1]

क्राक्सटन तथा काउडेन के अनुसार, "माध्य समंकों के विस्तार के अन्तर्गत स्थित एक ऐसा मूल्य है जिसका प्रयोग समंकमाला के सभी मूल्यों का प्रतिनिधित्व करने के लिए किया जाता है।"[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि **सांख्यिकीय माध्य सम्पूर्ण समंकों का प्रतिनिधित्व करने वाला और केन्द्रीय मूल्य को प्रकट करने वाला एक अंक होता है जो कि उन समंकों के न्यूनतम और अधिकतम मूल्य के बीच की स्थिति में होता है।** इस तरह माध्य विशाल संख्याओ का संक्षिप्तीकरण करने का एक साधन बन जाता है।

माध्यों की उपयोगिता एवं उद्देश्य
(UTILITY AND OBJECTS OF AVERAGE)

सामाजिक अनुसन्धान में तथ्यों की विवेचना, विश्लेषण व निष्कर्षीकरण में माध्य की निम्नलिखित उपयोगिताएं व उद्देश्य हैं :

(1) **श्रेणियों का संक्षिप्तीकरण करना**—माध्य का प्रमुख उद्देश्य जटिल अंकों की श्रेणियो का संक्षिप्तीकरण करना है जिससे उन्हें समझना एवं याद रखना सरल हो जाता है। उदाहरणार्थ,

1 *D. N Elhance, Fundamentals of Statistics*, p. 289
Croxton and Cowden, *Practical Business Statistics*, p. 214.

एक कक्षा के सभी छात्रों के अंकों को याद रखना कठिन है, परन्तु सभी के अंकों से माध्य अंक ज्ञात करके याद रखना एवं समझना सरल हो जाता है।

(2) **तुलनात्मक अध्ययन में सरलता**—अनेक अंकों वाली श्रेणियों की तुलना करना कठिन होता है, परन्तु उनका माध्य ज्ञात करके उन्हें एक अंक का रूप प्रदान कर दिया जाय तो तुलना का काम सरल हो जाता है। उदाहरणार्थ, माध्य की सहायता से भारत और चीन की प्रति व्यक्ति औसत आय की तुलना सरलता से की जा सकती है।

(3) **विश्लेषण में सहायक**—**घोष** तथा **चौधरी** ने लिखा है कि विशाल समूह का एक संक्षिप्त रूप प्रकट करके विश्लेषण व व्याख्या के कार्य को सरल बनाना माध्य का एक उल्लेखनीय कार्य है।

(4) **अनुपात निर्धारण**—माध्य के द्वारा अंको की दो श्रेणियो या दो समूहो के बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों तथा अनुपात का अनुमान लगाया जाता है। उदाहरणार्थ, एक कालेज के छात्रों का उत्तीर्ण प्रतिशत 60 तथा दूसरे कालेज का 90 रहा हो तो प्रथम कालेज से दूसरे कालेज का परीक्षाफल डेढ़ गुना समझना चाहिए।

(5) **सरलीकरण करना**—अत्यधिक जटिल अंक समूहो को ठोस रूप से परिवर्तित कर देना, विशाल आंकड़ों के निदर्शन निकालना तथा अनेक प्रकार की बिखरी हुई सामग्री को सरल बनाने में माध्य ही अधिक सहायक होते है।

(6) **समग्र का प्रतिनिधित्व करना**—माध्य एक ऐसी संख्या होती है जिसके आधार पर सम्पूर्ण श्रेणी, सम्पूर्ण समूह अथवा समग्र घटना के बारे में निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

(7) **मार्ग-दर्शन करना**—सामाजिक-आर्थिक विकास तथा राष्ट्रीय नियोजन के भावी कार्यक्रमों की दिशा निर्धारित करने के उद्देश्य से माध्य आधार के रूप मे कार्य करता है। उदाहरणार्थ, माध्य से यह प्रकट होता है कि यदि भारतीयो की औसत आयु अन्य देशों के लोगों की औसत आयु से कम है तो उसमे सुधार एवं वृद्धि की जा सकती है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि माध्य समंक समूह का एक संक्षिप्त सरल चित्र प्रस्तुत करके उसकी सम्पूर्ण विशेषताओं को प्रकट करता है। नियोजन तथा नीति-निर्धारण में माध्य ही आधार-शिला एवं मार्ग-दर्शक के रूप में कार्य करता है। इसकी सहायता से तुलनात्मक अध्ययन द्वारा वैज्ञानिक निष्कर्षो तक पहुंचा जा सकता है।

एक आदर्श माध्य के आवश्यक तत्व
(ESSENTIALS OF AN IDEAL AVERAGE)

प्रो. यूल तथा केण्डाल (*Yule & Kendall*) ने प्रतिनिधित्वपूर्ण माध्य मे निम्नांकित विशेषताओं का होना आवश्यक बताया है : (i) स्थिर परिभाषा, (ii) सभी मूल्यों पर आधारित, (iii) सरल एवं बोधगम्य, (iv) शीघ्र गणनीय, (v) बीजगणितीय विवेचन के योग्य, (vi) निदर्शन परिवर्तनों से कम से कम प्रभावित।

एक आदर्श माध्य में निम्नलिखित गुण होने चाहिए :

(1) **निश्चितता एवं स्पष्टता**—माध्य पूर्णतया निश्चित एवं स्पष्ट होना चाहिए। इसको देखने, समझने या अध्ययन करने में कोई अनुमान लगाने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए, अपितु उसका केवल एक ही अर्थ लगाया जाना चाहिए।

(2) **सरलता**—एक आदर्श माध्य का गुण है कि उसकी गणना की पद्धति सरल और उपयुक्त होनी चाहिए ताकि उसे समझने में अधिक बुद्धि-प्रयोग एवं परिश्रम की आवश्यकता नही पड़े।

(3) **समूह का प्रतिनिधित्व**—आदर्श माध्य ऐसा होना चाहिए जो समंकमाला के सभी पदों पर निर्भर हो जिससे पूरी श्रेणी की विशेषताओं को स्पष्ट एवं संक्षिप्त चित्र द्वारा प्रस्तुत किया जा सके एवं पूर्णतया सही निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकें।

(4) **निरपेक्षता**—माध्य में सापेक्षता या तुलनात्मकता नहीं होनी चाहिए अर्थात् माध्य घटने-बढ़ने वाला, या अमुक संख्या से कम या अधिक, ऐसा नहीं होना चाहिए। जैसे एक ही माध्य को कही पर x का दो गुणा, कहीं x+y, कहीं x–3 नहीं माना जाना चाहिए अपितु इसमें निरपेक्षता होनी चाहिए।

(5) **बीजगणितीय विवेचन सम्भव**—सन्तोषजनक माध्य ऐसा होना चाहिए जिसे समस्याओं के गहन अध्ययन मे बीजगणितीय तथा अंकगणितीय सूत्रों से परखा जा सके अर्थात् इन सूत्रों के प्रयोग तथा विवेचन की क्षमता होनी चाहिए। इनके आधार पर ही माध्य से विचलन एवं समूहों का सम्मिलित माध्य ज्ञात किया जाता है।

(6) **निदर्शन से कम प्रभावित**—अच्छे माध्य का गुण यह है कि निदर्शन में परिवर्तन के बावजूद भी माध्य पर उसका प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। उदाहरण के रूप मे, एक ही समूह में विभिन्न निदर्शन चुनकर माध्य निकाला जाये और यदि उन माध्यों में कम से कम अन्तर हो तो वही आदर्श माध्य कहलाता है।

माध्यों की सीमाएं
(LIMITATIONS OF AVERAGES)

माध्य में गुणों के साथ-साथ अपनी कुछ सीमाएं भी हैं जो इस प्रकार हैं :

(1) **व्यक्तिगत इकाइयों का अध्ययन नहीं**—माध्य समग्र का प्रतिनिधित्व करता है, समूह की व्यक्तिगत या पृथक्-पृथक् इकाइयों की विशेषताओं को स्पष्ट नही करता है।

(2) **विचित्र संख्याएं**—समान्तर माध्य या अकगणितीय औसत के रूप में प्राप्त संख्याएं कभी-कभी अव्यावहारिक एवं हास्यास्पद लगती है, जैसे 2.1 कमरे, 4.5 विद्यार्थी, आदि।

(3) **अनिश्चित तुलनाएं**—जिन दो समूहों में तुलना की जा रही है, उनकी स्थिति में परिवर्तन हो जाने पर भी माध्य में कोई परिवर्तन नहीं होता है। ऐसी स्थिति में तुलना अनिश्चित एवं अर्थहीन हो जाती है।

(4) **अविश्वसनीय निष्कर्ष**—माध्यों द्वारा कई बार त्रुटिपूर्ण तथा भ्रामक निष्कर्ष भी निकल सकते हैं, जैसे कुछ विद्यार्थियों के माध्य प्राप्तांक सारी परीक्षाओं में लगभग समान रहते हैं और कुछ के प्राप्तांकों में कमी या वृद्धि हो जाती है, तब उनका वास्तविक ज्ञान स्तर माध्य से ज्ञात नहीं हो पाता।

(5) **विरोधी इकाइयों का बचाव**—माध्यों के अन्तर्गत प्रमाणित या प्राक्कल्पना से सम्बन्धित इकाइयों को ही सम्मिलित किया जाता है। अनेक असम्बद्ध अथवा विचलित इकाइयों को माध्य में सम्मिलित ही नहीं किया जाता जो कि निष्कर्षों को प्रभावित कर सकती हैं।

(6) **व्यापारिक प्रयोग कठिन**—माध्यों के द्वारा तुलना करना, सरलता से इसका प्रयोग करना, माध्य चयन करना तथा माध्य ज्ञात करने की एक विधि का चुनाव विशेष परिश्रम, अभ्यास एवं विशिष्ट प्रशिक्षण से ही सम्भव होने के कारण कठिन है।

उपर्युक्त सीमाओं का यह तात्पर्य नहीं है कि सामाजिक अनुसन्धान में माध्यों की कोई उपयोगिता नहीं है। **माध्य का चाहे कोई भी प्रकार हो, केन्द्रीय प्रवृत्ति को ज्ञात करने में इसका विशेष योगदान है।**

सांख्यिकीय माध्यों के प्रकार
(TYPES OF STATISTICAL AVERAGES)

विभिन्न समस्याओं के अध्ययन में प्रयोग किये जाने वाले माध्य कई प्रकार के होते हैं जो निम्नांकित है :

I. **स्थिति माध्य** (Averages of Position)

(1) बहुलक या भूयिष्ठक (Mode)

(2) मध्यका (Median)।

II. **गणितीय माध्य** (Mathematical Averages)

(1) समान्तर माध्य (Arithmetic Average or mean)

(2) ज्यामितीय या गुणोत्तर माध्य (Geometric mean)

(3) हरात्मक माध्य (Harmonic mean)

(4) द्विघातीय माध्य (Quadratic mean)।

III. **व्यापारिक माध्य** (Business Averages)

(1) चल माध्य (Moving Average)

(2) प्रगतिशील माध्य (Progressive Average)

(3) सग्रथित माध्य (Composite Average)।

उपर्युक्त प्रकार के माध्यों में से सामाजिक अनुसन्धान कार्य में तथ्यो के विश्लेषण एवं व्याख्या के लिए विशेष रूप से बहुलक, मध्यका तथा समान्तर माध्य का ही प्रयोग किया जाता है। अतः हम यहां केवल इन्हीं प्रकारों का वर्णन करेगे।

बहुलक या भूयिष्ठक
(MODE)

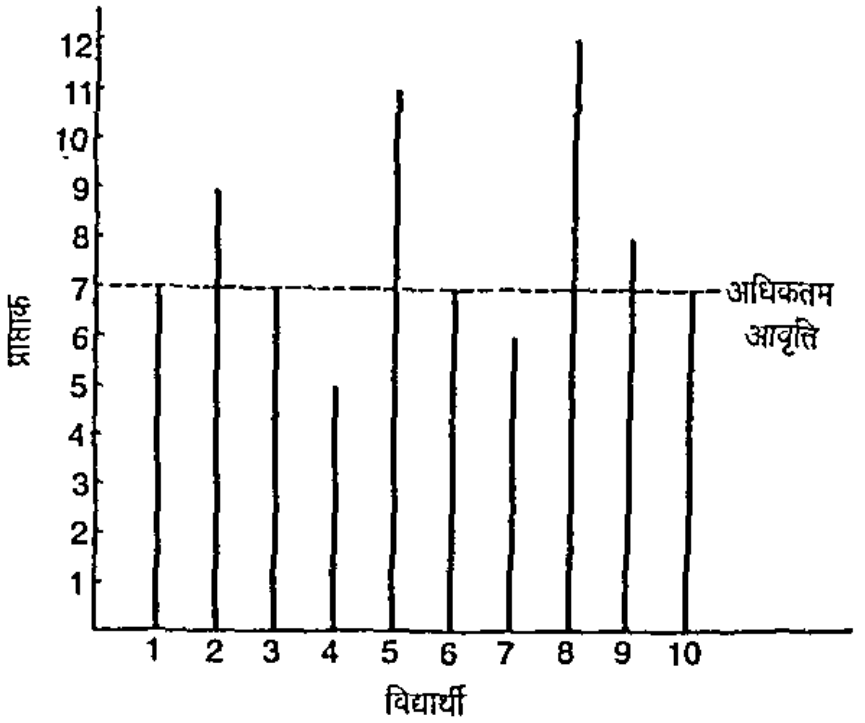
बहुलक के अंग्रेजी शब्द 'Mode' की उत्पत्ति फ्रेच शब्द 'La Mode' से मानी जाती है जिसका अर्थ है—'सर्वाधिक फैशन' अथवा 'प्रचलन'। भूयिष्ठक अथवा बहुलक किसी श्रेणी का वह मूल्य होता है जो समंकमाला में सबसे अधिक बार आता हो अर्थात् जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक हो एवं जहां आवृत्तियों का सर्वाधिक जमाव हो। इस प्रकार बहुलक समंकमाला का सर्वाधिक सामान्य मूल्य होता है। यदि प्रश्न में केवल एक बहुलक हो तो उसे UNI MODEL श्रेणी, 2 बहुलक होने पर BIO MODEL श्रेणी एवं 2 से अधिक बहुलक होने पर MULTI-MODEL बहुलक वाली श्रेणी कहलायेगी।

उपर्युक्त चित्र से स्पष्ट है किसी परीक्षा में दस विद्यार्थियों को प्राप्त होने वाले अंकों में 7 अंक की आवृत्ति सबसे अधिक है, अतः 7 बहुलक होगा।

क्राक्सटन एवं **काउडन** के अनुसार, "बहुलक एक समंकमाला का वह मूल्य है जिसके आसपास श्रेणी के अधिक से अधिक पद-मूल्य केन्द्रित होते है।"[1]

गिल्फोर्ड (Gilford) के शब्दों में, "भूयिष्ठक माप के पैमाने पर वह बिन्दु है जहां कि किसी वितरण में सर्वाधिक आवृत्ति होती है।"

1 "The Mode of a distribution is the value at the point around which the items tend to be most heavily concentrated"
—Croxton and Cowden, *Applied General Statistics*, p. 212



बहुलक की विशेषताएं (Characteristics of Mode)

1. बहुलक समकमाला का वह मूल्य होता है जो उस समंकमाला में सर्वाधिक बार आता है अर्थात् जिसकी आवृत्ति सबसे अधिक होती है।
2. एक समंकमाला में कभी-कभी कई संख्याओं में एकसमान आवृत्ति पायी जाती है। ऐसी समंकमाला में एक से अधिक पद मूल्यों को बहुलक माना जाता है।
3. बहुलक की एक विशेषता यह भी है कि यह पद-मूल्यों पर नहीं, अपितु आवृत्ति पर निर्भर करता है।
4. बहुलक का एक प्रमुख लक्षण यह है कि अन्य केन्द्रीय प्रवृत्तियो की तुलना में इसकी गणना-विधि सरल है।
5. बहुलक समंकमाला के सभी पद-मूल्यों का अर्थात् समग्र का प्रतिनिधित्व करता है।

बहुलक या भूयिष्ठक का निर्धारण
(DETERMINATION OF MODE)

विभिन्न श्रेणियों में भूयिष्ठक अथवा बहुलक का निर्धारण निम्न प्रकार से किया जाता है :

I. व्यक्तिगत श्रेणी में बहुलक का निर्धारण (Location of Mode in Individual Series)

व्यक्तिगत श्रेणी मे बहुलक का निर्धारण निम्न तीन विधियों द्वारा किया जाता है :

(1) निरीक्षण द्वारा,

(2) खण्डित श्रेणी मे बदलकर,

(3) मध्यका एवं समान्तर माध्य के आधार पर या बहुलक अस्पष्ट होने पर।

(1) निरीक्षण द्वारा बहुलक का निर्धारण—बहुलक ज्ञात करने के लिए इस विधि मे मूल्यों को आरोही या अवरोही क्रम मे व्यवस्थित कर जो मूल्य सबसे अधिक बार आता है वही

बहुलक कहलाता है। इसके पश्चात् जिस पद की आवृत्ति सबसे अधिक होती है, वह ही बहुलक कहलाता है।

उदाहरण—निम्न पदमूल्यों से बहुलक ज्ञात कीजिए—

3, 6, 5, 4, 2, 5, 7, 5, 8, 3, 2, 7, 6, 5, 4, 5, 8, 5, 6, 4

बहुलक ज्ञात करने के लिए पदमूल्यो को एक क्रम मे इस प्रकार रखा जाता है :

2, 2, 3, 3, 4, 4, 4, 5, 5, 5, 5, 5, 5, 6, 6, 6, 7, 7, 8, 8

पदमूल्यो को एक क्रम से जमाने के बाद निरीक्षण से ज्ञात होता है कि 5 अक सबसे अधिक बार आता है। **अतः इन पदमूल्यो का बहुलक या भूयिष्ठक 5 होगा।**

(2) **खण्डित श्रेणी मे बदलकर बहुलक का निर्धारण**—जब व्यक्तिगत श्रेणी के अनेक मूल्य दो या दो से अधिक बार पाये जाते है तो उन्हे आरोही क्रम मे रखकर उनकी आवृत्ति उनके सामने लिख दी जाती है। उसके बाद जिस मूल्य की आवृत्ति सबसे अधिक है, उसका मूल्य बहुलक कहलाता है।

उदाहरण—20 छात्रों की आयु का भूयिष्ठक (बहुलक) ज्ञात कीजिए—

15, 13, 16, 18, 20, 22, 19, 15, 14, 13, 19, 20, 21, 20, 16, 20, 15, 20, 17 और 18.

इस आयु श्रेणी को आरोही क्रम में रखने पर—

पद मूल्य [छात्रो की आयु वर्षो मे]	आवृत्ति
13	2
14	1
15	3
16	2
17	1
18	2
19	2
20	5
21	1
22	1

निरीक्षण से स्पष्ट होता है कि सबसे अधिक आवृत्ति 5 बार हुई है जिसका पद-मूल्य 20 है अतः यहां 20 वर्ष ही बहुलक होगा।

(3) **मध्यका एवं समान्तर माध्य के आधार पर बहुलक का निर्धारण**—किसी व्यक्तिगत श्रेणी का मध्यका तथा समान्तर माध्य ज्ञात करके भी बहुलक का निर्धारण किया जाता है। इसके लिए निम्न सूत्र है—

$$Z = 3M - 2\bar{X}$$

यहां, Z = बहुलक

M = मध्यका

$\bar{X}$ = समान्तर माध्य

को प्रकट करते है।

निम्न पदमूल्यो से मध्यका एवं समान्तर माध्य के आधार पर बहुलक ज्ञात कीजिए।

33, 20, 35, 50, 37, 33, 35, 25, 35, 34 और 35

इस समंकमाला का M = 35 और $\bar{X}$ = 33.8 होगा

तो बहुलक $Z = 3M - 2x$

$Z = 3 \times 35 - 2 \times 33.8$ होगा।

$Z = 105 - 67.6$

$Z = 37.4$

इस समंकमाला का बहुलक 37.4 होगा।

II **खण्डित श्रेणी में बहुलक का निर्धारण** (*Location of Mode in Discrete Series*)

खण्डित श्रेणी में तीन विधियों द्वारा बहुलक का निर्धारण किया जाता है :

1 निरीक्षण विधि द्वारा, 2. समूहन विधि द्वारा, 3. बहुलक के अस्पष्ट होने पर या माध्य व मध्यका के आधार पर।

(1) **निरीक्षण विधि द्वारा बहुलक का निर्धारण**—इस विधि मे देखा जाता है कि सर्वाधिक आवृत्ति कौनसी है और उस सर्वाधिक आवृत्ति का मान या मूल्य ही बहुलक कहलाता है, साथ ही उसके ऊपर व नीचे की आवृत्तियां भी अन्य आवृत्तियों से बड़ी हो अर्थात् जहां आवृत्तियो का बिखराव सर्वाधिक हो। यदि इस प्रकार की स्थिति नही हो तो समूहन विधि द्वारा बहुलक की गणना की जानी चाहिए।

उदाहरण—पदों का मान : 5, 9, 13, 17, 7, 11, 19, 15

आवृत्ति : 1, 7, 11, 5, 2, 9, 4, 8

निरीक्षण से स्पष्ट है कि सर्वाधिक आवृत्ति 11 है। अत· 11 आवृत्ति का पद-मूल्य 13 है तो बहुलक 13 होगा।

(2) **समूहन विधि द्वारा बहुलक निर्धारण**—जब आवृत्तियों का क्रम अनियमित होता है, तब समूहन विधि द्वारा बहुलक ज्ञात किया जाता है। इस विधि में आवृत्तियों के विभिन्न समूह बना लिये जाते है। तत्पश्चात् विश्लेषण सारणी बनाकर बहुलक ज्ञात किया जाता है।

समूहन के लिए 6 कालम की एक सारणी बना लेते हैं :

(i) पद मूल्यों को क्रम से रखकर उनके आगे उनकी आवृत्तियां लिख देते है।

(ii) दो-दो आवृत्तियों को लेकर उनका योग करके कालम नं. 2 में लिखते है।

(iii) प्रथम आवृत्ति को छोड़कर दो-दो आवृत्तियो को लेकर उनका योग करके कालम नं. 3 में लिखते है।

(iv) प्रारम्भ से तीन-तीन आवृत्तियो को लेकर उनका योग करके कालम नं. 4 मे लिखते है।

(v) प्रथम आवृत्ति को छोड़कर तीन-तीन आवृत्तियों को लेकर उनका योग करके कालम नं. 5 मे लिखते है।

(vi) प्रथम दो आवृत्तियों को छोडकर तीन-तीन आवृत्तियों को लेकर उनका योग करके कालम नं. 6 में लिखते है।

उदाहरण : समूहन सारणी

पदों का मान x	आवृत्ति f	2	3	4	5	6
5	1					
7	2	3				
9	7		9	10		
11	9	16			18	
13	11		20	28		27
15	8	19			24	
17	5		13			17
19	4	9				

समूहन सारणी बनाने के बाद प्रत्येक कालम के अधिकतम अंक के आधार पर विश्लेषण सारणी बनायी जाती है। प्रत्येक कालम के अधिकतम अंक से सम्बन्धित आवृत्ति के मूल्यों पर चिह्न लगाकर उनकी गणना करके बहुलक ज्ञात करते है।

विश्लेषण सारणी

कालम नं.	पद मूल्य							+
	5	7	9	11	13	15	17	19
1					I			
2					I	I		
3				I	I			
4				I	I	I		
5					I	I	I	
6			I	I	I			
आवृत्तियो का योग			1	3	6	3	1	

विश्लेषण सारणी से स्पष्ट होता है कि 6 आवृत्ति सर्वाधिक है जिसका पदमूल्य 13 है। अतः बहुलक 13 होगा। याद रहे कि बहुलक की गणना चाहे निरीक्षण विधि से की जाए या समूहन विधि से, दोनों ही विधियों में उत्तर एक-सा ही होगा।

(3) **बहुलक के अस्पष्ट होने पर**—जब बहुलक 2 या अधिक हो एवं आवृत्तियां भी योग रूप ($f_0+f_1+f_2$) में समान हों तो निम्न सूत्र से बहुलक ज्ञात करेंगे :

$$Z = 3M - 2\overline{X}$$

III. **अविच्छिन्न या सतत श्रेणी में बहुलक का निर्धारण** (Location of Mode in Continuous Series)

अविच्छिन्न श्रेणी में तीन विधियों द्वारा बहुलक निर्धारित किया जाता है :

(1) निरीक्षण विधि द्वारा, (2) समूहन विधि द्वारा, (3) बहुलक अस्पष्ट होने पर।

(1) **निरीक्षण विधि द्वारा**—जब आवृत्तियां बढ़ते हुए क्रम में हों और मध्य में जाक गिरने लगती हों तो सबसे बड़ी आवृत्ति वाला वर्ग बहुलक वर्ग कहलायेगा, बशर्ते कि इस बड़ी आवृत्ति के ऊपर नीचे की आवृत्तियां भी अन्य आवृत्तियों से बड़ी हों।

बहुलक वर्ग का निर्धारण करने के पश्चात् अग्र सूत्र से बहुलक की रचना की जायेगी :

आरोही क्रम की श्रेणी : $Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$

यदि बहुलक वर्ग की आवृत्ति की तुलना में पूर्व या बाद वाले वर्ग की आवृत्ति बड़ी हो तो निम्न वैकल्पिक सूत्र का प्रयोग किया जायेगा :

$$Z = L_1 + \frac{f_2}{f_0 + f_2} \times i$$

यदि प्रश्न अवरोही क्रम मे हो तो उपरोक्त सूत्र में L_1 के स्थान पर L_2 लिखकर ऋणात्मक चिन्ह लगाया जायेगा।

$$Z = L_2 - \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

वैकल्पिक सूत्र $Z = L_2 - \frac{f_2}{f_0 + f_2} \times i$

इन सूत्रों मे— Z = बहुलक या भूयिष्ठक

L_1 = बहुलक वर्ग की निम्न सीमा

f_1 = बहुलक वर्ग की आवृत्ति

f_0 = बहुलक वर्ग से पहले वाले वर्ग की आवृत्ति

f_2 = बहुलक वर्ग से बाद वाले वर्ग की आवृत्ति

i = बहुलक वर्ग की निम्नतम व उच्चतम सीमाओं का अन्तर

(1) निरीक्षण विधि द्वारा बहुलक निर्धारण—

उदाहरण—निम्न समकों से भूयिष्ठक मजदूरी ज्ञात कीजिए।

मजदूरी (रुपयों मे) : 0—10, 10—20, 20—30, 30—40, 40—50, 50—60, 60—70

मजदूरो की संख्या : 3, 8, 10, 15, 12, 7, 5

मजदूरी (रुपयो मे) x	मजदूरो की संख्या f
0—10	3
10—20	8
20—30	$10 f_0$
L_1 30—40	$15 f_1$
40—50	$12 f_2$
50—60	7
60—70	5

निरीक्षण से स्पष्ट है कि सबसे अधिक आवृत्ति 15 है, अतः बहुलक वर्ग 30—40 हुआ।

सूत्र $Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$

$$Z = 30 + \frac{15 - 10}{2 \times 15 - 10 - 12} \times 10$$

$$= 30 + \frac{5}{8} \times 10$$

$$= 30 + \frac{50}{8}$$

$$= 30 + 6.25$$

$$Z = 36.25$$

अतः बहुलक मजदूरी 36.25 रुपये होगी।

(2) **समूहन विधि द्वारा बहुलक निर्धारण**—सर्वप्रथम खण्डित श्रेणी के समान समूहन व विश्लेषण सारणी द्वारा बहुलक वर्ग ज्ञात किया जाता है। फिर निम्न सूत्र द्वारा बहुलक निर्धारित किया जाता है :

$$Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

मजदूरी (रु. में) x	मजदूरों की संख्या f (i)	(ii)	(iii)	(iv)	(v)	(vi)	अधिकतम आवृत्तियों की संख्या	योग
0—10	3	11		21			—	—
10—20	8		18		33		I	1
20—30	10	25				37	III	3
30—40	15		27	34			IIII	6
40—50	12	19			24		III	3
50—60	7		12				I	1
60—70	5						—	—

इस तालिका से स्पष्ट है कि अधिकतम आवृत्ति 6 है, उसका वर्ग 30—40 ही बहुलक वर्ग होगा।

$$Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

सूत्र में प्रयुक्त चिह्नों का अर्थ पहले दिया चुका है।

$$Z = 30 + \frac{15 - 10}{2 \times 15 - 10 - 12} \times 10$$

$$= 30 + \frac{5}{30 - 22} \times 10$$

$$= 30 + \frac{50}{8}$$

$$= 30 + 6\,25$$

$$Z = 36.25$$

अतः बहुलक मजदूरी 36.25 रुपये होगी।

(3) **बहुलक के अस्पष्ट होने पर**—$Z = 3M - 2\bar{X}$ सूत्र के द्वारा बहुलक ज्ञात किया जाता है।

बहुलक के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु

(i) अखण्डित श्रेणी मे वर्गान्तर समान होना चाहिए। यदि नहीं है तो सबसे बड़े या उससे भी अधिक वर्गान्तर के आधार पर सम्पूर्ण प्रश्न को समान वर्गान्तर मे बदला जाएगा। यदि अब भी समान वर्गान्तर में प्रश्न नहीं बदलता है तो निरीक्षण द्वारा बहुलक वर्ग का निर्धारण कर जितना वर्गान्तर बहुलक वर्ग में है उतना ही अन्तर पूर्व एवं बाद वाले वर्गो में होना चाहिए। इसके लिए वर्गो को जोड़ा या तोड़ा जाएगा इसे संलग्न उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है।

Class	f
0— 10	5
10— 30	8
30— 60	20
60— 110	35
110— 200	27
200—1000	10

Modal Group 60—110 (By Inspection)

यहां बहुलक वर्ग मे 50 का वर्गान्तर है, अतः पूर्व एवं बाद वाले वर्गो में अन्तर 50 का लेते हुए f_0, f_1 व f_2 का निर्धारण किया जायेगा।

$f_0 = 28$ $10 - 60$ वर्ग की आवृत्ति $= 8 + 20 = 28$

$f_1 = 35$ $60 - 110$ वर्ग की आवृत्ति

$f_2 = 15$ $110 - 160$ वर्ग की आवृत्ति $\frac{27}{90} \times 50 = 15$

$$Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

$$Z = 60 + \frac{35 - 28}{2 \times 35 - 28 - 15} \times 50$$

$$Z = 60 + \frac{350}{27} = 60 + 12.96 = 72.96$$

(ii) बहुलक की रचना हेतु मूल्यों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित किया जाएगा।

(iii) समूहीकरण मे सबसे बड़ी आवृत्ति दो या अधिक बार होती तो उन सभी को वृत्त में रखते हुए विश्लेपण वाले स्तम्भ में मिलान रेखाए डाली जाएंगी।

(iv) सामान्यतया प्रश्न के प्रारम्भ व अन्त मे बहुलक अस्पष्ट समझा जा सकता है।

(v) यदि मिलान रेखाओं का योग सर्वाधिक एक से अधिक स्थान पर हो तो उनसे सम्बन्धित सभी मूल्यो या वर्गो को क्रमशः बहुलक या बहुलक वर्ग माना जावेगा और प्रत्येक से सम्बन्धित f_0, f_1 व f_2 का योग लगाया जाएगा, यह योग जहां सबसे अधिक होगा वहीं बहुलक या बहुलक वर्ग कहलाएगा।

(vi) यदि खण्डित श्रेणी मे किसी मूल्य की आवृत्ति 0 हो तो उसे हटाते हुए समूहन किया जाएगा।

(vii) समूहन विधि में छूटी हुई आवृत्तियां सम्बन्धित कालम की सबसे बड़ी आवृत्ति से बड़ी हों तो घटी हुई आवृत्तियों का योग लिखते हुए बहुलक की रचना की जाएगी।

बहुलक अथवा भूयिष्ठक के गुण (Merits of Mode)

इसके गुण निम्नलिखित हैं :

(1) **सर्वाधिक प्रतिनिधित्व**—बहुलक सम्पूर्ण श्रेणी की सर्वाधिक आवृत्ति पर निर्भर होने के कारण केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप की अन्य विधियों की तुलना में श्रेणी का

सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करता है। किंग ने लिखा है, कि "बहुलांक की प्रकृति इस प्रकार की है कि इसे आंकड़ों का सर्वोत्तम प्रतिनिधि माना जा सकता है।"

(2) **सरल एवं लोकप्रिय**—बहुलक को समझना एवं गणना करना सरल एवं आसान है।

(3) **श्रेणी का महत्वपूर्ण माप**—श्रेणी के समस्त मूल्यों में से बहुलक वह अंक है जो सबसे अधिक मात्रा में एक समंकमाला में पाये जाने के कारण वास्तविक एवं महत्वपूर्ण माप है।

(4) **चरम मूल्यों का न्यूनतम प्रभाव**—बहुलक पर श्रेणी की बड़ी संख्या या छोटी संख्या का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। बहुलक तो आवृत्ति पर निर्भर करता है।

(5) **बिन्दुरेखीय विधि द्वारा निर्धारण**—बहुलक का निर्धारण बिन्दुरेखीय विधि एवं ग्राफ की सहायता से बहुत सरलता से किया जा सकता है।

(6) **बड़े पैमाने के उत्पादन में महत्वपूर्ण**—बड़े पैमाने के उत्पादन वाले उत्पादकों के लिए बहुलक अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। उत्पादन के आकार को उत्पादक बहुलक की सहायता से ही निर्धारित करता है।

बहुलक अथवा भूयिष्ठक के दोष (Dements of Mode)

इसके दोष इस प्रकार है :

(1) **सभी मूल्यों पर आधारित नहीं**—बहुलक में न्यूनतम और अधिकतम पद-मूल्यों की अवहेलना की जाती है। यह तो केवल अधिकतम आवृत्ति वाले पद-मूल्यो पर निर्भर करता है।

(2) **बीजगणितीय विवेचन असम्भव है**—सभी मूल्यो पर आधारित न होने के कारण, बहुलक की बीजगणितीय विवेचना करना सम्भव नही होता।

(3) **निश्चितता का अभाव**—कभी-कभी एक श्रेणी में दो या दो से अधिक भूयिष्ठक आ जाते हैं। ऐसी स्थिति में आवृत्ति को देखकर भूयिष्ठक निर्धारित नहीं किया जा सकता।

(4) **अनुपयुक्त माप**—कभी-कभी भूयिष्ठक द्वारा प्राप्त निष्कर्ष वास्तविकता से परे होते हैं, जैसे, 50 विद्यार्थियों में से 5 विद्यार्थियों के अक आठ-आठ है तो बहुलक 8 होगा जो शेष 45 विद्यार्थियों का वास्तविक प्रतिनिधित्व नही करेगा।

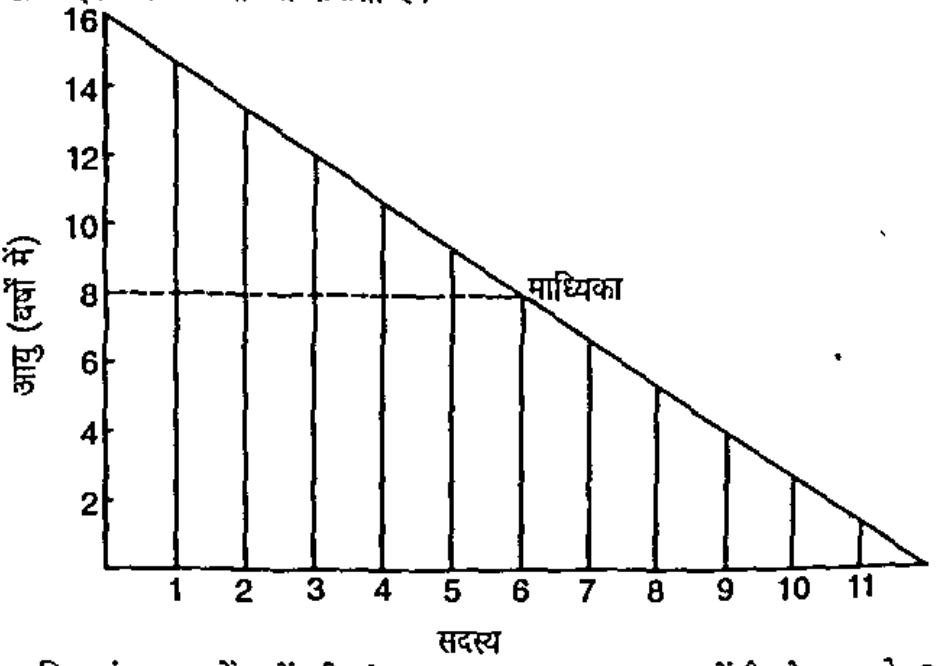
एफ. सी. मिल्स के विचार से अनुमानित भूयिष्ठक का निर्धारण कर देना जितना ही सरल है, वास्तविक भूयिष्ठक का निर्धारण करना वास्तव में उतना ही कठिन है।

बहुलक में उपर्युक्त कमियां होते हुए भी विभिन्न क्षेत्रों में आज इसका प्रयोग बढ़ता ही जा रहा है, जैसे तापमान, वर्षा तथा वायुगति के आधार पर स्थानों का निर्धारण करने में बहुलक का प्रयोग किया जाता है। इतना ही नही, उत्पादक भी उत्पादन के आकार को निश्चित करने, तैयार वस्तुओं के माप का निर्धारण करने, जैसे कपड़े, जूते, आदि में भूयिष्ठक का प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है।

मध्यका (मध्यिका)
(MEDIAN)

किसी समंक श्रेणी को आरोही या अवरोही क्रम में जमा कर मध्य पद मालूम किया जाता है। उस मध्य पद का मूल्य ही मध्यिका कहलाता है, जैसे परिवार के 11 सदस्यों को

आयु के अनुसार खड़ा किया जाए तो छठे सदस्य की आयु मध्यका कहलायेगी। नीचे दिये चित्र द्वारा इसे स्पष्ट किया जा सकता है।



यदि समंकमाला में पदों की संख्या सम (even number) में है तो मध्य के 2 पदो के मूल्यों को जोड़कर आधा करने से मध्यका मूल्य ज्ञात होता है।

कार्नर (Corner) के शब्दों में, "मध्यिका एक समंकमाला का वह पद-मूल्य है जो समूह को बराबर भागों में इस प्रकार बांटता है कि एक भाग के सारे मूल्य दूसरे भाग से कम होते है।"

स्पष्ट है कि मध्यिका वह केन्द्रीय मूल्य है जो क्रमवद्ध एवं व्यवस्थित समंकमाला को दो समान भागों में विभाजित करता है।

मध्यका की विशेषताएं (Characteristics of Median)

(1) मध्यका समंकमाला के केन्द्र में स्थित एक विशेष पद-मूल्य होता है।

(2) मध्यका सम्पूर्ण समंक श्रेणी को दो बराबर-बराबर भागों में विभाजित करती है।

(3) मध्यका ज्ञात करने के लिए पदों को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना पड़ता है।

(4) मध्यका को प्रायः पद-मूल्यों की क्रमिक वृद्धि पर ही आधारित किया जाता है।

मध्यका का निर्धारण (Determination of Median)

विभिन्न प्रकार की समंकमालाओं से मध्यका निकालने की विधियां इस प्रकार हैं :

I. व्यक्तिगत श्रेणी में मध्यका निकालना (Calculation of Median in Individual Series)

(i) मूल्यो को क्रम संख्या प्रदान कीजिए।

(ii) मूल्यों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित कीजिए।

(iii) सूत्र का प्रयोग।

$$M = \text{Size of} \left(\frac{N+1}{2}\right)\text{th item}$$

अथवा

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right) \text{वें पद का मान}$$

M के मान को क्रम संख्या में देखेगे, जिस क्रम संख्या मे यह विद्यमान है उसी से सम्बन्धित मूल्य मध्यका कहलायेगा।

(iv) यदि श्रेणी में कुल पदों की संख्या सम (even number) हो तो निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है—उदाहरण के रूप में, यदि 8 सदस्यों की आयु का मध्यिका ज्ञात करना है तो

$$M = \text{Size of } \frac{(N+1)}{2} \text{ th item}$$

$$= \text{ ,, ,, } \left(\frac{8+1}{2}\right) \text{ ,, ,,}$$

$$= 4.5\text{th item}$$

$$M = \frac{\text{Size of 4th item} + \text{Size of 5th item}}{2}$$

द्वारा मध्यिका ज्ञात की जाती है।

उदाहरण—विषम संख्या से मध्यिका ज्ञात कीजिए।

क्रम संख्या	:	1	2	3	4	5	6	7
आयु (वर्षों में)	:	15	17	23	19	15	14	13

हल—

क्रम संख्या	आयु (वर्षों में)
1	13
2	14
3	15
4	15
5	17
6	19
7	23

N = 7

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right) \text{th item}$$

जहाँ, M = Median (मध्यिका)

N = Number of items

$$M = \text{Size of } \left(\frac{7+1}{2}\right) \text{th item}$$

$$= \text{ ,, ,, } \frac{8}{2} = 4\text{th item}$$

4वें पद का मूल्य 15 है, अतः मध्यिका आयु 15 वर्ष होगी।

उदाहरण—सम संख्या से मध्यिका ज्ञात कीजिए।

सदस्य	:	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
आयु (वर्षों में)	:	10	12	24	42	29	13	18	54	48	18

क्रम संख्या	आयु (वर्षों मे)
1	10
2	12
3	13
4	18
5	18
6	24
7	29
8	42
9	48
10	54

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right) \text{th item}$$

$$= \text{Size of } \left(\frac{10+1}{2}\right) \text{,, ,,}$$

$$= \text{,, ,, } \frac{11}{2} = 5.5\text{th item}$$

$$M/\text{Size of } 5.5\text{th item} = \frac{\text{Size of } 5\text{th item} + \text{Size of } 6\text{th item}}{2}$$

$$M = \frac{18+24}{2} = \frac{42}{2} = 21$$

मध्यिका आयु 21 वर्ष होगी।

*II. **खण्डित श्रेणी में मध्यिका का निर्धारण** (Calculation in Discrete Series)*

(i) मूल्यों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करें।

(iii) श्रेणी की आवृत्तियों की संचयी आवृत्ति ज्ञात करते है।

(vi) निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right) \text{th item}$$

इस प्रकार जो पद आता है वह जिस सचयी आवृत्ति मे स्थित होता है, उस संचयी आवृत्ति का पद मूल्य मध्यिका कहलाता है।

उदाहरण—निम्न श्रेणी की मध्यिका ज्ञात कीजिए।

मूल्य (रु. मे)	:	44	45	46	47	48	49	50	51
दुकानें	:	9	10	21	27	21	6	4	2

मूल्य x	दुकानें f	संचयी आवृत्ति cf
44	9	9
45	10	19
46	21	40
47	27	67
48	21	88
49	6	94
50	4	98
51	2	100

$$N = 100$$

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right)\text{th item}$$

$$= \text{Size of } \left(\frac{100+1}{2}\right)\text{,, ,,}$$

$$= \text{,, ,, } \frac{101}{2} = 50\ 5\text{th item}$$

50.5वां पद संचयी आवृत्ति 67 में शामिल है। 67 संचयी आवृत्ति का पद मूल्य 47 है तो मध्यिका = 47 रुपये विक्रय मूल्य होगा।

III. सतत श्रेणी में माध्यिका का निर्धारण (Calculation in Continuous Series)

(i) मूल्यों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित कीजिए।

(ii) संचयी आवृत्तियों का निर्माण

(iii) सूत्र का प्रयोग—

$$m = \text{Size of } \left(\frac{N}{2}\right)\text{th item}$$

उपर्युक्त m के मान को *c.f.* में देखकर मध्यका वर्ग का निर्धारण किया जाएगा। इसके पश्चात निम्न सूत्र का प्रयोग कर मध्यका का निर्धारण किया जाएगा।

$$M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c)$$

उपरोक्त सूत्र आरोही क्रम की श्रेणी हेतु है यदि अवरोही क्रम वाली श्रेणी हो तो निम्न सूत्र का प्रयोग करेंगे :

$$M = L_2 - \frac{i}{f}(m - c)$$

जहां, M = मध्यिका

f = मध्यिका वर्ग की आवृत्ति

c = मध्यिका वर्ग से पहले वाले वर्ग की संचयी आवृत्ति

$m = \frac{n}{2}$ से निकाला गया पद

L_1 = मध्यिका वर्ग की निम्नतम सीमा

L_2 = मध्यिका वर्ग की उच्चतम सीमा

i = मध्यिका वर्ग का वर्गान्तर

उदाहरण—सतत श्रेणी से मध्यिका ज्ञात कीजिए।

आय (रु. में) :	100-200	200-300	300-400	400-500	500-600
व्यक्तियों की संख्या :	15	33	63	83	100

आय (रुपयों मे)	व्यक्तियों की संख्या	संचयी आवृत्ति
x	f	cf
100—200	15	15
200—300	33	48 (15+33)
300—400	63	111 (48+63)
400—500	83	194 (111+83)
500—600	100	294 (194+100)

N =294

$$m = \frac{N}{2} \text{ th item}$$

$$= \frac{294}{2} = 147\text{th item}$$

147वां पद संचयी आवृत्ति 194 में स्थित है जिसका वर्गान्तर 400—500 है। यही 400—500 मध्यिका वर्गान्तर कहलाता है। सूत्र—

$$M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c)$$

$$= 400 + \frac{500 - 400}{83}(147 - 111)$$

$$= 400 + \frac{100}{83}(36)$$

$$= 400 + \frac{3600}{83}$$

$$M = 400 + 43\ 37 = 443\ 37 \text{ रुपये}$$

अतः आय की मध्यिका 443.37 रुपये होगी।

उदाहरण—

मजदूरी :	40—50	30—40	20—30	10—20	0—10
व्यक्तियों की संख्या :	7	14	13	11	5

मजदूरी	व्यक्तियों की संख्या	संचयी आवृत्ति
(x)	(f)	(cf)
40—50	7	7
30—40	14	21
20—30	13	34
10—20	11	45
0—10	5	50

N = 50

$$m = \text{Size of } \left(\frac{N}{2}\right)\text{th item}$$

$$= \text{ ,, ,, } \frac{50}{2} = 25\text{th item.}$$

25वां पद 34 संचयी आवृत्ति में शामिल है तो माध्यिका वर्ग 20—30 हुआ।

$$M = L_1 - \frac{i}{f}(m - c)$$

$$= 30 - \frac{30-20}{13}(25-21)$$

$$= 30 - \frac{10}{13}(4)$$

$$= 30 - \frac{40}{13}$$

$$= 30 - 3.08$$

$$M = 26.92 \text{ रुपये}$$

अतः मध्यका मजदूरी 26.92 रुपये होगी।

मध्यका के गुण (Merits of Median)

मध्यका के गुण इस प्रकार हैं :

(1) **सरलता**—मध्यका को समझना व गणना करना बहुत आसान है, क्योंकि व्यवस्थित श्रेणी के मध्य मध्यका स्थित होती है।

(2) **स्पष्टता**—प्रत्येक समंकमाला में मध्यका मूल्य स्पष्टता से केवल पदों की संख्या मालूम होने पर ज्ञात किया जा सकता है।

(3) **बिन्दुरेखीय विवेचन**—मध्यका का निर्धारण बिन्दुरेखीय पद्धति से भी किया जा सकता है।

(4) **चरम मूल्यों का न्यूनतम प्रभाव**—मध्यका पर श्रेणी की बहुत बड़ी संख्या या छोटी संख्या का अनुचित प्रभाव नहीं पड़ता है।

(5) **गुणात्मक तथ्यो के अध्ययन में सहायक**—गुणात्मक तथ्यों; जैसे स्वास्थ्य, ईमानदारी, बौद्धिक स्तर, आदि का अध्ययन करने में मध्यका द्वारा प्रत्यक्ष माप सम्भव होने के कारण, यह सबसे उपयुक्त माध्य है।

(6) **उचित प्रतिनिधित्व**—मध्यका मान में सभी पदों पर आधारित होने के कारण उचित प्रतिनिधित्व का गुण पाया जाता है।

(7) सामाजिक समस्याओ; जैसे बेकारी, निर्धनता, जनसंख्या समस्या, आदि के अध्ययन में भी मध्यका का प्रयोग किया जाता है।

मध्यका के दोष (Demerits of Median)

माध्यिका के दोष इस प्रकार है :

(1) **समंको को क्रम में जमाना आवश्यक**—केवल मध्यका में ही सम्पूर्ण श्रेणी को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना आवश्यक है अन्यथा मध्यका मूल्य सही नहीं होगा।

(2) **उचित प्रतिनिधित्व नहीं**—मध्यका श्रेणी के सभी पदों पर आधारित नहीं होने के कारण इसे उचित प्रतिनिधित्वपूर्ण माप नहीं कहा जा सकता।

(3) **बीजगणितीय विवेचन असम्भव**—मध्यका का बीजगणितीय विवेचन करना सम्भव नहीं है, जैसे विभिन्न श्रेणियों की केवल मध्यका ज्ञात हो तो उनकी सम्मिलित मध्यका ज्ञात नहीं की जा सकती।

(4) **अवास्तविकता**—कभी-कभी मध्यका मूल्य ऐसा होता है कि श्रेणी के अन्य मूल्य उससे बहुत कम या बिल्कुल मिलते-जुलते नहीं होते हैं तब मध्यका से वास्तविक स्थिति का निरूपण नहीं होता।

समान्तर माध्य
(ARITHMETIC AVERAGE OR MEAN)

समान्तर माध्य समस्त सांख्यिकीय विधियों की आधारशिला है। सामान्यतः इसके लिए औसत शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। समान्तर माध्य वह मूल्य है जो किसी श्रेणी के समस्त पदों के मूल्यों के योग में उनकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होता है। उदाहरण के रूप मे, 10 विद्यार्थियो के प्राप्तांक 25, 15, 20, 40, 30, 20, 15, 20, 30, 25 हैं तो 240 को 10 से भाग देने पर प्राप्त 24 प्राप्तांक को समान्तर माध्य कहा जायेगा।

किंग (King) के शब्दों में, "समंकमाला के पदों के जोड़ में उनकी संख्या के द्वारा भाग देने से जो राशि प्राप्त होती है, उसे ही माध्य के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।".

समान्तर माध्य की विशेषताएं (Characteristics of Arithmetic Mean)

(1) समान्तर माध्य केन्द्रीय प्रवृत्ति के माप की एक सरल विधि है। यह कुल पदों के मूल्यों के योग को पदों की कुल संख्या से भाग देने पर ही प्राप्त की जा सकती है।

(2) इसमें समस्त पद-मूल्यों को समान महत्व दिया जाता है।

(3) समान्तर माध्य में पदों की आवृत्ति की तुलना में पद-मूल्यों को अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है।

(4) समान्तर माध्य ज्ञात करने के लिए प्रत्येक पद की गणना केवल एक बार ही की जाती है।

(5) समान्तर माध्य तथा पदों की संख्या ज्ञात होने पर दोनों के गुणा करने से कुल पदो का योग मालूम किया जा सकता है।

समान्तर माध्य का निर्धारण
(CALCULATION OF ARITHMETIC MEAN)

I. **व्यक्तिगत श्रेणी में समान्तर माध्य निकालना** (Calculation of Mean in *Individual Series*)

व्यक्तिगत श्रेणी में दो विधियों द्वारा समान्तर माध्य निकाली जाती है :

(1) प्रत्यक्ष रीति द्वारा (*Direct Method*)

(2) लघु रीति द्वारा (Short-cut Method)

(1) **प्रत्यक्ष रीति** (Direct Method)—समंकमाला के समस्त पदो के मूल्यों को जोड़कर पदो की कुल संख्या से भाग देने पर प्राप्त लब्धि समान्तर माध्य कहलाती है। इसके लिए सूत्र इस प्रकार है—

$$\bar{X} = \frac{\Sigma x}{N}$$

जहां $\bar{X}$ = समान्तर माध्य

Σ = योग

x = पदों का मूल्य

N = पदों की कुल संख्या

Σx = समस्त पद मूल्यों का योग

उदाहरण—10 विद्यार्थियों की लम्बाई का समान्तर माध्य ज्ञात कीजिए।

लम्बाई (सेमी.) 155, 153, 168, 162, 164, 166, 180, 165, 157, 160

संख्या	लम्बाई (सेण्टीमीटर मे) x
1	155
2	153
3	168
4	162
5	164
6	166
7	180
8	165
9	157
10	160
N = 10	$\Sigma x = 1630$

$$\overline{X} = \frac{\Sigma x}{N}$$

$$= \frac{1630}{10}$$

$$\overline{X} = 163$$

अतः विद्यार्थियों की लम्बाई का समान्तर माध्य 163 सेण्टीमीटर होगा।

(2) **लघु रीति** (Short-cut Method)—कल्पित माध्य से श्रेणी के सभी मूल्यों से विचलन (Deviation) ज्ञात करते हैं। पदमूल्य में से कल्पित माध्य को घटा देने से विचलन ज्ञात हो जाता है। तत्पश्चात् निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma dx}{N}$$

जहां $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

A = कल्पित माध्य

N = पदों की संख्या

d = विचलन

x = पदमूल्य

Σdx = विचलन से प्राप्त पदमूल्यों का योग $\Sigma (X - A)$

उदाहरण—

क्रम	लम्बाई (सेमी. मे) x	A=166 dx
1	155	(155–166)–11
2	153	(153–166)–13
3	168	(168–166) +2
4	162	(162–166) –4
5	164	(164–166) –2
6	166	(166–166) –0
7	180	(180–166)+14
8	165	(165–166) –1
9	157	(157–166) –9
10	160	(160–166) –6
N = 10		$\Sigma dx = -46 + 16$ $= -30$

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma dx}{N}$$

$$\overline{X} = 166 + \frac{-30}{10}$$

$$\overline{X} = 166 - 3$$

$$\overline{X} = 163$$

अतः 163 सेण्टीमीटर लम्बाई समान्तर माध्य होगी।

यहा हमे ध्यान रखना है कि समान्तर माध्य चाहे प्रत्यक्ष रीति से निकाला जाए
लघु रीति से दोनो में उत्तर एकसमान ही होगा।

II. **खण्डित श्रेणी में समान्तर माध्य निकालना** (Calculation of Mean in Discre Series)

खण्डित श्रेणी मे भी समान्तर माध्य प्रत्यक्ष और लघु दोनों में से किसी भी रीति
निकाली जा सकती है।

प्रत्यक्ष रीति (Direct Method)

(i) सर्वप्रथम पदमूल्य को आवृत्ति से गुणा करते हैं।

(ii) सभी पदो के गुणनफल का योग करते है।

(iii) गुणनफल के योग को आवृत्तियों के योग से भाग देते है।

(iv) प्राप्त लब्धि समान्तर माध्य होगी।

सूत्र $\overline{X} = \frac{\Sigma fx}{N}$

जहां $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

N = पदों की सख्या

f = पदो की आवृत्ति

Σfx = पद के मूल्यों और आवृत्ति के गुणनफलों का योग

उदाहरण—

प्राप्त अंक : 24, 23, 22, 21, 20, 18, 15, 10, 30, 25

छात्र : 4 6 10 2 3 5 7 5 3 5

प्राप्तांक x	छात्र f	मूल्यों व आवृत्ति का योग fx
24	4	96
23	6	138
22	10	220
21	2	42
20	3	60
18	5	90
15	7	105
10	5	50
30	3	90
25	5	125
	$N = 50$	$\Sigma fx = 1016$

$$\overline{X} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

$$= \frac{1016}{50}$$

$$\overline{X} = 20.32$$

अतः समान्तर माध्य 20.32 अंक होगा।

लघु रीति (Short-cut Method)

(i) पद मूल्यों मे से किसी एक को कल्पित माध्य मान लेते हैं।

(ii) कल्पित माध्य से मूल्यों का विचलन ज्ञात करते है।

(iii) प्रत्येक विचलन का सम्बन्धित आवृत्ति से गुणा करके कुल विचलन ज्ञात करते हैं।

(iv) गुणनफल का योग करके Σfdx निकाल लेते हैं।

(v) इसमें निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$$

जहां $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

A = कल्पित माध्य

N = पदों की संख्या

f = पदों की आवृत्ति

d = विचलन

Σfdx = आवृत्ति व विचलित मूल्यों के गुणनफलो का योग

उदाहरण—

प्राप्तांक :	24	23	22	21	20	18	15	10	30	25
छात्र :	4	6	10	2	3	5	7	5	3	5

प्राप्तांक	छात्र संख्या	विचलन $(x-A)\ dx$	विचलित मूल्य व आवृत्ति fdx
x	f	A=22	
24	4	+2	+8
23	6	+1	+6
22	10	0	0
21	2	−1	−2
20	3	−2	−6
18	5	−4	−20
15	7	−7	−49
10	5	−12	−60
30	3	+8	+24
25	5	+3	+15
	N=50		+53 − 137
			$\Sigma fdx = -84$

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$$

$$= 22 + \frac{-84}{50}$$

$$= 22 - 1.68$$

$$= 20.32$$

$$\overline{X} = 20.32$$

अतः छात्रों के प्राप्तांकों का समान्तर माध्य 20.32 होगा।

III. सतत श्रेणी में समान्तर माध्य निकालना (Calculation of Mean in Continuous Series)

सतत श्रेणी में तीन रीतियों से समान्तर माध्य ज्ञात किया जा सकता है :

(1) प्रत्यक्ष रीति (Direct Method) द्वारा,

(2) लघु रीति (Short-cut Method) द्वारा,

(3) पद विचलन रीति (Step-deviation Method) द्वारा।

(1) प्रत्यक्ष रीति द्वारा (Direct Method)

(i) सर्वप्रथम सतत श्रेणी या वर्गान्तरों का मध्यमान अथवा मध्य-मूल्य निकाला जाता है।

(ii) मध्य-मूल्य को आवृत्तियो से गुणा कर योग किया जायेगा।

(iii) गुणनफल के योगों को आवृत्तियों के योग से भाग देते हैं।

(iv) प्राप्त लब्धि समान्तर माध्य होगा। सूत्र—

$$\overline{X} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

जहां $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

N = आवृत्तियों का योग

Σfx = पद मूल्यों एवं आवृत्तियों के गुणनफलों का योग

उदाहरण—

दैनिक मजदूरी (रु.) : 3-5 6-8 9-11 12-14 15-17 18-20 21-23 24-26

श्रमिकों की सं. : 2 6 8 11 10 4 3 1

दैनिक मजदूरी	श्रमिक संख्या	मध्य मूल्य	मध्य-मूल्य का योग
x	f	x	fx
3—5	2	4	8
6—8	6	7	42
9—11	8	10	80
12—14	11	13	143
15—17	10	16	160
18—20	4	19	76
21—23	3	22	66
24—26	1	25	25
	N=45		$\Sigma fx = 600$

$$\overline{X} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

$$= \frac{600}{45}$$

$$\overline{X} = 13.33$$

अत: दैनिक मजदूरी का समान्तर माध्य 13.33 रुपये होगा।

(2) **लघु रीति द्वारा** (Short-cut Method)

(i) सर्वप्रथम वर्गान्तरों से मध्य-मूल्य निकालते है।

(ii) मध्य-मूल्यों में से किसी एक मूल्य को कल्पित माध्य मान लेते है।

(iii) कल्पित माध्य से मूल्यों का विचलन ज्ञात करते है। (X – A)

(iv) प्रत्येक विचलन को आवृत्ति से गुणा करके गुणनफलों का योग ज्ञात करते है।

(v) निम्न सूत्र का प्रयोग करते है। सूत्र—

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$$

जहा $\overline{X}$ = समान्तर माध्य

A = कल्पित माध्य

N = आवृत्तियों का योग

Σfdx = पद विचलनों व आवृत्तियों के गुणनफलों का योग

उदाहरण—

दैनिक मजदूरी (रु)	3-5	6-8	9-11	12-14	15-17	18-20	21-23	24-26
श्रमिकों की संख्या	2	6	8	11	10	4	3	1

दैनिक मजदूरी x	श्रमिक संख्या f	मध्य-मूल्य x	विचलन $(x-A)$ $A=16$ dx	विचलन मूल्य आवृत्ति योग fdx
3—5	2	4	−12	−24
6—8	6	7	− 9	−54
9—11	8	10	− 6	48
12—14	11	13	− 3	−33
15—17	10	16	0	0
18—20	4	19	+ 3	+12
21—23	3	22	+ 6	+18
24—26	1	25	+ 9	+ 9
	N = 45			Σfdx = − 159 + 39 = − 120

$$\bar{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$$

$$= 16 + \frac{-120}{45}$$

$$= 16 - 2.67$$

$\bar{X}$ = 13.33 रुपये दैनिक मजदूरी का समान्तर माध्य होगा।

(3) पद विचलन रीति द्वारा (Step-deviation Method)

समान वर्गान्तर होने पर ही इस रीति का प्रयोग किया जा सकता है।

(i) सर्वप्रथम वर्गान्तरों से मध्य-मूल्य निकालते हैं।

(ii) मध्य मूल्यों में से किसी एक मूल्य को कल्पित माध्य मानते है।

(iii) कल्पित माध्य से मूल्यों का विचलन ज्ञात करते है।

(iv) पद विचलन पाने के लिए वर्गान्तर से विचलित मूल्यों को भाग देते हैं। इस तरह $d'x$ ज्ञात करते हैं।

(v) भाग देने से प्राप्त विचलित मूल्यो को प्रत्येक आवृत्ति से गुणा करते है। इस तरह $(fd'x)$ ज्ञात करते है।

(vi) इसमें निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है :

$$\bar{X} = A + \frac{\Sigma fd'x}{N} \times i$$

जहां $\bar{X}$ = समान्तर माध्य

A = कल्पित माध्य

N = आवृत्तियों का योग

i = एक वर्ग की निम्न व उच्च सीमा का अन्तर

$\Sigma fd'x$ = विचलित मूल्यों व आवृत्तियों के गुणनफलों का योग

उदाहरण—

दैनिक मजदूरी (रु.): 3-5 6-8 9-11 12-14 15-17 18-20 21-23 24-26

श्रमिक संख्या : 2 6 8 11 10 4 3 1

दैनिक मजदूरी	संख्या	मध्य मूल्य	विचलन A=16	पद विचलन $i = 3,\ d'x = \frac{dx}{i}$	
x	f	x	$(x - A)dx$	$d'x$	$fd'x$
3—5	2	4	−12	−4 (12 ÷ 3)	−8
6—8	6	7	−9	−3 (9 ÷ 3)	−18
9—11	8	10	−6	−2 (6 ÷ 3)	−16
12—14	11	13	−3	−1 (3 ÷ 3)	−11
15—17	10	16	0	0 (3 ÷ 0)	0
18—20	4	19	+3	+1 (3 ÷ 3)	+4
21—23	3	22	+6	+2 (6 ÷ 3)	+6
24—26	1	25	+9	+3 (9 ÷ 3)	+3
				$\Sigma fd'x = -53$	(−) 53
				+13	+ 13
					= −40

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma fd'x}{N} \times i$$

$$= 16 + \frac{-40}{45} \times 3$$

$$= 16 - \frac{8}{9} \times 3$$

$$= 16 - \frac{24}{9}$$

$$= 16 - 2.67$$

$$\overline{X} = 13\ 33 \text{ रुपये}$$

अतः दैनिक मजदूरी का समान्तर माध्य 13.33 रुपये होगा।

याद रहे कि सतत श्रेणी की तीनों रीतियों में से चाहे किसी भी रीति द्वारा समान्तर माध्य ज्ञात किया जाय, उत्तर तीनो रीतियों से एकसमान ही आयेगा।

समान्तर माध्य के गुण (Merits of Arithmetic Mean)

(1) **सरलता**—समान्तर माध्य की गणना करना एवं इसको समझना बहुत आसान है।

(2) **निश्चितता**—समान्तर माध्य निश्चित, स्थिर तथा स्पष्टतया परिभाषित होता है।

(3) **बीजगणितीय विवेचन सम्भव**—पदों की संख्या और पद-मूल्यों के योग के समान्तर माध्य ज्ञात हो जाने के कारण इसका बीजगणितीय विवेचन भी सम्भव है।

(4) **सभी मूल्यो पर आधारित**—इसमें किसी पद को कम या किसी पद को अधिक महत्व नही दिया जाता है। इसलिए यह समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करता है।

(5) **तुलनात्मकता**—विभिन्न तथ्यो की तुलना हेतु समान्तर माध्य का सुगमतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।

(6) **क्रमबद्धता जरूरी नहीं**—इसमें पदों को आरोही या अवरोही क्रम में क्रमबद्ध करना जरूरी नहीं है।

(7) **जांच सम्भव**—सभी रीतियों से हल करने पर उत्तर एकसमान ही आने के कारण समान्तर माध्य की जांच सम्भव है।

समान्तर माध्य के दोष (Demerits of Arithmetic Mean)

(1) **गणना में कठिनता**—समकमाला का एक भी मूल्य ज्ञात न हो तो समान्तर माध्य नही निकाला जा सकता है।

(2) **बिन्दुरेखीय प्रदर्शन नहीं**—समान्तर माध्य को विन्दुरेखीयं पद्धति द्वारा ज्ञात नहीं किया जा सकता।

(3) **अनुपयुक्तता**—अनुपात, दर एवं प्रतिशत, आदि का समान्तर माध्य से अध्ययन सम्भव नहीं है।

(4) **भ्रामक निष्कर्ष**—कई बार औसत से हास्यास्पद, भ्रामक एवं गलत निष्कर्ष भी प्राप्त होते है, जैसे एक परिवार मे 5 और दूसरे में 8 सदस्य हैं तो समान्तर माध्य $13 + 2 = 6.5$ व्यक्ति होगा जो हास्यापद है।

(5) **अवास्तविकता**—यदि समंकमाला में एक संख्या अन्य की तुलना में अधिक बड़ी या अधिक छोटी है तो समान्तर माध्य का वास्तविक चित्र प्रस्तुत नहीं करेगा।

(6) निरीक्षण मात्र से समान्तर माध्य ज्ञात नही किया जा सकता।

(7) समान्तर माध्य का तुलनात्मक एवं गुणात्मक अध्ययनों में सफलतापूर्वक प्रयोग करना कठिन है।

उपर्युक्त कमियो के होते हुए भी सामाजिक-आर्थिक समस्याओं, उत्पादन, आयात-निर्यात, आय-व्यय, आदि का औसत ज्ञात करने में समान्तर माध्य का ही प्रयोग किया जाता है।

एक ही सूत्र द्वारा माध्य, मध्यिका तथा बहुलक की गणना करना

माध्य, मध्यिका तथा बहुलक, इन तीनों में से कोई दो दिये हुए हों और तीसरा निकालना हो तो निम्नलिखित एक ही सूत्र द्वारा निकाला जा सकता है :

सूत्र—Mode = 3 Median − 2 Mean

उदाहरण 1 निम्नांकित से मध्यका ज्ञात कीजिए :

Mean = 20
Median = ?
Mode = 17

हल :

$$\bar{X} = 20, M = ?, Z = 17$$
$$Z = 3M - 2\bar{X}$$
$$17 = 3M - 2 \times 20$$
$$17 + 40 = 3M$$
$$M = 19 \text{ (मध्यका) उत्तर ।}$$

उदाहरण 2 निम्नाकित से माध्य ज्ञात कीजिए :

Mean = ?
Median = 20
Mode = 18

हल :

$$\bar{X} = ?, M = 20, Z = 18$$
$$Z = 3M - 2\bar{X}$$
$$18 = 3 \times 20 - 2\bar{X}$$
$$2\bar{X} = 60 - 18$$
$$\bar{X} = 21 \text{ (समान्तर माध्य) उत्तर।}$$

उदाहरण 3. निम्नांकित से भूयिष्ठक ज्ञात कीजिए : (अजमेर, 1997)

Mean = 15
Median = 12
Mode = ?

हल :

$$\bar{X} = 15, M = 12, Z = ?$$
$$Z = 3M - 2\bar{X}$$
$$Z = 3 \times 12 - 2 \times 15$$
$$Z = 36 - 30$$
$$Z = 6 \text{ (बहुलक) उत्तर।}$$

भूयिष्ठक, मध्यका (मध्यिका) एवं समान्तर माध्य की तुलनात्मक उपयोगिता

(COMPARATIVE UTILITY OF MODE, MEDIAN AND ARITHMETIC MEAN)

तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाये तो इन तीनों का अपना-अपना विशेष एवं पृथक् महत्व है। अनेक आंकड़ों के बीच की स्थिति अथवा आंकड़ों की मध्य प्रवृत्ति को ये तीनों व्यक्त करते है। वैज्ञानिक अनुसन्धान करने, मार्ग-दर्शक का कार्य करने एवं सुनिश्चित निष्कर्ष पाने के लिए ये तीनों ही विशेष उपयोगी हैं।

बहुलक, मध्यका एवं समान्तर माध्य की गणना किन परिस्थितियों में की जानी चाहिए, इसका हम यहां उल्लेख करेंगे :

(A) माध्य की गणना

माध्य की गणना दो स्थितियों में की जाती है :

(1) जबकि वितरण लगभग सामान्य हो या सामान्य के बहुत नजदीक हो।

(2) जबकि माध्य की गणना के बाद हमें उन्हीं तथ्यों पर आगे और दूसरी सांख्यिकीय पद्धतियों का उपयोग करना हो; जैसे प्रमाप विचलन, t परीक्षण, अशुद्धियों का सुधार करना हो एवं माध्यो की सार्थकता का परीक्षण करना हो।

(B) मध्यका (मध्यिका) की गणना

मध्यिका की गणना तब की जाती है—

(1) जब पूरे वितरण में कोई एक या दो इकाइयां ऐसी हों जो पूरे वितरण से बहुत अधिक विचलन कर रही हों।

(2) मध्यिका की गणना तब भी किया करते हैं जबकि वितरण अपूर्ण दिया हुआ हो, किन्तु कम से कम कुल इकाइयों में आधी इकाइयों का वितरण उपलब्ध हो; जैसे—

Scores	(*f*)
10—14	4
15—19	6
20—24	4
25—29	5
30—34	7
35—39	6
40—44	4
15—49	—
50—54	—
55—59	—
	N = 70

(3) मध्यिका की गणना उस स्थिति में भी करते है जब हमारा उद्देश्य यह ज्ञात करन होता है कि वह कौन-सा बिन्दु है जो उस वितरण को ठीक दो बराबर भागों में बांटता है

(4) गुणात्मक विशेषताओं की जानकारी चाही गई हो। जैसे किस विषय में ज्ञान क स्तर अच्छा है, खेल में किस टीम का प्रदर्शन औसत रूप में अच्छा है, आदि।

(C) बहुलक की गणना

बहुलक केन्द्रीय प्रवृत्ति की बहुत ही अविश्वसनीय पद्धति है और इसका उपयोग हम तभी करते है जब हमें बहुत अधिक सही माप पर बहुत अधिक जोर नही देना है, बल्कि एक रफ एस्टीमेट जल्दी उपलब्ध करना है। आमतौर पर बहुलक का उपयोग 'मार्केट सर्वे' में किया जाता है।

बहुलक का प्रयोग ऐसे क्षेत्रों में जहां प्रमाप आकार का उत्पादन होता हो, औसत ऊंचाई ज्ञात करनी हो, उपयुक्त रहता है। प्रमाप आकार के उत्पादन में कालरों का आकार, जूतो का आकार, अन्य रेडिमेड गारमेन्ट का उत्पादन ज्ञात करने के लिए भी बहुलक की गणना उपयुक्त होती है।

स्पष्ट है कि केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीनों ही माप समान्तर माध्य, मध्यिका एवं बहुलक का अपना-अपना महत्व एवं उपयोग है। किस अध्ययन में कौनसे माप का प्रयोग किया जाय, यह निर्णय शोधकर्ता पर ही निर्भर करता है।

प्रश्न

1. विभिन्न प्रकार के माध्यो (Averages) की व्याख्या कीजिए तथा तथ्य-विश्लेषण मे उनका उपयोग समझाइए। (अजमेर, 1993)
2. समान्तर माध्य क्या है? इसके गुण-दोष समझाइए। (अजमेर, 1994)
3. 'माध्यो' (Averages) से आप क्या समझते है तथा उनके निर्धारण की रीतिया (Methods) बताइए। (राजस्थान, 1998)
4. समाजशास्त्रीय अनुसन्धान में प्रयुक्त तीन प्रकार के माध्यो (Averages) की तुलना कीजिए। (राजस्थान, 1999)
5. निम्नलिखित पर सक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए :
   (i) भूयिष्ठक या बहुलक (Mode) (राजस्थान, 1999)
   (ii) मध्यिका (Median) (राजस्थान, 2000)

(iii) माध्य (Mean)
(iv) तथ्य (Data) (अजमेर, 1996)
(v) गुणात्मक तथ्य (Qualitative data) (अजमेर, 1996)
(vi) संख्यात्मक तथ्य (Quantitative data) (अजमेर, 1996)
(vii) वैयक्तिक तथ्य (श्रेणी) (Individual Series) (अजमेर, 1996)
(viii) सामूहिक तथ्य (श्रेणी) (Collective data) (अजमेर, 1996)
(ix) खण्डित शृंखला (Discrete Series) (अजमेर, 1996)
(x) सतत शृखला (Continuous Series) (अजमेर, 1996)
(xi) समावेशी शृंखला (Inclusive Series) (अजमेर, 1996)
(xii) अपवर्जी शृंखला (Exclusive Series) (अजमेर, 1996)
(xiii) समान्तर माध्य (मध्यमान) के गुण और सीमाएं (Merits and Limitations of Arithmetic mean)

6. माध्य, मध्यका तथा बहुलक की गणना के लिए उत्तरदायी परिस्थितियों का वर्णन कीजिए। (अजमेर, 1997)
7. मध्यमान (mean) मध्यका तथा बहुलक की परिभाषा दीजिए। साख्यिकीय विश्लेषण में इनकी तुलनात्मक उपयोगिता को स्पष्ट कीजिए। (राजस्थान, 1997)
8. निम्नलिखित तथ्यों से मध्यका निकालिए :

समूह (Group)	आवृत्ति (Frequency)
100—200	14
200—300	23
300—400	12
400—500	33
500—600	8
600—700	10

(अजमेर, 1993)

हल :

समूह	आवृत्ति (Frequency)	संचयी आवृत्ति (Cumulative frequency)
100—200	14	14
200—300	23	37 (14 + 23)
300—400	12	49 (37 + 12)
400—500	33	82 (49 + 33)
500—600	8	90 (82 + 8)
600—700	10	100 (90 + 10)

$$N = 100$$

$$m = \text{Size of } \left(\frac{N}{2}\right)\text{th item}$$

$$= \text{,, ,, } \frac{100}{2} = 50\text{th item.}$$

50वा पद संचयी आवृत्ति 82 मे स्थित है जिसका वर्गान्तर 400—500 है। यही 400—500 मध्यिका वर्गान्तर होगा।

सूत्र—

$$M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c) \text{ अथवा } \quad M = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}(m - c)$$

$$\because i = L_2 - L_1$$

$$= 400 + \frac{100}{33}(50 - 49)$$

$$= 400 + \frac{100}{33} \times 1$$

$$= 400 + \frac{100}{33} = 400 + 3.03 = 403.03$$

अतः मध्यका 403 03 होगी।

9 एक मानसिक योग्यता परीक्षण में कालेज के विद्यार्थियो के एक समूह द्वारा निम्नलिखित अंक प्राप्त किए गए। इन आंकड़ों को समूह में जमा कर माध्य (Mean) तथा मध्यिका (Median) ज्ञात कीजिए :

71	61	55	50
70	60	54	50
69	59	54	49
69	58	54	47
69	58	53	40
64	57	52	39
64	56	52	34
63	55	51	30

(राजस्थान, 1986)

हल : अंकों को समूह में जमाने पर

अंक	मिलान रेखाएं	विद्यार्थियों की संख्या
30—40	III	03
40—50	III	03
50—60	𝍸 𝍸 𝍸 II	16
60—70	𝍸 III	08
70—80	II	02
		N = 32

माध्य (Mean) की गणना (पद विचलन रीति द्वारा)

अंक x	विद्यार्थियो की संख्या f	मध्य मूल्य x	विचलन A = 55 dx	पद विचलन $i = 10$ $d'x$	पद विचलन × आवृत्ति $fd'x$	संचयी आवृत्ति (cf)
30—40	03	35	−20	−2	−06	3
40—50	03	45	−10	−1	−03	6
50—60	16	55	0	0	0	22
60—70	08	65	+10	+1	+08	30
70—80	02	75	+20	+2	+04	32
	N = 32				$\Sigma fd'x = -07$	
					$+12 = +5$	

$$\bar{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N} \times i$$

$$= 55 + \frac{5}{32} \times 10$$

$$= 55 + \frac{25}{16}$$

$$= 55 + 1.5625 = 56.5625$$

$$\bar{X} = 56.5625$$

(उत्तर—माध्य (Mean) = 56.5625)

मध्यका की गणना

$$m = \text{Size of } \left(\frac{N}{2}\right)\text{th item}$$

$$= \text{Size of } \frac{32}{2} = 16\text{th item}$$

16वां पद संचयी आवृत्ति 22 मे आता है, अत. उसके सामने वाला वर्गान्तर 50—60 ही मध्यका वर्ग होगा।

सूत्र— $M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c)$

$$= 50 + \frac{10}{16}(16 - 06)$$

$$= 50 + \frac{10}{16} \times 10$$

$$= 50 + \frac{100}{16}$$

$$= 50 + \frac{25}{4} = 50 + 6.25$$

$$M = 56.25$$

10. निम्नलिखित सारणी से भूयिष्ठक (Mode) एवं मध्यिका (Median) ज्ञात कीजिए :

अंक	0—10	10—20	20—30	30—40	40—50
आवृत्ति	14	23	27	21	15

(कानपुर, 1987)

भूयिष्ठक की गणना : (सम्पूर्ण विधि द्वारा)

अंक	आवृत्ति (f)	(i)	(ii)	(iii)	(iv)	(v)	(vi)	(vii)	(viii)
x	(F)	CF							
0—10	14	} 37							
10—20	23			} 59					
20—30	27	} 48							
30—40	21								
40—50	15								
	N = 100								

तालिका से स्पष्ट है कि अधिकतम आवृत्ति 6 है, अतः उससे सम्बन्धित वर्ग 20—30 ही बहुलक वर्ग होगा।

सूत्र— $$Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

$$= 20 + \frac{27 - 23}{2 \times 27 - 23 - 21} \times 10$$

$$= 20 + \frac{40}{54 - 44}$$

$$= 20 + \frac{40}{10}$$

$$= 20 + \frac{4}{1}$$

$$= 24$$

अतः बहुलक अंक 24 होगे।

मध्यिका की गणना

$$m = \text{Size of } \left(\frac{N}{2}\right)\text{th item}$$

$$= \text{,, ,, } \frac{100}{2} = 50\text{th item}$$

50वां पद संचयी आवृत्ति 64 में शामिल है अतः मध्यिका वर्ग 20—30 होगा।

सूत्र—

$$M = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}(m - c)$$

$$= 20 + \frac{30 - 20}{27}(50 - 37)$$

$$= 20 + \frac{10}{27} \times 13$$

$$= 20 + \frac{130}{27}$$

$$= 20 + 4.8148$$

$$= 24.8148$$

अतः मध्यका 24 8148 होगा।

11 निम्नलिखित आंकडों से माध्य (Mean) एवं भूयिष्ठक (Mode) ज्ञात कीजिए :

मूल्य	आवृत्ति
12—24	03
24—36	07
36—48	09
48—60	12
60—72	14
72—84	10
84—96	08
96—108	06
108—120	04

(अवध, 1989)

हल : माध्य की गणना (लघु रीति द्वारा)

मूल्य x	आवृत्ति f	मध्य मूल्य x	विचलन $A = 66$ dx	विचलन × आवृत्ति fdx
12—24	03	18	–48	–144
24—36	07	30	–36	–252
36—48	09	42	–24	–216
48—60	12	54	–12	–144
60—72	14	66	0	0
72—84	10	78	12	120
84—96	08	90	24	192
96—108	06	102	36	216
108—120	04	114	48	192
	N = 73			$\Sigma fdx = -756 + 720 = -36$

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$$

$$= 66 + \frac{-36}{73}$$

$$= 66 - 0.49315 = 65.50685$$

अतः माध्य 65.50685 होगा।

भूयिष्ठक की गणना (निरीक्षण विधि द्वारा)

मूल्य	आवृत्ति
12—24	03
24—36	07
36—48	09
48—60	12 f_0
60—72	14 f_1
72—84	10 f_2
84—96	08
96—108	06
108—120	04

निरीक्षण से स्पष्ट है कि सबसे अधिक आवृत्ति 14 है अतः भूयिष्ठक वर्ग 60—72 होगा।

सूत्र : $$Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

$$= 60 + \frac{14 - 12}{2 \times 14 - 12 - 10} \times 12$$

$$= 60 + \frac{2}{28 - 22} \times 12$$

$$= 60 + \frac{4}{1}$$

$$= 60 + 4 = 64$$

अतः भूयिष्ठक मूल्य 64 होगा।

12 निम्नलिखित आंकड़ों से माध्य (Mean) निकालिए :

प्राप्तांक	विद्यार्थियों की संख्या
10 से कम	07
20 " "	16
30 " "	26
40 " "	46
50 " "	71
60 " "	86
70 " "	96
80 " "	98
90 " "	99
100 " "	100

(अजमेर, 1990)

माध्य का निर्धारण

सबसे पहले उपरोक्त संचयी आवृत्ति श्रेणी को साधारण आवृत्ति श्रेणी मे बदलेंगे :

माध्य की गणना (प्रत्यक्ष रीति द्वारा)

प्राप्तांक	विद्यार्थियों की संख्या f	मध्य मूल्य x	मध्य मूल्य × आवृत्ति fx
0—10	07	5	35
10—20	09 (16 – 7)	15	135
20—30	10 (26 – 16)	25	250
30—40	20 (46 – 26)	35	700
40—50	25 (71 – 46)	45	1125
50—60	15 (86 – 71)	55	825
60—70	10 (96 – 86)	65	650
70—80	02 (98 – 96)	75	150
80—90	01 (99 – 98)	85	85
90—100	01 (100 – 99)	95	95
	N = 100		4050

सूत्र : $\bar{X} = \frac{\Sigma fx}{N}$

$= \frac{4050}{100} = 40.50$

अतः माध्य अंक 40.50 होंगे।

13 निम्न समंकों से मध्यका और बहुलक परिकलन कीजिए :

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)
110—120	6
120—130	25
130—140	48
140—150	72
150—160	116
160—170	60
170—180	38
180—190	22
190—200	3

(राज., 1992)

हल : मध्यका की गणना

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति (cf)
110—120	6	6
120—130	25	31
130—140	48	79
140—150	72	151
150—160	116	267
160—170	60	327
170—180	38	365
180—190	22	387
190—200	3	390

$N = 390$

$M = \frac{N}{2}$ वे पद का मान

$= \frac{390}{2}$ वे पद का मान = 150—160

सूत्र : $M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c)$

$= 150 + \frac{10}{116}(195 - 151)$

$= 150 + \frac{440}{116} = 150 + 3\,8$

$= 153\,8$

उत्तर—153.8 मध्यका है।

बहुलक की गणना

उपर्युक्त श्रेणी का निरीक्षण करने से ज्ञात होता है कि बहुलक वर्ग 150—160 है क्योंकि इसकी आवृत्ति 116 है जो सर्वाधिक है।

सूत्र : $Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$

$Z = 150 + \frac{116 - 72}{2 \times 116 - 72 - 60} \times 10$

$Z = 150 + \frac{44}{232 - 132} \times 10$

$Z = 150 + \frac{44}{100} \times 10$

$Z = 150 + \frac{44}{10}$

$Z = 150 + 4\,4$

$Z = 154\,4$

उत्तर—154 4 बहुलक है।

14. निम्नलिखित तथ्यों में से मध्यका (Median) निकालिए :

समूह	100-200	200-300	300-400	400-500	500-600	600-700
आवृत्ति (f)	14	23	12	33	8	10

(अजमेर, 1993; राज., 1994)

हल :

समूह	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति (cf)
100—200	14	14
200—300	23	37
300—400	12	49 (C)
400—500	33	82
500—600	8	90
600—700	10	100

$N = 100$

$$\text{मध्यकापद } M = \left(\frac{N}{2}\right)$$

$$= \frac{100}{2} = 50$$

50वे पद का मध्यका वर्ग 400—500 में स्थित है।

सूत्र $$M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c)$$

$$M = 400 + \frac{100}{33}(50 - 49)$$

$$= 400 + \frac{100}{33} \times 1$$

$$= 400 + 3\ 03 = 403\ 03$$

उत्तर—403 03 मध्यका होगा।

15 निम्नांकित श्रेणी मे भूयिष्ठक (Mode) एव मध्यिका (Median) ज्ञात कीजिए :

वर्ग	0—10	10—20	20—30	30—40	40—50
आवृत्ति	14	23	27	21	15

(अजमेर, 1994, 2000)

हल : **बहुलक एवं मध्यका की गणना**

समूह	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति (f)
0—10	14	14
10—20	23	37 (C)
20—30	27	64
30—40	21	85
40—50	15	100

बहुलक की गणना (Mode)—उपर्युक्त श्रेणी मे निरीक्षण से ज्ञात होता है कि बहुलक वर्ग 20–30 है क्योकि इस वर्ग की आवृत्ति सर्वाधिक 27 बार हुई है।

सूत्र : $$Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

$$Z = 20 + \frac{27 - 23}{2 \times 27 - 23 - 21} \times 10$$

$$\therefore \quad Z = 20 + \frac{4}{54 - 44} \times 10$$

$$Z = 20 + \frac{4}{10} \times 10$$

$$Z = 20 + \frac{40}{10}$$

$$Z = 20 + 4$$

अतः $Z = 24$

उत्तर = 24 बहुलक है।

मध्यिका (Median)—मध्यिका पद (m) = $\frac{N}{2}$वे पद का मान = $\frac{100}{2}$ = 50वे पद का मान

50वें पद का मध्यिका वर्ग (20–30) है

सूत्र : $M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c)$

$$M = 20 + \frac{10}{27}(50 - 37)$$

$$M = 20 + \frac{10}{27} \times 13$$

$$M = 20 + \frac{130}{27}$$

$$M = 20 + 4.81 = 24.81$$

उत्तर 24.81 मध्यिका है।

16 बहुलक को परिभाषित करते हुए निम्नांकित सारणी मे से माध्य (Mean) ज्ञात कीजिए

आय (रुपये मे)	मजदूरो की संख्या
600—से कम	40
500—से कम	32
400—से कम	25
300—से कम	15
200—से कम	9
100—से कम	6 (अजमेर, 1995)

नोट—बहुलक की परिभाषा के लिए अध्याय मे इसी शीर्षक के अन्तर्गत दी हुई परिभाषाएं देखिए।

हल—(1) माध्य की गणना करने के लिए सर्वप्रथम हमे इस श्रेणी को सतत् श्रेणी मे बदलना होगा। इसके लिए हम वर्ग अन्तराल 100 लेंगे।

(2) इस प्रश्न में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि आय घटते हुए क्रम में है, किन्तु इसे हल करते समय सतत श्रेणी बढते हुए क्रम मे होगी जैसा कि नीचे-प्रदर्शित है :

आय		मजदूरों की संख्या
00—100		6
100—200	(9–6)	3
200—300	(15–9)	6
300—400	(25–15)	10
400—500	(32–25)	7
500—600	(40–32)	8
		40

अब हम पद विचलन रीति के द्वारा निम्नानुसार माध्य ज्ञात करेंगे

आय	मध्य बिन्दु M V.	f	विचलन A = 250	विचलित मूल्य आवृत्ति का गुणा	पद विचलन $i = 100$ $d'x$	$fd'x$
0—100	50	6	−200	−1,200	−2 (200 ÷ 100)	−12
100—200	150	3	−100	−300	−1 (100 ÷ 100)	−3
200—300	250	6	0	0	0 (0 ÷ 100)	0
300—400	350	10	100	1,000	+1 (100 ÷ 100)	+10
400—500	450	7	200	1,400	+2 (200 ÷ 100)	+14
500—600	550	8	300	2,400	+3 (300 ÷ 100)	+24
		$\Sigma f = 40$				$\Sigma fd'x = +33$

सूत्र : $\bar{X} = A + \frac{\Sigma fd'x}{N} \times i$

$\bar{X} = 250 + \frac{33}{40} \times 100$

$\bar{X} = 250 + \frac{3300}{40}$

$\bar{X} = 250 + \frac{330}{4}$

$\bar{X} = 250 + 82\,5$

$\bar{X} = 332\,50$

उत्तर—332 50 माध्य है।

17 निम्न सारणी से मध्यिका (Median) की गणना कीजिए :

आय (रुपये में)	आवृत्ति
30 से कम	69
30—40	167
40—50	207
50—60	65
60—70	58
70—80	27
80 तथा अधिक	10 (राज., 1996)

हल :

वर्गान्तर	आवृत्ति (f)	संचयी आवृत्ति (cf)
30 से कम	69	69
30—40	167	236 (C)
40—50	207 (F)	443
50—60	65	508
60—70	58	566
70—80	27	593
80 तथा अधिक	10	603
	N = 603	

सूत्र : $M = \frac{N}{2}$ th item

$= \frac{603}{2} = 301.50$वे पद का मान

301.50वां पद सचयी आवृत्ति 443 के अन्तर्गत आता है तो मध्यका वर्ग 40—50 हुआ।

सूत्र : $M = L_1 + \frac{L_2 - L_1}{f}(m - c)$

$M = 40 (+) \frac{50 - 40}{207} (301\ 50 - 236)$

$M = 40 + \frac{10}{207} (65\ 50)$

$= 40 + \frac{655}{207}$

$= 40 + 3\ 16 = 43.16$

उत्तर—43 16 मध्यिका

18. निम्न समंकों से मध्यका की गणना कीजिए।

Marks	10-19	20-29	30-39	40-49	50-59	60-69	70-79	80-89	90-99
No. of Student	6	6	10	0	0	8	6	6	2

हल :

Marks	No. of Students (*f*)	(*cf*)
10—19	6	6
20—29	6	12
30—39	10	22
40—49	0	22
50—59	0	22
60—69	8	30
70—79	6	36
80—89	6	42
90—99	2	44

$m = \text{size of } \frac{N}{2} \text{ th item}$

$m = \text{size of } \frac{44}{2} = 22 \text{ th item}$ m lies in 29.5—39.5

$M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c)$

$M = 29.5 + \frac{10}{10}(22 - 12) = 39.5$

उत्तर—39.5

कुछ विद्वानों द्वारा शून्य आवृत्तियों वाले वर्गों को ऊपर व नीचे वाले वर्गों में अन्तरित करते हैं।

30—49 की आवृत्ति = 10

50—69 की आवृत्ति = 8

$M = 29.5 + \frac{20}{10}(22 - 12) = 29\ 5 + 20 = 49.5$

उत्तर—49 5

19 नीचे दिए गये आवृत्ति वितरण का बहुलक परिकलित कीजिए :

प्राप्तांक	10—20	20—30	30—40	40—50	
विद्यार्थियों की संख्या	4	6	6	4	(एच., 1997)

उत्तर—बहुलक 29।

20 निम्नांकित सारणी से मध्यांक (Median) ज्ञात कीजिए :

आय (रु)	100—200	200—300	300—400	400—500	500—600
व्यक्तियों की संख्या	15	33	63	83	100

(अजमेर, 2000)

हल

सर्वप्रथम प्रश्न को साधारण श्रेणी में परिवर्तित किया जायेगा।

आय	व्यक्तियों की संख्या	संचयी आवृत्ति
100—200	15	15
200—300	18	33
300—400	30	63
400—500	20	83
500—600	17	100

$$m = \text{size of } \left(\frac{N}{2}\right)\text{th item}$$

$$m = \text{size of } \frac{100}{2} = 50\text{th item}$$

m lies in 300—400

$$M = L_1 + \frac{i}{f}(m - c)$$

$$M = 300 + \frac{100}{30}(50 - 33)$$

$$M = 300 + \frac{100}{30} \times 17$$

$$M = 300 + 56.67 = 356.67 \text{ रु}$$

मध्यका = 356 67 = रु.

उत्तर—356 67 रु.

21 निम्नांकित तथ्यो से माध्य (Mean) निकालिए :

अंक	10	20	30	40	50	60
छात्रो की संख्या	8	10	12	20	6	4

(राज., 1998)

22 निम्नांकित तथ्यो से मध्यिका (Median) निकालिए :

मजदूरी (रु मे)	0—10	10—20	20—30	30—40	40—50
व्यक्तियों की संख्या	5	11	13	14	7

(राज., 1998)

23. नीचे दिए गए वितरण से माध्य एवं माध्यिका ज्ञात कीजिए :

अंक	22—26	17—21	12—16	7—11	2—6
आवृत्ति	18	21	26	15	8

(राज., 1999)

24. नीचे दी गई सारणी से मध्यिका (Median) की गणना कीजिए :

दैनिक मजदूरी (रु. मे)	50-55	55-60	60-65	65-70	70-75	75-80	80-85
मजदूरों की संख्या	6	10	22	30	16	12	4

(राज., 2000)

लघु उत्तरीय प्रश्न

I निम्नांकित प्रश्नो के उत्तर दीजिए :

(i) $\bar{X} = A + \frac{\Sigma dx}{N}$ यह सूत्र किस काम आता है?

(ii) $\bar{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$ यह सूत्र क्या है?

(iii) $\frac{M - L_1 + L_2 - L_1}{f}(m - c)$ यह सूत्र क्या है?

(iv) $Z = L_1 + \frac{f_2 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$ यह सूत्र किसका है? (अजमेर, 1998)

(v) समावेशी शृंखला का उदाहरण दीजिए।

(vi) अपवर्जी शृंखला का उदाहरण दीजिए।

(vii) आरोही क्रम का उदाहरण दीजिए।

(viii) अवरोही क्रम का उदाहरण दीजिए।

(ix) बहुलक को 30 शब्दो में समझाइए।

(x) $i = L_2 - L_1$ इसका अर्थ समझाइए।

(xi) मध्यका।

(xii) भूयिष्ठक (बहुलक)।

(xiii) समान्तर माध्य।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर-संकेत सहित)

1. निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

(i) समंकमाला मे सर्वाधिक बार आवृत्ति वाले माध्य को क्या कहते हैं?

(ii) $Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$ यह सूत्र किस माध्य को ज्ञात करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

(iii) किस माध्य में समंक श्रेणी को आरोही या अवरोही क्रम में लगाकर मध्य पद ज्ञात किया जाता है।

(iv) समस्त पदो के मूल्यो के योग मे उनकी सख्या का भाग देने पर प्राप्त होने वाले माध्य को क्या कहते हैं?

(v) $\bar{X} = \frac{\Sigma X}{N}$ यह सूत्र किस माध्य को ज्ञात करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है?

[उत्तर—(i) बहुलक, (ii) बहुलक, (iii) मध्यिका, (iv) समान्तर माध्य, (v) व्यक्तिगत श्रेणी में समान्तर माध्य।]